卐 श्री महावीराय नमः 卐

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता

धर्म प्रेमी बन्धुओं,

देव-शास्त्र-गुरु की पूजा में हम बोलते हैं:-

"यह अर्घ समर्पण करके प्रभु *निज गुण का अर्घ* बनाऊंगा ।

और निश्चित तेरे सदृश प्रभु अरहंत अवस्था पाऊंगा ।।"

लेकिन हम कभी विचार नहीं करते कि निज क्या है ? निज गुण क्या हैं? कैसे हैं ? निज गुणों का अर्घ कैसे बनता है ? जिसे समर्पण करके भगवान के ही समान हम भी अरहंत अवस्था प्राप्त कर सकते हैं।

भगवान महावीर की भांति स्वयं को पहचानकर भगवान बनने का पुरुषार्थ हर बालक, बालिका, स्त्री-पुरुष कर सकें इसी पवित्र भावना के साथ श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला का शुभारम्भ दिनांक 2 जून 1997 से, 31- राजा रोड, जैन कालोनी में किया गया है जिसकी नियमित कक्षायें शनिवार सांय 5:00 से 6:00 बजे तक व रविवार प्रातः 10 बजे से 11 बजे तक चलती है । धार्मिक संस्कारों की ओर सदाचारमय नैतिक जीवन बिताने की निरन्तर प्रेरणा मिलती रहे इस उद्देश्य से संचालित यह पाठशाला वीतराग विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड, जयपुर से सम्बद्ध है जिसकी नियमित ग्रीष्मकालीन व शीतकालीन परीक्षाओं में उत्तीर्ण विद्यार्थी प्रमाण पत्र व पारितोषिक द्वारा पुरस्कृत किये जाते हैं । 30 विद्यार्थियों से प्रारम्भ हुई इस पाठशाला में इस समय 92 विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं । आपसे सविनय अनुरोध है कि पाठशाला की नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों को भेजकर और स्वयं भी पधारकर भगवान महावीर के शासन काल को जीवन्त रखें ।

जैन समाज का प्रत्येक सदस्य जैन धर्म के मूलभूत सिद्धान्तों को समझकर मोक्ष का पुरुषार्थ कर सके इसी पवित्र भावना से वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता का आयोजन श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला के तत्वाधान में दिनांक 18 अप्रैल दिन रविवार को दोपहर 2 बजे से श्री दिगम्बर जैन धर्मशाला गांधी रोड पर किया जा रहा है जिसमें बालक-बालिकायें, स्त्री-पुरुष सभी भाग ले सकते हैं । आइये ! इसमें भाग लेकर निज आत्मा की पहचान करके संसार का अभाव करें!

आयोजक

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31-राजा रोड, जैन कालोनी, देहरादून

प्रथम तालिका

(14 वर्ष तक की आयु के प्रतियोगियों के लिये)

प्र01. णमोकार मंत्र अर्थ सहित बोलिये ?

उ0 णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमोआयरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।
अर्थ-इस लोक के सब अरहंतो को मेरा नमस्कार हो, इस लोक के सब सिद्धों को मेरा नमस्कार हो, इस लोक के सब आचार्यों को मेरा नमस्कार हो, इस लोक के सब उपाध्यायों को मेरा नमस्कार हो, इस लोक के सब साधुओं को मेरा नमस्कार हो ।

प्र02. देव किसे कहते है ?

उ0 पूर्ण वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी-जो इन तीन गुणों सहित होते है वे सच्चे देव है । (श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार, श्लोक-5)

प्र03. शास्त्र किसे कहते है ?

उ0 पूर्वापर विरोध रहित, वीतरागता की पोषक, सच्चे देव की वाणी को- शास्त्र कहते है । (श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार, श्लोक-9)

प्र04. गुरू किसे कहते है ?

उ0 जो रत्नत्रय के धारक, विषयों की इच्छा से रहित, अंतरंग-बहिरंग परिग्रह रहित व आत्मध्यानी हों - वे गुरू है ।

प्र05. जैन धर्म का रहस्य जानकर स्वयं भी भगवान बनने के लिये क्या जानना आवश्यक है ?

उ0 विश्व, द्रव्य-गुण-पर्याय, छह द्रव्य व सात तत्वों का ज्ञान आवश्यक है ।

प्र06. विश्व किसे कहत है ?

उ0 जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते है ।

प्र07. विश्व मे जाति अपेक्षा छह द्रव्य कौन-कौन से है ?

उ0 जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये छह द्रव्य है ।

प्र08. जीवादि प्रत्येक द्रव्य कितने-कितने है ?

उ0 जीव द्रव्य अनन्त है, पुद्गल द्रव्य अनंतानंत है, धर्म-अधर्म आकाश एक-एक है और काल द्रव्य असंख्यात है ।

प्र09. द्रव्य किसे कहते है ?

उ0 गुणों के समूह को द्रव्य कहते है ।

प्र010. जीव द्रव्य किसे कहते है ?

उ0 जिसमें चेतना अर्थात् ज्ञान-दर्शन रूप शक्ति है उसे जीव द्रव्य कहते है ।

प्र011. पुद्गल द्रव्य किसे कहते है ?

उ0 जिसमें स्पर्श-रस-गंध-वर्ण पाया जाये उसे पुद्गल द्रव्य कहते है ।

प्र012. मै कौन सा द्रव्य हूँ ?

उ0 मै जानने देखने की शक्ति वाला जीव द्रव्य हूँ, शरीर नही हूँ, शरीर पुद्गल द्रव्य है ।

प्र013. गुण किसे कहते है ?

उ0 जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और उसकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहते है उन्हें गुण कहते है ।

प्र014. गुणों के कितने भेद है ?

उ0 दो भेद है - 1. सामान्य गुण 2. विशेष गुण ।

प्र015. पर्याय किसे कहते है ?

उ0 गुणों के कार्य को पर्याय कहते है ।

प्र016. पर्याय के कितने भेद है ?

उ0 दो भेद है - 1. व्यंजन पर्याय 2. अर्थपर्याय ।

प्र017. विश्व,द्रव्य-गुण-पर्याय को जानने से क्या लाभ है ?

उ0 कायम रहते हुये स्वयं ही बदलना-इस विश्व के प्रत्येक द्रव्य का स्वभाव है अर्थात् PERMANANCY WITH A CHANGE.

प्र018. प्रयोजनभूत तत्व कितने है और कौन-कौन से है ?

उ0 प्रयोजनभूत तत्त्व सात है - जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष ।

प्र019. जीव तत्व किसे कहते है ?

उ0 जिसमें मेरा ज्ञान-दर्शन पाया जाये उसे जीव तत्व कहते है ।

प्र020. अजीव तत्व किसे कहते है ?

उ0 जिनमें मेरा ज्ञान दर्शन नही है वे अजीव तत्व है ।

प्र021. आस्रव तत्व किसे कहते है ?

उ0 शुभाशुभ विकारी भावों का उत्पन्न होना आस्रव तत्व है ।

प्र022. बंध किसे कहते है ?

उ0 शुभाशुभ विकारी भावों में अटकना बंध तत्व है ।

प्र023. संवर तत्व किसे कहते है ?

उ0 शुद्धि का प्रकट होना संवर तत्व है ।

प्र024. निर्जरा तत्व किसे कहते है ?

उ0 शुद्धि मे वृद्धि होना निर्जरा तत्व है ।

प्र025 मोक्ष तत्व किसे कहते है ?

उ0 सम्पूर्ण शुद्धि का प्रकट होना मोक्ष तत्व है ।

प्र026. सात तत्व किसप्रकार प्रयोजनभूत है ?

उ0 जीव तत्व	-	आश्रय करने योग्य
अजीव तत्व	-	जानने योग्य
आस्रव-बंध	-	छोड़ने योग्य
संवर-निर्जरा-मोक्ष	-	प्रगट करने योग्य

प्र027. भगवान महावीर ने भगवान बनने के लिये क्या किया ?

उ0 भगवान महावीर ने- शरीरादि अजीव तत्व है जानने योग्य है, अर्थात् उनसे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नही है - ऐसा जानकर अपने जीव-तत्व का आश्रय लेकर, आस्रव-बंध अर्थात् मोह राग-द्वेष को छोड़कर, संवर-निर्जरा अर्थात् सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र प्रकट करके क्रम से मोक्ष प्राप्त किया ।

प्र028. जैन धर्म का प्रारम्भ किस तीर्थंकर से हुआ था?

उ0 जैन धर्म का प्रारम्भ किसी तीर्थंकर ने नही किया, जैनधर्म तो अनादि निधन है। तीर्थंकर तो धर्म के उपदेशक होते है।

प्र029. भरत क्षेत्र मे भविष्य में होने वाले प्रथम तीर्थंकर कौन है?

उ0 भरत क्षेत्र मे भविष्य में होने वाले प्रथम तीर्थंकर राजा श्रेणिक है।

प्र030. ढाई द्वीप में सुदर्शन मेरू कहाँ है?

उ0 सुदर्शन मेरू जम्बुद्वीप के बीचों-बीच है।

द्वितीय तालिका

(14 वर्ष से ऊपर की आयु के प्रतियोगियों के लिये प्रथम व द्वितीय दोनो तालिकाओं से)

प्र01. विश्व के प्रत्येक द्रव्य की मर्यादा क्या है ?

उ0 अस्तित्व, वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुण, अनन्त विशेष गुण, एक व्यंजन पर्याय और अनन्त अर्थ पर्याय-यह विश्व के प्रत्येक द्रव्य की मर्यादा अर्थात् सत्ता है ।

प्र02. सामान्य गुण किसे कहते है ?

उ0 जो गुण सर्व द्रव्यों में रहते है उन्हें सामान्य गुण कहते है ।

प्र03. विशेष गुण किसे कहते है ?

उ0 जो गुण सर्व द्रव्यों में न रहकर अपने-अपने द्रव्य में रहते है उन्हें विशेष गुण कहते है ।

प्र04. जीवादि प्रत्येक द्रव्य मे कौन-कौन से विशेष गुण हैं ?

उ0 जीवद्रव्य	-	ज्ञान,दर्शन, सुख, वीर्य, श्रद्धा, चरित्र, क्रियावती शक्ति आदि।
पुद्गलद्रव्य	-	स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, क्रियावती शक्ति आदि ।
धर्मद्रव्य	-	गतिहेतुत्व आदि ।
अधर्म द्रव्य	-	स्थितिहेतुत्व आदि ।
आकाश द्रव्य	-	अवगाहनहेतुत्व आदि ।
कालद्रव्य	-	परिणमनहेतुत्व आदि ।

प्र05. सामान्य गुण कितने है और कौन-कौन से है ?

उ0 सामान्य गुण अनंत है, उनमें मुख्य छह है 1. अस्तित्व 2. वस्तुत्व, 3. द्रव्यत्व, 4. प्रमेयत्व, 5. अगुरुलघुत्व, 6. प्रदेशत्व ।

प्र06. अस्तित्व गुण किसे कहते है ?

उ0 जिस शक्ति के कारण द्रव्य का कभी नाश नही होता और किसी से उत्पन्न भी नही होता उसे अस्तित्व गुण कहते है ।

प्र07. वस्तुत्व गुण किसे कहते है ?

उ0 जिस शक्ति के कारण द्रव्य में अर्थक्रियाकारित्व अर्थात् प्रयोजनभूत क्रिया होती है उसे वस्तुत्व गुण कहते हैं ।

प्र08. द्रव्यत्व गुण किसे कहते है ?

उ0 जिस शक्ति के कारण द्रव्य की अवस्थायें निरन्तर बदलती रहती है उसे द्रव्यत्व गुण कहते है ।

प्र09. अस्तित्व-वस्तुत्व-द्रव्यत्व गुणों का क्या रहस्य है ?

उ0 अस्तित्व गुण के कारण प्रत्येक द्रव्य अनादिअनन्त कायम रहता हुआ, वस्तुत्व गुण के कारण अपनी प्रयोजनभूत क्रिया करता हुआ, द्रव्यत्व गुण के कारण वह कार्य निरन्तर बदल रहा है अर्थात् प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है, कोई किसी के आधीन नहीं है ।

प्र010. प्रमेयत्व गुण कहते है ?

उ0 जिस शक्ति के कारण द्रव्य किसी न किसी ज्ञान का विषय अवश्य रहता है उसे प्रमेयत्व गुण कहते है ।

प्र011. अगुरुलघुत्व गुण किसे कहते है ?

उ0 जिस शक्ति के कारण द्रव्य में द्रव्यपना कायम रहता है अर्थात् एक द्रव्य दूसरे द्रव्यरूप नहीं होता, एक गुण दूसरे गुणरूप नहीं होता और द्रव्य में रहने वाले अनन्तगुण बिखर कर अलग-अलग नहीं होते उसे अगुरुलघुत्व गुण कहते
है ।

प्र012. प्रदेशत्व गुण किसे कहते है ?

उ0 जिस शक्ति के कारण द्रव्य का कोई न कोई आकार अवश्य रहता है उसे प्रदेशत्व गुण कहते है ।

प्र013. छहढाला में पं0 दौलतरामजी ने जीव के संसार परिभ्रम का कारण क्या बताया है?

उ0 'मोह महामद पियो अनादि भूलि आपको भरमत वादि ।'
मोह के कारण अर्थात आत्मा के स्वरूप को भूलकर शरीर को अपना मानने के कारण जीव चारों गतियों में भटक रहा है ।

प्र014. श्री कुन्दकुन्दाचार्य भगवान ने संसार परिभ्रमण का कारण क्या बताया है ?

उ0 श्री कुन्दकुन्दाचार्य ने श्री प्रवचनसार गाथा 190 में कहा है-जो देह-धनादिक में यह मैं हूँ और यह मेरा है अर्थात् 'शरीर है सो मैं हूँ' ऐसी ममता को नहीं छोड़ता वह संसार में परिभ्रमण करता है ।

प्र015. आत्मा और शरीर को एक मानने का फल क्या है ?

उ0 आत्मा और शरीर को एक मानना ही मिथ्यात्व है जिसका फल अनन्त संसार है ।

प्र016. हमें अनन्त संसार में नहीं भटकना है हमें आत्मा और शरीर की भिन्नता कैसे भासित हो ?

उ0 आत्मा और शरीर के पृथक-पृथक लक्षणों से -

1. आत्मा चैतन्य है और शरीर जड़-मिट्टी है ।

2. आत्मा अरूपी है और शरीर रूपी है ।
3. आत्मा असंख्यात प्रदेशी है और शरीर में एक-एक प्रदेशी अनंत परमाणु है ।
4. आत्मा का एक आकार है और शरीर में अनन्त परमाणु है अतः शरीर के अनन्त आकार है ।

प्र017. आचार्यकल्प पं0 टोडरमलजी ने आत्मा और शरीर के भिन्न-भिन्न लक्षण क्या बताये है ?

उ0 श्री मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ 38 पर कहा है -

आत्मा - अमूर्तिक प्रदेशों का पुंज, प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी अनादिनिधन वस्तु मुझ आत्मा है ।

शरीर - मूर्तिक पुद्गल द्रव्यों का पिण्ड, प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों से रहित, स्पर्श-रस-गंध-वर्ण सहित, नवीन जिनका संयोग हुआ है ऐसे शरीरादि पुद्गल पर है ।

प्र018. मुझ आत्मा का शरीर से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है-इस रहस्य को हम अपने अनुमान से कैसे जाने ?

उ0 पिछले जन्म का शरीर व संयोग साथ आये नहीं, वर्तमान का शरीर व धन आदि साथ जायेंगे नहीं-अतः सिद्ध होता है कि इस समय भी शरीर व धनादि से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है ।

प्र019. प्रथम व द्वितीय तालिका के समस्त प्रश्नोत्तरों का सारांश क्या है ?

उ0 1. मैं जीव तत्व हूँ - शरीर नहीं हूँ ।
2. अनादिनिधन वस्तुयें (द्रव्य) भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती है । कोई किसी के आधीन नहीं है । कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती ।

(श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृ0 52)

~~ऐसा जाने माने तो सम्पूर्ण दुःखों का अभाव हो जाता है और~~ सम्यक्त्व की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष की प्राप्ति होती है ।

प्र020. जिनमत की परिपाटी क्या है ?

उ0 जिनमत में तो यह परिपाटी है कि पहले सम्यक्त्व होता है फिर व्रतादि होते है, वह सम्यक्त्व स्व (आत्मा) और पर (शरीर) का श्रद्धान होने पर होता है वह श्रद्धान द्रव्यानुयोग के अभ्यास से होता है, इसलिये प्रथम द्रव्यानुयोग के अनुसार आत्मा और शरीर की भिन्नता का ज्ञान करके सम्यग्दर्शन प्रगट करने योग्य है ।

(श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ट 293)

-नियमावली-

1. यह प्रतियोगिता दिनांक 18 अप्रैल दिन रविवार को दोपहर 2:30 बजे से श्री दिगम्बर जैन धर्मशाला, गांधी रोड में होगी ।
2. प्रतियोगियों की सुविधा के लिये 10 अप्रैल से 17 अप्रैल तक श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला, 31 राजा रोड, जैन कालोनी में सायं 5 से 6 बजे तक इन प्रश्नोत्तरों का अभ्यास कराया जायेगा ।
3. प्रथम तालिका में 30 प्रश्न व द्वितीय तालिका में 20 प्रश्न है ।
4. 14 वर्ष तक की आयु के प्रतियोगियों से प्रथम तालिका के 30 प्रश्नों में से कोई से पाँच प्रश्न पूछे जायेंगे । बड़े बच्चों को लिखित देने की अनुमति होगी ।
5. 14 वर्ष से ऊपर की आयु के प्रतियोगियों से लिखित परीक्षा में प्रथम व द्वितीय दोनों तालिकाओं में से कोई से पाँच प्रश्न पूछे जायेंगे । लिखने में असमर्थ प्रतियोगी मौखिक परीक्षा दे सकता है।
6. वीतराग-विज्ञान प्रतियोगिता संचालन समिति का निर्णय अन्तिम व सर्वमान्य होगा ।
7. विजेता प्रतियोगियों को उचित पारितोषिक दिये जायेंगे ।
8. प्रतियोगिता में भाग लेने के इच्छुक प्रतियोगी दिनांक 15 अप्रैल तक निम्नलिखित व्यक्तियों में से किसी के पास अपना नाम लिखवाकर प्रश्नोत्तर पुस्तिका प्राप्त कर लें :-
   1. मैनेजर, जैन धर्मशाला, गाँधी रोड, देहरादून। फोन:655823
   2. श्री सोमसैन जैन, अजय स्टोर, झंडा बाजार, देहरादून। फोन:625995
   3. श्री वी.के.जैन, 38 तिलक रोड 'वीर कुटीर' देहरादून। फोन:622317
   4. श्रीमती रश्मि जैन, सरनीमल मन्दिर के पीछे, देहरादून।
   5. श्री सुभाष जैन, Indian News AGency, चकराता रोड। फोन:652280
   6. श्री प्रवीन जैन, 14 चमन विहार, माजरा देहरादून। फोन:626967
   7. श्री अनिल जैन, Pearl House, सोसायटी एरिया, क्लेमेन्टाऊन ।
9. लिखित परीक्षार्थी कृपया कलम व डेस्क बोर्ड अवश्य लायें । पेपर उपलब्ध कराने की जिम्मेदारी श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला की होगी ।
10. कृपया इस वीतराग विज्ञान प्रश्नोत्तर पुस्तिका की गरिमा को ध्यान में रखते हुये संभाल कर रखें ।

भगवान महावीर के 2600वें जन्मोत्सव वर्ष के पावन उपलक्ष्य में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता - 1

दिनांक 25 जून, दिन रविवार दोपहर 3 बजे

(स्थान– श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

धर्म प्रेमी बन्धुओं,

भगवान महावीर की भांति स्वयं को पहचानकर भगवान बनने का पुरुषार्थ हर बालक, बालिका, स्त्री–पुरुष कर सकें इसी पवित्र भावना के साथ श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला कार्यरत है।

भगवान महावीर द्वारा कथित विश्व, द्रव्य, गुण, पर्याय, छह द्रव्य व सात तत्वों का रहस्य समझकर जैन समाज का प्रत्येक सदस्य मोक्ष का पुरुषार्थ कर सके इसी पवित्र भावना से महावीर भगवान के 2600वें जन्मोत्सव वर्ष के उपलक्ष्य में **वीतराग विज्ञान प्रतियोगिताओं** का आयोजन श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला के तत्वाधान में इस वर्ष किया जा रहा है जिसमें बालक–बालिकायें, स्त्री–पुरुष सभी भाग ले सकते हैं। इन वीतराग विज्ञान प्रतियोगिताओं की श्रृंखला में **प्रथम प्रतियोगिता दिनांक 25 जून दिन रविवार दोपहर 3 बजे श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड पर होगी।**

आप सभी से अनुरोध है कि इस प्रतियोगिता में भाग लेकर निज आत्मा की पहचान करके संसार का अभाव करें।

निवेदक

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31–राजा रोड, जैन कालोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 623131

विशेष सूचना :

1. पूर्ण छहढाला प्रतियोगिता दिनाँक 23 अप्रैल दिन रविवार दोपहर 3 बजे से श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड पर होगी।
2. छहढाला प्रतियोगिता का समापन समारोह पुरस्कार वितरण के साथ दिनांक 14 मई दिन रविवार प्रातः 10 बजे श्री कुन्दकुन्दकहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय मन्दिर (सरनीमल मन्दिर के पीछे) होगा। सभी प्रतियोगी कृपया ठीक समय पर पहुँच का अपना पुरस्कार प्राप्त करें।

भगवान महावीर द्वारा कथित
विश्व, द्रव्य, गुण, पर्याय, छह द्रव्य व सात तत्वों का रहस्य

प्र०१. णमोकार मंत्र अर्थ सहित बोलिये।

उ० णमो अरहंताण, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं।
णमों उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

अर्थ– इस लोक के सब अरहंतो को मेरा नमस्कार हो, इस लोक के सब सिद्धों को मेरा नमस्कार हो, इस लोक के सब आचार्यो को मेरा नमस्कार हो, इस लोक के सब उपाध्यायों को मेरा नमस्कार हो, इस लोक के सब साधुओं को मेरा नमस्कार हो।

प्र०२. देव किसे कहते हैं? कुदेव किसे कहते हैं?

उ० पूर्ण वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी– जो इन तीन गुणों सहित होते हैं वे सच्चे देव हैं। जो राग–द्वेषरूपी मैल से मलिन है और स्त्री, गदा आदि सहित चिह्नों से पहिचाने जाते हैं उन्हें कुदेव कहते हैं।

प्र०३. शास्त्र किसे कहते हैं? कुशास्त्र किसे कहते हैं?

उ० पूर्वापर विरोध रहित, वीतरागता की पोषक, सच्चे देव की वाणी को शास्त्र कहते हैं। एकान्तरूप कथन से दूषित, विषय कषायादि को पुष्ट करने वाले, कुगुरूओं द्वारा रचित सर्वप्रकार के शास्त्रों को कुशास्त्र कहते हैं।

प्र०४. गुरू किसे कहते हैं? कुगुरू किसे कहते हैं?

उ० जो रत्नत्रय के धारक, विषयों की इच्छा से रहित, अंतरंग–बहिरंग परिग्रह से रहित व आत्मध्यानी हों– वे गुरू हैं। जो मिथ्यात्वादि अंतरंग तथा वस्त्रादि बहिरंग परिग्रह सहित हैं, महात्मापने का भाव ग्रहण करके मिथ्यावेषों को धारण करते हैं, उन्हें कुगुरू कहते हैं।

प्र०५. जैन धर्म का रहस्य जानकर स्वयं भी भगवान बनने के लिये क्या जानना आवश्यक है?

उ० सर्वज्ञदेव अर्थात् भगवान महावीर द्वारा कथित विश्व, द्रव्य–गुण–पर्याय, छह द्रव्य व सात तत्वों का ज्ञान आवश्यक है।

प्र०६. विश्व किसे कहते हैं?

उ० जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं।

प्र०७. विश्व में जाति अपेक्षा छह द्रव्य कौन–कौन से हैं?

उ० जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये छह द्रव्य हैं।

प्र०८. जीवादि प्रत्येक द्रव्य कितने–कितने हैं?

उ० जीव द्रव्य अनन्त है, पुद्गल द्रव्य अनंतानंत हैं, धर्म–अधर्म आकाश एक–एक हैं और काल द्रव्य असंख्यात है।

प्र०९. द्रव्य किसे कहते हैं?

उ० गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्र०१०. जीव द्रव्य किसे कहते हैं?

उ० जिसमें चेतना अर्थात् ज्ञान–दर्शन रूप शक्ति है उसे जीव द्रव्य कहते हैं।

प्र०११. पुद्गल द्रव्य किसे कहते हैं?

उ० जिसमें स्पर्श–रस–गंध–वर्ण पाया जाये उसे पुद्गल द्रव्य कहते हैं।

प्र०१२. मैं कौन सा द्रव्य हूँ?

उ० मैं जानने देखने की शक्ति वाला जीव द्रव्य हूँ, शरीर नहीं हूँ, शरीर पुद्गल द्रव्य है।

प्र०१३. गुण किसे कहते हैं?

उ० जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और उसकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहते हैं उन्हें गुण कहते हैं।

प्र०१४. गुणों के कितने भेद हैं?

उ० दो भेद हैं– १. सामान्य गुण २. विशेष गुण।

प्र०१५. सामान्य गुण किसे कहते हैं?

उ० जो गुण सर्व द्रव्यों में रहते हैं उन्हें सामान्य गुण कहते है।

प्र०१६. विशेष गुण किसे कहते हैं?

उ० जो गुण सर्व द्रव्यों में न रहकर अपने–अपने द्रव्य में रहते हैं उन्हें विशेष गुण कहते हैं।

प्र०१७. जीवादि प्रत्येक द्रव्य में कौन–कौन से विशेष गुण हैं?

उ० जीवद्रव्य – ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य, श्रद्धा, चरित्र, क्रियावती शक्ति आदि।
पुद्गलद्रव्य – स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, क्रियावती शक्ति आदि।
धर्मद्रव्य – गतिहेतुत्व आदि। अधर्म द्रव्य – स्थितिहेतुत्व आदि।
आकाश द्रव्य – अवगाहनहेतुत्व आदि। कालद्रव्य – परिणमनहेतुत्व आदि।

प्र०१८. सामान्य गुण कितने हैं? और कौन–कौन से हैं?

उ० सामान्य गुण अनंत हैं, उनमें मुख्य छह हैं– १. अस्तित्व, २. वस्तुत्व, ३. द्रव्यत्व, ४. प्रमेयत्व, ५. अगुरूलघुत्व, ६. प्रदेशत्व।

प्र०१९. अस्तित्व गुण किसे कहते हैं?

उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य का कभी नाश नहीं होता और किसी से उत्पन्न भी नहीं होता उसे अस्तित्व गुण कहते हैं।

प्र०२०. वस्तुत्व गुण किसे कहते हैं?

उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य में अर्थक्रियाकारित्व अर्थात् प्रयोजनभूत क्रिया होती है उसे वस्तुत्व गुण कहते हैं।

प्र०२१. द्रव्यत्व गुण किसे कहते हैं?
उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य की अवस्थायें निरन्तर बदलती रहती हैं उसे द्रव्यत्व गुण कहते हैं।

प्र०२२. अस्तित्व–वस्तुत्व–द्रव्यत्व गुणों का क्या रहस्य है?
उ० अस्तित्व गुण के कारण प्रत्येक द्रव्य अनादि अनन्त कायम रहता हुआ, वस्तुत्व गुण के कारण अपनी प्रयोजनभूत क्रिया करता हुआ, द्रव्यत्व गुण के कारण वह कार्य निरन्तर बदल रहा है अर्थात् प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है, कोई किसी के आधीन नहीं है।

प्र०२३. प्रमेयत्व गुण किसे कहते हैं?
उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य किसी न किसी ज्ञान का विषय अवश्य रहता है उसे प्रमेयत्व गुण कहते हैं।

प्र०२४. अगुरूलघुत्व गुण किसे कहते हैं?
उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य में द्रव्यपना कायम रहता है अर्थात् एक द्रव्य दूसरे द्रव्यरूप नहीं होता, एक गुण दूसरे गुणरूप नहीं होता और द्रव्य में रहने वाले अनन्तगुण बिखर कर अलग–अलग नहीं होते उसे अगुरूलघुत्व गुण कहते हैं।

प्र०२५. प्रदेशत्व गुण किसे कहते हैं?
उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य का कोई न कोई आकार अवश्य रहता है उसे प्रदेशत्व गुण कहते हैं।

प्र०२६. पर्याय किसे कहते हैं?
उ० गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं।

प्र०२७. पर्याय के कितने भेद हैं?
उ० दो भेद हैं– १. व्यंजनपर्याय, २. अर्थपर्याय।

प्र०२८. व्यंजनपर्याय किसको कहते हैं?
उ० द्रव्य के प्रदेशत्व गुण के विशेष कार्य को व्यंजनपर्याय कहते हैं।

प्र०२९. व्यंजनपर्याय के कितने भेद हैं?
उ० दो भेद हैं– स्वभाव व्यंजनपर्याय और विभाव व्यंजनपर्याय।

प्र०३०. स्वभाव व्यंजनपर्याय किसे कहते हैं?
उ० पर निमित्त के सम्बन्ध से रहित द्रव्य का जो आकार हो उसे स्वभाव व्यंजनपर्याय कहते हैं। जैसे– जीव की सिद्ध पर्याय।

प्र०३१. विभाव व्यंजनपर्याय किसे कहते हैं?
उ० पर निमित्त के सम्बन्ध से द्रव्य का जो आकार हो उसे विभाव व्यंजनपर्याय कहते हैं। जैसे– जीव की नर–नारकादि पर्याय।

प्र०३२. अर्थपर्याय किसको कहते हैं?
उ० प्रदेशत्व गुण के सिवाय बाकी सम्पूर्ण गुणों के कार्य को अर्थपर्याय कहते हैं।

प्र०३३. अर्थपर्याय के कितने भेद हैं?
उ० दो भेद हैं– स्वभाव अर्थपर्याय और विभाव अर्थपर्याय।

प्र०३४. स्वभाव अर्थपर्याय किसको कहते हैं?
उ० पर निमित्त के सम्बन्ध से रहित जो अर्थपर्याय होती है उसको स्वभाव अर्थपर्याय कहते हैं। जैसे– जीव की सम्यक्दर्शन आदि पर्यायें।

प्र०३५. विभाव अर्थपर्याय किसे कहते हैं?
उ० पर निमित्त के सम्बन्ध से जो अर्थपर्याय हो उसको विभाव अर्थपर्याय कहते हैं। जैसे– जीव के राग–द्वेष आदि।

प्र०३६. किस–किस द्रव्य में कौन–कौन सी पर्यायें होती हैं?
उ० १. जीव और पुद्गल द्रव्य में स्वभाव अर्थपर्याय, विभाव अर्थपर्याय, स्वभाव व्यंजनपर्याय और विभाव व्यंजनपर्याय– इस प्रकार चारों पर्यायें होती हैं। २. धर्म, अधर्म, आकाश काल द्रव्य में स्वभाव अर्थपर्याय और स्वभाव व्यंजनपर्याय– इस तरह केवल दो पर्यायें होती हैं।

प्र०३७. विश्व–द्रव्य–गुण–पर्याय का रहस्य क्या है?
उ० १. कायम रहते हुए स्वयं ही बदलना इस विश्व के प्रत्येक द्रव्य का स्वभाव है अर्थात् PERMANANCY WITH A CHANGE.

२. **जिनेन्द्र कथित विश्व व्यवस्था** – जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में एक ही समय में एक पर्याय का उत्पाद, एक पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा। (प्रवचनसार गाथा ६३)

३. **प्रत्येक द्रव्य की सत्ता** – अस्तित्व – वस्तुत्वादि अनन्त सामान्य गुण, अनन्त विशेष गुण, एक व्यंजन पर्याय और अनन्त अर्थ पर्याय सहित– यह प्रत्येक द्रव्य की सत्ता है।

४. अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न अपनी–अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। कोई किसी के आधीन नहीं है। कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती है। (श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक, पृष्ठ ५२)

५. सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अनन्त धर्मों के चक्र को स्पर्श करते हैं तथापि वे परस्पर एक दूसरे को स्पर्श नहीं करते हैं। (समयसार गाथा ३)

प्र०३८. प्रयोजनभूत तत्व कितने हैं और कौन–कौन से हैं?
उ० प्रयोजनभूत तत्व सात हैं– जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष।

प्र०३९. जीव तत्व किसे कहते हैं? जीव तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत तत्व है?
उ० जिसमें मेरा ज्ञान–दर्शन पाया जाये उसे जीव तत्व कहते हैं। जीव तत्व एक मात्र आश्रय करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र०४०. अजीव तत्व किसे कहते हैं? अजीव तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत तत्व है?
उ० जिनमें मेरा ज्ञान-दर्शन नहीं है वे अजीव तत्व हैं और अजीव तत्व जानने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र०४१. आस्रव तत्व किसे कहते हैं? आस्रव तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है?
उ० शुभाशुभ विकारी भावों का उत्पन्न होना आस्रव तत्व है और आस्रव तत्व छोड़ने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र०४२. बंध किसे कहते हैं? बंध तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है?
उ० शुभाशुभ विकारी भावों में अटकना बंध तत्व है और बन्ध तत्व छोड़ने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र०४३. संवर तत्व किसे कहते हैं? संवर तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है?
उ० शुद्धि का प्रकट होना संवर तत्व है और संवर तत्व एक देश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र०४४. निर्जरा तत्व किसे कहते हैं? निर्जरा तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है?
उ० शुद्धि में वृद्धि होना निर्जरा तत्व है और निर्जरा तत्व एक देश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र०४५. मोक्ष तत्व किसे कहते हैं? मोक्ष तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है?
उ० सम्पूर्ण शुद्धि का प्रकट होना मोक्ष तत्व है और मोक्ष तत्व पूर्ण प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र०४६. भगवान महावीर ने भगवान बनने के लिये क्या किया?
उ० भगवान महावीर ने- शरीरादि अजीव तत्व हैं, जानने योग्य हैं, अर्थात् उनसे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है- ऐसा जानकर अपने जीव-तत्व का आश्रय लेकर, आस्रव-बंध अर्थात् मोह-राग-द्वेष को छोड़कर, संवर-निर्जरा अर्थात् सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र प्रकट करके क्रम से मोक्ष प्राप्त किया।

प्र०४७. जैन धर्म का प्रारम्भ किस तीर्थंकर से हुआ था?
उ० जैन धर्म का प्रारम्भ किसी तीर्थंकर ने नहीं किया, जैन धर्म तो अनादिनिधन है। तीर्थंकर तो धर्म के उपदेशक होते हैं।

प्र०४८. श्री कुन्दकुन्दाचार्य भगवान ने संसार परिभ्रमण का कारण क्या बताया है?
उ० श्री कुन्दकुन्दाचार्य ने श्री प्रवचनसार गाथा १९० में कहा है- जो देह-धनादिक में यह मैं हूँ और यह मेरा है अर्थात् 'शरीर है सो मैं हूँ' ऐसी ममता को नहीं छोड़ता वह संसार में परिभ्रमण करता है।

प्र०४९. आत्मा और शरीर को एक मानने का फल क्या है?
उ० आत्मा और शरीर को एक मानना ही मिथ्यात्व है जिसका फल अनन्त संसार है।

प्र०५०. हमें अनन्त संसार में नहीं भटकना है हमें आत्मा और शरीर की भिन्नता कैसे भासित हो?
उ० आत्मा और शरीर के पृथक-पृथक लक्षणों से-
१. मुझ आत्मा चैतन्य है और शरीर जड़-मिट्टी है।
२. मुझ आत्मा अरूपी है और शरीर रूपी है।
३. मुझ आत्मा असंख्यात प्रदेशी है और शरीर में एक-एक प्रदेशी अनंत परमाणु हैं।
४. मुझ आत्मा का एक आकार है और शरीर में अनन्त परमाणु हैं अतः शरीर के अनन्त आकार हैं।

प्र०५१. आचार्यकल्प पं० टोडरमल जी ने आत्मा और शरीर के भिन्न-भिन्न लक्षण क्या बताये हैं?
उ० श्री मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ ३८ पर कहा है-
आत्मा – अमूर्तिक प्रदेशों का पुंज, प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी अनादिनिधन वस्तु मुझ आत्मा है।
शरीर – मूर्तिक पुदगल द्रव्यों का पिण्ड, प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों से रहित, स्पर्श-रस-गंध-वर्ण सहित, नवीन जिनका संयोग हुआ है ऐसे शरीरादि पुदगल पर हैं।

प्र०५२. मुझ आत्मा का शरीर से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है- इस रहस्य को हम अपने अनुमान से कैसे जानें?
उ० पिछले जन्म का शरीर व संयोग साथ आये नहीं, वर्तमान का शरीर व धन आदि साथ जायेंगे नहीं- अतः सिद्ध होता है कि इस समय भी शरीर व धनादि से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

प्र०५३. कैसा जानें माने तो दुःख का अभाव और सुख की प्राप्ति हो?
उ० १. मैं जीव तत्व हूँ – शरीर मैं नहीं हूँ।
२. अनादिनिधन वस्तुयें (द्रव्य) भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। कोई किसी के आधीन नहीं है। कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती। (श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृ० ५२) ऐसा जाने माने तो सम्पूर्ण दुःखों का अभाव हो जाता है और सम्यक्त्व की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष की प्राप्ति होती है।

प्र०५४. जिनमत की परिपाटी क्या है?
उ० जिनमत में तो यह परिपाटी है कि पहले सम्यक्त्व होता है फिर व्रतादि होते हैं, वह सम्यक्त्व स्व (आत्मा) और पर (शरीर) का श्रद्धान होने पर होता है वह श्रद्धान द्रव्यानुयोग के अभ्यास से होता है, इसलिये प्रथम द्रव्यानुयोग के अनुसार आत्मा और शरीर की भिन्नता का ज्ञान करके सम्यग्दर्शन प्रगट करना योग्य है। (श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ २६३)

- नियमावली -

1. प्रत्येक माह एक वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता पर प्रश्नोत्तर पेपर दिया जायेगा। एक माह पश्चात उसी प्रतियोगिता प्रश्नोत्तर पेपर के आधार पर परीक्षा होगी। परीक्षा दिवस पर ही अगली प्रतियोगिता का प्रश्नोत्तर पेपर दे दिया जायेगा– इस प्रकार यह क्रम भगवान महावीर के पूरे 2600वें जन्मोत्सव वर्ष तक चलता रहेगा।
2. श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला की नियमित कक्षाओं में प्रतियोगिता के प्रश्नोत्तरों का अभ्यास कराया जायेगा। सभी इच्छुक प्रतियोगी सादर आमंत्रित हैं। नियमित कक्षाओं का समय – (1) शनिवार : सांय 5 से 6 बजे तक और रविवार : प्रातः 10 से 11 बजे तक वीतराग विज्ञान पाठशाला में,
(2) शनिवार प्रातः 10 से 11 बजे तक स्वाध्याय मन्दिर (स० जैन मन्दिर) में।
3. विजेता प्रतियोगियों को उचित पारितोषिक दिये जायेंगे ।
4. 'वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता' संचालन समिति का निर्णय अन्तिम व सर्वमान्य होगा।
5. प्रतियोगिता में भाग लेने के इच्छुक प्रतियोगी निम्नलिखित व्यक्तियों में से किसी के पास अपना नाम लिखवाकर प्रश्नोत्तर पुस्तिका प्राप्त कर लें :–

1. श्रीमती वीना जैन, ✆ 623131
केन्द्राध्यक्षा, श्री दि०जै०वी० पाठशाला, 31 लक्ष्मी पार्क, राजा रोड
2. श्रीमती कविता जैन, ✆ 652280
संयोजिका, जैन महिला क्लब, इण्डियन न्यूज एजेन्सी, चकरौता रोड
3. श्रीमती शकुन्तला जैन ✆ 729921
अध्यक्षा, दि०जै० महासमिति (महिला) 258 खुड़बुड़ा मौहल्ला
4. श्रीमती वीना जैन ✆ 621764
अध्यक्षा, प्रगति जैन मिलन 4A रेसकोर्स
5. श्रीमती कनक जैन ✆ 654506
अध्यक्षा, महिला जागृति मंच, 6B प्रीतम रोड
6. श्रीमती शशि जैन ✆ 624420
अध्यक्षा, जैन वीरांगना क्लब, 7 अखाड़ा बाजार
7. श्रीमती नलिनी जैन ✆ 655841
28 गांधी रोड, स० जैन मन्दिर
8. श्रीमती शील जैन ✆ 657614
C/o जैन मेडिकल हॉल 56 सुभाष रोड
9. श्रीमती ममलेश जैन ✆ 622853
24 आनन्द चौक
10. श्रीमती शैला जैन ✆ 720278
12 तिलक रोड
11. श्रीमती अरूणा जैन ✆ 626967
14 चमन विहार, माजरा
12. श्रीमती रेखा जैन ✆ 640147
पर्ल हाउस, सौ० एरिया, क्लेमनटाउन

❖ ❖ ❖

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31–राजा रोड, जैन कालोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 623131

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता - 2

दिनांक 6 अगस्त, दिन रविवार दोपहर 3 बजे
(स्थान– श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र०1. वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता नं० 1 के समस्त प्रश्न व उत्तर ?

प्र०2. छह द्रव्यों में मैं कौन सा द्रव्य हूँ?
उ० जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल – इन छह द्रव्यों में मैं जीव द्रव्य हूँ।

प्र०3. सात तत्वों में मैं कौन सा तत्व हूँ?
उ० जीव, अजीव, आस्रव–बंध, संवर–निर्जरा, मोक्ष – इन सात तत्वों में मैं जीव तत्व हूँ।

प्र०4. जीव द्रव्य और जीव तत्व में क्या अन्तर है?
उ० (1) जिसमें ज्ञान–दर्शन पाया जाये वह जीव द्रव्य है – इसमें निगोद से लेकर सिद्ध दशा तक के सब जीव आ गये।
(2) जिसमें मेरा ज्ञान दर्शन पाया जाये वह जीव तत्व है – इसमें निज जीव को छोड़कर बाकी अनन्त जीवों से भी पृथक करना है।

प्र०5. पुद्गल द्रव्य के स्पर्श–रस–गंध–वर्ण आदि गुणों की कितनी पर्यायें होती हैं?
उ० 27 पर्यायें होती हैं –

स्पर्श गुण – हल्का–भारी, ठंडा–गरम, रूखा–चिकना, कड़ा–नरम = ये आठ पर्यायें पुद्गल द्रव्य के स्पर्श गुण में से आती हैं।

रस गुण – खट्टा–मीठा–कड़वा–चरपरा–कषायला = ये पाँच पर्यायें पुद्गल के रस गुण में से आती हैं।

गंध गुण – सुगन्ध और दुर्गन्ध = ये दो पर्यायें पुद्गल द्रव्य के गंध गुण में से आती हैं।

वर्ण गुण – काला–पीला–नीला–लाल–सफेद = ये पाँच पर्यायें पुद्गल द्रव्य के वर्ण गुण में से आती हैं।

शब्द की – सात पर्यायें होती हैं जो शब्द रूप पुद्गल स्कन्धों में से आती हैं।

प्र०6. शरीर का हल्कापना आदि किसका कार्य है? किसका नहीं है?

उ० शरीर का हल्कापना पुद्गलों के स्पर्श गुण का कार्य है, आत्मा का नहीं है। शरीर के हल्केपने का ज्ञान–आत्मा के ज्ञानगुण का कार्य है।

प्र०7. नींबू में खट्टापना किसका कार्य है? किसका नहीं?

उ० नींबू में खट्टापना पुद्गलों के रस गुण का कार्य है, आत्मा का नहीं है। खट्टेपने का ज्ञान – आत्मा के ज्ञान गुण का कार्य है।

प्र०8. फूल में सुगन्ध किसका कार्य है? किसका कार्य नहीं है?

उ० फूल की सुगन्ध – पुद्गलों के गंध गुण का कार्य है, आत्मा का नहीं है। सुगन्ध का ज्ञान – आत्मा के ज्ञान गुण का कार्य है।

प्र०9. शरीर का काला या गोरापना किसका कार्य है? किसका नहीं है?

उ० शरीर का काला या गोरापना – पुद्गलों के वर्ण गुण का कार्य है, आत्मा का नहीं है। काले या गोरापने का ज्ञान – आत्मा के ज्ञान गुण का कार्य है।

प्र०10. पुद्गल के कितने भेद हैं?

उ० दो भेद हैं – (1) परमाणु (2) स्कन्ध।

प्र०11. परमाणु किसे कहते हैं?

उ० जिसका दूसरा विभाग नहीं हो सकता ऐसे सबसे छोटे पुद्गल को परमाणु कहते हैं।

प्र०12. स्कन्ध किसे कहते हैं?

उ० दो या दो से अधिक परमाणुओं के बंध को स्कन्ध कहते हैं।

प्र०13. स्कन्ध के कितने भेद हैं?

उ० (1) आहारवर्गणा (2) तैजस वर्गणा (3) भाषावर्गणा (4) मनोवर्गणा (5) कार्माणवर्गणा – इत्यादि 22 भेद हैं।

(नोट : इनका स्पष्टीकरण वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–3 में आयेगा)

प्र०14. बंध किसे कहते हैं?

उ० जिस संबंध विशेष से <u>अनेक वस्तुओं</u> में एकपने का ज्ञान होता है उस संबंध विशेष को बंध कहते हैं।

प्र०15. बंध कितने प्रकार के हैं?

उ० तीन प्रकार के हैं – (1) जीव बंध (2) पुद्गल बंध (3) उभय बंध।

प्र०16. जीव बंध किसे कहते हैं? जीव बंध में क्या समझना है?

उ० 1. जिस संबंध विशेष से <u>आत्मा और राग द्वेष के भावों</u> में एकपने का ज्ञान होता है उस संबंध विशेष को जीव बंध कहते हैं। जैसे– मैं रागी हूँ, मैं द्वेषी हूँ, मैं क्रोधी हूँ, आदि।

2. जीव बंध में यह समझना है कि आत्मा अलग है और राग–द्वेषादि भाव अलग हैं।

प्र०17. पुद्गल बंध किसे कहते हैं? पुद्गल बंध में क्या समझना है?

उ० 1. जिस संबंध विशेष से <u>अनेक पुद्गलों</u> में एकपने का ज्ञान होता है उस संबंध विशेष को पुद्गल बंध कहते हैं। जैसे– कार, मकान, धन, जेवर आदि।

2. पुद्गल बंध में यह समझना है कि कार आदि एक दिखने वाली वस्तु में अनेक पुद्गल हैं, एक पुद्गल का दूसरे पुद्गल से संबंध नहीं है, तो मुझ आत्मा से संबंध कैसे हो सकता है?

प्र०18. उभय बंध किसे कहते हैं? उभय बंध में क्या समझना है?

उ० 1. जिस संबंध विशेष से <u>आत्मा और शरीर</u> में एकपने का ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशेष को उभय बंध कहते हैं। जैसे– मनुष्य, देव, नारकी, पशु आदि।

2. उभय बंध में यह समझना है कि मनुष्य आदि उभय बंधों में ज्ञान स्वरूप आत्मा अलग है और अनेक पुद्गलों का पिंड मनुष्य शरीर अलग है।

प्र०19. अनादिकाल से जीव को कैसा श्रद्धान है?

उ० जीव अनादिकाल से अनेक शरीर धारण करता है, पूर्व का शरीर छोड़ता है नवीन धारण करता है; वहां एक तो स्वयं आत्मा–जीव द्रव्य और अनन्त पुद्गल परमाणुमय शरीर – इन दोनों के संयोगरूप मनुष्य–तिर्यंचादि अनेक अवस्थायें होती हैं, उन सब में 'यह मैं हूँ' ऐसी अहंबुद्धि करता है, आत्मा और शरीर – इन दोनों में मैं कौन हूँ और मैं कौन नहीं हूँ – ऐसा भेद नहीं कर पाता, दोनों को एक मानता है – इस मिथ्या श्रद्धान के कारण ही आज तक धर्म की प्राप्ति नहीं हुई।

प्र०20. पात्र जीव कौन है?

उ० जो जीव जन्म–मरण के दुःखों को दूर करना चाहता है और स्वयं के आश्रय से अविनाशी सुख प्रगट करना चाहता है – वही पात्र जीव है।

प्र०21. पात्र जीव का प्रथम लक्षण क्या है?

उ० 1. कुगुरू–कुदेव–कुशास्त्र की ओर से हटकर,

2. देव–शास्त्र–गुरू को यथार्थतया पहिचानकर निरन्तर उनका सत्समागम – यह पात्र जीव का प्रथम लक्षण है।

प्र०22. देव–गुरू–शास्त्र कैसे होते हैं? और उनका आदर क्या है?

उ० "मैं आत्मा हूँ, मेरा स्वभाव मात्र जानना ही है, पर मैं कुछ करना मेरा स्वभाव नहीं है क्योंकि प्रत्येक वस्तु कायम रहते हुये स्वयं ही बदल रही है" – इस प्रकार जो बताते हैं वे सच्चे देव–गुरू–शास्त्र हैं। इसी प्रकार जो समझता है वही देव–गुरू–शास्त्र का आदर करता है।

प्र०23. धर्म क्या है?

उ० श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार गाथा 2 में कहा है –

जो आत्मा को चारों गतियों में परिभ्रमण रूप दुःखों से छुड़ाकर उत्तम, अविनाशी, अतीन्द्रिय, मोक्ष सुख में धर दे वह धर्म है। ऐसा धर्म पैसा के बदले में नहीं मिलता, किसी का दिया नहीं मिलता, शरीरादि कृश करने से भी नहीं मिलता।

प्र०24. धर्म कहाँ है और धर्म कैसे होता है?

उ० श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार की गाथा 2 में लिखा है –

"धर्म तो आत्मा का स्वभाव है। शरीरादि परद्रव्यों में आत्मबुद्धि छोड़कर अपने ज्ञानस्वभावी आत्मा का श्रद्धान, ज्ञान और आचरण ही धर्म है"। अर्थात् धर्म तो आत्मा का स्वभाव है अतः अपनी पहिचान से ही धर्म होता है।

प्र०25. जीव संसार में परिभ्रमण क्यों करता है?

उ० यह जीव स्वयं जैसा है वैसा अपने को नहीं पहिचानता और जैसा नहीं है वैसा मानता है – इस विपरीत मान्यता के कारण संसार में परिभ्रमण करता है।

प्र०26. हमें जन्म-मरण का अभाव करना है, धर्म की प्राप्ति करनी है हम आत्मा और शरीर को भिन्न-भिन्न कैसे समझें?

उ० मुनिराज श्रीकुन्दकुन्द ने पंचास्तिकाय संग्रह की गाथा 122 में कहा है –

1. जो सब जानता है, देखता है, सुख की इच्छा करता है, दुःख से डरता है वह जीव है।
2. अचेतन शरीर, इन्द्रियाँ, धन, मकान आदि कुछ जानते नहीं, देखते नहीं, सुख की इच्छा नहीं करते। दुःख से डरते नहीं।
3. अचेतन शरीर के साथ रहने पर भी आत्मा अपना ज्ञान आदि कार्य करता है, शरीर अपना कार्य करता है।
4. जब तक आयुकर्म का उदय रहता है आत्मा और शरीर दोनों साथ रहते हैं परन्तु आत्मा शरीररूप नहीं होता और शरीर आत्मारूप नहीं होता।

प्र०27. शरीर से भिन्न अपनी पहिचान होने पर धर्म किस प्रकार हो जाता है?

उ० "मैं आत्मा हूँ, मुझमें ज्ञान है, मैं ज्ञान से जानता हूँ। शरीरादि जड़ हैं, शरीर में ज्ञान नहीं है, शरीर कुछ जानता नहीं है – ऐसा निर्णय करने पर अपनी ज्ञान-दर्शन की पर्याय, पर से हटकर, निज आत्मा में एकाग्र होती है, यही सम्यग्दर्शन है और सम्यग्दर्शन ही धर्म का प्रारम्भ है।

विशेष नोट

1. प्रतियोगिता के प्रश्नोत्तरों का अभ्यास पाठशाला की नियमित कक्षाओं में कराया जायेगा। **2. श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, झण्डा बाजार में प्रश्नोत्तरों का अभ्यास जुलाई माह की 12, 13 व 14 तारीख में प्रातः 11 से 12 बजे तक कराया जायेगा।** 3. वीतरागविज्ञान प्रतियोगिता – 1 का पारितोषिक वितरण 6 अगस्त को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31-राजा रोड, जैन कालोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 623131

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता - 3

दिनांक 24 सितम्बर, 2000 दिन रविवार दोपहर 3 बजे

(स्थान– श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र०1. वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता नं० 1 व 2 के समस्त प्रश्न व उत्तर ?

प्र०2. द्रव्य का स्वचतुष्टय क्या है?

उ० द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव = यह प्रत्येक द्रव्य का स्वचतुष्टय है। प्रत्येक द्रव्य का स्वचतुष्टय उसके अन्दर ही है, बाहर नहीं है।

प्र०3. प्रत्येक द्रव्य का पृथक-पृथक क्षेत्र अर्थात् आकार क्या है?

उ० जीव, धर्म और अधर्मद्रव्य असंख्यातप्रदेशी हैं, पुद्गल और कालद्रव्य एक प्रदेशी हैं और आकाश द्रव्य अनन्त प्रदेशी है।

प्र०4. प्रत्येक द्रव्य का 'काल' क्या है?

उ० प्रत्येक द्रव्य का काल अनादिअनन्त है।

प्र०5. प्रत्येक द्रव्य का भाव क्या है?

उ० प्रत्येक द्रव्य के अन्दर रहने वाले अनन्त सामान्य गुण व अनन्त विशेष गुण – द्रव्य का भाव अर्थात् खजाना है।

प्र०6. द्रव्य की महिमा किससे है?

उ० प्रत्येक द्रव्य की महिमा उसके अनन्त गुणों से है क्योंकि द्रव्य का लक्षण ही गुण-पर्यायों वाला है। जीव द्रव्य की महिमा उसके ज्ञान-दर्शनादि अनन्त गुणों से है; धन-वैभव, स्त्री-पुरुष, गाड़ी-बंगला, रूप-बल, बाहय शुभ अशुभ क्रियाओं से जीवद्रव्य की महिमा नहीं है।

प्र०7. प्रत्येक द्रव्य में कितने गुण हैं?

उ० प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं। जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं – इन सभी द्रव्यों में गुण संख्या अपेक्षा समान हैं, कम या अधिक नहीं।

प्र०8. प्रत्येक द्रव्य मे गुणों की संख्या का माप क्या है?

उ० (1) जीव अनन्त हैं, (2) जीव से अनन्तगुने अधिक परमाणु हैं, (3) परमाणुओं से अनन्तगुने अधिक तीन काल के समय हैं, (4) तीन काल के समयों से अनन्तगुने अधिक आकाश के प्रदेश हैं, और (5) आकाश के प्रदेशों से अनन्तगुने अधिक एक द्रव्य में (प्रत्येक द्रव्य में) गुण हैं।

प्र०9. क्या प्रत्येक जीवद्रव्य में गुण समान संख्या में है? इसके जानने से लाभ क्या है?

उ० प्रत्येक जीवद्रव्य में चाहे वह निगोदिया हो, दो–तीन–चार–पाँच इन्द्रिय तिर्यंच हो, मनुष्य हो, देव या नारकी हो, मिथ्यादृष्टि हो या सम्यकदृष्टि हो, श्रावक–मुनि–अरहंत या सिद्ध परमात्मा हो – संख्या अपेक्षा गुण समान ही हैं, कम या अधिक नहीं है। ऐसा जानने से दीनता व अभिमान की भावना का नाश हो जाता है।

प्र०10. जीव द्रव्य चेतन है, बाकी सभी द्रव्य अचेतन हैं, तो सभी द्रव्यों में गुण समान कैसे हो सकते हैं?

उ० प्रत्येक द्रव्य में गुण संख्या अपेक्षा समान ही हैं। अन्तर मात्र इतना है कि चेतन द्रव्य के गुण पर्याय चेतन (ज्ञान–दर्शन सहित) होते हैं और अचेतन द्रव्यों के गुण पर्याय अचेतन (ज्ञान–दर्शन रहित) होते हैं।

प्र०11. द्रव्य में गुण किस प्रकार रहते हैं?

उ० (1) गुण द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में तथा द्रव्य की सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहते हैं।

(2) गुण द्रव्य में डाले (बढ़ाये) अथवा निकाले (घटाये) नहीं जा सकते।

(3) गुण द्रव्य से किसी प्रकार भी पृथक नहीं किये जा सकते क्योंकि प्रत्येक द्रव्य और उसके गुणों का द्रव्य–क्षेत्र–काल एक ही है।

प्र०12. द्रव्य में गुण किस प्रकार रहते हैं? उदाहरण देकर समझाइये।

उ० द्रव्य में गुण चीनी में मिठास की भांति रहते हैं क्योंकि –

(1) मिठास चीनी के सम्पूर्ण भागों में है।

(2) मिठास चीनी की सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहती है, और

(3) मिठास को चीनी से किसी प्रकार भी पृथक नहीं किया जा सकता।

प्र०13. द्रव्य में गुण किस प्रकार नहीं रहते? उदाहरण देकर समझाइये।

उ० द्रव्य में गुण थैली में रूपयों की भांति नहीं रहते क्योंकि –

(1) रूपये थैली के सम्पूर्ण भाग में नहीं रहते,

(2) रूपये थैली की सम्पूर्ण अवस्थाओं में नहीं रहते,

(3) रूपये थैली में डाले व निकाले जा सकते हैं, और

(4) रूपये बिखर कर अलग–अलग हो सकते हैं।

प्र०14. गुणरहित द्रव्य का नाम बताओ ?

उ० कोई भी द्रव्य गुणरहित नहीं होता क्योंकि गुणों के समूह को ही द्रव्य कहते हैं।

प्र०15. द्रव्य का अपने गुणों के साथ कैसा सम्बन्ध है?

उ० द्रव्य का अपने गुणों के साथ तादात्म्यसिद्ध सम्बन्ध है अर्थात् कभी समाप्त न होने वाला सम्बन्ध है।

प्र०16. छहों द्रव्यों के विशेष गुणों को जानने से क्या लाभ है?

उ० (1) सब द्रव्यों की पृथकता का यथार्थ ज्ञान होता है कि –

(अ) जिसमें ज्ञान दर्शन पाया जाये वह जीव है और जिनमें मेरा ज्ञान दर्शन नहीं वे सब (अन्य जीवों सहित) अजीव हैं।

(ब) जिसमें स्पर्श–रस–गंध–वर्ण पाया जाये वह पुद्गल है, पुद्गल मुझ आत्मा से सर्वथा भिन्न है।

(स) गतिहेतुत्व से धर्मद्रव्य की, स्थितिहेतुत्व से अधर्मद्रव्य की, अवगाहनहेतुत्व से आकाश व परिणमनहेतुत्व से कालद्रव्य की पहचान होने पर पता चलता है कि ज्ञान–दर्शन स्वभावी आत्मा का धर्म–अधर्म–आकाश–काल द्रव्यों से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

(2) स्व–पर का भेदविज्ञान होता है जिससे मोह का सर्वथा अभाव होता है।

(3) सर्वद्रव्यों से सर्वथा भिन्न एकमात्र निज आत्मा ही उपादेय है – ऐसा पता चल जाता है।

प्र०17. छहों द्रव्यों के विशेष गुणों को यथार्थतया नहीं जानने का फल क्या है?

उ० जो जीव छहों द्रव्यों के विशेषगुणों को यथार्थतया नहीं जानता वह ज्ञान–दर्शन–सुख–वीर्य–श्रद्धा–चारित्र आदि अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड अपनी आत्मा को नहीं पहचान पाता, शरीरादि परद्रव्यों मे ही आत्मबुद्धि करता हुआ, चारों गतियों में ही जन्म–मरण के दुःख भोगता है।

प्र०18. इस संदर्भ में मुनिराज श्री योगीन्दुदेव ने क्या कहा है?

उ० श्री योगीन्दुदेव आचार्य ने श्री योगसार की गाथा 10 व 11 में कहा है –

देहादिउ जे परि कहिया ते अप्पाणु मुणेइ।
सो बहिरप्पा जिणभणिउ पुणु संसारू भमेइ।। 10 ।।

अर्थ – देह आदि जो पदार्थ पर कहे गये हैं, उन पदार्थों को ही जो आत्मा समझता है, उसे जिनभगवान् ने बहिरात्मा कहा है। वह जीव संसार में फिर फिर से परिभ्रमण करता है।

देहादिउ जे परि कहिया ते अप्पाणु ण होहि।
इउ जाणेविणु जीव तुहुँ अप्पा अप्प मुणेहि।। 11 ।।

अर्थ – देह आदि जो पदार्थ पर कहे गये हैं, वे पदार्थ आत्मा नहीं होते– यह जानकर, हे जीव ! तू आत्मा को आत्मा पहिचान।

प्र०19. शरीर कितने हैं?

उ० शरीर पाँच हैं– 1. औदारिक, 2. वैक्रियक, 3. आहारक, 4. तैजस, 5. कार्माण।

प्र०20. औदारिक शरीर किसको कहते हैं?

उ० मनुष्य और तिर्यंचों के स्थूल शरीर को औदारिक शरीर कहते हैं।

प्र०21. वैक्रियक शरीर किसको कहते हैं?

उ० जो छोटे–बड़े, पृथक–अपृथक आदि अनेक क्रियाओं को करे ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियक शरीर कहते हैं।

प्र०22. आहारक शरीर किसको कहते हैं?

उ० आहारक ऋद्धिधारी छठे गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्वों में कोई शंका होने पर अथवा जिनालयादि की वन्दना करने के लिए, मस्तक से एक हाथ प्रमाण स्वच्छ और सफेद, सप्तधातु रहित पुरूषाकार जो पुतला निकलता है उसको आहारक शरीर कहते हैं।

प्र०23. तैजस शरीर किसको कहते हैं?

उ० औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीरों में कान्ति उत्पन्न करने वाले शरीर को तैजस शरीर कहते हैं।

प्र०24. कार्माण शरीर किसको कहते हैं?

उ० आठ कर्मों के समूह को कार्माण शरीर कहते हैं।

प्र०25. एक जीव के एक साथ कितने शरीर का संयोग हो सकता है?

उ० एक जीव के एक साथ कम से कम दो और अधिक से अधिक चार शरीर का संयोग होता है। खुलासा इस प्रकार है–

(1) विग्रहगति में तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।

(2) मनुष्य और तिर्यंच के औदारिक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।

(3) देव और नारकियों के वैक्रियक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।

(4) आहारक ऋद्धिधारी मुनि के औदारिक, आहारक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।

प्र०26. स्कन्ध के कितने भेद हैं?

उ० आहारवर्गणा, तैजसवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माणवर्गणा इत्यादि 22 भेद हैं।

प्र०27. आहारवर्गणा किसको कहते हैं?

उ० जो पुद्गल स्कन्ध औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीरों की रचना करता है उसको आहारवर्गणा कहते हैं।

प्र०28. तैजसवर्गणा किसको कहते हैं?

उ० जिस वर्गणा से तैजस शरीर बनता है उसको तैजसवर्गणा कहते हैं।

प्र०29. भाषावर्गणा किसे कहते हैं?

उ० जो पुद्गल स्कन्ध शब्द रूप से परिणत होता है उसको भाषावर्गणा कहते हैं।

प्र०30. मनोवर्गणा किसको कहते हैं?

उ० जिस पुद्गल स्कन्ध से अष्टदल कमल के आकार द्रव्यमन की रचना होती है उसको मनोवर्गणा कहते हैं।

प्र०31. कार्माणवर्गणा किसको कहते हैं?

उ० जिस पुद्गल स्कन्ध से कार्माण शरीर बनता है उसको कार्माणवर्गणा कहते हैं।

"पुद्गल की 27 पर्यायों से भेद विज्ञान किस प्रकार करना"

प्र०1. शरीर का हल्कापना क्या है? क्या आत्मा भी हल्का–भारी होता है?

उ० शरीर में हल्कापना पुद्गल द्रव्य के स्पर्शगुण की विभाव अर्थपर्यायें है, आत्मा न हल्का है न भारी, आत्मा तो शरीर के हल्केपने को मात्र जानता है।

प्र०2. अज्ञानी शरीर के हल्केपने को जानकर क्या करता है?

उ० अज्ञानी मात्र जानने वाला नहीं रहता, शरीर के ज्यादा हल्केपने में द्वेष करता है और ठीक होने पर राग करता है।

प्र०3. इसमें राग द्वेष किस प्रकार हुआ? और राग द्वेष का फल क्या है?

उ० स्वयं ज्ञानस्वरूप आत्मा है, शरीर का हल्कापना पुद्गलों के स्पर्श गुण का कार्य है। अर्थात् शरीर का हल्कापना परद्रव्य का कार्य है। दूसरे द्रव्य के कार्य से निज आत्मा में लाभ मानना राग है और दूसरे द्रव्य के कार्य से निज आत्मा में नुकसान मानना द्वेष है। इस राग द्वेष का फल अनन्त संसार है।

प्र०4. हमें अनन्त संसार में नहीं भटकना है, हम शरीर के हल्केपने को आत्मा का माननेरूप मोह–राग द्वेष का अभाव कैसे करें?

उ० मैं अस्पर्शस्वभावी ज्ञानस्वरूप आत्मा हूँ, शरीर का हल्कापना पुद्गलों के स्पर्श गुण की विभाव अर्थपर्यायें हैं। ऐसा जानकर अपनी ज्ञान दर्शन की पर्याय को शरीर के हल्केपने से हटाकर ज्ञानस्वरूप आत्मा में एकाग्र करें तो शरीर के हल्केपने को आत्मा का माननेरूप मोह–राग–द्वेष का अभाव हो जाता है अर्थात् आस्रव–बंध (दुःख) का अभाव हो जाता है और सुख अर्थात् संवर निर्जरा की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

[***विशेष नोट*** –पुद्गल द्रव्य के स्पर्श गुण की – हल्कापना पर्याय की भाँति भारी, ठंडा, गरम, रूखा, चिकना, कड़ा, नरम, खट्टा–मीठा, कड़वा, चरपरा, कषायला, सुगन्ध, दुर्गन्ध, काला, पीला, नीला, लाल, सफेद, निन्दा व प्रशंसा के शब्द – इन पर्यायों पर भी उपरोक्त प्रश्न 1 से 4 के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर अभ्यास करना है।]

प्र०5. मुनिराज श्री कुन्दकुन्ददेव ने आत्मा और पुद्गल की 27 पर्यायों की भिन्नता के विषय में क्या कहा है?

उ० मुनिराज श्री कुन्दकुन्ददेव ने महान ग्रंथाधिराज श्री समयसार की 390 से 404 तक की गाथाओं में कहा है –

"निज भगवान आत्मा का हल्का–भारी, ठंडा–गरम, रूखा–चिकना, कड़ा–नरम रूप स्पर्श के साथ, खट्टा–मीठा–कड़वा–चरपरा, कषायला रूप रस के साथ, सुगन्ध–दुर्गन्ध रूप गंध के साथ, काला–पीला–नीला–लाल–सफेद रूप वर्ण के साथ, सात प्रकार के शब्दों के साथ, पुद्गलबंधों व उभयबंधों के साथ, आठ कर्मों के साथ– सर्वथा सम्बन्ध नहीं है क्योंकि पुद्गल द्रव्य अचेतन है, उसमें ज्ञान नहीं है और मैं आत्मा ज्ञानवाला हूँ, निरन्तर जानता हूँ, इसलिये आत्मा भिन्न है और पुद्गल (शरीर) भिन्न है– ऐसा अनादि से जिनदेव कहते हैं"।

प्र०6. शरीर के हल्केपने आदि को जानकर राग–द्वेष करना अज्ञान है– इस विषय में मुनिराज श्री कुन्दकुन्ददेव ने क्या कहा है?

उ० मुनिराज श्री कुन्दकुन्ददेव ने महान ग्रंथाधिराज श्री समयसार की 373 से 382 तक की गाथाओं में कहा है–

(1) औदारिक आदि शरीरों में स्पर्श की हल्कापना आदि आठ पर्यायें, रस की पाँच पर्यायें, गंध की दो पर्यायें, वर्ण की पाँच पर्यायें, शब्द की सात पर्यायें, धन, मकान, कार, जेवर आदि पुद्गलबंध व पुरुष, स्त्री, लड़का, लड़की आदि उभयबंध– ये सब परद्रव्य हैं। ये सब परद्रव्य मुझ आत्मा से यह नहीं कहते कि तू मुझे स्पर्श कर, तू मुझे चख, तू मुझे सूंघ, तू मुझे देख, तू मुझे सुन, तू मुझे जान।

(2) मुझ आत्मा भी अपनी सत्ता छोड़कर उन्हें जानने नहीं जाता क्योंकि प्रत्येक द्रव्य– अस्तित्व वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुण, अनन्त विशेष गुण, एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्यायों रूप– अपनी–अपनी सत्ता में रहता है, अपनी सत्ता से बाहर न निकला है और न निकल सकता है।

(3) ये परद्रव्य दूर हों या समीप हों– मुझ आत्मा अपने स्वभाव से ही जानता है।

(4) ये परद्रव्य मनोहर हों या अमनोहर हों– मुझ आत्मा में किंचित विशेषता उत्पन्न नहीं कर सकते।

(5) मुझ आत्मा–दीपक की भाँति– पुद्गल की पर्यायों के प्रति सम्बन्ध रहित है।

(6) तथापि शरीर के हल्केपने आदि को जानकर राग द्वेष करना – सो अज्ञान है, संसार का कारण है।

(7) संसार में नहीं भटकना है तो ज्ञानस्वरूप अपनी आत्मा को पुद्गल की पर्यायों से सर्वथा भिन्न जान।

विशेष नोट

1. प्रतियोगिता के प्रश्नोत्तरों का अभ्यास पाठशाला की नियमित कक्षाओं में कराया जायेगा। **2. श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, झण्डा बाजार में प्रश्नोत्तरों का अभ्यास प्रत्येक बुधवार को प्रातः 11 से 12 बजे तक कराया जायेगा।** 3. वीतरागविज्ञान प्रतियोगिता – 2 का पारितोषिक वितरण 24 सितम्बर को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

३१–राजा रोड, जैन कालोनी, देहरादून, फोन नं० (०१३५) ६२३१३१

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–4

दिनांक १२ नवम्बर २००० दिन रविवार दोपहर ३ बजे

(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गाँधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र०१ निम्नलिखित १ से ३५ तक के प्रश्नों के उत्तर पक्के याद करके नई कापी में लिखिये।

(१) देव–शास्त्र – गुरु किसे कहते हैं ?
(२) कुदेव – कुशास्त्र – कुगुरु किसे कहते हैं ?
(३) जाति अपेक्षा और संख्या अपेक्षा विश्व किसे कहते हैं ?
(४) द्रव्य किसे कहते हैं ? व गुण किसे कहते हैं ?
(५) गुणों के कितने भेद हैं ? सामान्य और विशेष गुण किसे कहते हैं ?
(६) जीवादि प्रत्येक द्रव्य में कौन कौन से विशेष गुण हैं ?
(७) सामान्य गुण कितने हैं व कौन–कौन से हैं ?
(८) अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्व व प्रदेशत्व गुणों की परिभाषा क्या है?
(९) पर्याय किसे कहते हैं व पर्याय के कितने भेद हैं ?
(१०) व्यंजनपर्याय, स्वभावव्यंजन पर्याय व विभाव व्यंजन पर्याय किसे कहते हैं ?
(११) अर्थपर्याय, स्वभाव अर्थपर्याय व विभाव अर्थपर्याय किसे कहते है ?
(१२) विश्व – द्रव्य – गुण – पर्याय का रहस्य क्या हैं ?
(१३) जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल–प्रत्येक द्रव्य की पृथक पृथक सत्ता क्या हैं ?
(१४) प्रयोजनभूत तत्व कितने हैं व कौन–कौन से है ?
(१५) सात तत्वों की परिभाषा क्या–क्या है व प्रत्येक किस प्रकार प्रयोजनभूत है ?
(१६) पुद्गल के स्पर्श–रस–गंध–वर्ण आदि गुणों की कितनी पर्यायें होती हैं ?
(१७) पुद्गल के कितने भेद हैं ? परमाणु व स्कन्ध की परिभाषा ?

(१८) बंध किसे कहते हैं ? बंध कितने प्रकार के हैं ?
(१९) जीव बंध, पुद्गल बंध, उभयबंध किसे कहते हैं व प्रत्येक में क्या समझना है ?
(२०) शरीर कितने हैं ? प्रत्येक की परिभाषा क्या है ?
(२१) स्कन्ध के कितने भेद हैं ? प्रत्येक की परिभाषा क्या है ?
(२२) जीव–पुद्गल–धर्म–अधर्म–आकाश–काल–प्रत्येक द्रव्य का पृथक–पृथक द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव क्या है ?
(२३) प्रत्येक द्रव्य में गुणों की संख्या का माप क्या है ?
(२४) क्या प्रत्येक जीवद्रव्य में गुण समान संख्या में हैं ? इसके जानने से लाभ ?
(२५) द्रव्य में गुण किस प्रकार रहते हैं ?
(२६) द्रव्य में गुण किस प्रकार रहते हैं ? और किस प्रकार नहीं रहते ? दोनों का उदाहरण देकर स्पष्टीकरण करिये ?
(२७) गुणरहित द्रव्य का नाम बताओ ? द्रव्य और गुणों का सम्बन्ध बताओ ?
(२८) छहों द्रव्यों के विशेष गुणों को जानने के क्या लाभ है ? और न जानने से क्या नुकसान हैं ?
(२९) मैं भारी हूँ – इस वाक्य में शरीर के भारीपने से भेदविज्ञान किस प्रकार करना ? चार प्रश्न लगाकर समझाइये ?
(३०) जिनमत की परिपाटी क्या है ?
(३१) अनादिकाल से जीव को कैसा श्रद्वान है ?
(३२) देव गुरु शास्त्र कैसे होते हैं ? उनका आदर क्या है ?
(३३) धर्म क्या है ? धर्म कहाँ है ? धर्म कैसे मिलता है ?
(३४) शरीर से भिन्न अपनी पहचान होने पर धर्म किसप्रकार हो जाता है ?
(३५) वीतराग – विज्ञान प्रतियोगिता १ – २ व ३ में अब तक आपने किस–किस आचार्य के, किस किस ग्रन्थ की, किस–किस गाथा या पृष्ठ का अभ्यास किया है– नाम व न० लिखिये ?

प्र०२ जैन धर्म के अमूल्य सिद्वान्त क्या हैं ?

उ०(१) एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का स्वामी नहीं, एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कर्त्ता नहीं, एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का भोक्ता नहीं–क्योंकि

A– प्रत्येक द्रव्य की सत्ता अलग अलग है।

B– प्रत्येक द्रव्य का द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अलग अलग है।

इसलिये देह आदि पर द्रव्यों का स्वामी बनकर मोह–राग–द्वेष करना उचित नहीं।

(२) द्रव्य – गुण को व्यापक कहते हैं और पर्याय को व्याप्य कहते हैं, अतः व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध एक द्रव्य का उसकी पर्याय में ही होता है, दो भिन्न–२ द्रव्यों में नहीं। जैसे सोना और आभूषण में व्याप्य व्यापक सम्बन्ध है, सुनार और आभूषण में नहीं।

प्र०३ एक कार्य के कितने कर्त्ता कहलाते हैं ?

उ० एक कार्य के चार कर्त्ता कहलाते हैं ?

१) निमित कारण

२) त्रिकाली उपादान कारण

३) अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय क्षणिक उपादान कारण

४) उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण

(इसका विस्तृत स्पष्टीकरण वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता न०५ में होगा)

प्र०४ कषाय किसे कहते हैं ?

उ० कष अर्थात् संसार, आय अर्थात् लाभ। जीव के जिस भाव से संसार का लाभ हो अर्थात् चारों गतियों में परिभ्रमण हो उसे कषाय कहते हैं।

प्र०५ कषाय कितने प्रकार की हैं ?

उ० चार प्रकार की हैं –

१) अनन्तानुबंधी क्रोध–मान–माया–लोभ ३) प्रत्याख्यान क्रोध–मान–माया–लोभ

२) अप्रत्याख्यान क्रोध–मान–माया–लोभ ४) संज्वलन क्रोध–मान–माया–लोभ

प्र०६ वीतरागता कितने प्रकार की होती हैं ?

उ० वीतरागता चार प्रकार की होती है

१) स्वरूपाचरण चरित्र २) देशचारित्र ३) सकल चारित्र ४) यथाख्यात चारित्र

प्र०७ चारों प्रकार की वीतरागता किस द्रव्य के किस गुण का कार्य है ?

उ० चारों प्रकार की वीतरागता जीवद्रव्य के चारित्रगुण की स्वभाव अर्थ पर्यायें हैं।

प्र०८ चारों प्रकार की वीतरागता की प्राप्ति का क्रम क्या है ?

उ०

कषाय का अभाव	*वीतरागता की प्राप्ति*	*गुणस्थान*	*नाम*
१. अनन्तानुबंधी क्रोधादि	स्वरूपाचरणचारित्र	चौथा	अविरत सम्यक्दृष्टि
२. अप्रत्याख्यान क्रोधादि	देशचारित्र	पाँचवा	व्रती श्रावक
३. प्रत्याख्यान क्रोधादि	सकलचारित्र	छटा–सातवाँ	मुनिराज
४. संज्वलन क्रोधादि	यथाख्यात चारित्र	बारहवाँ	मुनिराज

गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं यह निर्णय किस प्रकार करना ?

(१) मैं मनुष्य हूँ – इसमें मनुष्य शरीर औदारिक शरीर है, इसका कर्त्ता आहारवर्गणा है, मुझ आत्मा नहीं – ऐसा माना तो गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं – ऐसा निर्णय हो।

(२) यह देव है – देव वैक्रियक शरीर है, इसका कर्त्ता आहारवर्गणा है आत्मा नहीं – ऐसा माना तो गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं – ऐसा निर्णय हो।

(३) भगवान ने आठ कर्मों का नाश किया – इसमें आठ कर्म कार्माण शरीर है, इनका कर्त्ता कार्माणवर्गणा है, भगवान की आत्मा नही – ऐसा माना तो गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं – ऐसा निर्णय हो।

(४) मुझे बुखार हो गया – इसमें गर्मपना पुद्गलों के स्पर्शगुण का कार्य है मुझ आत्मा का नहीं – ऐसा माना तो गुणों के कार्य को पर्याय कहते है – ऐसा निर्णय हो

(५) यह मेरा सोने का हार है – इसमें सोने का हार औदारिक शरीर है , इसका कर्त्ता आहारवर्गणा है मुझ आत्मा नहीं – ऐसा माना तो गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं – ऐसा निर्णय हो।

(६) मै बोली – इसमें शब्द का कर्त्ता भाषावर्गणा है, मुझ आत्मा नहीं – ऐसा माना तो गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं – ऐसा निर्णय हो।

उपरोक्त निर्णय का फल

इस प्रकार वस्तु स्वरूप का अभ्यास करने से शरीर, मकान, रूपया–पैसा, गाडी, सोना–चाँदी आदि परद्रव्यों में से स्वामीपने की, कर्त्ता–भोक्तापने की मान्यता नष्ट हो जाती है, कषाय उत्पन्न नहीं होती, वीतरागता उत्पन्न हो जाती है, जन्म–मरण का अभाव हो जाता है।

विशेष नोट

(१) प्रतियोगिता के प्रश्नोत्तरों का अभ्यास पाठशाला की नियमित कक्षाओं में कराया जायेगा। (२) श्री दिगम्बर जैन मन्दिर, झण्डा बाजार में प्रश्नोत्तरों का अभ्यास प्रत्येक बुधवार को प्रातः ११ से १२ बजे तक कराया जायेगा। (३) वीतरागविज्ञान प्रतियोगिता–३ का पारितोषिक वितरण १२ नवम्बर को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

३१–राजा रोड, जैन कालोनी, देहरादून, फोन नं० (०१३५) ६२३१३१

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–5

दिनांक २८जनवरी २००१ दिन रविवार दोपहर २ बजे

(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गाँधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र०१ निम्नलिखित १ से ३२ तक के प्रश्नों के उत्तर पक्के याद करके नई कापी में लिखिये।

(१) देव – शास्त्र – गुरू व कुदेव – कुशास्त्र – कुगुरू किसे कहते हैं ?
(२) जाति अपेक्षा और संख्या अपेक्षा विश्व किसे कहते हैं ?
(३) द्रव्य, गुण, सामान्य और विशेष गुण किसे कहते हैं ?
(४) जीवादि प्रत्येक द्रव्य में कौन कौन से विशेष गुण हैं ?
(५) सामान्य गुण कितने हैं व कौन–कौन से हैं ? प्रत्येक की परिभाषा लिखिये।
(६) पर्याय, व्यंजनपर्याय, स्वभाव व विभाव व्यंजनपर्याय किसे कहते हैं ?
(७) अर्थपर्याय, स्वभाव व विभाव अर्थपर्याय किसे कहते है ?
(८) विश्व – द्रव्य – गुण – पर्याय का रहस्य क्या हैं ?
(९) जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल–द्रव्यों की पृथक पृथक सत्ता क्या है ?
(१०) प्रयोजनभूत साततत्वों की परिभाषा व प्रत्येक किस प्रकार प्रयोजनभूत है ?
(११) पुद्गल के स्पर्श–रस–गंध–वर्ण आदि गुणों की कितनी पर्यायें होती हैं ?
(१२) निम्नलिखित पर्यायें किस द्रव्य के किस गुण का कार्य है –
हल्कापन, गोरापन, दुर्गंध, खट्टापन, मिथ्यादर्शन, मीठापना, सकलचारित्र, नरमपना, मीठे का ज्ञान, रूखा, कडा, राग–द्वेष, सुख, सम्यक्दर्शन, मिथ्याचारित्र, कडवा, कषाय, यथाख्यातचारित्र, पीला व लाल, मतिज्ञान व श्रुतज्ञान
(१३) पुद्गल के कितने भेद हैं ? परमाणु व स्कन्ध की परिभाषा ?
(१४) बंध किसे कहते हैं ? बंध कितने प्रकार के हैं व प्रत्येक मे क्या समझना है ?
(१५) निम्न कौन–कौन सा बंध है, इसमें अनेक वस्तुयें क्या हैं ?
मनुष्य, मैं क्रोधी हूँ, स्त्री, कार, मकान, मैं दयावाला, मैं रागी हूँ, देव, शेर, बिच्छु, कीडी, लडका, पुत्री।
(१६) शरीर कितने हैं ? प्रत्येक की परिभाषा क्या है ?
(१७) निम्नलिखित के शरीर का नाम क्या है और उसका कर्त्ता कौन है –
निगोदिया शरीर, पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, कीडा–मकोडा, मक्खी, मच्छर, चिडिया, कौआ, तोता, मछली, हाथी–शेर, कुत्ता, बिल्ली, मनुष्य, नारक, आहारक ऋद्धिधारी के मस्तक का पुतला आठकर्म मनुष्य शरीर की चमक, आहारक शरीर की चमक
(१८) स्कन्ध के भेद, प्रत्येक की परिभाषा व निम्न कार्यों का कर्त्ता कौन सी वर्गणा है ?
बोलना, चलना, हार, कपडे, मकान, द्रव्यमन, तैजस शरीर, घंटे की आवाज, दौडना, कार्माण शरीर, रोटी, मधुर स्वर ।

(१९) गुणों के कार्य को पर्याय कहते है यह निर्णय किस प्रकार करना ? दो उदाहरण देकर समझाइये और इस निर्णय का फल क्या है।

(२०) जीव–पुद्गल–धर्म–अधर्म–आकाश–काल–प्रत्येक द्रव्य का पृथक–पृथक द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव क्या है ?

(२१) प्रत्येक द्रव्य में गुणों की संख्या का माप क्या है ?

(२२) क्या प्रत्येक जीवद्रव्य मे गुण समान संख्या में है ? इसके जानने से लाभ ?

(२३) द्रव्य में गुण किस प्रकार रहते है ? और किस प्रकार नहीं रहते ? दोनों का उदाहरण देकर स्पष्टीकरण करिये ?

(२४) छहों द्रव्यों के विशेष गुणों को जानने के लाभ और न जानने से क्या नुकसान है?

(२५) जिनमत की परिपाटी क्या है अनादिकाल से जीव को कैसा श्रद्धान है ?

(२६) धर्म क्या है ? धर्म कहाँ है ? धर्म कैसे मिलता है ?

(२७) शरीर से भिन्न अपनी पहचान होने पर धर्म किसप्रकार हो जाता है ?

(२८) जैन धर्म के अमूल्य सिद्धान्त क्या हैं ?

(२९) एक कार्य के कितने कर्त्ता कहलाते हैं ?

(३०) कषाय किसे कहते हैं व कषाय कितने प्रकार की हैं ?

(३१) वीतरागता कितने प्रकार की होती हैं ? प्रत्येक किसद्रव्य के किसगुण का कार्य है?

(३२) चारों प्रकार की वीतरागता की प्राप्ति का क्रम क्या है ?

प्र०२ **मन्दिर की बेदी मे विराजमान पूर्ण वीतरागी और सर्वज्ञ भगवान क्या कर रहें है?**

उ० भगवान अपनी आत्मा में पूर्णलीन अतीन्द्रिय सुख का भोग कर रहे हैं।

प्र०३ **मन्दिर की बेदी में विराजमान भगवान हमें क्या संदेश देरहें है ?**

उ० "मैंने शरीरादि परद्रव्यों से सर्वथा भिन्न अपनी आत्मा का स्वरूप समझकर, अपने आत्मा में पूर्ण लीनता करके, इस परमातम पद को प्राप्त किया, तू भी अपनी आत्मा का स्वरूप समझकर स्वयं में लीन हो जा" –यह संदेश भगवान दे रहें हैं।

प्र०४ **मुझ आत्मा का स्वरूप कैसा है ?**

उ० चेतन को है उपयोग रूप बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल इनतैं न्यारी है जीव चाल।।

अर्थः १. **'चेतन को है उपयोग रूप'** अर्थात् मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ और मेरा कार्य ज्ञाता दृष्टा है।

२. **'बिन्मूरत'** अर्थात आँख, नाक, कान औदारिक आदि शरीरोंरूप मेरी मूर्ति नहीं है।

३. **'चिन्मूरत'** अर्थात चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।

४. **'अनूप'** अर्थात सर्वज्ञ स्वभावी होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।

५. **'पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल इनतैं न्यारी है जीव चाल'** अर्थात् मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक एक और काल द्रव्य असंख्यात है–इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बंध नहीं है।

प्र०५ **मिथ्यादृष्टि जीव को धर्म की प्राप्ति क्यों नहीं होती ?**

उ० शरीरादि परद्रव्यों से सर्वथा भिन्न अपनी आत्मा को न पहचानने के कारण मिथ्यादृष्टि जीव आत्मा के कार्यों और शरीरादि के कार्यों के बीच निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध को नहीं जानता, दोनों को एक मानकर आत्मा और शरीर में कर्त्ता–कर्म मानता है, फलस्वरूप मोह, राग, द्वेष की वृद्धि करता हुआ संसार में ही परिभ्रमण करता रहता है।

प्र०६ **एक ही समय में आत्मा और शरीरादि परद्रव्यों का कार्य भिन्न–भिन्न किस प्रकार हो रहा है ?**

उ० एक ही समय में आत्मा और शरीरादि परद्रव्यों का कार्य भिन्न–भिन्न किस प्रकार होतें है नीचे चार्ट में देखें –

त्रिकाली उपादान कारण	कुम्हार का ज्ञान गुण	कुम्हार का चारित्र गुण	हाथ चाक आदि आहारवर्गणा के स्कन्ध	मिट्टी
	सामान्य – व्यापक १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	सामान्य – व्यापक १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	सामान्य – व्यापक १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	सामान्य – व्यापक १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८
अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय क्षणिक उपादान कारण	पर्याय ९	पर्याय ९	पर्याय ९	पर्याय ९
उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादानकारण	१०	१०	१०	१०
(कार्य) उपादेय	ज्ञान हुआ	राग हुआ	हाथ, चाक आदि की क्रिया	घड़ा बना

निमित्त – नैमित्तिक – सम्बन्ध

प्र०७ **निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध किसे कहते हैं ?**

उ० उपादान स्वयं स्वतः कार्यरूप परिणमित होता है उस समय भावरूप या अभावरूप किस उचित निमित्त कारण का उस कार्य के साथ सम्बन्ध है यह बताने के लिए उस कार्य को नैमितिक कहते हैं। इसप्रकार भिन्न–भिन्न पदार्थों के स्वतंत्र सम्बन्ध को निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध कहते हैं।

प्र०८ **कुम्हार ने घडा बनाया– इस वाक्य पर निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध की परिभाषा लगाकर बताइये ?**

उ० उपादान अर्थात् मिट्टी स्वयं स्वतः कार्यरूप अर्थात् घडेरूप परिणमित होती है उस समय भावरूप या अभावरूप किस उचित निमित्त कारण का अर्थात् ज्ञान, राग, हाथ, चाक आदि का उस कार्य के अर्थात् घडा बनने के साथ सम्बन्ध है – यह बताने के लिये उस कार्य को अर्थात् घडा बनने को नैमितिक कहते हैं। इस प्रकार भिन्न भिन्न पदार्थो के अर्थात् ज्ञान, राग, हाथ, चाक आदि के और घडा बनने के स्वतंत्र सम्बन्ध को निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध कहते हैं।

इससे क्या सिद्ध हुआ ?

जिस समय मिट्टी में घडे रूप कार्य हुआ, उसी समय जीव के ज्ञानगुण में ज्ञानकार्य हुआ, जीव के चारित्रगुण में रागपरिणाम हुआ, हाथ रूप आहारवर्गणा में हाथ के हलन चलन रूप परिणाम हुआ, चाक आदि रूप आहारवर्गणा मे चाक के हलन चलन रूप परिणाम हुआ। सबका द्रव्य क्षेत्र काल भाव अलग अलग है अतः एक का दूसरे से कोई सम्बन्ध नहीं है परन्तु सब कार्यो का समय एक है – इसे ही निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध कहते है

प्र०९ **निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध और व्याप्य व्यापक सम्बन्ध में क्या अन्तर है ?**

उ०१ निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध भिन्न–भिन्न द्रव्यों की एक समय की पर्यायों के बीच होता है।

२ व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध एक द्रव्य का उसकी पर्यायों के साथ होता है।

प्र०१० निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध और व्याप्य व्यापक सम्बन्ध को कुछ उदाहरण देकर समझाइये ?

उ० १) मिट्टी और घडे में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। कुम्हार का ज्ञान, राग, हाथ चाक आदि और घडे में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है।
२) सोना और आभूषण मे व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। सुनार, औजार व आभूषण में निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध है।
३) आटा और रोटी में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। बाई, हाथ, तवा, चकला आदि और रोटी में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है।
४) गाली सुनकर क्रोध आया–इसमें आत्मा के चारित्रगुण और क्रोधपरिणाम में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। अन्यजीव, गाली के शब्द, कान व क्रोध परिणाम में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है।
५) मैने मुँह से शब्द बोला–इसमे भाषावर्गणा और शब्द कार्य में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। आत्मा, शरीर, मुँह व शब्द कार्य में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है।

प्र०११ एक कार्य के कितने कर्त्ता कहलाते हैं ?

उ० एक कार्य के चार कर्त्ता कहलाते हैं
(१) निमित्त कारण
(२) त्रिकाली उपादान कारण
(३) अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय क्षणिक उपादान कारण
(४) उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण।

प्र०१२ निमित्त कारण किसे कहते हैं ?

उ० जो पदार्थ स्वयं कार्यरूप न परिणमे, परंतु कार्यकी उत्पत्तिमें अनुकूल होनेका जिसमें आरोप आ सके उस पदार्थ को निमित्त कारण कहते हैं। जैसे – घड़ेकी उत्पत्तिमें कुम्हार हाथ, चाक, आदि।

प्र०१३ कुम्हार ने घडा बनाया, इस वाक्य पर निमित्त कारण की परिभाषा लगाइये ?

उ० जो पदार्थ अर्थात् कुम्हार का ज्ञान, राग, हाथ, चाक आदि स्वयं स्वतः तो कार्यरूप अर्थात् घडा बनने रूप न परिणमें परन्तु कार्य अर्थात् घड़े की उत्पत्ति में अनुकूल होने का जिस पर आरोप आ सके उस पदार्थ को अर्थात् कुम्हार के ज्ञान, राग, हाथ, चाक आदि को निमित्त कारण कहते हैं।

प्र०१४ उपादान कारण किसे कहते हैं ?

उ० (१)जो द्रव्य स्वयं कार्यरूप परिणमित हो उसे त्रिकाली उपादान कारण कहते हैं जैसे घडे की उत्पत्ति में मिट्टी।
(२)जो कार्य हुआ, उससे पहली पर्याय को अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय क्षणिक उपादान कारण कहते हैं जैसे घडा बनने से पहले मिट्टी की पिंड रूप दशा।
(३)जो कार्य हुआ उसे उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण कहते हैं – जैसे घडा बना।

प्र०१५ निमित्त कारण क्या बताता है ?

उ० निमित्त कारण बताता है कि कार्य के समय कार्य के बाहर कौन उपस्थित था।

प्र०१६ त्रिकाली उपादान कारण क्या बताता है ?

उ० त्रिकाली उपादान कारण बताता है कि किस द्रव्य के अन्दर कार्य हुआ।

प्र०१७ निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध क्या बताता है ?

उ० जीव, पुद्गल, शरीरादि प्रत्येक द्रव्य प्रतिसमय स्वतंत्र रूप से अपना अपना कार्य कर रहे हैं परस्पर कोई भी सम्बन्ध नहीं है।

नोट :– वीतरागविज्ञान प्रतियोगिता–४ का पारितोषिक वितरण २८ जनवरी २००१ को सभास्थल पर ही होगा। बुधवार, शनिवार व रविवार की कक्षायें पूर्ववत चलेंगी।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

३१–राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (०१३५) ६२३१३१

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–६

दिनांक १ अप्रैल २००१ दिन रविवार दोपहर ३ बजे
(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गाँधी रोड, देहरादून

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र० १. वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता नं० ५ के प्रश्न १ से १७ तक के उत्तरों को पक्का याद करना है?

निम्न प्रश्न २, ३ व ४ का कापी में लिखकर अभ्यास करना है

प्र० २. निम्नलिखित पर्यायें किस द्रव्य के किस गुण का कार्य है – मतिज्ञान–श्रुतज्ञान–अवधिज्ञान–मनःपर्ययज्ञान–केवलज्ञान–कुमतिज्ञान–कुश्रुतज्ञान–कुअवधिज्ञान ; चक्षुदर्शन–अचक्षुदर्शन–अवधि दर्शन–केवलदर्शन ; सुख–दुख ; मिथ्यादर्शन–सम्यकदर्शन ; अशुभभाव–शुभभाव–वीतराग भाव ; गमन करना–स्थिर होना।

प्र० ३. निम्न कार्यों का कर्त्ता कौन सी वर्गणा या कौन सा गुण है – सोने का हार, मकान, रुपये, तेज बोलना, कपडे, हल्का व भारीपना, मीठापना, फूल की सुगंध, घातिया कर्म–ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय, अन्तराय व अघातिया कर्म–वेदनीय, आयु, नाम, गोत्र।

प्र० ४. निम्नलिखित वाक्यों पर निमित्त कारण की परिभाषा व निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध की परिभाषा लिखिये व साथ ही इससे क्या सिद्ध हुआ –
(अ) मैंने रोटी बनाई (ख) मैने कपडे पहने (ग) मैं बहुत तेज बोलता हूँ (घ) यह मेरे रूपये हैं (ड.) गाली सुनकर मुझे गुस्सा आया (च) भगवान को देखकर मुझे शुभभाव हुआ (च) मुझे शास्त्र से ज्ञान हुआ।

प्र० ५. शास्त्रों का अर्थ समझने के लिये क्या जानना आवश्यक है?

उ० प्रथमानुयोग, चरणानुयोग–करणानुयोग और द्रव्यानुयोग रूप जिनागम में निश्चय व्यवहार रूप वर्णन है। अतः शास्त्रों का अर्थ समझने के लिये निश्चय व्यवहार का ज्ञान आवश्यक है।

प्र० ६. निश्चय और व्यवहार की परिभाषा क्या है?

उ० यथार्थ का नाम निश्चय है और उपचार का नाम व्यवहार है।
(श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृ० १९३)

एक ही द्रव्य के भाव को उस स्वरूप ही निरूपण करना सो निश्चयनय है – जैसे मिट्टी के घडे को मिट्टी का घड़ा कहना। उपचार से उस द्रव्य के भाव को अन्य द्रव्य के भाव स्वरूप निरूपण करना सो व्यवहारनय है, जैसे घी के संयोग के कारण उपचार से मिट्टी के घडे को घी का घडा कहना। (श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृ० २४६)

प्र० ७. शास्त्रों में निश्चय और व्यवहार के कथन हैं, तो हम व्यवहारनय और निश्चयनय के कथनों की पहचान कैसे करें?

उ० **जहाँ दो द्रव्यों, दो गुणों, या दो पर्यायों को मिलाकर निरूपण किया हो** वहाँ समझ लेना कि यह व्यवहारनय का कथन है। जैसे– आत्मा अर्थात् जीव द्रव्य और मनुष्य शरीर अर्थात् पुद्गल द्रव्य–दोनों को मिलाकर ऐसा निरूपण किया गया हो कि मनुष्य जीव या मैं मनुष्य हूँ तो समझ लेना यह व्यवहारनय का कथन है। जहाँ शरीर से भिन्न मैं आत्मा हूँ– ऐसा स्वतंत्र निरूपण किया हो वहाँ समझ लेना कि यह निश्चयनय का कथन है।

प्र० ८. जहाँ मनुष्य जीव, दो इन्द्रिय जीव, नारकी जीव–ऐसा व्यवहारनय का कथन हो – वहाँ क्या समझना है?

उ० यहाँ व्यवहार से मनुष्य आदि पर्यायों को जीव कहा, सो मनुष्य आदि पर्यायों को जीव नहीं मान लेना। वहाँ ऐसा समझना कि यह मनुष्य पर्याय तो जीव और पुद्गल के संयोगरूप है। इसमें निश्चय से जीव द्रव्य भिन्न है उस ही को जीव मानना। जीव के संयोग से मनुष्य शरीरादि को भी उपचार से जीव कहा सो कथन मात्र ही है। परमार्थ से मनुष्य शरीरादि जीव होते नहीं – ऐसा ही श्रद्धान करना।

(श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ २५२)

प्र० ६. निश्चय और व्यवहार के विषय में हमेशा क्या याद रखना चाहिये?

उ० निश्चयनय से जो निरूपण किया हो उसे तो सत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान अंगीकार करना। व्यवहारनय से जो निरूपण किया हो उसे असत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान छोडना।

(श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृ० २५०)

प्र० १०. निश्चय और व्यवहार के विषय में हमेशा क्या याद रखना – इसे उदाहरण देकर समझाइये?

उ० मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ .... ऐसा निश्चयनय से जो निरूपण किया हो उसे तो सत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान अंगीकार करना चाहिये। मैं मनुष्य (नाम) हूँ ....ऐसा व्यवहारनय से जो निरूपण किया हो उसे असत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान छोडना।

प्र० ११. मैं मनुष्य (नाम) हूँ – ऐसे व्यवहारनय का श्रद्धान छोडकर मैं ज्ञानदर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ – ऐसे निश्चयनय का श्रद्धान अंगीकार करने के विषय में श्री कुन्दकुन्द आचार्य ने मोक्षपाहुड गाथा – ३१ में क्या कहा है?

उ० १. जो व्यवहार में सोता है अर्थात् मैं मनुष्य हूँ – ऐसे व्यवहारनय का श्रद्धान छोडकर मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ। ऐसे निश्चयनय का श्रद्धान करता है वह योगी अपने आत्मकार्य में जागता है अर्थात् धर्म की प्राप्ति करता है।

२. जो व्यवहार में जागता है अर्थात् मैं मनुष्य ही हूँ – ऐसी श्रद्धा करता है वह अपने कार्य में सोता है अर्थात् कभी धर्म प्राप्त नहीं कर सकता।

३. इसलिए मैं मनुष्य हूँ – ऐसे व्यवहारनय का श्रद्धान छोडकर, मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीवतत्व हूँ – ऐसे निश्चयनय का श्रद्धान करना योग्य है।

प्र० १२. व्यवहारनय का श्रद्धान छोड़कर निश्चयनय का श्रद्धान करना क्यों योग्य है?

उ० क्योंकि, व्यवहारनय– स्वद्रव्य–परद्रव्य को, स्वद्रव्य के कार्य और परद्रव्य के कार्यों को, निमित्त व नैमित्तिक को किसी को किसी में मिलाकर निरूपण करता है, सो ऐसे ही श्रद्धान से मिथ्यात्व होता है, इसीलिये उसका श्रद्धान छोडना।

निश्चयनय उन्हीं को अर्थात् स्वद्रव्य – परद्रव्य को, स्वद्रव्य के कार्य व परद्रव्य के कार्यों को यथावत् निरूपण करता है, किसी को किसी में नहीं मिलाता है, सो ऐसे ही श्रद्धान से सम्यक्त्व होता है, इसीलिये उसका श्रद्धान करना। **(श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ २५१)**

प्र० १३. निश्चय–व्यवहार के विषय मे श्री समयसार गाथा ११ में क्या कहा है?

उ० श्री समयसार गाथा ११ में श्री कुन्दकुन्द आचार्य कहते है :–

व्यवहारनय अभूतार्थ दर्शित, शुद्धनय भूतार्थ है।
भूतार्थ आश्रित आत्मा सुदृष्टि निश्चय होय है।।

अर्थ – व्यवहारनय अभूतार्थ है, सत्यस्वरूप का निरूपण नहीं करता, किसी अपेक्षा उपचार से अन्यथा निरूपण करता है। शुद्धनय जो निश्चय है, वह भूतार्थ है, जैसा वस्तु का स्वरूप है वैसा निरूपण करता है। जो जीव निश्चय का आश्रय लेता है वह जीव नियम से सम्यकदृष्टि होता है।

प्र० १४. यदि ऐसा है तो जिनमार्ग में दोनों नयों का ग्रहण करना कहा है सो कैसे?

उ० जिनमार्ग (चारों अनुयोगों) में कहीं तो निश्चयनय की मुख्यता लिये

व्याख्यान है, उसे तो 'सत्यार्थ ऐसे ही है' – ऐसा जानना। तथा कहीं व्यवहारनय की मुख्यता लिये व्याख्यान है, उसे 'ऐसे है नहीं, निमित्तादि की अपेक्षा उपचार किया है' – ऐसा जानना। इस प्रकार जानने का नाम ही निश्चय – व्यवहार दोनों नयों का ग्रहण है।

प्र० १५. व्यवहारनय और निश्चयनय के व्याख्यान को उदाहरण देकर समझाइये?

उ० १. व्यवहारनय कहता है मैं मनुष्य हूँ, निश्चयनय कहता है मनुष्य औदारिक शरीर है, इसका कर्त्ता आहारवर्गणा है, मैं तो ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ।

२. व्यवहारनय कहता है मैं उठता–बैठता हूँ, निश्चयनय कहता है उठना–बैठना कार्य आहारवर्गणा का है मेरा कार्य मात्र जानना–देखना है।

३. व्यवहारनय कहता है आठकर्मों के कारण जीव संसार में घूमता है, निश्चयनय कहता है, आठकर्म कार्माण शरीर है, इनका कर्त्ता कार्माणवर्गणा है, जीव मिथ्यात्व–राग–द्वेष के कारण संसार में घूमता है।

४. व्यवहारनय कहता है देव शास्त्र गुरू के आश्रय से धर्म होता है, निश्चयनय कहता है–आत्मा के आश्रय से धर्म होता है।

प्र० १६. निम्न भजन को कक्षा में सिखाये गये अर्थ व लय के साथ याद करिये?

उ० आत्मा हूँ, आत्मा हूँ, आत्मा।
मैं सदा ज्ञायक–स्वभावी आत्मा ....।।टेक।।
शस्त्र से भी मैं कभी कटता नहीं।
अग्नि से भी मैं कभी जलता नहीं।
जल गलाये तो गले न आत्मा।।१।।
चर्म–चक्षु से कभी दिखता नहीं।
मूर्ख जन अज्ञान वश जाने नहीं।
ज्ञानियों की साध्य–साधक आत्मा।।२।।
गोरा–काला जो भी दिखता चाम है।
मोटा–पतला होना इसका काम है।
सब शरीरों से रहित मैं आत्मा।।३।।

नोट : • वीतरागविज्ञान प्रतियोगिता – ५ का पारितोषिक वितरण १ अप्रैल को सभास्थल पर ही होगा।
• बुधवार, शनिवार व रविवार की कक्षायें पूर्ववत चलेंगी।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

३१–राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (०१३५) ६२३१३१

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–७

दिनांक १० जून २००१ दिन रविवार दोपहर ३ बजे
(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गाँधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

१. निम्मलिखित १ से २८ तक के प्रश्नों के उत्तर पक्के याद करिये।

१. देव – शास्त्र– गुरू व कुदेव – कुशास्त्र – कुगुरू किसे कहते है ?
२. जाति अपेक्षा और संख्या अपेक्षा विश्व किसे कहते है ?
३. द्रव्य, गुण, सामान्य और विशेष गुण किसे कहते है ?
४. जीवादि प्रत्येक द्रव्य में कौन–कौन से विशेष गुण है ?
५. सामान्य गुण कितने है व कौन–कौन से है ? प्रत्येक की परिभाषा लिखिये।
६. प्रत्येक द्रव्य में गुणों की संख्या का माप क्या है?
७. क्या प्रत्येक जीवद्रव्य में गुण समान संख्या में है? इसके जानने से लाभ?
८. द्रव्य में गुण किस प्रकार रहते है? और किस प्रकार नहीं रहते? दोनों उदाहरण देकर स्पष्टीकरण करिये?
९. छहों द्रव्यों के विशेष गुणों को जानने के लाभ और न जानने से क्या नुकसान है?
१०. पर्याय, व्यंजनपर्याय, स्वभाव व विभाव व्यंजनपर्याय किसे कहते हैं?
११. अर्थपर्याय, स्वभाव व विभाव अर्थ पर्याय किसे कहते है?
१२. विश्व–द्रव्य–गुण–पर्याय का रहस्य क्या है?
१३. जीव, पुदगल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल–द्रव्यों की पृथक पृथक सत्ता क्या है?
१४. जीव–पुदगल–धर्म–अधर्म–आकाश–काल–प्रत्येक द्रव्य का पृथक–पृथक द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव क्या है?
१५. प्रयोजनभूत सात तत्वों की परिभाषा व प्रत्येक किस प्रकार प्रयोजनभूत है ?
१६. पुदगल के स्पर्श–रस,–गंध–वर्ण आदि गुणों की कितनी पर्यायें होती है?
१७. पुदगल के कितने भेद है? परमाणु व स्कन्ध की परिभाषा? स्कन्ध के भेद व प्रत्येक की परिभाषा?
१८. बंध किसे कहते है? बंध कितने प्रकार के है व प्रत्येक में क्या समझना है ?

१६. शरीर कितने है? प्रत्येक की परिभाषा क्या है।

२०. मैं मनुष्य हूँ – इनमें गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं यह निर्णय किस प्रकार करना ? ओर इस निर्णय का फल क्या है?

२१. जिनमत की परिपाटी क्या है? अनादि काल से जीव को कैसा श्रद्धान है ?

२२. धर्म क्या है? धर्म कहाँ है? धर्म कैसे मिलता है?

२३. शरीर से भिन्न अपनी पहचान होने पर धर्म किस प्रकार हो जाता है?

२४. जैन धर्म के अमूल्य सिद्धान्त क्या है?

२५. एक कार्य के कितने कर्त्ता कहलाते हैं?

२६. कषाय किसे कहते हैं व कषाय कितने प्रकार की है?

२७. वीतरागता कितने प्रकार की होती हैं? प्रत्येक किस द्रव्य के किस गुण का कार्य है?

२८. चारों प्रकार की वीतरागता की प्राप्ति का क्रम क्या है?

२. **निम्नलिखित १ से २५ तक के प्रश्नों के उत्तर पक्का याद करके कापी में लिखिये ? कापी बनाने के प्रश्नपत्र में १५ अंक होंगे।**

१. मुझ आत्मा का स्वरूप कैसा है ?

२. मन्दिर की बेदी में विराजमान पूर्ण वीतरागी और सर्वज्ञ भगवान क्या कर रहें हैं और हमें क्या संदेश दे रहे हैं?

३. जीव द्रव्य के ज्ञान, दर्शन, सुख, श्रद्धा, चारित्र, क्रियावती शक्ति, गुणों का कार्य कितने कितने प्रकार का है ? प्रत्येक का नाम लिखिये ?

४. घातिया कर्म और अघातिया कर्म कौन कौन से है। नाम लिखिये।

५. निम्नलिखित पर्यायें किस द्रव्य के किस गुण का कार्य है – भारीपन, नीला, सम्यकदर्शन, कडापना, रागद्वेष, सुगन्ध, नरमपने का ज्ञान, स्वरूपाचरण चारित्र, चक्षुदर्शन, चलना और ठहरना, कषायला।

६. निम्नलिखित शरीरों के नाम क्या है? उनके कर्त्ता कौन हैं? निगोदिया शरीर, जलकाय, नारक, देव, चींटी, हाथी, लड़की, ज्ञानावरणीय कर्म, औदारिक शरीर की चमक, मोहनीय कर्म, आहारक ऋद्धिधारी के मस्तक का पुतला।

७. निम्न कार्यों का कर्त्ता कौन सी वर्गणा है? चलना, बोलना, मकान, साड़ी, जेवर, ताली की आवाज, मुंह हिलना, मधुर आवाज, रोटी, गाडी, गाली के शब्द, प्रशंसा के शब्द, तैजस शरीर, कार्माण शरीर।

८. निम्नलिखित कौन–कौन सा बंध है। इसमें अनेक वस्तुयें क्या हैं और प्रत्येक में क्या समझना है ?
लड़का, मनुष्य, कार, मैं रागी हूँ, पुत्री, हाथी, सोने का हार

९. निम्नलिखित वाक्यों पर निमित्त कारण की परिभाषा व निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध की परिभाषा लिखिये व साथ ही इससे क्या सिद्ध हुआ – मैं बाजार से सामान लाई, मैंने खाना बनाया, यह मेरा मकान है, प्रशंसा के शब्द सुनकर मुझे सुख मिला, मैंने नाक से सुगन्ध का ज्ञान किया, मैंने जीभ से मीठे का ज्ञान किया।

१०. मिथ्यादृष्टि जीव को धर्म की प्राप्ति क्यों नहीं होती ?

११. निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध और व्याप्य व्यापक सम्बन्ध में क्या अन्तर है?

१२. उपादान कारण किसे कहते हैं?

१३. निमित्त कारण क्या बताता है? त्रिकाली उपादान कारण क्या बताता है? निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध क्या बताता है?

१४. शास्त्रों का अर्थ समझने के लिये निश्चय व्यवहार का ज्ञान क्यों आवश्यक है?

१५. निश्चय की पहचान क्या है और व्यवहार की पहिचान क्या है? मोक्ष मार्ग प्रकाशक पृष्ठ १९३, २४६, २५० के आधार से उत्तर लिखिये।

१६. जहाँ मैं मनुष्य हूँ, दो इन्द्रिय जीव, नारकी जीव – ऐसा व्यवहारनय का कथन हो, वहां क्या समझना है?

१७. मैं मनुष्य हूँ – ऐसे व्यवहारनय का श्रद्धान छोडकर मैं ज्ञानदर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूं – ऐसे निश्चयनय का श्रद्धान करना क्यों योग्य है? इस विषय में श्रीमोक्षपाहुड गाथा ३१ में, श्रीमोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ २५१ व श्री समयसार गाथा ११ में क्या कहा है?

१८. जिनमार्ग में दोनों नयों का ग्रहण करना किस प्रकार कहा है ?

१९. निम्नलिखित वाक्यों में निश्चयनय और व्यवहारनय के कथनों को अलग–अलग पहचानिये और इनका ग्रहण किस प्रकार करना–यह लिखिये–
मैं सत्य बोलती हूँ, मैं मनुष्य हूँ, मैं आत्मा हूँ, आँख से ज्ञान होता है, बोलना कार्य भाषावर्गणा का है, मैं रोटी बनाती हूँ, यह मेरी कार है, रोटी औदारिक शरीर है इसका कर्त्ता आहारवर्गणा है, मैं उठता–बैठता हूँ, आठ कर्मों के कारण जीव संसार में घूमता है, मेरा कार्य ज्ञाता दृष्टा है, ज्ञान मुझ आत्मा के ज्ञान गुण में से आता है, सुगन्ध दुर्गंध का कर्त्ता पुद्गल का गंध गुण है, नाक से खुशबू का ज्ञान होता है, गोरा काला तो शरीर की अवस्था है मैं तो अवर्णस्वभावी हूँ, निन्दा के शब्दों के कारण दुःख होता है, मैं जन्म मरण रहित अनादिअनन्त हूँ।

२०. आत्मा हूँ आत्मा हूँ, आत्मा .... इस भजन को याद करके लिखिये।

२१. निम्न की परिभाषा लिखिए :–
१ देव २. गुरू ३. शास्त्र ४. विश्व ५. द्रव्य ६. गुण ७. पर्याय ८. सामान्य गुण ९. विशेषगुण १०. व्यंजनपर्याय ११. अर्थपर्याय १२. जीवतत्व १३. अजीवतत्व १४. आस्रवतत्व १५. बंधतत्व १६. संवरतत्व १७. निर्जरातत्व १८. मोक्षतत्व १९. जीवद्रव्य २०. पुद्गलद्रव्य २१. परमाणु २२. स्कन्ध २३. आहारवर्गणा २४. तैजसवर्गणा २५. भाषावर्गणा २६. मनोवर्गणा २७. कार्माणवर्गणा २८. औदारिक शरीर २९. वैक्रियक शरीर ३०. तैजस शरीर ३१. कार्माण शरीर ३२. कषाय ३३. अस्तित्वगुण ३४. वस्तुत्वगुण ३५. द्रव्यत्वगुण ३६. प्रमेयत्व गुण ३७. अगुरूलघुत्वगुण ३८. प्रदेशत्व गुण ३९.

कुदेव ४०. कुगुरू ४१ कुशास्त्र

२२. पात्र जीव कौन है और पात्र जीव का प्रथम लक्षण क्या है?

२३. मुनिराज श्रीकुन्दकुन्द ने पंचास्तिकायसंग्रह की गाथा १२२ में आत्मा और शरीर की भिन्नता के बारे में क्या कहा है?

२४. आत्मा और पुदगल की २७ पर्यायों की भिन्नता के विषय में श्रीकुन्दकुन्द आचार्य ने श्री समयसार की ३६० से ४०४ तक की गाथाओं में और श्री समयसार की ही ३७३ से ३८२ तक की गाथाओं में क्या कहा है?

२५. निम्न भजन को कक्षा में सिखाये गये अर्थ व लय के साथ याद करिये –प्रश्नपत्र में ५ अंक इस भजन के होंगे।

रोम–रोम से निकले प्रभुवर नाम तुम्हारा, हाँ ! नाम तुम्हारा ।
ऐसी भक्ति करूं प्रभु की[१] पाऊँ न जन्म दुबारा।।टेक।।
जिन मन्दिर में आया, जिनवर दर्शन पाया।
अन्तर्मुख मुद्रा को देखा, आतम दर्शन पाया।।
जनम–जनम तक न भूलूंगा[२], यह उपकार तुम्हारा।।१।।
अरहंतों को जाना, आतम को पहिचाना।
द्रव्य और गुण–पर्यायों से, जिन सम निज को माना।
भेदज्ञान ही महामंत्र है[३], मोह तिमिर क्षयकारा।।२।।
पंच महाव्रत धारूँ, समिति गुप्ति अपनाऊँ
निर्ग्रन्थों के पथ पर चलकर, मोक्ष महल में आऊँ
पुण्य–पाप की बन्ध श्रृंखला[४], नष्ट करूं दुखकारा।।३।।
देव–शास्त्र–गुरू मेरे, हैं सच्चे हितकारी
सहज शुद्ध चैतन्यराज की, महिमा जग से न्यारी।।
भेदज्ञान बिन नहीं मिलेगा[५], भव का कभी किनारा।।
रोम–रोम से निकले प्रभुवर नाम तुम्हारा, हाँ नाम तुम्हारा।।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग– विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग–विज्ञानप्रतियोगिता नं० ७ से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें।
- दूसरी ढाल पर आधारित " कौन बनेगा मुक्तिपति" जमा करने की अन्तिम तिथि २२ अप्रैल है इसका परिणाम व पुरस्कार वितरण दिनांक ६ मई को श्रीकुन्दकुन्द स्वाध्याय मंदिर (सरनीमल मंदिर) में प्रातः १० बजे होगा। समय से अवश्य पधारें।
- वीतरागविज्ञान प्रतियोगिता – ६ का पारितोषिक वितरण १० जून को सभास्थल पर ही होगा।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें–

१.	बुधवार	झंडा मन्दिर	प्रातः ११ से १२ बजे तक
२.	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १० से ११ बजे तक
३.	शनिवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	सायं ४.३० से ५.३० बजे तक
४.	रविवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	प्रातः १० से ११ बजे तक

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

३१–राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (०१३५) ६२३१३१

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–८

दिनांक २६ जुलाई २००१ दिन रविवार दोपहर ३ बजे
(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गाँधी रोड, देहरादून

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

विश्व की व्यवस्था

प्र० १. विश्व किसे कहते हैं?
उ० जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं?

प्र० २. छह द्रव्यों के समूह को क्या कहते है?
उ० विश्व कहते हैं?

प्र० ३. क्या छह द्रव्यों के पिण्ड को विश्व कहते हैं?
उ० बिल्कुल नहीं, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य पृथक–पृथक है।

प्र० ४. विश्व के पर्यायवाची शब्द क्या–क्या है?
उ० ब्रह्माण्ड, लोक, दुनिया, वर्ल्ड, जगत आदि विश्व के पर्यायवाची शब्द है।

प्र० ५. विश्व में कितने द्रव्य हैं?
उ० इस विश्व में छह द्रव्य है।

प्र० ६. हमें तो विश्व में बहुत से द्रव्य दिखते हैं? आप छह ही क्यों कहते हैं?
उ० जाति अपेक्षा छह हैं, संख्या अपेक्षा बहुत हैं।

प्र० ७. जाति अपेक्षा छह द्रव्य कौन कौन से हैं?
उ० जीव, पुदगल, धर्म–अधर्म, आकाश और काल हैं।

प्र० ८. संख्या अपेक्षा बहुत से द्रव्य किस प्रकार हैं?
उ० (१) जीव अनन्त (२) पुदगल अनन्तानन्त (३) धर्म एक (४) अधर्म एक (५) आकाश एक (६) कालद्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है। इस प्रकार संख्या अपेक्षा द्रव्य बहुत से हैं।

प्र० ९. जाति अपेक्षा छहद्रव्य के समूह को एक नाम से क्या कहते हैं?
उ० विश्व कहते है।

प्र० १०. विश्व अर्थात् क्या है?
उ० समस्त पदार्थ–द्रव्य–गुण–पर्याय।

प्र० ११. जीवद्रव्य कितने हैं और कहाँ–कहाँ पर रहते हैं?
उ० जीव द्रव्य अनन्त हैं और वे सम्पूर्ण लोकाकाश में भरे हुए हैं।

प्र० १२. पुद्गलद्रव्य कितने हैं और कहाँ–कहाँ पर रहते हैं?
उ० जीवद्रव्य से अनन्तगुणे अधिक पुदगलद्रव्य हैं और वे सम्पूर्ण लोकाकाश में भरे हुये हैं।

२. प्रत्येक द्रव्य का कायम रहकर बदलना, उसका स्वभाव है तो मैं पर का करूँ या पर मेरा करे, ऐसी पर कर्तृत्व की बुद्धि छोड।
३. जब एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को स्पर्श भी नहीं करता तो मैं पर को भोगू या पर मुझे भोगे ऐसी पर भोक्तृत्व की बुद्धि छोड।

प्र० २२ विश्व की व्यवस्था को जानने से क्या लाभ होता है?

उ० १. केवली भगवान के लघुनन्दन बन जाते है।
२. जैसा पदार्थों का स्वरूप है वैसा ही श्रद्धान ज्ञान हो जाये तो सर्व दुख मिट जाते है।

प्र० २३ इस विश्व के समस्त द्रव्यों को पृथक-पृथक जानकर हम भी केवली भगवान के लघुनन्दन बनना चाहते है, दुःख मिटाना चाहते हैं – इसके लिये हमें क्या जानना आवश्यक है?

उ० सब द्रव्यों का लक्षण जानना आवश्यक है।

प्र० २४ लक्षण किसे कहते हैं?

उ० अनेक मिले हुये पदार्थों में से किसी एक पदार्थ को पृथक करने वाले हेतू को लक्षण कहते हैं। जैसे जीव का लक्षण ज्ञान-दर्शन।

प्र० २५ सच्चे लक्षण की पहिचान क्या है?

उ० जो लक्षण लक्ष्य में तो सर्वत्र हो **अलक्ष्य** में किसी भी स्थान पर न पाया जाये-यही सच्चे लक्षण की पहचान है। जैसे जीव का लक्षण-ज्ञान-दर्शन, पुद्गल का लक्षण स्पर्श-रस-गंध वर्ण आदि।

प्र० २६ लक्ष्य किसे कहते हैं?

उ० जिसका लक्षण किया जाये उसे लक्ष्य कहते है। जैसे जीव का लक्षण ज्ञान दर्शन कहा, तो इसमें जीव लक्ष्य है और ज्ञान-दर्शन लक्षण है।

प्र० २७ अलक्ष्य किसे कहते हैं?

उ० लक्ष्य के अतिरिक्त अन्य पदार्थों को अलक्ष्य कहते है। जैसे जीव का लक्षण ज्ञान दर्शन कहा, तो इसमें ज्ञान-दर्शन लक्षण है, जीव द्रव्य लक्ष्य है और जीव द्रव्य के अलावा पुद्गल-धर्म-अधर्म-आकाश-काल- ये अलक्ष्य हैं।

प्र० २८ लक्षणाभास किसे कहते है?

उ० जो लक्षण सदोष हो उसे लक्षणाभास कहते हैं।

प्र० २९ लक्षण के कितने दोष हैं?

उ० तीन दोष है (१) अव्याप्ति दोष (२) अतिव्याप्ति दोष (३) असम्भव दोष

प्र० ३० अव्याप्ति दोष किसे कहते हैं?

उ० लक्ष्य के एक भाग में लक्षण का रहना अव्याप्ति दोष है। जैसे पशु का लक्षण सींग।

प्र० ३१ अतिव्याप्ति दोष किसे कहते हैं?

उ० लक्ष्य और अलक्ष्य में लक्षण का रहना – उसे अतिव्याप्ति दोष कहते है। जैसे-गाय का लक्षण सींग।

प्र० ३२ असम्भवदोष किसे कहते हैं?

उ० लक्ष्य में लक्षण का पाया ही न जाना-उसे असम्भव दोष कहते हैं। जैसे-मनुष्य का लक्षण सींग

प्र० ३३ इस विश्व के प्रत्येक द्रव्य का तीनों दोषों से रहित सच्चा लक्षण जानने से क्या होता है ?

उ० (१) छहों द्रव्यों की पृथकता का ज्ञान होता है।
(२) स्व-पर का भेद ज्ञान होता है।
(३) विश्व के सर्वपदार्थों से सर्वथा भिन्न एक मात्र निज आत्मा ही उपादेय है-ऐसा पता चल जाता है।

प्र० ३४ निम्नलिखित भजन को कक्षा में सिखाये गये अर्थ व लय के साथ याद करिये?

उ०
हे प्रभो ! चरणों में तेरे आ गये।
भावना अपनी का फल हम पा गये।।टेक।।
वीतरागी हो तुम्ही सर्वज्ञ हो।
सप्त तत्वों के तुम्हीं मर्मज्ञ हो।।
मुक्ति का मारग तुम्हीं से पा गये।।टेक।।१।।
विश्व सारा है झलकता ज्ञान में।
किन्तु प्रभुवर लीन है निज ध्यान में।।
ध्यान में निज ज्ञान को हम पा गये।।टेक।।२।।
तुमने बताया जगत के सब आत्मा।
द्रव्य दृष्टि से सदा परमात्मा।।
आज निज परमात्मा पद पा गये।। टेक।।३।।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० ८ से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहीं से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- तीसरी ढाल पर आधारित " कौन बनेगा मुक्तिपति" का परिणाम व पुरस्कार वितरण दिनांक ७ जुलाई को श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड में दोपहर ३ बजे होगा। समय से अवश्य पधारें।
- वीतरागविज्ञान प्रतियोगिता – ७ का पारितोषिक वितरण २६ जुलाई को सभास्थल पर ही होगा।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

१.	बुधवार	झंडा मन्दिर	प्रातः ११ से १२ बजे तक
२.	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १० से ११ बजे तक
३.	शनिवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	सायं ४.३० से ५.३० बजे तक
४.	रविवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	प्रातः १० से ११ बजे तक

प्र० १३. धर्म, अधर्म द्रव्य कितने–कितने हैं और कहाँ–कहाँ पर रहते हैं?
उ० धर्म और अधर्म द्रव्य एक एक है। और वे सम्पूर्ण लोकाकाश में व्याप्त है।
प्र० १४. आकाशद्रव्य कितने हैं और कहाँ–कहाँ पर रहते हैं।
उ० आकाशद्रव्य एक है और वह लोकाकाश और अलोकाकाश में व्याप्त है।
प्र० १५. कालद्रव्य कितने हैं और कहाँ–कहाँ पर रहते हैं?
उ० कालद्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात है और वे लोकाकाश के एक एक प्रदेश पर रत्नों की भाँति जड़े हुए हैं।
प्र० १६. छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहा तो क्या वे सब आपस में मिले हुये है?
उ० आपस मे बिल्कुल मिले हुये नहीं है क्योंकि छह द्रव्यों के पिण्ड को विश्व नही कहा अपितु छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहा है। अतः प्रत्येक द्रव्य पृथक पृथक अपना–अपना कार्य करता है एक का दूसरे से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।
प्र० १७. विश्व में जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं। यह कथन कैसा है?
उ० व्यवहारनय का कथन है
प्र० १८. विश्व में जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं? इसका निश्चय कथन क्या है?
उ० प्रत्येक द्रव्य अपने–अपने क्षेत्र में है। अर्थात् अपने–अपने द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव में है यह निश्चयनय का कथन है।
प्र० १९. विश्व के समस्त द्रव्यों की क्या व्यवस्था है?
उ० १. इस विश्व का प्रत्येक द्रव्य अपने–अपने द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव में ही रहता है।
२. इस विश्व के समस्त द्रव्य कायम रहते हुये स्वयं ही बदल रहे हैं।
३. इस विश्व का प्रत्येक द्रव्य अपने में अर्न्तमग्न अपने अनन्त धर्मों (गुणों) के चक्र को स्पर्श करता है लेकिन एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को सर्वथा स्पर्श नहीं करता है।
४. इस विश्व के प्रत्येक द्रव्य में अनन्त अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में प्रत्येक समय एक पर्याय का उत्पाद, एक पर्याय का व्यय और द्रव्य गुण ध्रौव्य रहता है। ऐसा अनादिकाल से हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।
५. अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। कोई किसी के आधीन नहीं है। कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती।
प्र० २०. विश्व का प्रत्येक द्रव्य अपना अपना स्वतंत्र परिणमन करता है क्या कहीं पूजा में आया है?
उ० देव शास्त्र गुरू की पूजा में आया है –
जड़ चेतन की सब परिणति प्रभु अपने–अपने में होती है।
अनुकूल कहें प्रतिकूल कहें, यह झूठी मन की वृत्ति है।।
प्र० २१. विश्व के सर्व द्रव्यों की व्यवस्था को जानकर हमें क्या करना चाहिये?
उ० १. इस विश्व का प्रत्येक द्रव्य स्वतन्त्र है क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का द्रव्य क्षेत्र–काल–भाव सर्वथा पृथक पृथक है इसलिये शरीरादि परद्रव्यों को अपना मानना छोड़।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

३१–राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (०१३५) ६२३१३१

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–६

दिनांक १७ सितम्बर २००१ दिन रविवार दोपहर ३ बजे
(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गाँधी रोड, देहरादून

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

द्रव्य

प्र० १. द्रव्य किसे कहते हैं?
उ० गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।
प्र० २. गुणों के समूह को क्या कहते हैं?
उ० गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।
प्र० ३. द्रव्य के पर्यायवाची शब्द क्या–क्या हैं?
उ० वस्तु, सत्, सत्ता, तत्व, अर्थ, पदार्थ आदि द्रव्य के पर्यायवाची शब्द हैं।
प्र० ४. गुणों का समूह कौन सा द्रव्य है?
उ० जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात – ये सभी द्रव्य गुणों का समूह है।
प्र० ५. क्या मैं भी गुणों का समूह हूँ?
उ० मैं एक जीव द्रव्य हूँ, मैं भी गुणों का समूह हूँ।
प्र० ६. क्या प्रत्येक सिद्ध भगवान भी गुणों का समूह है?
उ० हाँ, प्रत्येक सिद्ध भगवान भी पृथक–पृथक जीव द्रव्य हैं। अतः प्रत्येक सिद्ध भगवान भी गुणों के समूह हैं।
प्र० ७. क्या निगोदिया, पेड़ का जीव, मक्खी, चूहा, शेर, हाथी आदि सब गुणों के समूह हैं?
उ० निगोद से लेकर चारों गतियों के जीव तथा पंच परमेष्ठी सब गुणों के समूह हैं क्योंकि ये सब जीवद्रव्य हैं।
प्र० ८. क्या शरीर, धन, मकान आदि पुद्गल भी गुणों के समूह हैं?
उ० शरीर, धन, मकान आदि में अनन्त–अनन्त पुद्गल परमाणु हैं ; प्रत्येक पुद्गल परमाणु भी गुणों का समूह है।
प्र० ९. क्या धर्म–अधर्म–आकाश–काल द्रव्य भी गुणों के समूह हैं?
उ० गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं। धर्म–अधर्म–आकाश काल भी द्रव्य हैं, अतः ये सब भी गुणों के समूह हैं।
प्र० १०. गुणरहित द्रव्य का नाम बताओ?
उ० कोई भी द्रव्य गुणरहित नहीं होता क्योंकि गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।
प्र० ११. क्या प्रत्येक द्रव्य में गुण समान ही है?
उ० प्रत्येक द्रव्य में गुण संख्या अपेक्षा समान हैं।
प्र० १२. प्रत्येक द्रव्य में गुण कितने हैं?
उ० प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं।

प्र० १३. प्रत्येक द्रव्य के अनन्त गुणों की संख्या का क्या माप है?
उ० १ जीव अनन्त हैं। २. जीव से अनन्तगुने अधिक पुद्गल है।
३. पुद्गल से अनन्तगुने अधिक तीन काल के समय हैं।
४. तीन काल के समयों से अनन्तगुने अधिक आकाश के प्रदेश हैं।
५. आकाश के प्रदेशों से अनन्तगुने अधिक एक द्रव्य में गुण हैं।
प्र० १४. प्रत्येक द्रव्य के अनन्त गुण द्रव्य में किसप्रकार रहते हैं?
उ० १ जैसे चीनी में मिठास है वैसे ही द्रव्य में गुण हैं।
२. जैसे सोने में पीलापन है वैसे ही द्रव्य में गुण हैं।
प्र० १५. द्रव्य के अनन्त गुण द्रव्य में किस प्रकार नहीं रहते?
उ० जैसे बोरी में गेहूँ भरे हैं वैसे द्रव्य में गुण नहीं रहते क्योंकि –
१. गेहूँ बोरी में डाले जा सकते हैं और निकाले जा सकते हैं लेकिन गुण द्रव्य में डाले अथवा निकाले नहीं जा सकते।
२. गेहूँ बोरी के सम्पूर्ण भागों व सम्पूर्ण अवस्थाओं में नहीं रहते लेकिन गुण द्रव्य के सम्पूर्ण भागों व सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहते हैं।
३. बोरी फट जाये तो गेहूँ बिखर कर अलग–अलग हो जाते हैं लेकिन द्रव्य में रहने वाले अनन्त गुण कभी भी बिखर कर अलग–अलग नहीं होते।
प्र० १६. प्रत्येक द्रव्य का अपने अनन्त गुणों के साथ कैसा सम्बन्ध है?
उ० प्रत्येक द्रव्य का अपने गुणों के साथ तादात्म्यसिद्ध सम्बन्ध है। अर्थात् कभी अलग न होने वाला सम्बन्ध है।
प्र० १७. गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं। प्रत्येक द्रव्य अनन्त–अनन्त गुणों का समूह है– इसको जानने से क्या लाभ होता है?
उ० १. निज भगवान आत्मा की महिमा आ जाती है।
२. शरीर, धन, मकान आदि परद्रव्यों की महिमा छूट जाती है।
प्र० १८. द्रव्य को जानने से निज भगवान आत्मा की महिमा कैसे आ जाती है?
उ० १ इस विश्व में जीव अनन्त हैं।
२. जीव से अनन्तगुने अधिक पुद्गल द्रव्य हैं।
३. पुद्गल से अनन्तगुने अधिक तीन काल के समय हैं।
४. तीन काल के समयों से अनन्तगुने अधिक आकाश के प्रदेश हैं।
५. आकाश के प्रदेशों से अनन्तगुने अधिक एक द्रव्य में गुण है।
६. एक द्रव्य के गुणों से अनन्तगुने अधिक सब द्रव्यों के गुण हैं।
७. सब द्रव्यों के गुणों से अनन्तगुने अधिक सब द्रव्यों के सब गुणों की पर्यायें हैं।
८. सब पर्यायों से अनन्तगुने अधिक अविभाग प्रतिच्छेद हैं।
इस प्रकार विश्व में ८ नं० तक ही ज्ञेय है।
९. मुझ आत्मा में केवलज्ञान की शक्ति है। केवलज्ञान की पर्याय में ८ नं० तक सारा विश्व एक समय में जाना जा सकता है ; ऐसे ऐसे अनन्त विश्व हों तो भी एक समय में ज्ञेय हो सकते हैं मगर हैं नहीं। तो उस एक समय की केवलज्ञान पर्याय की ताकत का क्या कहना !
१०. केवलज्ञान एकबार प्रारम्भ होने पर सादिअनन्त काल तक केवलज्ञान–केवलज्ञान अनन्त पर्यायें होती रहती हैं। केवलज्ञान आत्मा के ज्ञान गुण में से आता है। जिस ज्ञान गुण में से केवलज्ञान की अनन्त पर्यायें आती ही रहती हैं ; उस ज्ञानगुण की ताकत का क्या कहना !
११. ज्ञान जैसे अनन्तगुण मुझ आत्मा में हैं। मैं उन अनन्त गुणों का स्वामी हूँ। मुझ आत्मा का क्या कहना !
ऐसा जाने माने तो अपनी महिमा आवे।
प्र० १९. द्रव्य को जानने से शरीर, आदि परद्रव्यों की महिमा कैसे छूट जाती है?
उ० लोकाकाश में जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं। १. प्रत्येक द्रव्य अनन्त अनन्त गुणों का समूह है। २. सबके पास गुण संख्या अपेक्षा समान हैं। कम या ज्यादा नहीं हैं। ३. किसी भी द्रव्य में गुण डाले या निकाले नहीं जा सकते।
ऐसा जाने माने तो शरीर, धन आदि परद्रव्यों की ओर देखना ही नहीं रहता, एकमात्र अनन्तगुणों के अभेद पिण्ड निजआत्मा की ओर ही देखना रहा।
प्र० २०. सम्यग्दर्शन, श्रावकपना, मुनिपना, श्रेणी, अरहंत व सिद्ध दशा की प्राप्ति किसके आश्रय से होती है?
उ० एकमात्र ज्ञान–दर्शन–सुख–वीर्य–श्रद्धा–चारित्र–क्रियावतीशक्ति आदि अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड निजआत्मा के आश्रय से सम्यक्दर्शन से लेकर सिद्ध दशा की प्राप्ति होती है। मुझ आत्मा से सर्वथा भिन्न शरीर से, शरीर की क्रिया से धर्म का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।
प्र० २१. छह द्रव्यों को कितने प्रकार से दो भागों में बांटा जा सकता है?
उ० १. जीव–अजीव २. रूपी–अरूपी ३. क्रियावतीशक्ति सहित–क्रियावतीशक्ति रहित ४. वैभाविकशक्ति सहित–वैभाविकशक्ति रहित ५. जड–चेतन ६. एकप्रदेशी–बहुप्रदेशी ७. एक–अनेक
प्र० २२ छह द्रव्यों में जीव कौन है और अजीव कौन हैं?
उ० छहद्रव्यों में ज्ञानदर्शन वाला एक मात्र जीव द्रव्य है और ज्ञान दर्शन रहित पुद्गल–धर्म–अधर्म–आकाश–काल–ये पाँच द्रव्य अजीव हैं।
प्र० २३ छह द्रव्यों में रूपी कौन है और अरूपी कौन हैं?
उ० छह द्रव्यों में स्पर्श–रस–गंध–वर्णवाला एक मात्र पुद्गलद्रव्य रूपी है और जीव, धर्म, अधर्म, आकाश, काल ये पाँच द्रव्य अरूपी हैं।
प्र० २४ छहद्रव्यों में क्रियावतीशक्ति सहित कौन है और क्रियावतीशक्ति रहित कौन है?
उ० जीव और पुद्गल द्रव्य क्रियावतीशक्ति सहित हैं और धर्म, अधर्म, आकाश, काल – ये चार द्रव्य क्रियावतीशक्ति रहित है, अनादिअनन्त स्थिर हैं।
प्र० २५ छहद्रव्यों में वैभाविकशक्ति सहित कौन है और वैभाविकशक्तिरहित कौन है?
उ० जीव और पुद्गल द्रव्य वैभाविकशक्ति सहित है और धर्म, अधर्म, आकाश, काल – ये चार द्रव्य वैभाविकशक्ति रहित है।
प्र० २६ छहद्रव्यों में जड कौन हैं और चेतन कौन है?
उ० पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल – ये पाँच द्रव्य जानने–देखने की शक्ति रहित जड हैं और जानने–देखने की शक्तिवाला एकमात्र जीवद्रव्य चेतन है।
प्र० २७ छहद्रव्यों में एकप्रदेशी कौन है और बहुप्रदेशी कौन है?
उ० पुद्गल और काल द्रव्य एकप्रदेशी हैं और जीव, धर्म, अधर्म, आकाश–ये चार द्रव्य बहुप्रदेशी हैं क्योंकि जीव–धर्म–अधर्म असंख्यातप्रदेशी और आकाश द्रव्य अनन्त प्रदेशी है।
प्र० २८ छहद्रव्यों में एक कौन है और अनेक कौन है?
उ० धर्म, अधर्म और आकाश द्रव्य एक–एक हैं और बाकी जीव, पुद्गल और कालद्रव्य अनेक हैं।

प्र० २६ छहों द्रव्यों में समान रूप से पायी जाने वाली विशेषतायें क्या हैं?

उ० १. इस विश्व का प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावमें ही रहता है।
२. इस विश्व के समस्त द्रव्य कायम रहते हुये स्वयं ही बदल रहे हैं।
३. इस विश्व का प्रत्येक द्रव्य अपने गुण-पर्यायों को स्पर्श करता है लेकिन एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को सर्वथा स्पर्श नहीं करता है।
४. इस विश्व के प्रत्येक द्रव्य में अनन्त अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में प्रत्येक समय एक पर्याय का उत्पाद, एक पर्याय का व्यय और द्रव्य गुण ध्रौव्य रहता है। ऐसा अनादिकाल से हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।
५. अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न-भिन्न अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। कोई किसी के आधीन नहीं है। कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती।

प्र० ३० छहों द्रव्यों की पृथक-पृथक पहचान क्या है?

उ० १ जीवद्रव्य-ज्ञान-दर्शन-सुख-वीर्य श्रद्धा-चारित्र-क्रियावतीशक्ति आदि अनन्त गुण
२ पुद्गलद्रव्य:-स्पर्श-रस-गंध-वर्ण-क्रियावती शक्ति आदि अनन्त गुण।
३. धर्मद्रव्य:-गतिहेतुत्व आदि अनन्त गुण।
४. अधर्मद्रव्य:-स्थितिहेतुत्व आदि अनन्त गुण।
५. आकाशद्रव्य:-अवगाहनहेतुत्व आदि अनन्त गुण।
६. कालद्रव्य:-परिणमनहेतुत्व आदि अनन्त गुण।

प्र० ३२ निम्न भजन को कक्षा में सिखाये गये अर्थ व लय के साथ याद कीजिये?

उ० हूँ स्वतंत्र निश्चल निष्काम, ज्ञाता दृष्टा आतम राम।
मैं वह हूँ जो है भगवान, जो मैं हूँ वह है भगवान।
अन्तर यही ऊपरी जान, वे विराग यहाँ राग वितान ।।१।।
मम स्वरूप है सिद्ध समान, अमित शक्ति सुख ज्ञान निधान।
किन्तु आशवश खोया ज्ञान, बना भिखारी निपट अजान ।।२।।
सुख दुख दाता कोई न आन, मोह राग रूष दुःख की खान।
निजको निज पर को पर जान, फिर दुःख का नहीं लेश निदान ।।३।।
जिन शिव ईश्वर ब्रह्मा राम, विष्णु बुद्ध हरि जिसके नाम।
राग त्याग पहुँचू निजधाम, आकुलता का फिर क्या काम ।।४।।
होता स्वयं जगत परिणाम, मैं जगका करता क्या काम।
दूर हटो परकृत परिणाम, ज्ञायकभाव लखूँ अभिराम ।।५।।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० ६ से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतरागविज्ञान प्रतियोगिता-८ का पारितोषिक वितरण १७ सितम्बर को सभास्थल पर ही होगा।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैनधर्म के रहस्यों को जानें-

१.	बुधवार	झंडा मन्दिर	प्रातः ११ से १२ बजे तक
२.	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १० से ११ बजे तक
३.	शनिवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	सायं ४.३० से ५.३० बजे तक
४.	रविवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	प्रातः १० से ११ बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते हैं।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

३१-राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (०१३५) ६२३१३१

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-१०

दिनांक १८ नवम्बर २००१ दिन रविवार दोपहर २.३० बजे
(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गाँधी रोड, देहरादून

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

गुण का स्वरूप

जाति अपेक्षा जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश काल-इन छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं। गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं। और प्रत्येक द्रव्य अनन्त-अनन्त गुणों का समूह है।

प्र० १. गुण किसे कहते हैं ?

उ० जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में व द्रव्य की सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है – उसे गुण कहते हैं।

प्र० २. गुण के पर्यायवाची शब्द क्या क्या हैं ?

उ० शक्ति, लक्षण, विशेष, धर्म, अर्थ, सहवर्ती आदि गुण के पर्यायवाची शब्द हैं।

प्र० ३. गुण की परिभाषा में द्रव्यवाचक, क्षेत्रवाचक, कालवाचक और भाववाचक शब्द क्या हैं ?

उ० द्रव्य के-द्रव्यवाचक है, सम्पूर्ण भागों में-क्षेत्रवाचक है, सम्पूर्ण अवस्थाओं में-कालवाचक है, और गुण-भाववाचक है।

प्र० ४. गुण की परिभाषा में 'सम्पूर्ण भागों में' क्या सूचित करता है ?

उ० जितना बड़ा द्रव्य का क्षेत्र है उतना ही बड़ा गुण का क्षेत्र है। जैसे – जीव द्रव्य का क्षेत्र असंख्यात प्रदेशी है तो ज्ञान, दर्शन आदि गुण का क्षेत्र भी असंख्यात प्रदेशी है।

प्र० ५. गुण की परिभाषा में 'सम्पूर्ण अवस्थाओं' में क्या सूचित करता है ?

उ० गुण द्रव्य से कभी भी, किसी भी हालत में पृथक नहीं होते। द्रव्य अनादिअनन्त है तो उसके गुण भी अनादिअनन्त हैं।

प्र० ६. द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में रहने वाले कौन हैं ?

उ० द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में रहने वाले गुण हैं।

प्र० ७. द्रव्य की सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहने वाले कौन हैं ?

उ० द्रव्य की सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहने वाले गुण हैं।

प्र० ८. द्रव्य के सम्पूर्ण भागों व सम्पूर्ण अवस्थाओं में कितने गुण रहते हैं ?

उ० अनन्त गुण रहते हैं।

प्र० ९. एक गुण द्रव्य के कितने प्रदेशों में है ?

उ० एक गुण द्रव्य के सम्पूर्ण प्रदेशों में हैं।

प्र० १०. द्रव्य के एक प्रदेश में कितने गुण हैं ?

उ० द्रव्य के एक प्रदेश में सम्पूर्ण गुण हैं।

प्र० ११. गुण की विशेषता क्या–क्या हैं ?
उ० (१) गुण द्रव्य के आश्रय से रहते हैं (२) एक गुण दूसरे गुण के आश्रय से नहीं है। (३) सर्व गुण द्रव्य के प्रदेशों में इकट्ठे रहते हैं। (४) गुण कथंचित परिणमनशील हैं और कथंचित परिणमनशील नहीं हैं।

प्र० १२. द्रव्य में कितने प्रकार के गुण है ?
उ० दो प्रकार के हैं (१) सामान्य गुण (२) विशेष गुण

प्र० १३. सामान्य गुण किसे कहते हैं ?
उ० जो सब द्रव्यों में समान रूप से रहते हैं – उन्हें सामान्य गुण कहते है।

प्र० १४. विशेष गुण किसे कहते हैं ?
उ० जो सब द्रव्यों में न रहकर अपने–अपने द्रव्य में रहते हैं उन्हें विशेष गुण कहते हैं। जैसे जीव के ज्ञान सुख आदि, पुद्गल के स्पर्श रस गंध वर्ण आदि।

प्र० १५. सामान्य गुण कितने हैं ?
उ० अनन्त हैं परन्तु मुख्य छह हैं – (१) अस्तित्व (२) वस्तुत्व (३) द्रव्यत्व (४) प्रमेयत्व (५) अगुरूलघुत्व (६) प्रदेशत्व।

प्र० १६. अस्तित्व गुण किसे कहते हैं ?
उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य का कभी नाश न हो और किसी से उत्पन्न भी न हो उस शक्ति को अस्तित्व गुण कहते हैं।

प्र० १७. अस्तित्व गुण को जानने से क्या लाभ है ?
उ० सब द्रव्य अनादिअनन्त हैं, सब द्रव्य अजर अमर हैं तो मैं भी अनादिअनन्त अजर अमर भगवान हूँ – ऐसा पता चल जाता है।

प्र० १८. वस्तुत्व गुण किसे कहते हैं।
उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य में अर्थक्रियाकारित्व अर्थात प्रयोजनभूत क्रिया हो उसे वस्तुत्व गुण कहते हैं।

प्र० १९. वस्तुत्व गुण को जानने से क्या लाभ है ?
उ० प्रत्येक द्रव्य अपना अपना प्रयोजनभूत कार्य करता ही रहता है। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त गुण हैं और प्रत्येक गुण भी अपना अपना प्रयोजनभूत कार्य स्वयं ही करता रहता है –ऐसा जानने से निज आत्मा के ज्ञाता दृष्टारूप प्रयोजनभूत कार्य का पता चल जाता है।

प्र० २०. द्रव्यत्वगुण किसे कहते हैं ?
उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य की अवस्थायें निरन्तर बदलती ही रहती है उसे द्रव्यत्व गुण कहते हैं।

प्र० २१. द्रव्यत्व गुण को जानने से क्या लाभ है ?
उ० द्रव्यत्व गुण बताता है– प्रत्येक द्रव्य– गुण में निरन्तर नई–नई पर्याय होती हैं। वह पर्याय अपनी अपनी योग्यता से ही होती है तो मैं परद्रव्य का कुछ करूं या परद्रव्य मेरा करे ऐसी खोटी बुद्धि का अभाव हो जाता है।

प्र० २२. प्रमेयत्वगुण किसे कहते हैं ?
उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य किसी न किसी ज्ञान का विषय अवश्य हो – उसे प्रमेयत्वगुण कहते हैं।

प्र० २३ प्रमेयत्व गुण को जानने से क्या लाभ है ?
उ० प्रमेयत्व गुण बताता है कि मुझ आत्मा का विश्व के सब द्रव्यों के साथ मात्र ज्ञेयज्ञायक सम्बन्ध है; कर्त्ता–कर्म व भोक्ताभोग्य सम्बन्ध नहीं है ऐसा जानते मानते ही दुःख का अभाव हो जाता है।

प्र० २४ अगुरूलघुत्व गुण किसे कहते हैं ?
उ० जिस शक्ति के कारण से प्रत्येक द्रव्य में द्रव्यपना कायम रहता है अर्थात एक द्रव्य दूसरे द्रव्यरूप नहीं होता, एक गुण दूसरे गुणरूप नहीं होता और द्रव्य में रहने वाले अनन्तगुण बिखर कर अलग अलग नहीं हो जाते उस शक्ति को अगुरूलघुत्व गुण कहते है।

प्र० २५ अगुरूलघुत्व गुण को जानने से क्या लाभ है ?
उ० प्रत्येक द्रव्य अपने अपने द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव अर्थात स्वचतुष्टय से है, पर चतुष्टय से नहीं है अतः अपना हित अहित अपने से ही होता है ऐसा यथार्थ ज्ञान हो जाता है।

प्र० २६ प्रदेशत्व गुण किसे कहते हैं ?
उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य का कोई न कोई आकार अवश्य रहता है उसे प्रदेशत्वगुण कहते है।

प्र० २७ प्रदेशत्व गुण को जानने से क्या लाभ है ?
उ० मुझ आत्मा के चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी एक आकार का अन्य जीवों के असंख्यात प्रदेशी, पुद्गलों के एक–एक प्रदेशी, धर्म–अधर्म द्रव्य के असंख्यातप्रदेशी, आकाश के अनन्त प्रदेशी व कालद्रव्यों के एक–एक प्रदेशी आकारों से सर्वथा सम्बन्ध नहीं हैं ऐसा पता चल जाता है।

प्र० २८ अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरूलघुत्व, प्रदेशत्व आदि सामान्यगुण किस द्रव्य के गुण हैं ?
उ० छहों द्रव्यों में पाये जाने वाले गुण हैं क्योंकि अस्तित्व आदि सामान्य गुण हैं।

प्र० २९ द्रव्य के सामान्य और विशेष गुणों पर से द्रव्य की परिभाषा बताओं ?
उ० सामान्य और विशेष गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्र० ३० प्रत्येक गुण के कार्यक्षेत्र की मर्यादा क्या है ?
उ० प्रत्येक गुण के कार्यक्षेत्र की मर्यादा उसी गुण के अन्दर है उससे बाहर नहीं है। जैसे ज्ञान गुण का कार्य ज्ञान गुण से ही होगा श्रद्धा आदि गुणों से नहीं।

प्र० ३१ एक गुण का दूसरे गुण के कार्य से सम्बन्ध क्यों नहीं हैं ?
उ० क्योंकि प्रत्येक गुण का भाव पृथक पृथक है।

प्र० ३२ द्रव्य से गुणों को कभी पृथक क्यों नही किया जा सकता ?
उ० क्योंकि द्रव्य और गुणों का द्रव्य–क्षेत्र–काल एक ही है।

प्र० ३३ गुणों को जानने से क्या लाभ है ?
उ० प्रत्येक द्रव्य में अनन्त गुण हैं। द्रव्य का एक गुण उसी द्रव्य के दूसरे गुण में भी कुछ नहीं कर सकता तो परद्रव्यों में या परद्रव्यों के गुणों में कुछ कैसे कर सकता हैं अर्थात नहीं कर सकता।

प्र० ३४ अनादिकाल से अज्ञानी जीव गुण के सम्बन्ध में क्या भूल कर रहा है ?
उ० (१) ज्ञान मुझ आत्मा के ज्ञान गुण में से आता है – इस बात का पता न होने से इन्द्रियों से, परद्रव्यों से ज्ञान का होना मानता है।
(२) सुख मुझ आत्मा के सुख गुण में से आता है – इस बात का पता न होने से पांच इन्द्रियों के विषयों से सुख का होना मानता है और चारों गतियों में घूमकर निगोद में चला जाता है।

प्र० ३५ ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य, श्रद्धा, चारित्र, क्रियावतीशक्ति, स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, गतिहेतुत्व, स्थितिहेतुत्व, अवगाहनहेतुत्व, परिणमनहेतुत्व, अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरूलघुत्व, प्रदेशत्व, वैभाविक शक्ति – इन गुणों को गुण को परिभाषा में लगाइयें ?
उ० १. ज्ञान गुण जीव द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में व सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।
२. अस्तित्व गुण छहों द्रव्यों के सम्पूर्ण भागों में व सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है।
– इसी प्रकार बाकी गुणों पर लगाइये।

प्र० ३६ अनन्त सामान्य गुणों व अनन्त विशेषगुणों के ज्ञान का प्रयोजन क्या है ?

उ०
१. छहों द्रव्यों में एकमात्र जीवद्रव्य ही ज्ञानशक्ति वाला है।
२. ज्ञान का फल सुख है। यदि यथार्थ ज्ञान करे तो सुख हो।
३. परन्तु जीव अपने ज्ञानस्वभाव और सुखस्वभाव को नहीं पहचानता औ परवस्तुओं में सुख की कल्पना करता है जिसके कारण संसार में परिभ्रमण करता है।
४. ज्ञान दर्शन सुख आदि आत्मा के गुण हैं और मैं आत्मा हूँ ; स्पर्श–रस–गंध वर्ण आदि पुद्गल के गुण हैं और शरीरादि पुद्गल मुझसे भिन्न हैं – ऐसा यथार्थ ज्ञान करे तो सुख हो।
५. अतः शरीरादि परद्रव्यों से सर्वथा भिन्न और अस्तित्व आदि अनन्त सामान्य गुणों व ज्ञान–दर्शन–सुख–वीर्य–श्रद्धा–चारित्र आदि अनन्त विशेष गुणों से अभिन्न निज आत्मा को पहचानकर संसार का अभाव करके सिद्ध दशा की प्राप्ति करना – यह गुणों के ज्ञान का प्रयोजन है।

प्र० ३८ निम्न भजन को कक्षा में सिखाये गये अर्थ व लय के साथ याद करिये।

माया में फंसे इन्सान, विषयों में न बह जाना.........
चिन्मय चैतन्य निधि, को भूल न पछताना ।।टेक।।
तन धन वैभव परिजन, तेरे काम न आऐंगें
संयोग सभी नश्वर–तेरे साथ न जाऐंगे
तू अजर अमर ध्रुव है, यह भाव सदा ध्याना ।।१।।
पर द्रव्यों में रमकर, अपने को भूल रहा.........
माया अरु ममता में, तू प्रतिक्षण फूल रहा
अनमोल तेरा जीवन, गफलत में न खो जाना।।२।।
चैतन्य सदनवासी, तू ज्ञान दिवाकर है,
है सहज शुद्ध भगवन् तू सुख का सागर है।
अपने को जरा पहचान, विषयों में न खो जाना।।३।।
लख चौरासी भ्रमते, दुर्लभ नर तन पाया
जिनश्रुत जिनदेव शरण, पुण्योदय से पाया
आतम अनुभव के बिन, रह जाए न पछताना ।।४।।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग– विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग–विज्ञानप्रतियोगिता नं० १० से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतरागविज्ञान प्रतियोगिता–६ का पारितोषिक वितरण १८ नवम्बर को सभास्थल पर ही होगा।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैनधर्म के रहस्यों को जानें–

१.	बुधवार	झंडा मन्दिर	प्रातः ११ से १२ बजे तक
२.	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १० से ११ बजे तक
३.	शनिवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	सायं ४.३० से ५.३० बजे तक
४.	रविवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	प्रातः १० से ११ बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते हैं।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

३१–राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (०१३५) ६२३१३१

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–११

दिनांक २० जनवरी २००२ दिन रविवार दोपहर २.३० बजे

(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गाँधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पर्याय का स्वरूप

जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते है। जीव–पुद्गल–धर्म–अधर्म–आकाश–काल–ये सब द्रव्य अनन्त–२ गुणों के समूह है। इस विश्व के प्रत्येक द्रव्य–गुण में हर समय एक पर्याय का उत्पाद और एक पर्याय का व्यय स्वयं से ही होता है, अतः प्रत्येक द्रव्य गुण में अपना कार्य करने की पूर्ण सामर्थ्य है। किसी भी द्रव्य को अपने परिणमन में पर के सहयोग की रंचमात्र भी आवश्यकता नहीं है परन्तु अज्ञानी जीव परद्रव्यों के सहयोग की मान्यता से व्यर्थ ही दुःखी होते है। यदि पर्याय का सच्चा ज्ञान हो जाये तो मैं पर का कर्त्ता या परद्रव्य मेरा कार्य करे ऐसी परकर्तृत्व की मान्यता का अभाव हो जाये और जीव सुखी हो जाये।

प्र० १. पर्याय किसे कहते हैं ?
उ० गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं।
प्र० २. पर्याय के पर्यायवाची शब्द क्या है ?
उ० कर्म, अवस्था, हालत, दशा, परिणाम, परिणति आदि पर्याय के पर्यायवाची शब्द हैं।
प्र० ३. प्रत्येक द्रव्य की पर्याय कितनी बड़ी होती है ?
उ० जितना बड़ा द्रव्य का क्षेत्र है उतनी ही बड़ी उस द्रव्य की पर्याय होती है।
प्र० ४. प्रत्येक पर्याय की स्थिति कितनी देर की होती है ?
उ० कोई भी पर्याय हो, प्रत्येक पर्याय की स्थिति एक समय मात्र ही होती है।
प्र० ५. प्रत्येक गुण में कितनी पर्याय होती है ?
उ० तीन काल के जितने समय हैं उतनी ही पर्याय प्रत्येक गुण में होती है।
प्र० ६. प्रत्येक द्रव्य में एक समय में कितनी पर्याय होती हैं ?
उ० प्रत्येक द्रव्य में अनन्त गुण है और प्रत्येक गुण की प्रति समय एक पर्याय होती है। अतः प्रत्येक द्रव्य में एक ही समय में एक साथ अनन्त पर्यायें होती हैं।
प्र० ७. एक समय की पर्याय को सत् निश्चित क्यों कहा जाता है ?
उ० प्रत्येक पर्याय स्वयं ही अपनी योग्यता से स्वतंत्र परिणमन करती है उसे पर की भी अपेक्षा नहीं और स्वद्रव्य की भी अपेक्षा नहीं–अतः पर्याय को सत् निश्चित कहा जाता है।
प्र० ८. एक समय की पर्याय सत् है, निश्चित है इसको जानने से क्या लाभ है ?
उ० पर्याय उस एक समय की सत् होने से आगे पीछे हो सके–ऐसा नहीं है अतः पर्याय निश्चित है। ऐसा जाने माने तो ज्ञान–दर्शन का उपयोग पर्याय से हटकर ध्रुव आत्मा पर आ जाये और वीतरागता उत्पन्न हो।
प्र० ९. पर्याय के कितने भेद हैं ?
उ० दो भेद हैं (१) व्यंजन पर्याय (२) अर्थ पर्याय
प्र० १०. व्यंजनपर्याय और अर्थपर्याय किसे कहते हैं ?
उ० द्रव्य के प्रदेशत्व गुण के कार्य को व्यंजन पर्याय कहते हैं। प्रदेशत्वगुण के अतिरिक्त बाकी अन्य गुणों के कार्य को अर्थपर्याय कहते हैं।
प्र० ११. व्यंजनपर्याय के कितने भेद हैं ?
उ० दो भेद है (१) स्वभाव व्यंजनपर्याय (२) विभाव व्यंजनपर्याय

प्र० १२. स्वभाव व्यंजनपर्याय और विभाव व्यंजनपर्याय किसे कहते हैं ?

उ० पर निमित्त के सम्बन्ध रहित द्रव्य का जो आकार हो उसे स्वभाव व्यंजनपर्याय कहते हैं जैसे–सिद्ध दशा का आकार। पर निमित्त के सम्बन्ध से द्रव्य का जो आकार हो उसे विभाव व्यंजनपर्याय कहते हैं। जैसे जीव की मनुष्य देव आदि पर्यायें।

प्र० १३. अर्थपर्याय के कितने भेद हैं ?

उ० दो भेद है – (१) स्वभाव अर्थपर्याय (२) विभाव अर्थपर्याय

प्र० १४. स्वभाव अर्थपर्याय और विभाव अर्थपर्याय किसे कहते हैं ?

उ० पर निमित्त के सम्बन्ध रहित जो अर्थपर्याय होती है उसे स्वभाव अर्थपर्याय कहते हैं। जैसे जीव के श्रद्धा गुण की सम्यकदर्शन पर्याय। पर निमित्त के सम्बन्ध सहित जो अर्थपर्याय होती है उसे विभाव अर्थपर्याय कहते हैं। जैसे जीव के श्रद्धा गुण की मिथ्यादर्शन पर्याय।

प्र० १५. एक द्रव्य में व्यंजनपर्याय कितनी होती हैं ?

उ० एक द्रव्य में एक ही व्यंजन होती है क्योंकि प्रदेशत्वगुण के कार्य को व्यंजनपर्याय कहते है और एक द्रव्य में एक ही प्रदेशत्वगुण होता है।

प्र० १६. एक द्रव्य में अर्थपर्याय कितनी होती हैं ?

उ० एक द्रव्य मे अर्थपर्याय अनन्त होती हैं क्योंकि प्रदेशत्वगुण को छोड़कर बाकी अनन्तगुणों के कार्य को अर्थपर्याय कहते हैं।

प्र० १७. जीव और पुदगल में कौन कौन सी पर्यायें होती है ?

उ० जीव और पुदगल में चारों प्रकार की पर्यायें हो सकती हैं –
स्वभाव व्यंजनपर्याय, विभाव व्यंजनपर्याय, स्वभाव अर्थपर्याय, विभाव अर्थपर्याय।

प्र० १८. धर्म–अधर्म–आकाश–काल द्रव्यों में कौन–कौन सी पर्यायें होती हैं ?

उ० इन चार द्रव्यों में मात्र स्वभाव व्यंजनपर्यायें और स्वभाव अर्थपर्यायें ही होती हैं, विभाव पर्यायें कभी भी नहीं होती।

प्र० १९. निगोद से लेकर चारों गतियों के मिथ्यादृष्टि जीवों में कौन–कौन सी पर्याय होती हैं ?

उ० विभाव व्यंजन पर्यायें और विभाव अर्थपर्यायें ही होती हैं, स्वभाव पर्यायें नहीं होती हैं।

प्र० २०. सिद्ध भगवान में कौन कौन सी पर्यायें होती हैं ?

उ० स्वभाव व्यंजनपर्याय और स्वभाव अर्थपर्यायें ही होती हैं, विभाव पर्यायें नहीं होती हैं।

प्र० २१. चौथे गुणस्थान से लेकर १४ वें गुणस्थान तक कौन सी पर्यायें होती हैं ?

उ० चौथे से लेकर १४वें गुणस्थान तक विभाव व्यंजनपर्याय होती है। बाकी गुणों में जितनी शुद्धि है उतनी स्वभाव अर्थपर्यायें और जितनी अशुद्धि है उतनी विभाव अर्थपर्यायें होती है।

प्र० २२. परमाणु में कौन कौन सी पर्यायें होती हैं ?

उ० परमाणु में मात्र स्वभाव व्यंजन पर्याय और स्वभाव अर्थपर्यायें ही होती है।

प्र० २३. स्कंध में कौन कौन सी पर्यायें होती हैं ?

उ० विभाव व्यंजनपर्यायें और विभाव अर्थपर्यायें ही होती हैं।

प्र० २४. जीव के ज्ञानादि गुणों का कार्य कितने प्रकार का है ?

उ० ज्ञानगुण–मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, केवलज्ञान, कुमति, कुश्रुत,कुअवधि
दर्शन गुण :– चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन।
श्रद्धागुण :– मिथ्यादर्शन सम्यकदर्शन
चारित्रगुण :– (१) अशुद्ध अर्थात अशुभ व शुभ भाव,
(२) शुद्ध अर्थात स्वरूपाचरणचारित्र, देशचारित्र, सकलचारित्र, यथाख्यातचारित्र
सुख गुण :– (१) सुख (२) दुख, क्रियावतीशक्ति :– (१) गमन (२) स्थिर

प्र० २५. केवलज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, मिथ्यादर्शन, शुभाशुभभाव, यथाख्यातचारित्र क्या है ?

उ० केवलज्ञान जीवद्रव्य के ज्ञानगुण की पूर्ण स्वभाव अर्थपर्याय है। मनःपर्ययज्ञान जीवद्रव्य के ज्ञानगुण की एकदेश स्वभाव अर्थपर्याय है। मिथ्यादर्शन जीवद्रव्य के श्रद्धागुण की विभाव अर्थपर्याय है। शुभाशुभभाव जीव द्रव्य के चारित्रगुण की विभाव अर्थ पर्यायें है। यथाख्यातचारित्र जीवद्रव्य के चारित्र गुण की पूर्ण स्वभाव अथपर्याय है।

प्र० २६. आँख से ज्ञान होता है, गाली सुनकर क्रोध आता है, दर्शनमोह के उदय से मिथ्यात्व होता है, रूपये पैसे से सुख मिलता है, चारित्र मोह के उदय से क्षायिक सम्यक्त्व होता है–इन वाक्यों में पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उ० ज्ञान आत्मा के ज्ञान गुण में से आता है, आंख से नहीं तो पर्याय को माना, आंख से ज्ञान होता है – ऐसा माना तो पर्याय को नहीं माना। इसी प्रकार अन्य प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

प्र० २७. पुदगल किसे कहते हैं ?

उ० जिसमें स्पर्श रस गंध वर्ण पाया जाये वह पुदगल है।

प्र० २८. पुदगल के स्पर्शादि गुणों का कार्य कितने प्रकार का है ?

उ० १. स्पर्श गुण में आठ पर्याय = हल्का–भारी, ठंडा–गरम, रूखा–चिकना, कड़ा–नरम
२. रस गुण में पांच पर्याय – खट्टा–मीठा–कड़वा–चरपरा–कषायला।
३. गंध गुण में दो पर्याय – सुगन्ध और दुर्गन्ध।
४. वर्ण गुण में पांच पर्याय – काला, पीला, नीला, लाल, सफेद।
५. शब्द की सात पर्याय – मिलाकर २७ पर्यायें होती हैं।

प्र० २९ हल्कापना, अंधेरा, गोल नींबू, खट्टा नीबू क्या है ?

उ० हल्कापना पुदगलों के स्पर्श गुण की विभाव अर्थपर्यायें है। अंधेरा पुदगलों के वर्ण गुण की विभाव अर्थपर्यायें हैं। गोल नींबू पुदगलों के प्रदेशत्वगुण की विभाव व्यंजनपर्यायें हैं। खट्टा नींबू पुदगलों के रस गुण की विभाव अथपर्याय हैं।

प्र० ३० पुदगल के कितने भेद हैं

उ० पुदगल के दो भेद है – (१) परमाणु (२) स्कन्ध

प्र० ३१ परमाणु व स्कन्ध की परिभाषा क्या है ?

उ० १. जिसका दूसरा विभाग न हो सके ऐसे सबसे छोटे पुदगल को परमाणु कहते हैं।
२. दो या दो से अधिक परमाणुओं के बंध को स्कन्ध कहते हैं।

प्र० ३२. शरीर कितने हैं ?

उ० पांच हैं– औदारिक शरीर, वैक्रियक शरीर, आहारक शरीर, तैजस शरीर, कार्माण शरीर।

प्र० ३३. औदारिक शरीर किसे कहते हैं ?

उ० मनुष्य और तिर्यचों के स्थूल शरीर को औदारिक शरीर कहते हैं।

प्र० ३४ वैक्रियक शरीर किसे कहते हैं ?

उ० जो छोटे–बड़े पृथक–अपृथक आदि अनेक क्रियाओं को करे ऐसे देव नारकियों के शरीर को वैक्रियक शरीर कहते हैं।

प्र० ३५ आहारकशरीर किसे कहते हैं ?

उ० आहारक ऋद्धिधारी छट्ठे गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्वों में कोई शंका होने पर अथवा जिनालय आदि की वंदना करने के लिए मस्तक से एक हाथ प्रमाण स्वच्छ और सफेद, सप्तधातु रहित, पुरुषाकार जो पुतला निकलता है उसको आहारक शरीर कहते हैं।

प्र० ३६ तैजसशरीर किसे कहते हैं ?

उ० औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीरों में कान्ति उत्पन्न करने वाले शरीर को तैजसशरीर कहते हैं।

प्र० ३७ कार्मानशरीर किसे कहते हैं ?

उ० ज्ञानावरणादि आठ कर्मों के समूह को कार्माणशरीर कहते हैं।

प्र० ३८ एक जीव को एक साथ कितने शरीरों का संयोग हो सकता है ?

उ० एक साथ कम से कम दो और अधिक–से–अधिक चार शरीरों का संयोग हो सकता है।

खुलासा इस प्रकार है – (१) विग्रह गति में तैजस और कार्माण (२) मनुष्य और तिर्यंचो के औदारिक, तैजस और कार्माण (३) ऋद्धिधारी मुनि को औदारिक, आहारक, तैजस और कार्माण (४) देव और नारकियो को वैक्रियक, तैजस और कार्माण।

प्र० ३९ स्कंध के कितने भेद है ?

उ० आहारवर्गणा, तैजसवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माणवर्गणा इत्यादि २२ भेद हैं।

प्र० ४० आहारवर्गणा किसे कहते हैं ?

उ० जो पुद्गल स्कंध औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीर रूप से परिणमन करता है उसको आहारवर्गणा कहते है।

प्र० ४१ तैजसवर्गणा किसे कहते हैं ?

उ० जिस वर्गणा से तैजस शरीर बनता है उसे तैजसवर्गणा कहते हैं।

प्र० ४२ भाषावर्गणा किसे कहते हैं ?

उ० जो पुद्गल स्कंध शब्दरूप परिणमित होता है उसे भाषावर्गणा कहते हैं।

प्र० ४३ मनोवर्गणा किसको कहते हैं ?

उ० जिस पुद्गल स्कंध से अष्टदल कमल के आकार द्रव्यमन की रचना होती है उसे मनोवर्गणा कहते हैं।

प्र० ४४ कार्माणवर्गणा किसे कहते हैं ?

उ० जिस पुद्गल स्कंध से कार्माणशरीर बनता है उसको कार्माणवर्गणा कहते हैं।

प्र० ४५ कुछ औदारिक शरीर के नाम बताओ ?

उ० मकान, गाड़ी, रुपया–पैसा, कपड़े, सोना–चांदी, मेज, रोटी, आदि सब जो मोटे रूप से देखने में आता है वह सब औदारिक शरीर है।

प्र० ४६ मनुष्य तिर्यंचो के संयोगरूप शरीर का क्या नाम है, इसका कर्त्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उ० मनुष्य–तिर्यंचो के संयोगरूप शरीर का नाम औदारिक शरीर है। इसका कर्त्ता आहारवर्गणा है, मनुष्य तिर्यंचो की आत्मा या अन्य वर्गणायें औदारिक शरीर का कर्त्ता नही है।

प्र० ४७ यह मेरा मकान है, मैने रोटी बनाई, भगवान की दिव्यध्वनि है, यह मेरा सोने का हार है, मैंने कपड़े पहने, सिद्ध दशा होने से आठों कर्मों का अभाव हुआ, मुझे गर्मी लगती है, मैं भारी हूँ, मैने पूजा बोली, मैनें अष्ट द्रव्य चढ़ाये, मैं गोरी हूँ, आदि – इन वाक्यों में पर्याय को कब माना कब नहीं माना ?

उ० मकान औदारिक शरीर है, मकान का कर्ता आहारर्गणा है मुझ आत्मा नही ऐसा माना तो पर्याय को माना। यह मेरा मकान है ऐसा माना तो पर्याय को नहीं माना। इसी प्रकार अन्य प्रश्नो के उत्तर दीजिये।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग– विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नही ले पाये हैं वे इस वीतराग–विज्ञानप्रतियोगिता नं० ११ से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहीं से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतरागविज्ञान प्रतियोगिता–१० का पारितोषिक वितरण २० जनवरी को सभास्थल पर ही होगा।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैनधर्म के रहस्यों को जानें–

१.	बुधवार	झंडा मन्दिर	प्रातः ११ से १२ बजे तक
२.	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १० से ११ बजे तक
३.	शनिवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	सायं ४.३० से ५.३० बजे तक
४.	रविवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	प्रातः १० से ११ बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते हैं।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

३१–राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (०१३५) ६२३१३१

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–१२

दिनांक २४ मार्च २००२ दिन रविवार दोपहर ३.०० बजे
(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गाँधी रोड, देहरादून

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

नोट: वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता न० ८–९–१० व ११ के समस्त प्रश्न उत्तर (छोटे बच्चों से इन्हीं तालिकाओं में से ही छोटे छोटे प्रश्न पूछे जायेंगे)

विश्व–द्रव्य–गुण–पर्याय का रहस्य

जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं। जीव–पुद्गल–धर्म–अधर्म– आकाश–काल–ये सब द्रव्य अनन्त–२ गुणों के समूह हैं। इस विश्व के प्रत्येक द्रव्य–गुण में हर समय एक पर्याय का उत्पाद और एक पर्याय का व्यय स्वयं से ही होता है, अतः प्रत्येक द्रव्य गुण में अपना कार्य करने की पूर्ण सामर्थ्य है। किसी भी द्रव्य को अपने परिणमन में पर के सहयोग की रंचमात्र भी आवश्यकता नही है परन्तु अज्ञानी जीव परद्रव्यों के सहयोग की मान्यता से व्यर्थ ही दुःखी होते है। यदि पर्याय का सच्चा ज्ञान हो जाये तो मै पर का करूँ या परद्रव्य मेरा कार्य करे ऐसी परकर्तृत्व की मान्यता का अभाव हो जाये और जीव सुखी हो जाये।

जिज्ञासा : विश्व–द्रव्य–गुण–पर्याय का रहस्य जैसा अपने प्रतियोगिता न० ८, ९, १०, ११ में बताया वैसा जिनवाणी में कहाँ बताया है ?

समाधान : जैनशास्त्रों में विश्व–द्रव्य–गुण–पर्याय का रहस्य पंक्ति–पंक्ति में है। यहाँ, अब से लगभग २००० वर्ष पूर्व हुये श्री कुन्दकुन्दाचार्य द्वारा रचित श्री समयसार की गाथा ३ प्रमाण रूप में प्रस्तुत है।

श्री समयसार गाथा ३

एकत्व–निश्चयगत समय, सर्वत्र सुन्दर लोक में।
उससे बने बंधनकथा, जु विरोधिनी एकत्व में।।३।।

गाथार्थ :– एकत्वनिश्चय को प्राप्त जो समय है वह लोक में सब जगह सुंदर है इसलिए एकत्व में दूसरे के साथ बंध की कथा विसंवाद–विरोध करने वाली है।

टीका:– (१) यहाँ 'समय' शब्द से सामान्यतया सभी पदार्थ कहे जाते हैं, क्योंकि अपने गुण–पर्यायों को प्राप्त होकर जो परिणमन करता है सो समय है। इसलिए धर्म–अधर्म–आकाश–काल–पुद्गल–जीवद्रव्यस्वरूप लोक में सर्वत्र जो कुछ जितने–

पदार्थ हैं वे सभी निश्चय से (वास्तव में)एकत्वनिश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को पाते हैं, क्योंकि अन्य प्रकार से उनमें सर्वसंकर आदि दोष आजायेंगे।

(२) वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को (समूह को) चुम्बन करते हैं– स्पर्श करते हैं तथापि वे परस्पर एक दूसरे को स्पर्श नहीं करते,

(३) अत्यंत निकट एकक्षेत्रावगाहरूप से तिष्ठ रहे हैं तथापि वे सदाकाल अपने स्वरूप से च्युत नहीं होते, पररूप परिणमन न करने से अनन्त व्यक्तिता नष्ट नहीं होती इसलिये वे टंकोत्कीर्ण की भांति (शाश्वत) स्थित रहते हैं

(४) और समस्त विरूद्ध कार्य तथा अविरूद्ध कार्य दोनों की हेतुता से वे सदा विश्व का उपकार करते हैं–टिकाए रखते हैं।

(५) इस प्रकार सर्व पदार्थों का भिन्न २ एकत्व सिद्ध होने से जीव नामक समय को बंध की कथा से ही विसंवाद की आपत्ति आती है; तो फिर बंध जिसका मूल है ऐसा जो परसमयपना, उससे उत्पन्न होने वाला (परसमय–स्वसमयरूप) द्विविधपना उसको (जीव नाम के समय को) कहाँ से हो? इसलिए समय के एकत्व का होना ही सिद्ध होता है।

भावार्थः– निश्चय से सर्व पदार्थ अपने अपने स्वभाव में स्थित रहते हुए ही शोभा पाते हैं। परन्तु जीव नामक पदार्थ की अनादिकाल से पुद्‌गल कर्म के साथ निमित्तरूप बंध–अवस्था है; उससे इस जीव में विसंवाद खड़ा होता है, इसलिए वह शोभा को प्राप्त नहीं होता इसलिये वास्तव में विचार किया जाये तो एकत्व ही सुन्दर है; उससे यह जीव शोभा को प्राप्त होता है।

श्री समयसार गाथा ३ के आधार पर प्रश्न–उत्तर

प्र० १. यहां 'समय' शब्द से क्या तात्पर्य है?
उ० जो अपने गुण–पर्यायों को प्राप्त होकर परिणमन करता है वह समय है।

प्र० २. 'समय' में कौन–कौन पदार्थ आये?
उ० जीव, पुद्‌गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल– ये छहों द्रव्य समय हैं क्योंकि सभी द्रव्य अपने अपने गुण–पर्यायों को प्राप्त होकर परिणमन करते हैं।

प्र० ३. विश्व के सभी द्रव्य किस कारण सुन्दरता को पाते हैं?
उ० जीवादि सभी द्रव्य एकत्वनिश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को पाते हैं।

प्र० ४. एकत्वनिश्चय को प्राप्त से क्या तात्पर्य है ?
उ० अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुण, अनन्त विशेष गुण, एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्यायों सहित अपनी अपनी सत्ता में निश्चित होना ही एकत्वनिश्चय को प्राप्त है।

प्र० ५. सर्वसंकर दोष किसे कहते हैं?
उ० सब द्रव्यों का आपस में मिल जाना सर्वसंकर है। यदि सभी द्रव्य एकत्व निश्चय को प्राप्त न हों तो आपस में मिल जायेंगे।

प्र० ६. टीका के नं० २ भाग में आचार्य क्या कहना चाहते हैं?
उ० प्रत्येक द्रव्य में अनन्त अनन्त धर्म अर्थात गुण हैं। प्रत्येक द्रव्य अपने गुणों–पर्यायों का तो स्पर्श करता है लेकिन एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को सर्वथा स्पर्श नहीं करता है।

प्र० ७. टीका के नं० ३ भाग में आचार्य क्या कहना चाहते हैं?
उ० आकाश के एक प्रदेश में अनन्त जीव, अनन्त परमाणु, धर्म, अधर्म, कालाणु सभी अत्यन्त निकट रहते हैं तो भी प्रत्येक द्रव्य अपने अपने क्षेत्र में रहता है, एक द्रव्य दूसरे द्रव्यरूप परिणमन नहीं करता अतः किसी द्रव्य का नाश नहीं होता, अनन्त द्रव्य अनन्त ही रहते हैं, सभी द्रव्य टंकोत्कीर्ण जैसे हैं, वैसे स्थित रहते है।

प्र० ८. विरूद्ध कार्य और अविरूद्ध कार्य का क्या अर्थ है?
उ० एक समय की पर्याय में जो उत्पाद व्यय है वह विरूद्धभाव है और गुण कायम रहते हैं वह अविरूद्ध भाव है।

प्र० ९. टीका के नं० ४ भाग में आचार्य क्या कहना चाहते हैं?
उ० प्रत्येक द्रव्य में अनन्त गुण है, प्रत्येक गुण में हर समय एक पर्याय का उत्पाद, एक पर्याय का व्यय और गुण कायम रहते हैं। यह उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य स्वभाव प्रत्येक द्रव्य का अनादि से है और रहेगा। प्रत्येक द्रव्य अपने में पूर्ण समर्थ है और दूसरे द्रव्य में कुछ करने के अयोग्य है – यही विश्व का उपकार है।

प्र० १०. द्रव्यों की स्वतंत्रता का ज्ञान कराके आचार्य भगवान किसमें बाधा बतलाते हैं?
उ० जीव नामक 'समय' की द्विविधता में आचार्य बाधा बतलाते हैं।

प्र० ११. जीव नामक समय में द्विविधपना क्या है?
उ० जीव का स्वसमय और परसमय रूप परिणमन करना ही द्विविधपना है।

प्र० १२. स्वसमय रूप परिणमन क्या है?
उ० प्रत्येक द्रव्य अपने अपने गुणों पर्यायों में व्याप्त है ऐसा जानकर अपने ज्ञान स्वभाव में एकत्व करके निर्मल परिणमन करना स्वसमय है। इसी में जीव की सुन्दरता है।

प्र० १३. परसमय रूप परिणमन क्या है?
उ० प्रत्येक द्रव्य अपने अपने गुण पर्यायों में व्याप्त है इस बात को भूलकर शरीरादि पुद्‌गलों में एकत्व करके आस्रव बंध अर्थात मोह राग द्वेष रूप परिणमन करना परसमय है। इसमें जीव की सुन्दरता नही है।

प्र० १४. परसमय रूप परिणमन करने में जीव की सुन्दता क्यों नहीं है?
उ० भगवान ने इस विश्व में छह द्रव्य देखे हैं। वे छह द्रव्य एकत्वनिश्चय को प्राप्त

हैं अर्थात अपने अपने में हैं फिर शुद्ध आत्मा को बंधपना शोभा नहीं देता। शरीरादि पुद्गलों को अपना मानकर शुभाशुभ भावों रूप परिणमना और उनमें टिकना–यही बंधन है, परसमयपना है, झगड़ा है, इसमें जीव की सुन्दता नहीं है।

प्र० १५. विश्व की व्यवस्था जानकर करना क्या है?

उ० निज आत्मा को विश्व के सर्व द्रव्यों से पृथक देखकर सर्व दुखों का नाश करना। निज भगवान आत्मा में एकत्व करके स्वसमयपना अर्थात् सम्यक्दर्शन–ज्ञान–चारित्र की प्राप्ति करना और परसमयपना अर्थात् मिथ्यादर्शन–ज्ञान–चारित्र का नाश करना।

"इस आत्मा को अन्य द्रव्यों से पृथक देखना ही नियम से सम्यक्दर्शन है, यह आत्मा अपने गुण पर्यायों में व्याप्त रहने वाला है, शुद्धनय से एकत्व में निश्चित किया गया है और पूर्ण ज्ञानघन है। यह आत्मा एक ही हमें प्राप्त हो।" (श्री समयसार कलश ६)

प्र० १६. अपने गुणपर्यायों में व्याप्त, एकत्व में निश्चित, पूर्णज्ञानघन आत्मा की प्राप्ति का उपाय छहढाला में क्या बताया है?

उ० चेतन को है उपयोग रूप बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल नभ धर्म–अधर्म काल इन्तें न्यारी है जीव चाल।।
ये पंक्तियाँ अर्थ सहित याद करिये।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग– विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग–विज्ञानप्रतियोगिता नं० १२ से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतरागविज्ञान प्रतियोगिता–११ का पारितोषिक वितरण २४ मार्च को सभास्थल पर ही होगा।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैनधर्म के रहस्यों को जानें–

१.	बुधवार	झंडा मन्दिर	प्रातः ११ से १२ बजे तक
२.	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १० से ११ बजे तक
३.	शनिवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	सायं ४.३० से ५.३० बजे तक
४.	रविवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	प्रातः १० से ११ बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते हैं।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

३१–राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (०१३५) ६२३१३१

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–१३

दिनांक २६ मई २००२ दिन रविवार दोपहर ३.०० बजे
(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गाँधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं। जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल–प्रत्येक द्रव्य अनन्त सामान्य गुणों और अनन्त विशेष गुणों का समूह है। प्रत्येक द्रव्य में समान रूप से पाये जाने वाले गुण–सामान्य गुण हैं जो कि अनन्त हैं, उनमें मुख्य छह है – अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्व और प्रदेशत्व। सब द्रव्यों में न रहकर अपने–अपने द्रव्य में रहने वाले गुण–विशेष गुण हैं जिनसे द्रव्यों की पृथकता का ज्ञान होता है। प्रत्येक द्रव्य में गुण संख्या अपेक्षा समान है कम या ज्यादा नहीं। सामान्य और विशेष गुणों में हर समय एक पर्याय का उत्पाद और एक पर्याय का व्यय स्वयं से ही होता है अतः प्रत्येक द्रव्य–गुण में अपना कार्य करने की पूर्ण सामर्थ्य है। किसी द्रव्य को अपने परिणमन में पर के सहयोग की रंचमात्र भी आवश्यकता नही है।

अस्तित्व गुण

कर्ता जगत का मानता जो कर्म या भगवान को,
वह भूलता है लोक में अस्तित्व गुण के ज्ञान को।
उत्पाद–व्ययुत वस्तु है फिर भी सदा ध्रुवता धरे,
अस्तित्वगुण के योग से कोई नहीं जग में मरे।।

प्र० १. अस्तित्व गुण किसे कहते हैं ?

उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य का कभी नाश नहीं होता और किसी से उत्पन्न भी नहीं होता – उस शक्ति को अस्तित्व गुण कहते हैं।

प्र० २. अस्तित्व गुण द्रव्य है या पर्याय है ?

उ० अस्तित्व गुण प्रत्येक द्रव्य का सामान्य गुण है, द्रव्य या पर्याय नहीं है।

प्र० ३. अस्तित्व गुण को गुण की परिभाषा में लगाइये ?

उ० अस्तित्व गुण छहों द्रव्यों के सम्पूर्ण भागों में और सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है।

प्र० ४. अस्तित्व गुण छहों द्रव्यों के सम्पूर्ण भागों और सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है – यह जानने से क्या लाभ है ?

उ० अस्तित्व गुण के कारण सभी द्रव्यों में नाश और उत्पन्नपना नहीं होता अतः (अ) सब द्रव्य अनादिअनन्त है और (ब) सब द्रव्य अजर अमर हैं – यह पता चल जाता है।

प्र० ५. सब द्रव्य अनादिअनन्त और अजर अमर है – यह जानने से हमें क्या लाभ है ?

उ० सब द्रव्य अनादिअनन्त और अजर अमर है तो मैं भी अनादि अनन्त और अजर अमर भगवान आत्मा हूँ – ऐसा पता चला जाता है।

प्र० ६. **मैं अनादि अनन्त और अजर अमर भगवान हूँ – यह जानने से क्या लाभ है ?**

उ० सात प्रकार के भयों का अभाव हो जाता है।

प्र० ७. **सात प्रकार के भय कौन–कौन से हैं ?**

उ० (१) इस लोक का भय (२) परलोक का भय (३) वेदना भय (४) अरक्षा भय (५) अगुप्ति भय (६) मरण भय (७) आकस्मिक भय

प्र० ८. **छहों द्रव्यों में अस्तित्व गुण है। अस्तित्व गुण के कारण सब द्रव्यों का कभी नाश नहीं होता और नया उत्पन्न नहीं होता अर्थात सब द्रव्य अनादि अनन्त और अजर अमर हैं– ऐसा जानने मानने से किन–किन खोटी मान्यताओं का नाश हो जाता है ?**

उ० (१) ईश्वर जगत का कर्ता है (२) ईश्वर जगत की रक्षा करता है (३) ईश्वर जगत का नाश करता है (४) कर्म उत्पन्न करते हैं (५) कर्म रक्षा करते हैं (६) कर्म नाश करते हैं (७) मैं दूसरों को अथवा दूसरे मुझे उत्पन्न करते हैं (८) मैं दूसरों की अथवा दूसरे मेरी रक्षा करते हैं (९) मैं दूसरों का अथवा दूसरे मेरा नाश करते हैं – इन खोटी मान्यताओं का नाश हो जाता है।

प्र० ९. **अस्तित्व गुण कितने हैं और क्यों ?**

उ० जितने द्रव्य हैं उतने ही अस्तित्व गुण हैं क्योंकि प्रत्येक द्रव्य में एक एक अस्तित्व गुण है।

प्र० १०. **अस्तित्व गुण की अपेक्षा छहों द्रव्यों को क्या कहते हैं ?**

उ० अस्तित्व गुण की अपेक्षा छहों द्रव्यों को सत् कहते हैं।

प्र० ११. **सत् क्या है ?**

उ० 'सत् द्रव्य लक्षणम्' – सत् द्रव्य का लक्षण है।

प्र० १२. **सत् किसे कहते हैं ?**

उ० 'उत्पाद व्यय ध्रौव्ययुक्तं सत्' – जो उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य सहित हो उसे सत् कहते हैं। इसलिये प्रत्येक द्रव्य गुण में स्वयं की योग्यता से एक पर्याय का उत्पाद, एक पर्याय का व्यय होता है और द्रव्य–गुण ध्रौव्य रहता है।

प्र० १३. **क्या उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य का समय पृथक–पृथक है ?**

उ० उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य तीनों का समय एक ही है। आगे पीछे नहीं हैं।

प्र० १४. **उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य तीनो एक समय मे किस प्रकार है ?**

उ० (१) मिथ्यात्व का व्यय, सम्यक्त्व का उत्पाद, श्रद्धा गुण ध्रौव्य।
(२) श्रुतज्ञान का व्यय, केवलज्ञान का उत्पाद, ज्ञान गुण ध्रौव्य।
(३) ठंडे का व्यय, गर्म का उत्पाद, स्पर्श गुण ध्रौव्य।
(४) खट्टे का व्यय, मीठे का उत्पाद, रस गुण ध्रौव्य।
इस प्रकार एक–एक समय मे उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य होता रहा है, हो रहा है और होता रहेगा– ऐसा वस्तु का अभाव है।

प्र० १५. **प्रत्येक द्रव्य में उत्पाद–व्यय–ध्रौव्यरूप अस्तित्व से क्या सिद्ध होता है ?**

उ० उत्पाद–व्यय अर्थात बदलना; ध्रौव्य अर्थात कायमपना; प्रत्येक द्रव्य का कायम रहकर बदलना उसका स्वभाव है – ऐसा उत्पाद–व्यय– ध्रौव्यरूप अस्तित्व से सिद्ध होता है।

प्र० १६. **प्रत्येक द्रव्य उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य अस्तित्वरूप है – इस कथन में क्या आध्यात्मिक रहस्य हैं ?**

उ० प्रत्येक द्रव्य एक समय में अपने उत्पाद–व्यय–ध्रुवरूप त्रिस्वभाव का स्पर्श करता है, उसी समय निमित्त होने पर भी परद्रव्य उनका स्पर्श नहीं करते। सम्यग्दर्शन हुआ – वहां आत्मा सम्यक्दर्शन के उत्पाद को, मिथ्यात्व के व्यय को और श्रद्धा गुण रूप अपनी ध्रुवता को स्पर्श करता है किन्तु दर्शनमोह के उपशमादि को व देव–गुरू–शास्त्र को स्पर्श नहीं करता।

प्र० १७. **इस विश्व के किसी द्रव्य का कभी नाश नहीं होता और कभी भी उत्पन्न नहीं होता – इसकी सिद्धि कैसे हो सकती है ?**

उ० प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग – चारों अनुयोगों से द्रव्य के अनादिअनन्त अस्तित्व की सिद्धि होती है।

प्र० १८. **अस्तित्वगुण का रहस्य जानने मानने से कितने लाभ रहे ?**

उ० (१) सब द्रव्य अनादिअनन्त है। (२) सब द्रव्य अजर–अमर है। (३) सात प्रकार के भयों का अभाव हो जाता है। (४) ईश्वर उत्पन्न करता है, रक्षा करता है, नाश करता है– इस खोटी मान्यता का अभाव हो जाता है। (५) कर्म उत्पन्न करते हैं, रक्षा करते हैं, नाश करते हैं – ऐसी खोटी मान्यता का अभाव हो जाता है। (६) मैं दूसरों को अथवा दूसरे मुझे उत्पन्न करते हैं, रक्षा करते हैं, नाश करते हैं – ऐसी खोटी मान्यता का अभाव हो जाता है। (७) उत्पाद–व्यय– ध्रौव्य की सिद्धि हो जाती है। (८) प्रत्येक द्रव्य उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य अस्तित्वरूप है –ऐसा मानने से पर में एकत्व, कर्तृत्व एवं भोक्तृत्व की बुद्धि का अभाव हो जाता है। (९) अस्तित्व की सिद्धि चारों अनुयोगों से तथा अनेक दूसरे प्रकारों से हो जाती है। (१०) जितने द्रव्य है उतने ही अस्तित्वगुण है– यह पता चल जाता है।

– अस्तित्व गुण पर से भेदविज्ञान –

प्र० १९. **थोड़े में अस्तित्वगुण क्या बताता है ?**

उ० विश्व में अनन्त जीवों के अनन्त अस्तित्व हैं। पुद्गलों के अनन्तानन्त अस्तित्व है। धर्म –अधर्म–आकाश का एक–एक अस्तित्व है। काल द्रव्य के लोक प्रमाण असंख्यात अस्तित्व हैं। एक द्रव्य के अस्तित्व का दूसरें द्रव्यों के अस्तित्वों से किसी प्रकार का कोई सम्बन्ध नही है क्योंकि प्रत्येक द्रव्य के अस्तित्व का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव पृथक–पृथक है – ऐसा संक्षेप में अस्तित्व गुण बताता है।

प्र० २०. **मैं मनुष्य हूँ – इस वाक्य में अस्तित्व गुण को कब माना और कब नहीं माना ? और इसका फल क्या है ?**

उ० (१) संयोगरूप औदारिक– तैजस–कार्माण – भाषा–मन में अनन्त पुद्गलों के अनन्त अस्तित्व हैं, जिनसे मुझ जीव तत्व के एक अस्तित्व का सर्वथा सम्बन्ध नही है क्योंकि प्रत्येक अस्तित्व का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव सर्वथा पृथक–पृथक है – ऐसा माना तो अस्तित्व गुण को माना। इसका फल तुरन्त सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष है।
(२) निज जीव तत्व के एक अस्तित्व को भूलकर संयोगरूप पुद्गलों के अनन्त अस्तित्वों में–मैं मनुष्य हूँ–ऐसी कल्पना करने वाले ने अस्तित्व गुण को नहीं माना। इसका फल चारों गतियों में घूमकर निगोद है।

प्र० २१. **मै स्त्री हूँ, मैं वृद्ध हूँ, मैंने रोटी बनाई, उसने गाली दी तो क्रोध आया, यह मेरा मकान है, आठ कर्मों के अभाव से सिद्ध दशा हुई – इन वाक्यों में अस्तित्व गुण को कब माना और कब नहीं माना ?**

उ० प्रश्न २० के अनुसार उत्तर दो।

है अर्थात अपने ...

– अस्तित्वगुण पर सामान्य प्रश्न –

प्र० १ अस्तित्व गुण की जाति कितने प्रकार की है ?
प्र० २ अस्तित्व गुण का क्षेत्र कितना बड़ा है और क्यों ?
प्र० ३ जीव के अस्तित्व गुण का क्षेत्र कितना बड़ा है ?
प्र० ४ क्या जीव के अलावा किसी और द्रव्य का असंख्यातप्रदेशी क्षेत्र है ?
प्र० ५ कालद्रव्य और परमाणु के अस्तित्व गुण का क्षेत्र क्या है ?
प्र० ६ आकाश द्रव्य के अस्तित्व गुण का क्षेत्र क्या है ?
प्र० ७ अस्तित्व गुण का काल कितना है ?
प्र० ८ अस्तित्व गुण जड़ है या चेतन है और क्यों ?
प्र० ९ अस्तित्व गुण रूपी है या अरूपी है और क्यों ?
प्र० १० किन द्रव्यों का अस्तित्व गुण गति करता है ?
प्र० ११ धर्म–अधर्म – आकाश – काल द्रव्यों का अस्तित्व गुण गति क्यों नहीं करता है ?
प्र० १२ अस्तित्व गुण किस द्रव्य में नहीं है ?
प्र० १३ जाति अपेक्षा अस्तित्व गुण कितने है ?
प्र० १४ संख्या अपेक्षा अस्तित्व गुण कितने है ?
प्र० १५ संख्या अपेक्षा असंख्यातप्रदेशी अस्तित्व गुण कितने है ?
प्र० १६ जाति अपेक्षा असंख्यातप्रदेशी अस्तित्व गुण कितने है ?
प्र० १७ अनन्त प्रदेशी अस्तित्व गुण कितने हैं ?
प्र० १८ संख्या अपेक्षा एक प्रदेशी अस्तित्व गुण कितने हैं ?
प्र० १९ एक जीव में अस्तित्व गुण कितने हैं ?
प्र० २० संयोगरूप औदारिक शरीर में अस्तित्व गुण कितने हैं ?
प्र० २१ संयोगरूप तैजस शरीर में अस्तित्व गुण कितने हैं ?
प्र० २२ संयोगरूप कार्माणशरीर में अस्तित्व गुण कितने हैं ?
प्र० २३ शब्द में अस्तित्व गुण कितने है ?
प्र० २४ द्रव्यमन में अस्तित्व गुण कितने हैं ?
प्र० २५ मकान, गाड़ी आदि में अस्तित्व गुण कितने हैं ?
प्र० २६ विश्व में अस्तित्व गुण कितने हैं ?

इन प्रश्नों के उत्तरों का अभ्यास शास्त्र सभा में ही कराया जायेगा।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग– विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग–विज्ञानप्रतियोगिता नं० १३ से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतरागविज्ञान प्रतियोगिता–१२ का पारितोषिक वितरण २६ मई को सभास्थल पर ही होगा।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैनधर्म के रहस्यों को जानें–

१.	बुधवार	झंडा मन्दिर	प्रातः ११ से १२ बजे तक
२.	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १० से ११ बजे तक
३.	शनिवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	सायं ४.३० से ५.३० बजे तक
४.	रविवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	प्रातः १० से ११ बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

३१–राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (०१३५) ६२३१३१

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–१४

दिनांक २६ सितम्बर २००२ दिन रविवार दोपहर ३.०० बजे
(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गाँधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं। जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल–प्रत्येक द्रव्य अनन्त सामान्य गुणों और अनन्त विशेष गुणों का समूह हैं। प्रत्येक द्रव्य में समान रूप से पाये जाने वाले गुण–सामान्य गुण हैं जो कि अनन्त है, उनमें मुख्य छह है – अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरूलघुत्व और प्रदेशत्व। सब द्रव्यों में न रहकर अपने–अपने द्रव्य में रहने वाले गुण–विशेष गुण हैं जिनसे द्रव्यों की पृथकता का ज्ञान होता है। प्रत्येक द्रव्य में गुण संख्या अपेक्षा समान हैं कम या ज्यादा नहीं। सामान्य और विशेष गुणों में हर समय एक पर्याय का उत्पाद और एक पर्याय का व्यय स्वयं से ही होता है अतः प्रत्येक द्रव्य–गुण में अपना कार्य करने की पूर्ण सामर्थ्य है। किसी द्रव्य को अपने परिणमन में पर के सहयोग की रंचमात्र भी आवश्यकता नही है।

वस्तुत्व गुण

वस्तुत्वगुण के योग से हो द्रव्य में स्व–स्व क्रिया,
स्वाधीन गुण–पर्याय का ही पान द्रव्यों ने किया।
सामान्य और विशेषता से कर रहे निज काम को,
यों मानकर वस्तुत्व को पाओ विमल शिवधाम को।।

प्र० १. वस्तुत्व गुण किसे कहते हैं ?

उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य में अर्थक्रियाकारित्व हो, उसे वस्तुत्व गुण कहते है।

प्र० २. अर्थक्रियाकारित्व का क्या अर्थ है ?

उ० अर्थक्रिया अर्थात् प्रयोजनभूतक्रिया (१) प्रत्येक द्रव्य अपने अपने स्वभाव के अनुसार जो कार्य करता है, उसे ही प्रयोजनभूत क्रिया कहते हैं (२) प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण अपना–अपना प्रयोजनभूत कार्य करता हैं, जैसे – जीव का ज्ञानगुण जानने का ही कार्य करेगा, श्रद्धा गुण श्रद्धान का ही कार्य करेगा आदि।

प्र० ३. यदि द्रव्य अर्थक्रिया अर्थात् प्रयोजनभूत क्रिया न करे तो क्या दोष उत्पन्न होता है ?

उ० वस्तुत्वगुण के कारण प्रत्येक द्रव्य व गुण अपना–अपना प्रयोजनभूत कार्य करता ही रहता है। यदि न करे तो – (१) द्रव्य कार्यरहित हो जाये और कोई भी द्रव्य या गुण कार्यरहित अर्थात् निकम्मा होता ही नहीं और (२) कार्य के बिना वस्तु की सिद्धि ही नहीं होती।

प्र० ४. वस्तुत्वगुण सामान्य गुण होने के कारण छहों द्रव्यों के सम्पूर्ण भागों व सम्पूर्ण अवस्थाओं में त्रिकाल रहता है – इससे क्या सिद्ध होता है ?

उ० (१) प्रत्येक द्रव्य अपना अपना प्रयोजनभूत कार्य करता ही रहता है।
(२) प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण भी अपना–अपना प्रयोजनभूत कार्य करता ही रहता है।

प्र० ५. वस्तुत्वगुण की अपेक्षा छहों द्रव्यों को क्या कहते हैं ?

उ० वस्तुत्व गुण की अपेक्षा छहों द्रव्यों को वस्तु कहते हैं।

प्र० ६. वस्तु किसे कहते हैं ?

उ० (१) जिसमें गुण–पर्याय बसते हैं उसे वस्तु कहते हैं।
(२) जिसमें सामान्य विशेष स्वभाव हो उसे वस्तु कहते हैं।

प्र० ७. द्रव्य का वस्तु नाम क्या सिद्ध करता है ?

उ० द्रव्य का वस्तु नाम सिद्ध करता है कि – प्रत्येक वस्त अपने गुण पर्यायों में बसती है और प्रत्येक वस्तु सामान्य विशेषस्वरूप है – इसलिये प्रत्येक द्रव्य और गुण अपना सब कुछ कर सकता है परन्तु दूसरे द्रव्य व गुण में कुछ नहीं कर सकता।

प्र० ८. यदि दो द्रव्य मिलकर एक प्रयोजनभूत क्रिया को करें – तो क्या दोष उत्पन्न होता है।

उ० इस विश्व में अनन्त पदार्थ अनन्तपने एक दूसरे से पृथकरूप से रहते है; वे एक दूसरे का कार्य करे तो अनन्तता नहीं रहेगी, स्व–पर का विभाग अस्त हो जायेगा, सर्व द्रव्यों का लोप हो जायेगा।

प्र० ९. वस्तुत्वगुण क्या बताता है ?

उ० इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं–

१. प्रत्येक द्रव्य अपना–अपना प्रयोजनभूत कार्य करता ही रहता है।
२. प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण है। प्रत्येक गुण भी अपना अपना प्रयोजनभूत कार्य करता ही रहता है।
३. प्रत्येक द्रव्य अपने गुण–पर्यायों में बसता है।
४. प्रत्येक द्रव्य सामान्य–विशेष स्वभाव वाला है।

प्र० १०. प्रत्येक द्रव्य व गुण अपना–अपना प्रयोजनभूत कार्य करता ही रहता है क्योंकि प्रत्येक वस्तु अपने गुण–पर्यायों में बसती है व अपने सामान्य–विशेष स्वभाव में रहती हैं और स्वभाव का कभी अभाव नहीं होता इसको जानने मानने से क्या लाभ होता है।

उ० १. प्रत्येक द्रव्य अपना–अपना प्रयोजनभूत कार्य करता ही रहता है तो मेरा प्रयोजनभूत कार्य ज्ञाता–दृष्टा है ऐसा पता चल जाता है।
२. मैं पर का करूं और पर मेरा करे– ऐसी खोटी बुद्धि का अभाव हो जाता है।
३. मिथ्यात्व का अभाव होकर सम्यक्त्व की प्राप्ति हो जाती है।
४. केवली के समान ज्ञातादृष्टापना प्रगट हो जाता है।

प्र० ११. वस्तुत्व गुण कितने है

उ० जितने द्रव्य हैं उतने ही वस्तुत्व गुण हैं क्योंकि प्रत्येक द्रव्य में एक–एक वस्तुत्व गुण हैं।

प्र० १२. जीव द्रव्य के ज्ञान, दर्शन, सुख, श्रद्धा, चारित्र व क्रियावतीशक्ति – इन गुणों का प्रयोजनभूत कार्य क्या–क्या है ?

प्र० १३. पुद्गल द्रव्य के स्पर्श–रस–गंध–वर्ण क्रियावतीशक्ति–इन गुणों का प्रयोजनभूत कार्य क्या–क्या हैं ?

प्र० १४. मतिज्ञान, सम्यग्दर्शन, हल्का, खट्टापना, केवलज्ञान, दुर्गन्ध, चिकना, शुभभाव, अवधिदर्शन, वीतरागता – ये प्रयोजनभूत कार्य किस–किस द्रव्य के किस किस गुण का है ?

—— वस्तुगुण पर से भेदविज्ञान ——

प्र० १५. मैं मनुष्य हूँ – इस वाक्य पर वस्तुत्व गुण को कब माना और कब नहीं माना?

उ० १. संयोगरूप औदारिक – तैजस –कार्माण–भाषा–मन में अनन्त पुद्गल द्रव्य है, जो वस्तुत्व गुण के कारण अपना–अपना प्रयोजनभूत कार्य कर रहें हैं। मुझ आत्मा भी वस्तुत्व गुण के कारण अपना जानने रूप प्रयोजनभूत कार्य करता है। मुझ आत्मा की जानने रूप प्रयोजनभूत क्रिया का संयोगरूप पुद्गलों की प्रयोजनभूत क्रिया से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है ऐसा माना तो वस्तुत्व गुण को माना और इसका फल तुरन्त सम्यदर्शन की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष है।

२. ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज आत्मा की जानने रूप प्रयोजनभूत क्रिया को भूलकर संयोगरूप पुद्गलों की प्रयोजनभूत क्रिया में "मैं मनुष्य हूँ" ऐसी कल्पना करने वाले ने वस्तुत्व गुण को नहीं माना। इसका फल चारों गतियों में घूमकर निगोद है।

प्र० १६. मैं स्त्री हूँ, मैने रोटी बनाई, मैं गोरी हूँ, मैंने मुंह से शब्द बोला, मैंने माला से जाप की, मेरी दो आंखे हैं – इन वाक्यों में वस्तुत्व गुण को कब माना और कब नहीं माना ?

उ० प्रश्न १५ के अनुसार उत्तर दो।

– वस्तुत्व गुण पर सामान्य प्रश्न –

प्र० १ वस्तुत्व गुण की जाति कितने प्रकार की है ?
प्र० २ वस्तुत्व गुण का क्षेत्र कितना बड़ा है और क्यों ?
प्र० ३ जीव के वस्तुत्व गुण का क्षेत्र कितना बड़ा है ?
प्र० ४ कालद्रव्य और परमाणु के वस्तुत्व गुण का क्षेत्र क्या है ?
प्र० ५ आकाश द्रव्य के वस्तुत्व गुण का क्षेत्र क्या है ?
प्र० ६ वस्तुत्व गुण का काल कितना है ?
प्र० ७ वस्तुत्व गुण जड़ है या चेतन है और क्यों ?
प्र० ८ वस्तुत्व गुण रूपी है या अरूपी है और क्यों ?
प्र० ९ किन द्रव्यों का वस्तुत्व गुण गति करता है ?
प्र० १० धर्म–अधर्म – आकाश – काल द्रव्यों का वस्तुत्व गुण गति क्यों नहीं करता है ?
प्र० ११ वस्तुत्व गुण किस द्रव्य में नहीं है ?
प्र० १२ जाति अपेक्षा वस्तुत्व गुण कितने है ?
प्र० १३ संख्या अपेक्षा वस्तुत्व गुण कितने है ?
प्र० १४ संख्या अपेक्षा असंख्यातप्रदेशी वस्तुत्व गुण कितने है ?
प्र० १५ जाति अपेक्षा असंख्यातप्रदेशी वस्तुत्व गुण कितने है ?
प्र० १६ अनन्त प्रदेशी वस्तुत्व गुण कितने हैं ?
प्र० १७ संख्या अपेक्षा एक प्रदेशी वस्तुत्व गुण कितने हैं ?
प्र० १८ एक जीव में वस्तुत्व गुण कितने हैं ?
प्र० १९ संयोगरूप औदारिक शरीर में वस्तुत्व गुण कितने हैं ?
प्र० २० संयोगरूप तैजस शरीर में वस्तुत्व गुण कितने हैं ?
प्र० २१ संयोगरूप कार्माणशरीर में वस्तुत्व गुण कितने हैं ?
प्र० २२ शब्द में वस्तुत्व गुण कितने है ?
प्र० २३ द्रव्यमन में वस्तुत्व गुण कितने हैं ?
प्र० २४ मकान, गाड़ी आदि में वस्तुत्व गुण कितने हैं ?
प्र० २५ विश्व में वस्तुत्व गुण कितने हैं ?

इन प्रश्नों के उत्तरों का अभ्यास शास्त्र सभा में ही कराया जायेगा।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग– विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग–विज्ञानप्रतियोगिता नं० १४ से प्रारम्भ कर ६ र्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतरागविज्ञान प्रतियोगिता–१३ का पारितोषिक वितरण २६ सितम्बर को सभास्थल पर ही होगा।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैनधर्म के रहस्यों को जानें–

१.	बुधवार	झंडा मन्दिर	प्रातः ११ से १२ बजे तक
२.	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १० से ११ बजे तक
३.	शनिवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	सायं ४.३० से ५.३० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते हैं।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

३१–राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (०१३५) ६२३१३१

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–१५

दिनांक २३ मार्च २००३ दिन रविवार दोपहर ३.०० बजे
(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गाँधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं। जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल–प्रत्येक द्रव्य अनन्त सामान्य गुणों और अनन्त विशेष गुणों का समूह हैं। प्रत्येक द्रव्य में समान रूप से पाये जाने वाले गुण–सामान्य गुण हैं जो कि अनन्त हैं, उनमें मुख्य छह है – अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्व और प्रदेशत्व। सब द्रव्यों में न रहकर अपने–अपने द्रव्य में रहने वाले गुण–विशेष गुण हैं जिनसे द्रव्यों की पृथकता का ज्ञान होता है। प्रत्येक द्रव्य में गुण संख्या अपेक्षा समान हैं कम या ज्यादा नहीं। सामान्य और विशेष गुणों में हर समय एक पर्याय का उत्पाद और एक पर्याय का व्यय स्वयं से ही होता है अतः प्रत्येक द्रव्य–गुण में अपना कार्य करने की पूर्ण सामर्थ्य है। किसी द्रव्य को अपने परिणमन में पर के सहयोग की रंचमात्र भी आवश्यकता नही है।

द्रव्यत्व गुण

द्रव्यत्व गुण इस वस्तु को, जग में पलटता है सदा,
लेकिन कभी भी द्रव्य तो, तजता न लक्षण सम्पदा ;
स्वद्रव्य में मोक्षार्थि हो, स्वाधीन सुख लो सर्वदा,
हो नाश जिससे आज तक की दुखदायी भव कथा।।

प्र० १. वस्तु को द्रव्य क्यों कहते है ?
उ० द्रव्यत्व गुण के कारण।
प्र० २. द्रव्य और द्रव्यत्व गुण में क्या अन्तर है ?
उ० द्रव्य तो अनन्त गुणों का अभेद पिंड है। (२) और द्रव्यत्व गुण प्रत्येक द्रव्य का सामान्य गुण है।
प्र० ३. द्रव्यत्व गुण किसे कहते है ?
उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य की अवस्थायें निरंतर बदलती रहती हैं उसे

द्रव्यत्व गुण कहते हैं।

प्र० ४. द्रव्यत्व गुण क्या सूचित करता है ?

उ० द्रव्यत्व गुण निरन्तर परिणमन को सूचित करता है।

प्र० ५. निरंतर परिणमन से क्या तात्पर्य है ?

उ० एक समय मात्र भी पर्याय नहीं रूकती है अर्थात हर समय कार्य नया–नया होता है – यह निरन्तर परिणमन बताता है।

प्र० ६. वस्तुत्व गुण और द्रव्यत्व गुण में क्या अन्तर है ?

उ० (१) वस्तुत्व गुण बताता है कि प्रत्येक द्रव्य गुण में प्रयोजनभूत क्रिया होती है और (२) द्रव्यत्व गुण उस प्रयोजनभूत क्रिया को निरन्तर बदलने की बात को बताता है।

प्र० ७. निरंतर परिणमन क्या बताता है ?

उ० सदैव नवीन नवीन पर्याय का होना बतलाता है।

प्र० ८. एक गुण में कितनी पर्याय होती है ?

उ० तीन काल के जितने समय हैं, उतनी–उतनी पर्याय प्रत्येक गुण की होती हैं।

प्र० ९. द्रव्यत्व गुण के जानने वाले को कैसे–कैसे प्रश्न नहीं उठेंगे ?

उ० (१) ऐसा क्यों हुआ, (२) इससे यह, (३) ऐसा हो, ऐसा न हो, आदि प्रश्न नहीं उठ सकते हैं क्योंकि द्रव्यत्व गुण के कारण पर्याय निरन्तर बदलती है।

प्र० १०. द्रव्यत्व गुण से क्या क्या समझना चाहिये ?

उ० (१) सर्वद्रव्यों की अवस्थाओं का निरन्तर परिवर्तन उसका, उसी में, उसी से होता है, दूसरा कोई पर द्रव्य या निमित कुछ नहीं कर सकता है।

(२) जीव की कोई भी पर्याय दूसरे जीवों से, अजीवों से, कर्म से, शरीरादि से नहीं बदलती है।

(३) दूसरे जीवों की अजीवों की, कर्म, शरीर आदि की पर्यायें भी मेरे से नहीं बदलती।

(४) जीव में अज्ञानदशा सदैव एक सी नहीं रहती है।

(५) पहिले अल्पज्ञान था बाद में ज्यादा ज्ञान हुआ, वह उस समय की योग्यता से हुआ है।

(६) जो पर्याय हुई, उसका उसी गुण की पहली (भूत) और अगली (भविष्य) पर्याय से भी सम्बन्ध नहीं है।

प्र० ११. थोड़े में द्रव्यत्व गुण क्या बताता है ?

उ० विश्व में जीव अनन्त, पुद्‌गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य का कार्य द्रव्यत्व गुण के कारण निरन्तर बदलता ही रहता है। एक द्रव्य की निरन्तर बदलने की क्रिया का दूसरे द्रव्यों की निरन्तर बदलने की क्रिया से किसी भी प्रकार का कोई सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव पृथक–पृथक है – ऐसा थोड़े में द्रव्यत्व गुण बताता है।

प्र० १२. अस्तित्व, वस्तुत्व और द्रव्यत्व गुण का क्या रहस्य है ?

उ० (१) अस्तित्व गुण के कारण प्रत्येक द्रव्य अनादिअनन्त कायम रहता है। (२) वस्तुत्व गुण के कारण अपनी अपनी प्रयोजनभूत क्रिया करता ही रहता है। (३) द्रव्यत्व गुण के कारण वह क्रिया निरन्तर बदलती रहती है। ऐसा द्रव्य का स्वभाव जाने, तो दृष्टि स्वभाव पर होती है, मैं पर का करूँ या पर मेरा कार्य करे ऐसी खोटी बुद्धि का अभाव हो जाता है और ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव पर्याय में प्रगट हो जाता है।

—— द्रव्यत्व गुण पर से भेदविज्ञान ——

प्र० १३. मैं मनुष्य हूँ – इस वाक्य पर द्रव्यत्व गुण को कब माना और कब नहीं माना?

उ० १. संयोगरूप औदारिक–तैजस–कार्माण–भाषा–मन में अनन्त पुद्‌गलद्रव्य अस्तित्व गुण के कारण अपना–अपना अस्तित्व कायम रखते हुये, वस्तुत्व गुण के कारण प्रत्येक द्रव्य अपनी अपनी प्रयोजन भूत क्रिया करता हुआ और द्रव्यत्वगुण के कारण प्रत्येक द्रव्य निरन्तर बदल रहा है। मुझ आत्मा भी अस्तित्वगुण के कारण कायम रहता हुआ, वस्तुत्वगुण के कारण अपनी जानने रूप प्रयोजनभूत क्रिया करता हुआ और द्रव्यत्व गुण के कारण जानने रूप कार्य निरन्तर नया हो रहा है। संयोगरूप अनन्त पुद्‌गल द्रव्यों के निरन्तर बदलने की क्रिया का मुझ आत्मा की जानने रूप क्रिया से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है। ऐसा अनुभव ज्ञान वर्ते तो द्रव्यत्व गुण को माना और इसका फल तुरन्त सम्यकदर्शन की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष है।

२. ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीव तत्व के निरन्तर जानने रूप कार्य को भूलकर संयोग रूप अनन्त पुद्‌गल द्रव्यों की निरन्तर बदलने की क्रिया को आत्मा की क्रिया मानने वाले ने द्रव्यत्व गुण को नहीं माना और इसका फल चारों गतियों में घूमकर निगोद है।

प्र० १४. मैं स्त्री हूँ, मैने रोटी बनाई, मैं गोरी हूँ, मैंने मुंह से शब्द बोला, मैंने माला से जाप की, मेरी दो आंखे हैं – इन वाक्यों में द्रव्यत्व गुण को कब माना और कब नहीं माना ?

उ० प्रश्न १३ के अनुसार उत्तर दो।

– वस्तुत्व गुण पर सामान्य प्रश्न –

प्र० १ द्रव्यत्व गुण की जाति कितने प्रकार की है ?
प्र० २ द्रव्यत्व गुण का क्षेत्र कितना बड़ा है और क्यों ?
प्र० ३ जीव के द्रव्यत्व गुण का क्षेत्र कितना बड़ा है और क्यों ?
प्र० ४ कालद्रव्य और परमाणु के द्रव्यत्व गुण का क्षेत्र क्या है ?
प्र० ५ आकाश द्रव्य के द्रव्यत्व गुण का क्षेत्र क्या है ?
प्र० ६ द्रव्यत्व गुण का काल कितना है ?
प्र० ७ द्रव्यत्व गुण जड़ है या चेतन है और क्यों ?
प्र० ८ द्रव्यत्व गुण रूपी है या अरूपी है और क्यों ?
प्र० ९ किन द्रव्यों का द्रव्यत्व गुण गति करता है ?
प्र० १० धर्म-अधर्म – आकाश – काल द्रव्यों का द्रव्यत्व गुण गति क्यों नहीं करता है ?
प्र० ११ द्रव्यत्व गुण किस द्रव्य में नहीं है ?
प्र० १२ जाति अपेक्षा द्रव्यत्व गुण कितने है ?
प्र० १३ संख्या अपेक्षा द्रव्यत्व गुण कितने है ?
प्र० १४ संख्या अपेक्षा असंख्यातप्रदेशी द्रव्यत्व गुण कितने है ?
प्र० १५ जाति अपेक्षा असंख्यातप्रदेशी द्रव्यत्व गुण कितने है ?
प्र० १६ अनन्त प्रदेशी द्रव्यत्व गुण कितने हैं ?
प्र० १७ संख्या अपेक्षा एक प्रदेशी द्रव्यत्व गुण कितने हैं ?
प्र० १८ एक जीव में द्रव्यत्व गुण कितने हैं ?
प्र० १९ संयोगरूप औदारिक शरीर में द्रव्यत्व गुण कितने हैं ?
प्र० २० संयोगरूप तैजस शरीर में द्रव्यत्व गुण कितने हैं ?
प्र० २१ संयोगरूप कार्माणशरीर में द्रव्यत्व गुण कितने हैं ?
प्र० २२ शब्द में द्रव्यत्व गुण कितने हैं ?
प्र० २३ द्रव्यमन में द्रव्यत्व गुण कितने हैं ?
प्र० २४ मकान, गाड़ी आदि में द्रव्यत्व गुण कितने हैं ?
प्र० २५ विश्व में द्रव्यत्व गुण कितने हैं ?

इन प्रश्नों के उत्तरों का अभ्यास शास्त्र सभा में ही कराया जायेगा।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग– विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नही ले पाये हैं वे इस वीतराग–विज्ञानप्रतियोगिता नं० १५ से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहीं से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतरागविज्ञान प्रतियोगिता–१४ का पारितोषिक वितरण २३ मार्च २००३ को सभास्थल पर ही होगा।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैनधर्म के रहस्यों को जानें–

१.	बुधवार	झंडा मन्दिर	प्रातः ११ से १२ बजे तक
२.	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १० से ११ बजे तक
३.	शनिवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	सायं ४.०० से ५.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते हैं।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

३१–राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (०१३५) २६२३१३१

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–१६

दिनांक २९ जून २००३ दिन रविवार दोपहर ३.०० बजे
(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गाँधी रोड, देहरादून)

जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं। जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल–प्रत्येक द्रव्य अनन्त सामान्य गुणों और अनन्त विशेष गुणों का समूह हैं। प्रत्येक द्रव्य में समान रूप से पाये जाने वाले गुण–सामान्य गुण हैं जो कि अनन्त हैं, उनमें मुख्य छह है – अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्व और प्रदेशत्व। सब द्रव्यों में न रहकर अपने–अपने द्रव्य में रहने वाले गुण–विशेष गुण हैं जिनसे द्रव्यों की पृथकता का ज्ञान होता है। प्रत्येक द्रव्य में गुण संख्या अपेक्षा समान हैं कम या ज्यादा नहीं। सामान्य और विशेष गुणों में हर समय एक पर्याय का उत्पाद और एक पर्याय का व्यय स्वयं से ही होता है अतः प्रत्येक द्रव्य–गुण में अपना कार्य करने की पूर्ण सामर्थ्य है। किसी द्रव्य को अपने परिणमन में पर के सहयोग की रंचमात्र भी आवश्यकता नही है।

प्र०१. अस्तित्व–वस्तुत्व–द्रव्यत्व गुण का रहस्य क्या है?

उ० १. प्रत्येक द्रव्य अस्तित्व गुण के कारण अनादिअनन्त कायम रहता हुआ, वस्तुत्व गुण के कारण अपनी अपनी प्रयोजनभूत क्रिया करता हुआ, द्रव्यत्व गुण के कारण निरन्तर बदल रहा है।

२. प्रत्येक द्रव्य एक समय में अपने उत्पाद–व्यय–ध्रौव्यरूप त्रिस्वभाव का स्पर्श करता है उसी समय निमित्त होने पर भी परद्रव्य का स्पर्श नहीं करता।

३. अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–२ अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। कोई किसी के आधीन नहीं है। कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती।

भेदज्ञान

प्र०२. तुम कौन हो ?

उ० मैं ज्ञान–दर्शन–चारित्र आदि अनन्तगुणों का अभेद पिण्ड आत्मा हूँ।

प्र० ३. तुम कौन नहीं हो ?

उ० अत्यन्त भिन्न पर पदार्थ, आँख, नाक, कान, शरीर–मन–वाणी, आठ कर्म, शुभाशुभ विकारीभाव मैं नहीं हूँ।

प्र०४. तुम कब से हो?

उ० मैं तो जन्म–मरण रहित, अनादिअनन्त, अनादिकाल से हूँ।

प्र०५. जन्म–मरण तो होता है, क्या यह बात असत्य है ?

उ० शरीर का संयोग–वियोग होता है, मुझ आत्मा का नहीं।

प्र०६. तुम दुखी क्यों हो ?

उ० ज्ञान–दर्शनादि अभेद, एक, निज आत्मा को भूलकर, मोहरूपी शराब पीने के कारण अनादिकाल से एक–एक समय करके, अपनी मूर्खता से ही दुःखी हो रहा हूँ।

प्र०७. अपनी मूर्खता क्या है ?

उ० शरीरादि पर पदार्थों में अपनेपने की मान्यता अर्थात् मिथ्यात्व यह अपनी मूर्खता है।

प्र०८. मिथ्यात्व कैसा पाप है ?

उ० मिथ्यात्व जुआ, माँस आदि सप्त व्यसनों से भी बड़ा पाप है।

प्र०९. मिथ्यात्व सप्त व्यसनों से भी बड़ा पाप है–यह कहाँ आया है ?

उ० मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ १९१ में लिखा है –

जैनधर्म में तो यह आम्नाय है कि पहले बड़ा पाप छुड़ाकर फिर छोटा पाप छुड़ाया है। इसलिए इस मिथ्यात्व को सप्त व्यसनादिक से भी बड़ा पाप जानकर पहले छुड़ाया है– इसलिए जो पाप के फल से डरते हैं, अपने आत्मा को दुःख समुद्र में डुबाना नहीं चाहते। वे जीव इस मिथ्यात्व को अवश्य छोड़े। सर्वप्रकार के मिथ्यात्व भाव को छोड़कर सम्यग्दृष्टि होना योग्य है। क्योंकि संसार का मूल मिथ्यात्व है और मोक्ष का मूल सम्यक्त्व है।

प्र०१०. मिथ्यात्व कितने प्रकार का है ?

उ० दो प्रकार का है। (१) अगृहीत मिथ्यादर्शन–ज्ञान–चारित्र – जो अनादिकाल से एक–एक समय करके चला आ रहा है। (२) गृहीत मिथ्यादर्शन–ज्ञान–चारित्र – जो विशेषरूप से मनुष्य जन्म पाने पर कुदेव, कुगुरू, कुधर्म से समय–समय पर नया–नया ग्रहण करता है।

प्र०११. मिथ्यादर्शन–मिथ्याज्ञान–मिथ्याचारित्र किसे कहते हैं?

उ० (१) मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ– इस बात का पता न होने से मैं मनुष्य हूँ, मैं स्त्री हूँ– ऐसा श्रद्धान मिथ्यादर्शन है, ऐसा ज्ञान मिथ्याज्ञान है और ऐसा ही आचरण मिथ्याचारित्र है।

(२) ज्ञान मुझ आत्मा के ज्ञान गुण में से आता है और सुख मुझ आत्मा के सुख गुण में से आता है– इस बात का पता न होने से ज्ञेयों से ज्ञान होता है, इन्द्रियों से ज्ञान होता है, पांच इन्द्रियों के विषयों से सुख मिलता है – ऐसा श्रद्धान मिथ्यादर्शन है, ऐसा ज्ञान मिथ्याज्ञान है और ऐसा ही आचरण मिथ्याचारित्र है।

(३) मेरा कार्य ज्ञाता दृष्टा है इस बात का पता न होने से उठना–बैठना–चलना– बोलना–खाना–पीना– आदि शरीर की क्रियाओं में अपनेपने का श्रद्धान मिथ्यादर्शन है, ऐसा ज्ञान मिथ्याज्ञान है और ऐसा ही आचरण मिथ्याचारित्र है।

प्र०१२. सम्यग्दर्शन – सम्यग्ज्ञान– सम्यक्चारित्र किसे कहते है ?

उ० (१) शरीरादि परद्रव्यों से सर्वथा भिन्न मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ– ऐसा जानकर निज आत्मा का श्रद्धान–सम्यग्दर्शन है, निज आत्मा का ज्ञान सम्यक्ज्ञान है और निज आत्मा में आचरण सम्यक्चारित्र है।

(२) ज्ञेयों से, इन्द्रियों से, पांचो इन्द्रियों के विषयों से सर्वथा भिन्न ज्ञान मुझ आत्मा के ज्ञान गुण में से आता है और सुख मुझ आत्मा के सुख गुण में से आता है– ऐसा जानकर ज्ञानस्वरूप सुखस्वरूप निज आत्मा का श्रद्धान–सम्यग्दर्शन है, निज आत्मा का ज्ञान सम्यक्ज्ञान है और निज आत्मा में आचरण सम्यक्चारित्र है।

(३) उठने, बैठने, चलने, बोलने आदि शरीर की क्रियाओं से सर्वथा भिन्न मेरा कार्य ज्ञाता दृष्टा है – ऐसा जानकर ज्ञाता दृष्टास्वभावी निज आत्मा का श्रद्धान सम्यक्दर्शन है, निज आत्मा का ज्ञान सम्यक्ज्ञान है और निज आत्मा में ही आचरण सम्यक्चारित्र है।

प्र०१३. तुमने आज तक क्या किया ?

उ० शरीर, धन, मकान आदि पर पदार्थों को अपना मानकर मात्र मोह–राग द्वेष किया।

प्र०१४. अब मैं क्या करूं ?
उ० ज्ञान-दर्शन-चारित्र आदि अनंतगुणों का अभेद पिण्ड जो स्वयं आत्मा है उसकी पहचानकर।

प्र०१५. मैं अपनी पहचान कैसे करूं ?
उ० मिथ्यादृष्टि के कार्यक्षेत्र की मर्यादा विकारी भावों तक है, ज्ञानियों की मर्यादा शुद्ध भावों तक है। परन्तु पर पदार्थों में ज्ञानी अज्ञानी कुछ भी नहीं कर सकता है– ऐसा जानकर अपनी आत्मा का आश्रय ले तो स्वयं की पहचान हो।

प्र०१६. संसार और मोक्ष क्या है?
उ० (१) आत्मा ज्ञाता-दृष्टा के उपयोग को जब शरीरादि पर पदार्थों की ओर लक्ष्य करके पर में यह "मैं" ऐसा दृढ़ कर लेता है – इसका नाम संसार है। (२) आत्मा ज्ञाता दृष्टा के उपयोग को जब स्व की ओर लक्ष्य करके स्व में यह "मैं" ऐसा दृढ़ कर लेता है – इसका नाम मोक्ष है।

प्र०१७. संसार का अभाव और मोक्ष की प्राप्ति के लिए क्या करें?
उ० (१) अपनी आत्मा का आश्रय लिए बिना संसार का अभाव और मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती है। इसलिए अपने निज ज्ञायक स्वभाव का आश्रय लें, तो संसार का अभाव और मोक्ष की प्राप्ति हो।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० १६ से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतरागविज्ञान प्रतियोगिता-१६ का पारितोषिक वितरण २६ जून २००३ को सभास्थल पर ही होगा।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैनधर्म के रहस्यों को जानें–

१. बुधवार	झंडा मन्दिर	प्रातः १० से ११ बजे तक
२. शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १० से ११ बजे तक
३. रविवार	३१ लक्ष्मी पार्क, राजा रोड	प्रातः १० से ११ बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते हैं।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31- राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-१७

दिनांक 21 मई 2005 दिन शनिवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री स्वाध्याय मन्दिर, सरनीमल जैन मंदिर के पीछे)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

विश्व की व्यवस्था

प्र० १. इस विश्व में जति अपेक्षा व संख्या अपेक्षा द्रव्य कितने कितने हैं?
उ० (१) जति अपेक्षा-जीव, पुद्गल, धर्म-अधर्म-आकाश और काल है। (२) संख्या अपेक्षा-जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एकेक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है।

प्र० २. विश्व के समस्त द्रव्यों की क्या व्यवस्था है?
उ० १. इस विश्व का प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव में ही रहता है।
२. इस विश्व के समस्त द्रव्य कायम रहते हुये स्वयं ही बदल रहे हैं।
३. अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न-भिन्न अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। कोई किसी के आधीन नहीं है। कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती।
४. इस विश्व के प्रत्येक द्रव्य में अनन्त अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में प्रत्येक समय एक पर्याय का उत्पाद, एक पर्याय का व्यय और द्रव्य गुण ध्रौव्य रहता है। ऐसा अनादिकाल से हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।
५. इस विश्व का प्रत्येक द्रव्य अपने में अर्न्तमग्न अपने अनन्त धर्मों (गुणों व पर्यायों) के चक्र को स्पर्श करता है लेकिन एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को सर्वथा स्पर्श नहीं करता है।

प्र० ३. विश्व का प्रत्येक द्रव्य अपना अपना स्वतंत्र परिणमन करता है क्या कहीं पूजा में आया है?
उ० देव शास्त्र गुरु की पूजा में आया है –
जड चेतन की सब परिणति प्रभु अपने-अपने में होती है।
अनुकूल कहें प्रतिकूल कहें, यह झूठी मन की वृत्ति है।।

प्र० ४. विश्व के सर्व द्रव्यों की व्यवस्था को जानकर हमें क्या करना चाहिये?
उ० १. इस विश्व का प्रत्येक द्रव्य स्वतन्त्र है क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का द्रव्य क्षेत्र-काल-भाव सर्वथा पृथक पृथक है इसलिये शरीरादि परद्रव्यों को

अपना मानना छोड।

२. प्रत्येक द्रव्य का कायम रहकर बदलना, उसका स्वभाव है तो मैं पर का करूँ या पर मेरा करे, ऐसी पर कर्तृत्व की बुद्धि छोड।

३. जब एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को स्पर्श भी नहीं करता तो मैं पर को भोगूं या पर मुझे भोगे ऐसी पर भोक्तृत्व की बुद्धि छोड।

प्र० ५. विश्व की व्यवस्था को जानने से क्या लाभ होता है?

उ० १. केवली भगवान के लघुनन्दन बन जाते हैं।
२. जैसा पदार्थों का स्वरूप है वैसा ही श्रद्धान ज्ञान हो जाये तो सर्व दुख मिट जाते हैं।

प्र० ६. इस विश्व के समस्त द्रव्यों को पृथक–पृथक जानकर हम भी केवली भगवान के लघुनन्दन बनना चाहते है, दुःख मिटाना चाहते हैं – इसके लिये हमें क्या जानना आवश्यक है?

उ० सब द्रव्यों के विशेष गुण जानना आवश्यक है।

प्र० ७. प्रत्येक द्रव्य में कौन कौन से विशेष गुण हैं?

उ० १. जीवद्रव्य–ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य, श्रद्धा, चारित्र, क्रियावतीशक्ति आदि अनन्त गुण
२. पुद्‌गलद्रव्यः– स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, क्रियावती शक्ति आदि अनन्त गुण।
३. धर्मद्रव्यः–गतिहेतुत्व आदि अनन्त गुण।
४. अधर्मद्रव्यः– स्थितिहेतुत्व आदि अनन्त गुण।
५. आकाशद्रव्यः– अवगाहनहेतुत्व आदि अनन्त गुण।
६. कलद्रव्यः– परिणमनहेतुत्व आदि अनन्त गुण।

प्र० ८. किस–किस द्रव्य के कितने प्रदेश हैं?

उ० (१) जीव, धर्म, अधर्म और लोकाकाश में असंख्यात प्रदेश हैं। (२) पुद्‌गल द्रव्य के व्यवहारनय से संख्यात, असंख्यात और अनन्त, इस तरह तीनों प्रकार के प्रदेश हैं। (३) काल द्रव्य और पुदग्ल परमाणु एक प्रदेशी हैं। (४) आकाश द्रव्य अनन्त प्रदेशी है।

प्र० ९. द्रव्य किसे कहते हैं?

उ० गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्र० १०. गुणों के समूह को क्या कहतें हैं?

उ० गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्र० ११. द्रव्य के पर्यायवाची शब्द क्या–क्या है?

उ० वस्तु, सत्, सत्ता, तत्व, अर्थ, पदार्थ आदि द्रव्य के पर्यायवाची शब्द है।

प्र० १२. गुणों का समूह कौन सा द्रव्य हैं?

उ० सभी द्रव्य गुणों के समूह हैं।

प्र० १३. क्या मैं भी गुणों का समूह हूँ?

उ० मैं एक जीव द्रव्य हूँ, मैं भी गुणों का समूह हूँ।

प्र० १४. क्या प्रत्येक सिद्ध भगवान भी गुणों का समूह हैं?

उ० हां, प्रत्येक सिद्ध भगवान भी पृथक–पृथक जीव द्रव्य हैं। अतः प्रत्येक सिद्ध भगवान भी गुणों का समूह हैं।

प्र० १५. क्या निगोदिया, पेड़ का जीव, मक्खी, चूहा, शेर, हाथी सब गुणों के समूह हैं?

उ० निगोद से लेकर चारों गतियों के जीव तथा पंच परमेष्ठी सब गुणों के समूह हैं क्योंकि ये सब जीवद्रव्य हैं।

प्र० १६. क्या शरीर, धन, मकान आदि पुद्‌गल भी गुणों के समूह हैं?

उ० शरीर, धन, मकान आदि में अनन्त–अनन्त पुद्‌गल परमाणु हैं, प्रत्येक पुद्‌गल परमाणु भी गुणों का समूह है।

प्र० १७. क्या धर्म–अधर्म–आकाश–काल द्रव्य भी गुणों के समूह हैं?

उ० धर्म–अधर्म–आकाश काल भी द्रव्य हैं, अतः ये सब भी गुणों के समूह हैं।

प्र० १८. गुणरहित द्रव्य का नाम बताओ?

उ० कोई भी द्रव्य गुणरहित नहीं होता क्योंकि गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्र० १९. क्या प्रत्येक में गुण संख्या अपेक्षा समान है।

उ० प्रत्येक द्रव्य में गुण संख्या अपेक्षा समान हैं।

प्र० २०. प्रत्येक द्रव्य में गुण कितने हैं?

उ० प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं।

प्र० २१. प्रत्येक द्रव्य के अनन्त गुण द्रव्य में किस प्रकार रहते हैं?

उ० १. जैसे चीनी में मिठास है वैसे ही द्रव्य में गुण हैं।
२. जैसे सोने में पीलापन है वैसे ही द्रव्य में गुण हैं।

प्र० २२. द्रव्य के अनन्त गुण द्रव्य में किस प्रकार नहीं रहते?

उ० जैसे बोरी में गेहूं भरे हैं वैसे द्रव्य में गुण नहीं रहते क्योंकि–
१. गेहूं बोरी में डाले जा सकते हैं और निकाले जा सकते हैं लेकिन गुण द्रव्य में डाले अथवा निकाले नहीं जा सकते।
२. गेहूं बोरी के सम्पूर्ण भागों व सम्पूर्ण अवस्थाओं में नहीं रहते लेकिन गुण द्रव्य के सम्पूर्ण भागों व सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहते हैं।
३. बोरी फट जाये तो गेहू बिखर कर अलग–अलग हो जाते हैं लेकिन द्रव्य में रहने वाले अनन्त गुण कभी भी बिखर कर अलग–अलग नहीं होते।

प्र० २३. प्रत्येक द्रव्य का अपने अनन्त गुणों के साथ कैसा सम्बन्ध है?

उ० प्रत्येक द्रव्य का अपने गुणों के साथ तादात्म्यसिद्ध सम्बन्ध है अर्थात कभी अलग न होने वाला सम्बन्ध है।

प्र० २४. गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं। प्रत्येक द्रव्य अनन्त–अनन्त गुणों का समूह है – इसको जानने से क्या लाभ होता है?

उ० १. निज भगवान आत्मा की महिमा आ जाती है।
२. शरीर, धन, मकान आदि परद्रव्यों की महिमा छूट जाती है।

प्र० २५. द्रव्य को जानने से निज भगवान आत्मा की महिमा कैसे आ जाती है?

उ० १. इस विश्व में जीव अनन्त हैं।
२. जीव से अनन्तगुने अधिक पुद्‌गल हैं।
३. पुद्‌गल से अनन्तगुने अधिक तीन काल के समय हैं।
४. तीन काल के समयों से अनन्तगुने अधिक आकाश के प्रदेश हैं।
५. आकाश के प्रदेशों से अनन्तगुने अधिक एक द्रव्य में गुण हैं।

...द्रव्यों के गुणों से अनन्तगुने अधिक सब द्रव्यों के गुण हैं।
८. सब पर्यायों से अनन्तगुने अधिक सबद्रव्यों के सब गुणों की पर्यायें इस प्रकार विश्व में ८ नं० तक ही ज्ञेय हैं।
९. मुझ आत्मा में केवलज्ञान की शक्ति है। केवलज्ञान की एक समय की पर्याय में ८ नं० तक सारा विश्व एक समय में जाना जा सकता है, ऐसे अनन्त विश्व हों तो भी एक समय में ज्ञेय हो सकते है मगर ऐसे है नही। तो उस एक समय की केवलज्ञान पर्याय की ताकत का क्या कहना!
१०. केवलज्ञान एक बार प्रारम्भ होने पर सादिअनन्त काल तक केवलज्ञान–केवलज्ञान अनन्त पर्यायें होती रहती हैं। केवलज्ञान आत्मा के ज्ञान गुण में से आता है। जिस ज्ञान गुण में से केवलज्ञान की अनन्त पर्यायें आती ही रहती है, उस ज्ञानगुण की ताकत का क्या कहना!
११. ज्ञान जैसे अनन्तगुण मुझ आत्मा में है। मै उन अनन्त गुणों का स्वामी हूँ। मुझ आत्मा का क्या कहना! ऐसा जाने माने तो अपनी महिमा आवे।

प्र० २६. द्रव्य को जानने से शरीर, आदि परद्रव्यों की महिमा कैसे छूट जाती है?
उ० लोकाकाश में जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं। १. प्रत्येक द्रव्य अनन्त गुणों का समूह है। २. सबके पास गुण संख्या अपेक्षा समान है, कम या ज्यादा नहीं हैं। ३. किसी भी द्रव्य में गुण डाले या निकाले नहीं जा सकते।
ऐसा जाने माने तो शरीर, धन अदि परद्रव्यों की ओर देखना ही नहीं रहता, एकमात्र अनन्तगुणों के अभेद पिण्ड निजआत्मा की ओर ही देखना रहा।

प्र० २७. सम्यग्दर्शन, श्रावकपना, मुनिपना, श्रेणी, अरहंत व सिद्ध दशा की प्राप्ति किसके आश्रय से होती है?
उ० एकमात्र ज्ञान–दर्शन आदि अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड निजअत्मा के आश्रय से ही सम्यक्‌दर्शन से लेकर सिद्ध दशा की प्राप्ति होती है। शरीर से, शरीर की क्रिया से धर्म का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये है वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० 17 से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठावें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1. सोमवार से शुक्रवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.१५ बजे तक
2. शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- १ मई की सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता का पारितोषिक वितरण भी २१ मई दिन शनिवार को समारस्थल पर ही होगा।

प्र० १४. क्या ...
उ० हां, प्रत्येक सिद्ध ...
सिद्ध भगवान भी गुणों का समूह है ...

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–१८

दिनांक 10 जुलाई 2005 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

णमोकार महामंत्र

णमो अरहंताणं,णमो सिद्धाणं,
णमो आइरियाणं,णमो उवज्झायाणं,णमो लोए सव्व साहूणं।।

लोक में सब अरहंतो को नमस्कार हो, सब सिद्धो को नमस्कार हो, सब आचार्यों को नमस्कार हो, सब उपाध्यायों को नमस्कार हो और सब साधुओं को नमस्कार हो।

इस णमोकार मंत्र में सबसे पहिले पूर्ण वीतरागी और पूर्ण ज्ञानी अरहंत और सिद्ध भगवानों को नमस्कार किया गया है। उसके बाद वीतराग मार्ग में चलने वाले मुनिराजों को नमस्कार किया गया है जिनमें आचार्य मुनिराज, उपाध्याय मुनिराज और सामान्य मुनिराज सब आ जाते हैं।

एसो पंचणमोयारो, सव्वपावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढ़मं होहि मंगलम्।।

यह पंच नमस्कार मंत्र सब पापों का नाश करने वाला है तथा सब मंगलों में पहला मंगल है। यह मंत्र मोह–राग–द्वेष का अभाव करने वाला और सम्यग्ज्ञान प्राप्त कराने वाला है।

अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु ये पांचों परमेष्ठी कहलाते है। जो जीव इन पांचों परमेष्ठियों को पहिचान कर उनके बताये हुए मार्ग पर चलता है उसे सच्चा सुख प्राप्त होता है। अब विचार करना है (१) पांचों परमेष्ठियों को कैसे पहचाने और (२) उनके द्वारा बताया हुआ मार्ग क्या है ?

अरहंत परमेष्ठी

जो गृहस्थपना त्यागकर, मुनिधर्म अंगीकार करके, निज स्वभाव साधन द्वारा चार घाति कर्मों को क्षय करके अनंत चतुष्टय (अनंत दर्शन, अनंत ज्ञान, अनंत सुख, अनंत वीर्य) रूप विराजमान हुए वे अरहंत हैं।

शास्त्रों में अरहंत के ४६ गुणों (विशेषणों) का वर्णन है। ४६ (छयालीस) गुणों में १० तो जन्म के अतिशय हैं, जो शरीर से संबंध रखते हैं। १० केवलज्ञान के अतिशय हैं, वे भी बाह्य पुण्य सामग्री से संबंधित है, तथा १४ देवकृत अतिशय तो स्पष्ट देवों द्वारा किए हुए हैं ही। ये सब तीर्थंकर अरहंतों के ही होते हैं, सब अरहंतों के नहीं। आठ प्रातिहार्य भी बाह्य विभूति हैं। किंतु अनंत चतुष्टय आत्मा से संबंध रखते हैं, अतः वे प्रत्येक अरहंत के होते हैं। अतः निश्चय से वे ही अरहंत के गुण हैं।

अरहंत भगवान वीतरागता, सर्वज्ञता एवं हितोपदेशिता के कारण ही पूज्य है, आराध्य हैं।

वीतरागता

जो मोह, राग–द्वेष, जन्म–मरण, भूख–प्यास आदि अठारह दोषों से रहित हो, उन्हें वीतराग कहते हैं।

वीतरागता का उपासक ही वीतरागी परमात्मा का उपासक होता है। लौकिक सुख (भोग) की आकांक्षा से परमात्मा की उपासना करनेवाला वीतरागी–सर्वज्ञ भगवान का उपासक नहीं हो सकता। धन, घरबार, राजपाट छोड़कर आत्म साधना में रत हुये वीतरागी प्रभु से धन आदि की चाहना करना वीतरागी मूर्ति को खण्डित करना है। विषय–भोगों की अभिलाषा से भक्ति करने पर तीव्र कषाय होने से पापबंध ही होता है, पुण्य का बंध नहीं होता।

सर्वज्ञता

इस लोक में जीव अनन्त है, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है और कालद्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्तानन्त गुण हैं और प्रत्येक गुण की त्रिकालवर्ती अनन्तानन्त पर्यायें होती हैं। जो उन समस्त द्रव्यों, गुणों और पर्यायों को एक समय में, इन्द्रियों की सहायता के बिना, परिपूर्ण रूप से स्पष्ट और एक साथ जानते हैं, उन्हें सर्वज्ञ कहते हैं। समस्त जग में जो कुछ हो चुका है, हो रहा है और भविष्यकाल में जो कुछ भी होने वाला है, सर्वज्ञ भगवान के ज्ञान में वह सब वर्तमान में वर्तमानवत् ही स्पष्ट झलकता है।

इसलिये– "जो–जो देखी वीतराग ने, सो–सो होसी वीरा रे।
अनहोनी कबहूँ नहिं होसी, काहे होत अधीरा रे।।

जिस जीव का जिस देश में, जिस काल में, जिस विधि से जन्म–मरण, सुख–दुख तथा रोग और दारिद्रय इत्यादि जैसे सर्वज्ञ ने जाने हैं उसी प्रकार वे सब नियम से होंगे। उसके निवारण करने के लिये इन्द्र, अहमिन्द्र या जिनेन्द्र कोई भी समर्थ नहीं है। अरहत भगवान के ऐसे केवलज्ञान की श्रद्धा करना ही अरहंत की भक्ति है।

हितोपदेशी

अरहंत का तीसरा विशेषण है हितोपदेशी। आत्मा का हित सच्चे सुख की प्राप्ति में ही है और सच्चा सुख निराकुलता में ही होता है। आकुलता मोक्ष में नहीं है, अतः मोक्ष के मार्ग का उपदेश ही हितोपदेश है। इस प्रकार जो जीव 'णमो अरहंताणं' का अर्थ समझकर अरहंत भगवान को नमस्कार करते हैं, उनके सब पापों का नाश अवश्य होता है।

सिद्ध परमेष्ठी

ज्ञानमात्र जिनका शरीर है तथा जो द्रव्यकर्म, भावकर्म व नोकर्म रूप मैल से रहित अतिनिर्मल हैं और लोक के अग्रभाग में स्थित हैं, वे सिद्ध परमेष्ठी हैं। सिद्ध दशा अर्थात आत्मा का नमूना। सिद्ध का ध्यान अर्थात अपने शुद्ध आत्मा का ध्यान। शरीर–मन–वाणी, आठ कर्म व मोह राग द्वेष के भावों से रहित सिद्ध भगवान के स्वरूप का चिंतवन करके, संसारी जीव सिद्धों के समान अपने आत्मा का ध्यान करके उन्हीं के समान हो जाते हैं और मोक्ष दशा को प्राप्त करते हैं।

इस प्रकार सिद्ध भगवान अपने शुद्ध स्वभाव को दर्शाने के लिए स्वच्छ प्रतिबिम्ब के समान हैं। अतः सभी साधक जीवों को सिद्धों की आराधना अवश्य करना चाहिए। इस प्रकार अरहंत व सिद्ध भगवान हैं और

मैं वह हूँ जो है भगवान, जो मैं हूँ वह है भगवान।
अन्तर यही ऊपरी जान वे विराग यहां राग वितान।

जो आत्मा को समझता है वह भगवान होता है।

भगवान को पूरा ज्ञान होता है और तनिक भी राग नहीं होता। भगवान सबको जानते हैं परन्तु भगवान किसी का कुछ भी नहीं करते।

भगवान को भूख नहीं लगती। भगवान कुछ नहीं खाते।

अरिहंत के शरीर होता है। सिद्ध के शरीर नहीं होता।

प्रतिदिन भगवान के दर्शन करने चाहिए।

भगवान के समान निज आत्मा को देखना–यही देव दर्शन है।

आचार्य उपाध्याय और साधु परमेष्ठी

जो सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान से परिपूर्ण, मोक्षमार्गस्वरूप, रागादि रहित शुद्ध चारित्र को सदैव साधते हैं, वे मुनि साधु हैं। उन्हें हमारा नमस्कार हो।

आचार्य, उपाध्याय और साधु सामान्य से साधुओं में ही आ जाते हैं। जो १. विरागी होकर, २. समस्त परिग्रह का त्याग करके, ३. शुद्धोपयोग रूप मुनिधर्म अंगीकार करके, ४. अंतरंग में शुद्धोपयोग द्वारा अपने को आप रूप अनुभव करते हैं; ५. अपने उपयोग को बहुत नहीं भ्रमाते हैं, ६. जिनके कदाचित् मंदराग के उदय में २८ महाव्रतादि पालने का शुभोपयोग भी होता है परन्तु उसे भी हेय मानते हैं, ७. तीव्र कषाय का अभाव होने से अशुभोपयोग का तो अस्तित्व ही नहीं रहता है – ऐसे मुनिराज ही सच्चे साधु है।

नित्य निजात्मा में रमनेवाले, शत्रु–मित्रों में समता धारण करनेवाले, सम्यग्ज्ञानी वीतरागी भावलिंगी मुनिवरों को बारम्बार नमस्कार हो।

इस प्रकार पंच परमेष्ठी का स्वरूप वीतराग–विज्ञानमय है, उस ही के द्वारा अरहंतादिक स्तुतियोग्य हुए हैं। क्योंकि १. जीवतत्व की अपेक्षा तो सर्व ही जीव समान है, २. परन्तु रागादि विकारों से व ज्ञान की हीनता से तो जीव निन्दा योग्य होते हैं और ३. रागादिक की हीनता और ज्ञान की विशेषता से स्तुति योग्य होते हैं। ४. सो अरहंत सिद्धों के तो सम्पूर्ण रागादि की हीनता और ज्ञान की विशेषता होने से सम्पूर्ण वीतराग–विज्ञानता है और आचार्य उपाध्याय व साधुओं को एक देश रागादि की हीनता और ज्ञान की विशेषता होने से एक देश वीतराग–विज्ञानता है। – इस वीतराग विज्ञानता से ही पंच परमेष्ठियों को स्तुतियोग्य महान जानना।

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया हुआ मार्ग क्या है ?

अब उस पर विचार करते हैं, पंचपरमेष्ठी कहते हैं कि अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधुपद आत्मा की अवस्थायें हैं, शरीर की नहीं। निज आत्मा की पहचान होने पर ये पांच परमपद आत्मा में प्रगट होते हैं। परन्तु यह जीव अनादिकाल से अपने परमातम स्वरूप को भूलकर शरीरादि परद्रव्यों को अपना मानकर दुःखी हो रहा है। यदि भेदज्ञान द्वारा आत्मा और शरीर की भिन्नता का ज्ञान करे तो सुखी हो।

मैं जीव हूँ। शरीर अजीव है। जीव में ज्ञान है। शरीर में ज्ञान नहीं है।

मैं अपने ज्ञान से सबको जानता हूँ। शरीर किसी को नहीं जानता।

इस प्रकार जीव और शरीर अलग अलग हैं ऐसा जानकर जो शरीर से भिन्न आत्मा को पहचानता है वह भगवान होता है। उसे सच्चा सुख प्राप्त होता है। यही णमोकार महामंत्र के जपने का फल है।

नोटः– उपरोक्त 'णमोकार महामंत्र' पाठ के आधार पर निम्न प्रश्नो के उत्तर लिख कर याद कीजिये–

(१) णमोकार मंत्र शुद्ध लिखिये व बोलिये (२) णमोकार मंत्र में किसको नमस्कार किया गया है (३) इस मंत्र के स्मरण से क्या लाभ हैं? (४) सच्चा सुख कैसे प्राप्त होता है? (५) पंच परमेष्ठी कौन–कौन से हैं? (६) पंचपरमेष्ठी स्तुतियोग्य क्यों है (७) अरहंत और सिद्ध कौन हैं, उनक स्वरूप क्या है (८) अरहंत व सिद्ध में किस अपेक्षा अंतर है (९) अरहंत के तीन लक्षण कौन–कौन से हैं (१०) अरहंत की सच्ची भक्ति क्या है? (११) सिद्ध भगवान के ध्यान का फल क्या है? (१२) मुनिराज में सामान्य रूप से कौन–कौन गर्भित है, उनका सामान्य स्वरूप क्या है? (१३) णमोकार मंत्र के जपने का फल क्या है?

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० 18 से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.१५ बजे तक
2.	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- २१ मई की सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-१७ का पारितोषिक वितरण भी १० जुलाई दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–१९

दिनांक 25 सितम्बर 2005 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

णमोकार महामंत्र

णमो अरहंताणं,णमो सिद्धाणं,
णमो आइरियाणं,णमो उवज्झायाणं,णमो लोए सव्व साहूणं।।

'णमोकर महामंत्र' नामक प्रतियोगिता में हमने जाना कि अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु ये पांच परमेष्ठी है। इन पांच परमपदों में स्थित जीव पूजनीय है। किस कारण ? इन जीवों में प्रगट वीतराग विज्ञानता के कारण। ये वीतराग विज्ञानता आत्मा की ही अवस्थायें हैं और आत्मा के ही आश्रय से प्रगट होती है। लेकिन अनादिकाल से जीव अपने आत्मस्वरूप को भूलकर शरीरादि परद्रव्यों को अपना मानकर दुःखी हो रहा है। यदि इन पांचों परमेष्ठियों के स्वरूप को पहचानकर उनके बताये मार्ग पर चले तो सच्चा सुख प्राप्त करें। अतः सच्चा सुख प्राप्त करने और जन्म मरण का नाश करने के इच्छुक पात्र जीव को बारम्बार यही जानने की जिज्ञासा होती है कि अरहंतादि द्वारा बताया मार्ग क्या है ?

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

पंचपरमेष्ठियों द्वारा कहे हुये विश्व, द्रव्य–गुण–पर्याय, छह द्रव्य व सात तत्वों का ज्ञान करके जीव स्वयं भगवान बन सकता है।

विश्व (द्रव्य–गुण–पर्याय) और जिनेन्द्र विश्व की व्यवस्था

जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं। जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये छह द्रव्य हैं।

१. इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल, अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और कालद्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुएं भिन्न भिन्न हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुएं अपनी–अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुएं कोई किसी के अधीन नहीं है। ये सब अनादिनिधन वस्तुएं कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती है।

(श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक, पृष्ठ ५२)

२. इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और कालद्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में एक ही समय में एक पर्याय का उत्पाद, एक पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा। (प्रवचनसार गाथा ६३)
३. इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल, अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और कालद्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अनन्त धर्मों के चक्र को (अनन्त गुण–पर्यायों को) स्पर्श करते है तथापि वे परस्पर एक दूसरे को स्पर्श नहीं करते हैं। क्योंकि
४. प्रत्येक द्रव्य–अस्तित्व– वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुण, अनन्त विशेष गुण एक व्यंजन पर्याय और अनन्त अर्थपर्यायों सहित अपनी अपनी पृथक सत्ता में विराज रहा है।
५. इस प्रकार निश्चय से विश्व को अर्थात–जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल द्रव्यों को तथा इन द्रव्यों की समस्त पर्यायों को जो सर्वज्ञ के आगमानुसार जानता है, श्रद्धा करता है वह शुद्ध सम्यग्दृष्टि है ; और जो ऐसी श्रद्धा नहीं करता शंका–संदेह करता है वह सर्वज्ञ के आगम के प्रतिकूल है – प्रगटरूप में मिथ्यादृष्टि है।

द्रव्य

गुणों के समूह को द्रव्य कहते है। जिसमे चेतना अर्थात ज्ञान–दर्शन रूप शक्ति है उसे जीव द्रव्य कहते है। जिसमें स्पर्श–रस–गंध–वर्ण पाया जाये उसे पुद्गल द्रव्य कहते हैं। मैं कौन सा द्रव्य हूं ? मैं जानने देखने की शक्ति वाला जीव द्रव्य हूं, शरीर नहीं हूं, शरीर पुद्गल द्रव्य है। मुझ आत्मा का शरीर से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है – इस रहस्य को हम अपने अनुमान से कैसे जानें ? पिछले जन्म का शरीर व संयोग साथ आये नहीं, वर्तमान का शरीर व धन आदि साथ जायेंगे नहीं – अतः सिद्ध होता है कि इस समय भी शरीर व धनादि से मेरा सर्वथा संबंध नहीं है। आत्मा और शरीर को एक मानना ही मिथ्यात्व है जिसका फल अनन्त संसार है।

श्री कुन्दकुन्दाचार्य ने श्री प्रवचनसार गाथा १६० में कहा है–जो देह–धनादिक में 'यह मैं हूं और यह मेरा है' अर्थात 'शरीर है सो मैं हूं' ऐसी ममता को नहीं छोड़ता वह संसार में परिभ्रमण करता है। हमें अनन्त संसार में नहीं भटकना है हमें आत्मा और शरीर की भिन्नता कैसे भासित हो ?आत्मा और शरीर के पृथक–पृथक लक्षणों से –
१. मुझ आत्मा चैतन्य है और शरीर जड़ मिट्टी है।
२. मुझ आत्मा अरूपी है और शरीर रूपी है।
३. मुझ आत्मा असंख्यात प्रदेशी है और शरीर में एक–एक प्रदेशी अनंत परमाणु है।
४. मुझ आत्मा का एक आकार है और शरीर में अनन्त परमाणु है अतः शरीर के अनन्त आकार हैं।

गुण

जो द्रव्य के संपूर्ण भागों में और उसकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहते हैं उन्हें गुण कहते हैं। गुणों के दो भेद हैं – १. सामान्य गुण २. विशेष गुण। जो गुण सर्व द्रव्यों में रहते हैं उन्हें सामान्य गुण कहते हैं। सामान्य गुण अनंत हैं, उनमें मुख्य छह हैं – १. अस्तित्व, २. वस्तुत्व, ३. द्रव्यत्व, ४. प्रमेयत्व ५. अगुरूलघुत्व, ६. प्रदेशत्व। जो गुण सर्व द्रव्यों में न रहकर अपने–अपने द्रव्य में रहते हैं उन्हें विशेष गुण कहते हैं। जीवादि प्रत्येक द्रव्य में कौन–कौन से विशेष गुण हैं ?

जीव द्रव्य – ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य, श्रद्धा, चारित्र, क्रियावती शक्ति आदि।
पुद्गलद्रव्य – स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, क्रियावती शक्ति आदि।
धर्मद्रव्य – गतिहेतुत्व आदि। अधर्मद्रव्य – स्थितिहेतुत्व आदि।
आकाश द्रव्य– अवगाहनहेतुत्व आदि। काल द्रव्य – परिणमनहेतुत्व आदि।

पर्याय

गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं। पर्याय के दो भेद हैं – १. व्यंजन पर्याय २. अर्थपर्याय। द्रव्य के प्रदेशत्व गुण के विशेष कार्य को व्यंजनपर्याय कहते हैं। व्यंजनपर्याय के दो भेद हैं – स्वभाव व्यंजनपर्याय और विभाव व्यंजनपर्याय। पर निमित्त के संबंध से रहित द्रव्य का जो आकार हो उसे स्वभाव व्यंजनपर्याय कहते हैं जैसे जीव की सिद्ध पर्याय। पर निमित्त के संबंध से द्रव्य का जो आकार हो उसे विभाव व्यंजनपर्याय कहते हैं। जैसे – जीव की नर–नारकादि पर्याय। प्रदेशत्व गुण के सिवाय बाकी संपूर्ण गुणों के कार्य को अर्थपर्याय कहते हैं। अर्थपर्याय के दो भेद हैं – स्वभाव अर्थपर्याय और विभाव अर्थपर्याय। पर निमित्त के संबंध से रहित जो अर्थपर्याय होती है उसको स्वभाव अर्थपर्याय कहते हैं। जैसे जीव की सम्यक्दर्शन आदि पर्यायें। पर निमित्त के संबंध से जो अर्थपर्याय हो उसको विभाव अर्थपर्याय कहते हैं। जैसे जीव के राग–द्वेष आदि।

प्रयोजनभूत तत्व

प्रयोजनभूत तत्व सात हैं – जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष।
१. जिसमें मेरा ज्ञान–दर्शन पाया जाये उसे <u>जीव तत्व</u> कहते हैं। जीव तत्व एक मात्र आश्रय करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।
२. जिनमें मेरा ज्ञान–दर्शन नहीं है वे <u>अजीव तत्व</u> हैं और अजीव तत्व जानने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

३. शुभाशुभ विकारी भावों का उत्पन्न होना आस्रव तत्व (दुःख) है और आस्रव तत्व छोड़ने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

४. शुभाशुभ विकारी भावों में अटकना बंध तत्व (दुःख) है और बंध तत्व छोड़ने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

५. शुद्धि का प्रगट होना संवर तत्व (एकदेश सुख) है और संवर तत्व एक देश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

६. शुद्धि में वृद्धि होना निर्जरा तत्व (एकदेश सुख) है और निर्जरा तत्व एक देश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

७. संपूर्ण शुद्धि का प्रगट होना मोक्ष तत्व (पूर्ण सुख)है और मोक्ष तत्व पूर्ण प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

विश्व, द्रव्य–गुण पर्याय, छह द्रव्य, सात तत्व का सार

चेतन को है उपयोग रूप, बिनमूरत चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल, इनतैं न्यारी है जीवचाल।।

१. चेतन को है उपयोग रूप अर्थात मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीवतत्व हूं और मेरा कार्य–ज्ञाता–दृष्टा है।

२. बिनमूरत अर्थात आंख–नाक–कान औदारिक आदि शरीरोंरूप मेरी मूर्ति नहीं है।

३. चिन्मूरत अर्थात चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।

४. अनूप अर्थात सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।

५. पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल, इनतैं न्यारी है जीवचाल अर्थात निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म–अधर्म–आकाश एकेक और लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्य हैं। इन सबकी चाल मुझ जीव से सर्वथा भिन्न ही है–ऐसा निज जीवतत्व का स्वरूप जानते मानते ही तत्काल आस्रव बंधका अभाव होकर संवर निर्जरा की प्राप्तिकर, क्रम से मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० 19 से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ९.१५ से १०.१५ बजे तक
2.	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- १० जुलाई को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-१८ का पारितोषिक वितरण भी २५ सितम्बर दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-१८

दिनांक 27 नवम्बर 2005 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं,
णमो आइरियाणं,णमो उवज्झायाणं,णमो लोए सव्व साहूणं।।

'णमोकर महामंत्र' नामक प्रतियोगिता में हमने जाना कि अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु ये पांच परमेष्ठी है। इन पांच परमपदों में स्थित जीव पूजनीय है। किस कारण ? इन जीवों में प्रगट वीतराग विज्ञानता के कारण। ये वीतराग विज्ञानता आत्मा की ही अवस्थायें हैं और आत्मा के ही आश्रय से प्रगट होती है। लेकिन अनादिकाल से जीव अपने आत्मस्वरूप को भूलकर शरीरादि परद्रव्यों को अपना मानकर दुःखी हो रहा है। यदि इन पांचों परमेष्ठियों के स्वरूप को पहचानकर उनके बताये मार्ग पर चले तो सच्चा सुख प्राप्त करें। अतः सच्चा सुख प्राप्त करने और जन्म मरण का नाश करने के इच्छुक पात्र जीव को बारम्बार यही जानने की जिज्ञासा होती है कि अरहंतादि द्वारा बताया मार्ग क्या है ?

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

अनादि से जीव में शरीर, धन, मकान आदि पुद्गलों में एकत्वबुद्धि है जिसके कारण अमूर्तिक आत्मा की पहचान ही नही होती, यदि पुद्गलों के स्वरूप का ज्ञान हो जाये तो शरीरादि में एकत्वरूप मोह का नाश करके जीव स्वयं भगवान बन सकता है।

प्र०१. पुद्गल किसे कहते हैं?

उ० जिसमें स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण जाये वह पुद्गल है।

पुद्गल द्रव्य के स्पर्श–रस–गंध–वर्ण आदि गुणों की २७ पर्यायें होती हैं।

स्पर्श गुण –हल्का–भारी, ठंडा गरम, रूखा–चिकना, कड़ा–नरम = ये आठ पर्यायें पुद्गल द्रव्य के स्पर्श गुण में से आती हैं।

रस गुण – खट्टा–मीठा–कड़वा–चरपरा–कषायला = ये पाँच पर्यायें पुद्गल के रस गुण में से आती हैं।

गंध गुण – सुगन्ध और दुर्गन्ध = ये दो पर्यायें पुद्गल द्रव्य के गंध गुण में से आती है

वर्ण गुण – काला–पीला–नीला–लाल–सफेद = ये पाँच पर्यायें पुद्गल द्रव्य के वर्ण गुण में से आती है।

शब्द की – सात पर्यायें होती हैं जो शब्द रूप पुद्गल स्कन्धों में से आती हैं।

प्र०२. पुद्गल के कितने भेद हैं?

उ० दो भेद हैं (१) परमाणु (२) स्कन्ध

जिसका दूसरा विभाग नही हो सकता ऐसे सबसे छोटे पुद्गल को परमाणु कहते हैं। दो या दो से अधिक परमाणुओं के बंध को स्कन्ध कहते हैं। स्कन्ध के आहारवर्गणा, तैजसवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माणवर्गणा इत्यादि २२ भेद हैं।

१. जो पुद्गल स्कन्ध औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीरों की रचना करता है उसको आहारवर्गणा कहते हैं।
२. जिस वर्गणा से तैजस शरीर बनता है उसको तैजसवर्गणा कहते हैं।
३. जो पुद्गल स्कन्ध शब्द रूप से परिणत होता है उसको भाषावर्गणा कहते हैं।
४. जिस पुद्गल स्कन्ध से अष्टदल कमल के आकार द्रव्यमन की रचना होती है उसको मनोवर्गणा कहते हैं।
५. जिस पुद्गल स्कन्ध से कार्माण शरीर बनता है उसको कार्माणवर्गणा कहते हैं।

प्र०३. शरीर कितने हैं ?

उ० शरीर पाँच हैं –

१. मनुष्य ओर तिर्यंचों के स्थूल शरीर को औदारिक शरीर कहते हैं।
२. जो छोटे–बड़े, पृथक–अपृथक आदि अनेक क्रियाओं को करे ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियक शरीर कहते हैं।
३. आहारक ऋद्धिधारी छठे गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्वों में कोई शंका होने पर अथवा जिनालयादि की वन्दना करने के लिए, मस्तक से एक हाथ प्रमाण स्वच्छ और सफेद, सप्तधातु रहित पुरूषाकार जो पुतला निकलता है उसको आहारक शरीर कहते हैं।
४. औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीनों शरीरों में कान्ति उत्पन्न करने वाले शरीर को तैजस शरीर कहते हैं।
५. आठ कर्मों के समूह को कार्माण शरीर कहते हैं।

प्र०४. बंध किसे कहते हैं?

उ० जिस संबंध विशेष से अनेक वस्तुओं मे एकपने का ज्ञान होता है उस संबंध विशेष को बंध कहते हैं।

बंध तीन प्रकार के हैं– (१) जीव बंध (२) पुद्गल बंध (३) उभय बंध

१. जिस संबंध विशेष से आत्मा और राग द्वेष के भावों में एकपने का ज्ञान होता है उस संबंध विशेष को जीव बंध कहते हैं। जैसे– मैं रागी हूँ, मैं द्वेषी हूँ, मैं क्रोधी हूँ, आदि। जीव बंध में यह समझना है कि आत्मा अलग है और राग–द्वेषादि भाव अलग हैं।
२. जिस संबंध विशेष से अनेक पुद्गलों में एकपने का ज्ञान होता है उस संबंध विशेष को पुद्गल बंध कहते हैं। जैसे– कार, मकान, धन, जेवर आदि। पुद्गल बंध में यह समझना है कि कार आदि एक दिखने वाली वस्तु में अनेक पुद्गल हैं, एक पुद्गल का दूसरे पुद्गल से संबंध नहीं है, तो मुझ आत्मा से संबंध कैसे हो सकता है?
३. जिस संबंध विशेष से आत्मा और शरीर में एकपने का ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशेष को उभय बंध कहते हैं। जैसे– मनुष्य, देव, नारकी, पशु आदि। उभय बंध मे यह समझना है कि मनुष्य आदि उभय बंधों में ज्ञान स्वरूप आत्मा अलग है और अनेक पुद्गलों का पिंड मनुष्य शरीर अलग है।

प्र०५. अनादिकाल से जीव को कैसा श्रद्धान है?

उ० जीव अनादिकाल से अनेक शरीर धारण करता है, पूर्व का शरीर छोड़ता है नवीन धारण करता है: वहाँ एक तो स्वयं आत्मा–जीव द्रव्य और अनन्त पुद्गल परमाणुमय शरीर–इन दोनों के संयोगरूप मनुष्य–तिर्यंचादि अनेक अवस्थायें होती हैं, उन सब में 'यह मैं हूँ' ऐसी अहंबुद्धि करता है, आत्मा और शरीर – इन दोनो में मैं कौन हूँ और मैं कौन नहीं हूँ–ऐसा भेद नहीं कर पाता, दोनों को एक मानता है– इस मिथ्या श्रद्धान के कारण ही आज तक धर्म की प्राप्ति नहीं हुई।

'पुद्गल की २७ पर्यायों से भेद विज्ञान किस प्रकार करना'

प्र० शरीर का हल्कापना क्या है ? क्या आत्मा भी हल्का–भारी होती है ?

उ० शरीर में हल्कापना पुद्गल द्रव्य के स्पर्शगुण की विभाव अर्थपर्यायें हैं, आत्मा न हल्का है न भारी, आत्मा तो शरीर के हलकेपने को मात्र जानता है।

प्र० अज्ञानी शरीर के हल्केपने को जानकर क्या करता है ?

उ० अज्ञानी मात्र जानने वाला नहीं रहता, शरीर के ज्यादा हल्केपने में द्वेष करता है और ठीक होने पर राग करता है।

प्र० इसमें राग द्वेष किस प्रकार हुआ ? और राग द्वेष का फल क्या है ?

उ० स्वयं ज्ञानस्वरूप आत्मा है, शरीर का हल्कापना पुद्गलों के स्पर्श गुण का कार्य है। अर्थात शरीर का हल्कापना परद्रव्य का कार्य है। दूसरे द्रव्य के कार्य से निज आत्मा में लाभ मानना राग है और दूसरे द्रव्य के कार्य से निज आत्मा में नुकसान मानना द्वेष है। इस राग द्वेष का फल अनन्त संसार है।

प्र० हमें अनन्त संसार में नहीं भटकना है, हम शरीर के हल्केपने को आत्म का माननेरूप मोह–राग द्वेष का अभाव कैसे करें ?

उ० मैं अस्पर्शस्वभावी ज्ञानस्वरूप आत्मा हूँ, शरीर का हल्कापना पुद्गलों के स्पर्श गुण की विभाव अर्थपर्यायें हैं। ऐसा जानकर अपनी ज्ञान दर्शन की पर्याय को शरीर के हल्केपने से हटाकर ज्ञानस्वरूप आत्मा में एकाग्र करें तो शरीर के हल्केपने को आत्मा का माननेरूप मोह–राग–द्वेष का अभाव हो जाता है अर्थात आस्रव–बंध (दु:ख) का अभाव हो जाता है और सुख अर्थात संवर निर्जरा की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

(विशेष नोट : पुद्गल द्रव्य के स्पर्श गुण की–हल्कापना पर्याय की भांति भारी, ठंडा, गरम, रूखा, चिकना, कड़ा, नरम, खट्टा–मीठा, कड़वा, चरपरा, कषायला, सुगन्ध, दुर्गन्ध, काला, पीला, नीला, लाल, सफेद, निन्दा व प्रशंसा के शब्द–इन पर्यायों पर भी उपरोक्त प्रश्न १ से ४ के अनुसार प्रश्न व उत्तर बनाकर अभ्यास करना है।)

(१) निम्नलिखित पर्यायें किस द्रव्य के किस गुण का कार्य है – हल्कापन, गोरापन, दुर्गंध, खट्टापन, मिथ्यादर्शन, मीठापना, सकलचारित्र, नरमपना, मीठे का ज्ञान, रूखा, कड़ा, राग–द्वेष, सुख, सम्यक्दर्शन, मिथ्याचारित्र, कड़वा, कषाय, यथाख्यातचारित्र, पीला व लाल, मतिज्ञान व श्रुतज्ञान।

(२) निम्न कौन–कौन सा बंध है, इसमे अनेक वस्तुयें क्या हैं? मनुष्य, मैं क्रोधी हूँ, स्त्री, कार, मकान, मैं दयावाला, मैं रागी हूँ, देव, शेर, बिच्छु, कीड़ी, लड़का, पुत्री।

(३) निम्नलिखित के शरीर का नाम क्या है? और उसका कर्ता कौन है ? निगोदिया शरीर, पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, कीड़ा–मकोड़ा, मक्खी, मच्छर, चिड़िया, कौआ, तोता, मछली, हाथी–शेर, कुत्ता, बिल्ली, मनुष्य, नारक, आहारक ऋद्धिधारी के मस्तक का पुतला आठ कर्म, मनुष्य शरीर की चमक, आहारक शरीर की चमक।

(४) निम्न कार्यों की कर्ता कौन सी वर्गणा है – बोलना, चलना, हार, कपड़े, मकान, द्रव्यमन, तैजस शरीर, घंटे की आवाज, दौड़ना, कार्माण शरीर, रोटी, मधुर स्वर।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० २० से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.१५ बजे तक
2.	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- २५ सितम्बर को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-१८ का पारितोषिक वितरण भी २७ नवम्बर दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-२१

दिनांक 28 जनवरी 2006 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं,
णमो आइरियाणं,णमो उवज्झायाणं,णमो लोए सव्व साहूणं।।

'णमोकर महामंत्र' नामक प्रतियोगिता में हमने जाना कि अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु ये पांच परमेष्ठी है। इन पांच परमपदों में स्थित जीव पूजनीय हैं। किस कारण ? इन जीवों में प्रगट वीतराग विज्ञानता के कारण। ये वीतराग विज्ञानता आत्मा की ही अवस्थायें हैं और आत्मा के ही आश्रय से प्रगट होती है। लेकिन अनादिकाल से जीव अपने आत्मस्वरूप को भूलकर शरीरादि परद्रव्यों को अपना मानकर दु:खी हो रहा है। यदि इन पांचों परमेष्ठियों के स्वरूप को पहचानकर उनके बताये मार्ग पर चले तो सच्चा सुख प्राप्त करें। अतः सच्चा सुख प्राप्त करने और जन्म मरण का नाश करने के इच्छुक पात्र जीव को बारम्बार यही जानने की जिज्ञासा होती है कि अरहंतादि द्वारा बताया मार्ग क्या है ?

<u>पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है</u>

मैं आत्मा हूँ, मुझमें ज्ञान है, मैं ज्ञान से जानता हूँ। शरीरादि जड़ है, शरीर में ज्ञान नही है, शरीर कुछ जानता नहीं है – ऐसा निर्णय करने पर मोह–राग–द्वेष का नाश हो जाता है और जीव स्वयं भगवान बन जाता है।

प्र०१. आत्मा ज्ञानस्वरूप होने से मात्र जानता ही है तो आत्मा में मोह–राग–द्वेष के भाव क्यों उत्पन्न होते हैं ?

उ० मुनिराज श्री कुन्दकुन्ददेव ने महान ग्रंथाधिराज श्री समयसार की ३७३ से ३८२ तक की गाथाओं में कहा है –

१. औदारिक आदि शरीरों में स्पर्श की हल्कापना आदि आठ पर्यायें, रस की पाँच पर्यायें, गंध की दो पर्यायें, वर्ण की पाँच पर्यायें, शब्द की सात पर्यायें, धन, मकान, कार, जेवर आदि पुद्गलबंध व पति बच्चे, माँ, बाप आदि उभयबंध–ये सब परद्रव्य हैं। इन सब परद्रव्यों को आत्मा मात्र जानता है, अपने स्वभाव से ही जानता है। ये सब परद्रव्य कहीं मुझ आत्मा से यह नहीं कहते कि तू मुझे स्पर्श कर, तू मुझे चख, तू मुझे सूंघ, तू मुझे देख, तू मुझे सुन, तू मुझे जान।

२. मुझ आत्मा भी अपनी सत्ता छोड़कर उन्हें जानने नहीं जाता क्योंकि प्रत्येक द्रव्य–अस्तित्व वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुण, अनन्त विशेष गुण, एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्यायों रूप–अपनी–अपनी सत्ता में रहता है, अपनी सत्ता से बाहर न निकला है और न निकल सकता है।

३. ये परद्रव्य दूर हों या समीप हों–मुझ आत्मा अपने स्वभाव से ही जानता है।

४. ये परद्रव्य मनोहर हों या अमनोहर हों–मुझ आत्मा में किंचित विशेषता उत्पन्न नहीं कर सकते।

५. मुझ आत्मा–दीपक की भाँति – पुद्गल की पर्यायों के प्रति सम्बन्ध रहित है।

६. जिनकी बुद्धि ऐसी वस्तुस्थिति के ज्ञान से रहित है, ऐसे अज्ञानी जीव–स्पर्श को छूकर, रस का स्वाद लेकर, गंध को सूंघकर, रूप को देखकर, शब्द को सुनकर, गुण–द्रव्य को जानकर उन्हें अच्छा बुरा मानते हैं इसलिये मोह–राग–द्वेष उत्पन्न होते हैं, यही अज्ञान है। संसार का कारण है।

७. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ८८ में पं० टोडरमलजी कहते हैं –

'जीव का स्वभाव तो जानना–देखना है; सो स्वयं केवल देखने–जानने वाला तो रहता नहीं है, जिन पदार्थों को देखता–जानता है उनमें इष्ट–अनिष्टपना मानता है, इसलिये रागी–द्वेषी होकर किसी को रखना चाहता है और किसी को हटाना चाहता है। परन्तु परद्रव्यों का रहना या हटना जीव का किया होता नहीं क्योंकि कोई द्रव्य किसी अन्य द्रव्य का कर्ता नहीं, सब द्रव्य अपने–अपने स्वभावरूप से परिणमित होते हैं; यह व्यर्थ ही कषाय करके दुःखी होता है।'

?. कषाय के नाश के लिये क्या करें ?

ज्ञानस्वरूप निज आत्मा को शरीरादि पुद्गलों से भिन्न जानना ही कषाय के नाश का उपाय है।

क्या आत्मा और शरीरादि की भिन्नता का ज्ञान करने मात्र से कषाय का नाश हो जाता है ?

अवश्य हो जाता है। श्री समयसार गाथा ३६० से ४०४ में आचार्य श्री कुन्दकुन्ददेव कहते हैं–

'निज भगवान आत्मा का हल्का–भारी, ठंडा–गरम, रूखा–चिकना, कड़ा–नरम रूप स्पर्श के साथ, खट्टा–मीठा–कड़वा–चरपरा, कषायला रूप रस के साथ, सुगन्ध–दुर्गन्ध रूप गंध के साथ, काला–पीला–नीला–लाल–सफेद रूप वर्ण के साथ, सात प्रकार के शब्दों के साथ, पुद्गल व उभयबंधों के साथ, आठ कर्मों के साथ–सर्वथा सम्बन्ध नहीं है–ऐसा अनादि से जिनदेव कहते हैं।

क्यों सम्बन्ध नहीं है? क्योंकि पुद्गल द्रव्य अचेतन है, उसमें ज्ञान नहीं है और मैं आत्मा ज्ञान वाला हूँ, निरन्तर जानता हूँ, इसलिये आत्मा भिन्न है और पुद्गल (शरीर) भिन्न है–ऐसा अनादि से जिनदेव कहते हैं।'

निरन्तर जानते हुये मुझ आत्मा को हल्का–भारी आदि का जो ज्ञान होता है वह ज्ञान मुझ ज्ञानस्वरूप आत्मा से अभिन्न है और हल्का भारी आदि से सर्वथा भिन्न है।

ऐसा निर्णय करने पर अपनी ज्ञान की पर्याय शरीरादि परद्रव्यों से हटकर, निज आत्मा में एकाग्र होती है।

पूर्ण ज्ञानस्वरूप, अनन्त गुणों के समूहरूप निज आत्मा को निज ज्ञान में धारण करना–बस यही त्यागने योग्य रागादिक का त्याग है और

प्रगट करने योग्य वीतरागता–विज्ञानता का ग्रहण है, यही सुख है, य
धर्म है–जो जीव को चारों गतियों के दुःखों से निकालकर उत्त
अविनाशी–मोक्ष सुख में धर देगा।

भजन

ज्ञानी जीव निवार भरमतम, वस्तुस्वरूप विचारत ऐसैं।।टेक।।
सुत तिय बन्धु धनादि प्रगट पर, ये मुझतें हैं भिन्न प्रदेशैं।
इनकी परणति है इन आश्रित, जो इन भाव परिणमे वैसे।।१।।

देह अचेतन अरू मैं चेतन, इन परणति होय एकसी कैसे।
पूरन–गलन स्वभाव धरै तन, मैं अज अचल अमल नभ जैसे।।२।।

पर परिणमन न इष्ट अनिष्ट न, वृथा रागरुष द्वन्द भयेसैं।
नसै ज्ञान निज फंसैं बंध में, मुक्त होय समभाव लहेसैं।।३।।

विषय–चाह दवदाह नसैं नहिं, बिन निज सुधासिन्धु पाये से।
अब जिनवैन सुने श्रवन तैं, मिटे विभाव करूँ विधि तैसैं।।४।।

ऐसो अवसर कठिन पाय अब, निजहित हेत विलम्ब न करेसैं।
पछताओ बहु होय सयाने, चेतन 'दौल' जुटो भव भयसैं।।५।।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हि नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० २० से प्रारम्भ कर धर्म अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1. सोमवार से शुक्रवार कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ९.१५ से १०.१५ बजे त
2. शनिवार कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर प्रातः १०.०० से ११.०० बजे त
3. ✓रविवार कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ९.०० से १०.०० बजे त

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आ पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते
- २७ नवम्बर की सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–१९ का पारितोषिक वितरण भी जनवरी दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-२३

दिनांक 14 मई 2006 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं,
णमो आइरियाणं,णमो उवज्झायाणं,णमो लोए सव्व साहूणं।।

'णमोकार महामंत्र' नामक प्रतियोगिता में हमने जाना कि अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु ये पांच परमेष्ठी है। इन पांच परमपदों में स्थित जीव पूजनीय हैं। किस कारण ? इन जीवों में प्रगट वीतराग विज्ञानता के कारण। ये वीतराग विज्ञानता आत्मा की ही अवस्थायें हैं और आत्मा के ही आश्रय से प्रगट होती है। लेकिन अनादिकाल से जीव अपने आत्मस्वरूप को भूलकर शरीरादि परद्रव्यों को अपना मानकर दुःखी हो रहा है। यदि इन पांचों परमेष्ठियों के स्वरूप को पहचानकर उनके बताये मार्ग पर चले तो सच्चा सुख प्राप्त करें। अतः सच्चा सुख प्राप्त करने और जन्म मरण का नाश करने के इच्छुक पात्र जीव को बारम्बार यही जानने की जिज्ञासा होती है कि अरहंतादि द्वारा बताया मार्ग क्या है ?

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

आचार्य देव करूणापूर्वक कहते हैं कि जड़ शरीरादि व चेतनद्रव्य दोनों सर्वथा भिन्न भिन्न हैं, कभी भी किसी भी प्रकार से एकरूप नहीं होते। ऐसा जिनेन्द्र भगवान ने देखा है ; इसलिये हे अज्ञानी ! तू शरीरादि को अपना मानना छोड़ दे और शरीर में रहा हुआ और शरीर से सर्वथा भिन्न चैतन्यस्वरूप आत्मा को ही 'यह मेरा है' ऐसा अनुभव कर !

१. मुझ आत्मा का वीना शरीरादि से सम्बन्ध क्यों नहीं है ?
निश्चय से मुझ आत्मा वीना शरीरादि परद्रव्यों से सर्वथा भिन्न, ज्ञान दर्शनादि स्वभावों से अभिन्न स्वयं सिद्ध जीव वस्तु है अर्थात मुझ आत्मा चेतन है और वीना शरीर, धन, मकान, गाड़ी, परिवार आदि चेतन नहीं है अतः मुझसे भिन्न है।

प्र०२. वीना शरीर आदि चेतन नहीं है, मुझ आत्मा से सर्वथा भिन्न हैं तो वीना शरीर आदि क्या है, इनका कर्ता कौन है ?

उ०१. वीना शरीर आदि अनन्त पुद्गलों की स्कंध रूप पर्याय हैं, औदारि शरीर हैं, इन वीना शरीर आदि का कर्ता सर्वथा आहारवर्गणा है। मुझ आत्मा इसका कर्ता नहीं है।

२. वीना शरीर आदि में अनन्त अनन्त परमाणु हैं, प्रत्येक परमाणु अस्तित्व वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुण, स्पर्श रस गंध वर्ण आदि अनन्त विशेष गुण, एक व्यंजन पर्याय और अनन्त अर्थ पर्याय सहित अपनी पृथक-पृथक सत्ता में रहता है। एक परमाणु का दूसरे परमाणु से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

३. जब वीना शरीर में यानि एक ही स्कंध में एक परमाणु का दूसरे परमाणु से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है तो मुझ आत्मा से वीना शरीर का सम्ब कैसे हो सकता है ?

४. वीना शरीर में रहा हुआ, वीना से सर्वथा भिन्न मैं – आत्मा हूँ, मुझमें ज्ञान है, मैं ज्ञान से निरन्तर जानता हूं। वीना शरीर में रहा हुआ हो पर भी मुझ आत्मा का कोई प्रदेश वीना शरीर रूप नहीं होता। वी शरीर का कोई परमाणु मुझ आत्मा रूप नहीं होता।

प्र०३. यदि आत्मा वीना से सर्वथा भिन्न है और ज्ञानस्वरूप होने से मा जानता ही है तो फिर आत्मा अपने से भिन्न वीना शरीर आदि परद्रव्य को अपना मानकर रागद्वेष क्यों करता है ?

उ०१. वीना शरीर परद्रव्य है। वीना शरीर को आत्मा मात्र जानता है, अप स्वभाव से जानता है। ये वीना शरीर कहीं मुझ आत्मा से यह न कहते कि तू मुझे जान।

२. मुझ आत्मा भी अपनी सत्ता छोड़कर वीना शरीर को जानने नहीं जा क्योंकि प्रत्येक द्रव्य अपनी अपनी सत्ता में रहता है, अपनी सत्ता बाहर न निकला है और न निकल सकता है।

३. मुझ आत्मा–दीपक की भांति –वीना शरीर के प्रति सम्बन्ध रहित है

४. मुझ आत्मा का स्वभाव तो मात्र जानना देखना है, जिनकी बुद्धि इ ज्ञान से रहित है ऐसे अज्ञानी जीव भी वीना शरीर को मात्र जानते ही हैं, परन्तु स्वयं केवल जानने वाले नहीं रहते। इसलिये वीना शरी को अपना मानकर, उसे अपनी इच्छानुसार परिणमित कराना चाहते इसलिये रागी द्वेषी होते हैं क्योंकि मुझ आत्मा और वीना शरीर भि

भिन्न द्रव्य होने से मुझ आत्मा वीना शरीर रूप पुद्गलों को नहीं परिणमा सकता। वीना में अनन्त पुद्गल परमाणु अपने अपने स्वभाव से परिणमित होते हैं, यह व्यर्थ ही कषाय करके दुःखी होता है।

५. यदि वीना शरीर में रहा हुआ, वीना शरीर से सर्वथा भिन्न चैतन्य स्वरूप आत्मा को ही 'यह मैं हूं' ऐसा अनुभव करे तो कषाय अर्थात दुःख का नाश हो।

प्र०४. क्या चैतन्य स्वरूप आत्मा और वीना शरीर की भिन्नता का ज्ञान करने मात्र से कषाय का नाश हो जाता है ?

उ०१. निज भगवान आत्मा का वीना शरीर के साथ सर्वथा सम्बन्ध नहीं है – ऐसा अनादि से जिनदेव कहते हैं।

२. क्यों सम्बन्ध नहीं है ? क्योंकि वीना शरीर अचेतन है, उसमें ज्ञान नहीं है और मैं आत्मा ज्ञान वाला हूँ, निरन्तर जानता हूं, इसलिए आत्मा भिन्न है और वीना शरीर भिन्न है–ऐसा अनादि से जिनदेव कहते हैं।

३. निरन्तर जानते हुए मुझ आत्मा को वीना शरीर का जो ज्ञान होता है वह ज्ञान मुझ ज्ञान स्वरूप आत्मा से अभिन्न है और वीना शरीर से सर्वथा भिन्न है।

४. ऐसा निर्णय करने पर अपनी ज्ञान की पर्याय वीना शरीर से हटकर, निज आत्मा में एकाग्र होती है।

५. निज आत्मा को निज ज्ञान में धारण करना–बस यही कषाय का नाश है और सुख अर्थात संवर–निर्जरा का ग्रहण है, यही धर्म है– जो जीव को चारों गतियों के दुःख से निकालकर उत्तम, अविनाशी–मोक्ष सुख में धर देगा।

प्र०५. आपने बताया जानने देखने के स्वभाव वाला मुझ आत्मा अलग है और वीना शरीर अलग है लेकिन कहने में तो ऐसा ही आता है कि मैं वीना हूँ?

उ० जैसे हाथी के दांत खाने के और होते हैं तथा दिखाने के और होते हैं उसी प्रकार जानना। जैसे पानी का घड़ा कहते हुए भी हम यह जानते हैं कि घड़ा पानी का नहीं है मिट्टी का है, पानी रखने से पानी घड़ा कहने में आता है ; चीनी का डिब्बा कहते हुये भी हम जानते हैं कि डिब्बा तो स्टील का है, चीनी रखने से चीनी का डिब्बा कहने में आता है, उसी प्रकार यहां जानना कि वीना शरीर तो पुद्गल ही है, अनन्त पुद्गल परमाणुओं का स्कंध ही है इसमें रहा हुआ जीव के संयोग से ही इस वीना शरीर को जीव कहने में आता है।

प्र०६. तो हम क्या करें ?

उ०१. मैं जीव तत्व हूँ, वीना नहीं, ऐसा निश्चयनय से जो निरूपण किया हो, उसे तो सत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान अंगीकार करना और

२. मैं वीना हूँ–ऐसा व्यवहारनय से जो निरूपण किया हो, उसे असत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान छोड़ना।

३. क्योंकि जो व्यवहार में सोता है अर्थात जो मैं वीना हूँ ऐसे व्यवहार की श्रद्धा छोड़कर; मैं जीव तत्व हूँ, वीना नहीं, ऐसे निश्चय की श्रद्धा करता है, वह उसी समय ज्ञानी बन जाता है और अपने आत्मकार्य में जागता है।

४. तथा जो व्यवहार में जागता है, अर्थात जो मैं वीना ही हूँ ऐसे व्यवहार की श्रद्धा करता है, वह कभी भी अपना आत्मकार्य नहीं कर सकता, संसार में रूलता है।

५. – इसलिए मैं वीना हूँ ऐसे व्यवहार का श्रद्धान छोड़कर; मैं जीव तत्व हूँ, वीना नहीं, ऐसा निश्चयनय का श्रद्धान करना योग्य है।

वीना शरीर में रहा हुआ वीना शरीर से सर्वथा भिन्न मुझ आत्मा अनन्त शक्तियों से परिपूर्ण है–११. स्वच्छत्व शक्ति १२. प्रकाश शक्ति १३. असंकुचित विकासत्व शक्ति १४. अकार्यकारणत्व शक्ति १५. परिणम्य–परिणामक शक्ति १६. त्याग–उपादान शून्यत्व शक्ति १७. अगुरूलघुत्व शक्ति १८. उत्पाद–व्यय–ध्रुवत्व शक्ति १६. परिणाम शक्ति २०. अमूर्तत्व शक्ति आदि।

नोट : मुझ आत्मा अलग है, वीना शरीर अलग है–इसी की भांति निम्न वाक्यों पर भेदविज्ञान का अभ्यास करिए। यह मेरा मकान है, यह मेरा सोने का हार है, ये मेरे बच्चे हैं, ये मेरी गाड़ी है आदि।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० 23 से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1. सोमवार से शुक्रवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.१५ बजे तक
2. शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
3.✓ रविवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- <u>२६ मार्च को सम्पन्न</u> वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-२२ का पारितोषिक वितरण भी १४ मई दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-२४

दिनांक 9 जुलाई 2006 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

<u>पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है</u>

निज चैतन्य स्वभाव की सच्ची प्रतीति सो ज्ञान; और उस काल शरीरादि परद्रव्यों के राग का अभाव सो वैराग्य; ये ज्ञान और वैराग्य ही अनादि के दुःखी जीव को भगवान बना देते हैं, अतः हे भव्य ! बारह भावनाओं के चिंतवन द्वारा आत्मा और शरीरादि परद्रव्यों के सत्य स्वरूप का निश्चय करके, शरीरादि परद्रव्यों से विरक्त होकर, चैतन्यस्वरूप आत्मा का ही ज्ञान कर, उसी में रमणता कर।

वैराग्य की उत्पत्ति के लिये ज्ञानी आत्मा बारह भावनाओं का इस प्रकार चिंतवन करते हैं –

बारह भावना

अनित्य द्रव्य रूप करि सर्व थिर, परजय थिर है कौन।
द्रव्य दृष्टि आपा लखो, परजय नय करि गौन।।

अर्थ – द्रव्य की दृष्टि से देखा जाय तो सर्वजगत् स्थिर है, पर पर्याय–दृष्टि से कोई भी स्थिर नहीं है, अतः पर्यायार्थिक नय को गौण करके द्रव्य दृष्टि से एक आत्मानुभूति ही करने योग्य कार्य है।

अशरण शुद्धातम अरू पंच गुरू, जग में सरनौ दोय।
मोह उदय जिय के वृथा, आन कल्पना होय।।

अर्थ – इस विश्व में दो ही शरण हैं। निश्चय से तो निज शुद्धात्मा ही शरण है और व्यवहार से पंचपरमेष्ठी। पर मोह के कारण यह जीव अन्य पदार्थों को शरण मानता है।

संसार पर द्रव्यन तैं प्रीति जो, है संसार अबोध।
ताको फल गति चार में, भ्रमण कह्यो श्रुत शोध।।

अर्थ – निश्चय से शरीरादि पर–पदार्थों के प्रति मोह–राग–द्वेष भाव ही संसार है। इसी कारण जीव चारों गतियों में दुःख भोगता हुआ भ्रमण करता है।

एकत्व परमारथ तैं आतमा, एक रूप ही जोय।
कर्म निमित्त विकल्प घने, तिन नासे शिव होय।।

अर्थ – निश्चय से तो आत्मा एक ज्ञानस्वभावी ही है। कर्म के निमित्त की अपेक्षा कथन करने से अनेक विकल्पमय भी उसे कहा है। इन विकल्पों के नाश से ही मुक्ति प्राप्त होती है।

अन्यत्व अपने अपने सत्वकूँ, सर्व वस्तु विलसाय।
ऐसें चितवै जीव तब, परतैं ममत न थाय।।

अर्थ – प्रत्येक पदार्थ अपनी–अपनी सत्ता में ही विकास कर रहा है, कोई किसी का कर्ता–हर्ता नहीं है। जब जीव ऐसे चिंतवन करता है तो पर से ममत्व नहीं होता है।

अशुचि निर्मल अपनी आतमा, देह अपावन गेह।
जानि भव्य निज भाव को, यासों तजो सनेह।।

अर्थ – यह अपनी आत्मा तो निर्मल है पर यह शरीर महान अपवित्र है, अतः हे भव्य जीवों ! अपनी आत्मा के निर्मल स्वभाव को पहिचान कर इस अपवित्र, मलिन देह से स्नेह छोड़ों।

आस्रव आतम केवल ज्ञानमय, निश्चय–दृष्टि निहार।
सब विभाव परिणाममय, आस्रवभाव विडार।।

अर्थ – निश्चय दृष्टि से देखा जाये तो आत्मा केवल ज्ञानमय है। विभावभाव रूप परिणाम तो आस्रवभाव हैं, जो कि नाश करने योग्य है।

संवर निज स्वरूप में लीनता, निश्चय संवर जानि।
समिति गुप्ति संजम धरम, धरैं पाप की हानि।।

अर्थ – निश्चय से आत्मस्वरूप में लीन हो जाना ही संवर है। उसका कथन समिति, गुप्ति और संयम रूप से किया जाता है, जिसे धारण करने से पापों का नाश होता है।

निर्जरा संवरमय है आतमा, पूर्व कर्म झड़ जाय।
निज स्वरूप को पायकर, लोक शिखर जब थाय।।

अर्थ – ज्ञानस्वभावी आत्मा ही संवर (धर्म) मय है। उसके आश्रय से ही पूर्वोपार्जित कर्मों का नाश होता है और यह आत्मा अपने स्वभाव को प्राप्त करता है।

लोक लोक स्वरूप विचारिकें, आतम रूप निहार।
परमारथ व्यवहार गुणि, मिथ्याभाव निवारि।।

अर्थ – लोक (षट् द्रव्य) का स्वरूप विचार करके अपनी आत्मा में लीन होना चाहिये। निश्चय और व्यवहार को अच्छी तरह जानकर मिथ्यात्व भावों को दूर करना चाहिये।

बोधिदुर्लभ बोधि आपका भाव है, निश्चय दुर्लभ नाहिं।
भव में प्रापति कठिन हैं, यह व्यवहार कहाहिं।।

अर्थ – ज्ञान आत्मा का स्वभाव है, अतः वह निश्चय से दुर्लभ नहीं है। संसार में आत्मज्ञान को दुर्लभ तो व्यवहार नय से कहा गया है।

धर्म दर्शज्ञानमय चेतना, आतमधर्म बखानि।
दयाक्षमादिक रतनत्रय, यामें गर्भित जानि।।

अर्थ – आत्मा का स्वभाव ज्ञान–दर्शनमय है। दया, क्षमा आदि दशधर्म और रत्नत्रय सब इसमें ही गर्भित हो जाते हैं।

मेरा धाम

शुद्धातम है मेरा नाम, मात्र जानना मेरा काम।
मुक्तिपुरी है मेरा धाम, मिलता जहां पूर्ण विश्राम।।
जहां भूख का नाम नहीं है, जहां प्यास का काम नहीं है।
खांसी और जुखाम नहीं है, आधि व्याधि का नाम नहीं है।।
सत् शिव सुन्दर मेरा धाम, शुद्धातम है मेरा नाम।
मात्र जानना मेरा काम।।१।।
स्वपर भेद–विज्ञान करेंगे, निज आतम का ध्यान धरेंगे।
राग–द्वेष का त्याग करेंगे, चिदानन्द रस पान करेंगे।।
सब सुखदाता मेरा धाम, शुद्धातम है मेरा नाम।
मात्रा जानना मेरा काम।।२।।

प्र०१ निम्न प्रश्नों के उत्तर याद कीजिए –

१. विश्व २. विश्व की व्यवस्था ३. द्रव्य ४. गुण ५. पर्याय ६. द्रव्यों के नाम व संख्या ७. छहों द्रव्यों की परिभाषा ८. छहों द्रव्यों की सत्ता ९. पुद्गल के भेद १०. परमाणु ११. स्कंध १२. स्कंध के भेद १३. पुद्गल की २७ पर्यायें, १४. तीन प्रकार का बंध व परिभाषा १५. गुणों के भेद

१६. सामान्य गुण नाम व संख्या १७. विशेष गुण १८. सात तत्व के नाम व परिभाषा १६. तुम कौन हो और कौन नहीं हो २०. श्री समयसार गाथा ३७३ से ३८२ व ३६० से ४०४ का मर्म।

प्र०२. निम्न भजन याद कीजिए –

१. ज्ञानी जीव निवार भरम तम, वस्तुस्वरूप..........

२. आतम रूप अनुपम अद्‌भुत, याहि लखैं ....

वीना शरीर में रहा हुआ वीना शरीर से सर्वथा भिन्न मुझ आत्मा अनन्त शक्तियों से परिपूर्ण है–

१. जीवत्व शक्ति २. चिति शक्ति ३. दृशि शक्ति ४. ज्ञान शक्ति ५. सुख शक्ति ६. वीर्य शक्ति ७. प्रभुत्व शक्ति ८. विभुत्व शक्ति ६. सर्वदर्शित्व शक्ति १०. सर्वज्ञत्व शक्ति ११. स्वच्छत्व शक्ति १२. प्रकाश शक्ति १३. असंकुचित विकासत्व शक्ति १४. अकार्यकारणत्व शक्ति १५. परिणम्य–परिणामक शक्ति १६. त्याग–उपादान शून्यत्व शक्ति १७. अगुरूलघुत्व शक्ति १८. उत्पाद–व्यय–ध्रुवत्व शक्ति १६. परिणाम शक्ति २०. अमूर्तत्व शक्ति२१. अकर्तृत्व शक्ति, २२. अभोक्तृत्व शक्ति २३. निष्क्रियत्व शक्ति २४. नियत प्रदेशत्व २५. स्वधर्मव्यापक शक्ति, २६. साधारण, असाधारण, साधारण–असाधारण धर्मत्व शक्ति २७. अनन्तधर्मत्व शक्ति २८. विरूद्धधर्मत्व शक्ति २६. तत्व शक्ति ३०. अतत्व शक्ति ३१. एकत्व शक्ति ३२. अनेकत्व शक्ति।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० 24 से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1. सोमवार से शुक्रवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.१५ बजे तक
2. शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
3.✓ रविवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसर किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- १४ मई को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-२२ का पारितोषिक वितरण भी ६ जुलाई दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन न0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-२५

दिनांक 17 सितम्बर 2006 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

निज चैतन्य आत्मा को शरीर नहीं है, निज चैतन्य स्वभाव को भव नहीं है। अनादिकाल से जीव ने अनन्त भवों में परिभ्रमण किया, जीव के अनन्त गुण हीनरूप परिणमित हुये, फिर भी चैतन्य स्वरूप आत्मा और ज्ञान–आनन्द आदि गुण ज्यों के त्यों स्वयमेव सुरक्षित रहे हैं, उनकी सुरक्षा नहीं करनी पड़ती। ऐसे अद्‌भुत चैतन्यस्वरूप आत्मा का अनुभव करना ही सुखी होने का एकमात्र उपाय है।

आत्मा की ४७ शक्तियां

(श्री अमृतचन्द्राचार्य कृत)

१. जीवत्व शक्ति – जीवत्व से ही मुझ आत्मा, जीता सदा मरता नहीं।
२. चिति शक्ति – चितिशक्ति से चेतन रहे, यह जड़ कभी होता नहीं।
३. दृशि शक्ति – भेदों रहित सामान्य सत्ता, नित दिखे दृशिशक्ति से।
४. ज्ञान शक्ति – हर वस्तु को सविशेष जाने, ज्ञानशक्ति सदैव से।
५. सुख शक्ति – मुझ आत्मा सुखशक्ति से, सुखरूप रहता सर्वदा।
६. वीर्य शक्ति – निज द्रव्य–गुण–पर्याय को, निज वीर्य से रचता सदा।
७. प्रभुत्व शक्ति – इसका प्रताप न होय खण्डित, अजव प्रभुता आत्म की।
८. विभुत्व शक्ति – सब गुण सभी में व्यापते, यह आत्म–शक्ति सदैव की।

९. सर्वदर्शित्व शक्ति – सब लोक और अलोक की, सामान्य सत्ता देखता।
१०. सर्वज्ञत्व शक्ति – हर द्रव्य–गुण पर्याय को, प्रत्यक्ष युगपत् जानता।
११. स्वच्छत्व शक्ति – सब ज्ञेय झलकें ज्ञान में, ऐसी रहे नित स्वच्छता।
१२. प्रकाश शक्ति – नित स्वयम् से ही स्वयम् को, प्रत्यक्ष कर आस्वादता।

१३. असंकुचितविकासत्व शक्ति –
संकोच बिन पर्याय में, परिपूर्ण रीति विकास हो।

१४. अकार्यकारणत्व शक्ति –
पर से न मुझ में कार्य हो, पर–कार्य का कारण न हो।

१५. परिणम्य परिणामकत्व शक्ति –
जाने स्व–पर को व स्व–पर के जानने में आये भी।

१६. त्यागोपादान शून्यत्व शक्ति –
नहिं त्याग करता कुछ कभी, नहिं ग्रहण करता कुछ कभी।

१७. अगुरूलघुत्व शक्ति –घटता न बढ़ता आत्मा, इक रूप रहता नित्य रे।

१८. उत्पाद व्यय–ध्रुवत्व शक्ति –
हर समय उपजे नष्ट हो, फिर भी सदा ध्रुवता धरे।

१९. परिणाम शक्ति – उत्पाद–व्यय ध्रुवता सहित, नित परिणमित हो आत्मा।
२०. अमूर्तत्व शक्ति – स्पर्श, रस, वर्णादि बिन, रहता अरूपी आत्मा।।

प्र०१ निम्न प्रश्नों के उत्तर याद कीजिए –

१. विश्व २. विश्व की व्यवस्था ३. द्रव्य ४. गुण ५. पर्याय ६. द्रव्यों के नाम व संख्या ७. छहों द्रव्यों की परिभाषा ८. छहों द्रव्यों की सत्ता ९. पुद्गल के भेद १०. परमाणु ११. स्कंध १२. स्कंध के भेद १३. पुद्गल की २७ पर्यायें, १४. तीन प्रकार का बंध व परिभाषा १५. गुणों के भेद १६. सामान्य गुण नाम व संख्या १७. विशेष गुण १८. सात तत्व के नाम व परिभाषा १९. तुम कौन हो और कौन नहीं हो २०. श्री समयसार गाथा ३७३ से ३८२ व ३९० से ४०४ का मर्म।

प्र०२. निम्न भजन याद कीजिए –

१. ज्ञानी जीव निवार भरम तम, वस्तुस्वरूप..........
२. आतम रूप अनुपम अद्भुत, याहि लखैं ....

वीना शरीर में रहा हुआ वीना शरीर से सर्वथा भिन्न मुझ आत्मा अनन्त शक्तियों से परिपूर्ण है–

३३. भाव शक्ति ३४. अभाव शक्ति ३५. भाव–अभाव शक्ति ३६. अभाव–भाव शक्ति ३७. भाव–भाव ३८. अभाव–अभाव शक्ति ३९. भाव शक्ति ४०.क्रिया शक्ति ४१. कर्म शक्ति ४२. कर्तृत्व शक्ति ४३. करणत्व शक्ति ४४. संप्रदान शक्ति ४५. अपादान शक्ति ४६. अधिकरण शक्ति ४७. स्व–स्वामी सम्बन्ध शक्ति।

चार मंगल

१. चत्तारि मंगलं, अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णतो धम्मो मंगलं।

अर्थ : इस लोक में चार मंगल हैं। अरहंत भगवान मंगल हैं, सिद्ध भगवान मंगल हैं, साधु (आचार्य, उपाध्याय और साधु) मंगल हैं तथा केवली भगवान द्वारा बताया गया वीतराग धर्म मंगल है।

२. चत्तारि लोगुत्तमा, अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा।

अर्थ : लोक में चार उत्तम हैं। अरहंत भगवान उत्तम हैं, सिद्ध भगवान उत्तम हैं, साधु (आचार्य, उपाध्याय और साधु) उत्तम हैं तथा केवली भगवान द्वारा बताया हुआ वीतराग धर्म उत्तम है।

३. चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहंता सरणं पव्वज्जामि, सिद्धा सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

अर्थः मैं चारों की शरण में जाता हूँ। अरहंत भगवान की शरण में जाता हूँ, सिद्ध भगवान की शरण में जाता हूँ, साधुओं (आचार्य, उपाध्याय और साधु) की शरण में जाता हूँ और केवली भगवान द्वारा बताये गये वीतराग धर्म की शरण में जाता हूँ।

संकल्प : 'भगवान बनेंगे'

सम्यग्दर्शन प्राप्त करेंगे।
सप्त भयों से नहीं डरेंगे।।
सप्त तत्व का ज्ञान करेंगे।
जीव–अजीव पहिचान करेंगे।।
स्व–पर भेदविज्ञान करेंगे।
निजानन्द का पान करेंगे।।
पंच प्रभु का ध्यान धरेंगे।
गुरूजन का सम्मान करेंगे।।
जिनवाणी का श्रवण करेंगे।
पठन करेंगे, मनन करेंगे।।
रात्रि भोजन नहीं करेंगे।
बिना छना जल काम न लेंगे।।
निज स्वभाव को प्राप्त करेंगे।
मोह भाव का नाश करेंगे।।
राग द्वेष का त्याग करेंगे।
और अधिक क्या? बोलो बालक!
भक्त नहीं भगवान बनेंगे।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० 25 से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.१५ बजे तक
2.	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
3. ✓	रविवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- <u>६ जुलाई को सम्पन्न</u> वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-२४ का पारितोषिक वितरण भी १७ सितम्बर दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–२७

दिनांक 7 जनवरी 2007 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

<u>पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है</u>

हे आत्मा ! जिस प्रकार कमल कीचड़ और पानी से अलग ही रहता है उसी प्रकार चैतन्य आत्मा शरीर में रहता हुआ भी शरीर से सर्वथा भिन्न ही रहता है। आत्मा अतीत काल में शरीर के साथ एकमेक नहीं था, वर्तमान में नहीं है और भविष्य में नहीं होगा। जन्म–मरण से रहित, अनादि अनन्त, एक रूप चैतन्य आत्मा तो त्रिकाल मुक्तस्वरूप ही है–ऐसे निज आत्मा के अस्तित्व को पहचानने से जन्म मरण मिट जाते है, सिद्ध पद की प्राप्ति होती है।

प्र०१. अज्ञानी अपना जन्म और मरण किससे मानता है ?

उ० शरीर की उत्पत्ति से जीव का जन्म और शरीर के वियोग से जीव का मरण मानता है।

प्र०२. शरीर की उत्पत्ति से जीव का जन्म और शरीर के वियोग से जीव का मरण–ऐसी मान्यता को छहढाला की प्रथम ढाल में क्या बताया है ?

उ० 'मोह महामद पियो अनादि, भूल आपको भरमत वादि।' अर्थात वीतराग विज्ञानता रूप निज शुद्ध आत्मा को भूलकर शरीर की उत्पत्ति से जीव का जन्म और शरीर के वियोग से जीव का मरण–ऐसी मान्यता को मोहरूपी महामदिरापान बताया है।

प्र०३. शरीर की उत्पत्ति से जीव का जन्म और शरीर के वियोग से जीव का मरण–ऐसी मान्यता को छहढाला की प्रथम ढाल में मोहरूपी महामदिरापान क्यों बताया गया है ?

उ० (१) तराजू के एक पलड़े में स्वयं वीतराग विज्ञानतारूप एक ज्ञायक शुद्धात्मा। (२) तराजू के दूसरे पलड़े में शरीर की उत्पत्ति व मरणरूप

अनन्त पुद्गल परमाणुओं का स्कंध। (३) इन सब में एकत्व बुद्धि होने से शरीर की उत्पत्ति से जीव का जन्म और शरीर के वियोग से जीव का मरण–ऐसी मान्यता को मोहरूपी महामदिरापान बताया है।

प्र०४. इस मोहरूपी महामदिरापान का फल छहढाला की प्रथम ढाल में क्या बताया गया है ?

उ० शरीर की उत्पत्ति से जीव का जन्म और शरीर के वियोग से जीव का मरण–ऐसी मोहरूपी महामदिरापान का फल चारों गतियों में घूमकर निगोद जाना बताया है।

प्र०५. शरीर की उत्पत्ति से जीव का जन्म और शरीर के वियोग से जीव का मरण–ऐसी मोहरूपी महामदिरापान का फल छहढाला की प्रथम ढाल में चारों गतियों में घूमकर निगोद जाना क्यों बताया है ?

उ० (१) स्वयं वीतराग विज्ञानतारूप जन्म मरण रहित, अनादिअनन्त एक ज्ञायक शुद्ध आत्मा। (२) शरीर की उत्पत्ति और वियोग जो अनन्त पुद्गल परमाणुओं का कार्य है–एक मात्र मेरे ज्ञान का ज्ञेय है। (३) परन्तु ऐसा न मानकर, शरीर की उत्पत्ति से जीव का जन्म और शरीर के वियोग से जीव का मरण होना मानता है–इसलिये इस खोटी मान्यता का फल निगोद बताया है।

प्र०६. शरीर की उत्पत्ति से जीव का जन्म और शरीर के वियोग से जीव का मरण–इस निगोद बुद्धि के अभाव का उपाय छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?

उ० चेतन को है उपयोगरूप, बिनमूरत चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल।।

(१) मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीवतत्व हूँ (२) मेरा कार्य ज्ञाता द्रष्टा है। (३) आँख–नाक–कान औदारिक आदि शरीरोंरूप मेरी मूर्ति नही है। (४) चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है। (५) सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है। (६) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्त जीव द्रव्य हैं, अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एकेक द्रव्य हैं, लोकप्रमाण असंख्यात काल द्रव्य हैं– इन सब द्रव्यों से मुझ आत्मा का किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का कर्ता–भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि इन सब द्रव्यों का और मुझ निज आत्मा का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव पृथक–पृथक है–ऐसा जानकर ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी निज जीव तत्व का आश्रय ले, तो शरीर की अनुकूलता से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मैं दुःखी–ऐसी निगोद बुद्धि का अभाव तुरन्त हो जाता है।

आत्मा की ४७ शक्तियां

(श्री अमृतचन्द्राचार्य कृत)

३३. भाव शक्ति – इस काल जो वरते दशा, अनिवार्य रहती है सदा।
३४. अभाव शक्ति – जिस काल जो वरते दशा, तब अन्य नहिं होती कदा।।
३५. भाव–अभाव शक्ति– जो भी अवस्था वर्तती, उसका अवश्य विनाश हो।
३६. अभाव–भाव शक्ति– इस काल जो वरते नही, आगे वही उत्पन्न हो।।
३७. भाव–भाव शक्ति – सामान्य और विशेषमय, इकरूप रहता सर्वदा।।
३८. अभाव अभाव शक्ति – पर का सदैव अभाव है, एवम् अभाव रहे सदा।।
३९. भाव शक्ति – पर कारकों से रहित नित, निज भावमय परिणति करे।
४०. क्रिया शक्ति – बस स्वालंबन से सदा, निर्मल दशाओं को करे।
४१. कर्म शक्ति – निर्मल दशाओं रूप हो, यह आत्मा का कर्म है।
४२. कर्तृत्व शक्ति – निर्मल दशाओं को करे, यह आत्मा का धर्म है।।
४३. करणत्व शक्ति – साधे स्वयम् से स्वयम् को, अवएव साधन है यही।
४४. संप्रदान शक्ति – निर्मल दशा उत्पन्न कर, देता स्वयम् को स्वयम् ही।।
४५. अपादान शक्ति – ध्रुव आत्मा में से सदा, निर्मल दशा उत्पन्न हो।
४६. अधिकरण शक्ति – रत्नत्रयी निजधर्म का, आधार भी यह स्वयम् हो।।
४७. सम्बन्ध शक्ति – नहिं अन्य कोई जीव का, स्वामी स्वयम् का स्वयम् है।
यह कथन सैंतालीस का, पर, शक्ति तो अनंत है।।

प्र०७. निम्न प्रश्नों के उत्तर याद कीजिए –

१. विश्व २. विश्व की व्यवस्था ३. द्रव्य ४. गुण ५. पर्याय ६. द्रव्यों के नाम व संख्या ७. छहों द्रव्यों की परिभाषा ८. छहों द्रव्यों की सत्ता ९. पुद्गल के भेद १०. परमाणु ११. स्कंध १२. स्कंध के भेद १३. पुद्गल की २७ पर्यायें १४. तीन प्रकार का बंध व परिभाषा १५. गुणों के भेद १६. सामान्य गुण नाम व संख्या १७. विशेष गुण १८. सात तत्व के नाम व परिभाषा १९. तुम कौन हो और कौन नहीं हो २०. श्री समयसार गाथा ३७३ से ३८२ व ३९० से ४०४ का कर्म।

मंगल आराधना

अरिहंतों को नमस्कार है, सिद्धों को सादर वंदन।
आचार्यों को नमस्कार है, उपाध्याय को है वंदन।।
और लोक के सर्व साधुओं को, है विनय सहित वंदन।
पंच परमेष्ठी भगवन्तों को, बार–बार मेरा वंदन।।

अपना दुःख दूर करने के लिए आपा–परका ज्ञान अवश्य चाहिये।

१. मैं जीव हूँ। शरीर अजीव है।
२. मुझ में ज्ञान है। शरीर में ज्ञान नहीं है।
३. मैं ज्ञान से जानता हूँ। शरीर कुछ नहीं जानता है।
४. मुझ में सुख है। शरीर में सुख नहीं है।
५. मैं और शरीर द्रव्य–गुण–पर्याय से भिन्न हैं।
६. जीव जुदा पुद्गल जुदा – यही तत्त्वों का सार है।

– भजन –

अपने में अपनापन जब होगा, होगा तब पर में परायापन
और नहीं कुछ मात्र इसी का नाम है भाई जैन धर्म।।टेक।।
न हम रागी, न हम द्वेषी, दोष रहित गुणधाम हैं हम,
न हम देव–पशु–नर–नारक, केवल आतमराम हैं हम,
हम चेतन ज्योति, स्वरूप निरन्जन, करले निरन्जन मेंही अपनापन।।१।।
देह है रूपी, देह है नश्वर, अरूपी, अमर गुण निधान हैं हम,
आदि न अन्त, अनादिनिधन हम, अमृत सुख की खान है हम,
अजर अमर अविनाशी हैं हम, करले अमर में ही अपनापन।।२।।
निज चेतन पद को भूलके, चेतन चौरासी के चक्कर काटे,
विषय भोगों में बीता समय, फिर हाथ में वापस न आये,
आया सुअवसर, चेत रे चेतन, करले चेतन में ही अपनापन।।३।।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० 27 से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.३० बजे तक
2.	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
3. ✓	रविवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- १६ नवम्बर को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–२६ का पारितोषिक वितरण भी ७ जनवरी २००७ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–२८

दिनांक 15 अप्रैल 2007 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

हे आत्मा ! शरीर, धन परिवार वह कहीं संसार नहीं है। अपनी पर्याय में जो मोह–राग–द्वेषरूप विभाव भाव हैं वही संसार है। यदि शरीर, धन आदि संसार हों तो मृत्यु होने पर यह शरीर, धन आदि सब यहीं पड़े रह जायेंगे, तो क्या तेरा संसार मिट जायेगा और मोक्ष हो जायेगा? भाई ! शरीर–धन आदि तो संसार हैं ही नहीं। अपने ज्ञानस्वरूप की महिमा से च्युत होकर परके कर्तृत्व का भाव अर्थात द्रव्य–गुण–पर्याय सम्बन्धी जो मूढ़तारूप परिणाम है वहीं संसार है।

श्री समयसार गाथा २३७ से २७० तक का रहस्य

द्रव्य सम्बन्धी अध्यवसान

मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूं – इस बात का पता न होने से, मैं वीना हूं और हम चार हैं –

१. –ऐसा अनादिकाल का श्रद्धान अगृहीत मिथ्यादर्शन है।
२. –ऐसा अनादिकाल का ज्ञान अगृहीत मिथ्याज्ञान है।
३. –ऐसा अनादिकाल का आचरण अगृहीत मिथ्याचारित्र है।
४. –ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ श्रद्धान गृहीत मिथ्यादर्शन है।
५. –ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ ज्ञान गृहीत मिथ्याज्ञान है।
६. –ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ आचरण गृहीत मिथ्याचारित्र है।

इस अध्यवसान के अभाव का उपाय

वीना आदि चार से सर्वथा भिन्न, मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूं –

१. –ऐसा जानकर, निज आत्मा का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है।
२. –ऐसा जानकर, निज आत्मा का ज्ञान सम्यकज्ञान हैं।
३. –ऐसा जानकर निज आत्मा में आचरण सम्यकचारित्र हैं।

गुण सम्बन्धी अध्यवसान

ज्ञान मुझ आत्मा के ज्ञान गुण में से आता है और सुख मुझ आत्मा के सुख गुण में आता है—इस बात का पता न होने से ज्ञेयों से ज्ञान होता है, इन्द्रियों से ज्ञान होता है और पांच इन्द्रियों के विषयों से सुख मिलता है।

—ऐसा अनादिकाल का श्रद्धान अगृहीत मिथ्यादर्शन है।
—ऐसा अनादिकाल का ज्ञान अगृहीत मिथ्याज्ञान है।
—ऐसा अनादिकाल का आचरण अगृहीत मिथ्याचारित्र है।
—ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ श्रद्धान गृहीत मिथ्यादर्शन है।
—ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ ज्ञान गृहीत मिथ्याज्ञान है।
—ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ आचरण गृहीत मिथ्याचारित्र है।

इस अध्यवसान के अभाव का उपाय

ज्ञेयों से, इन्द्रियों से और पांचों इन्द्रियों के विषयों से सर्वथा भिन्न ज्ञान मुझ आत्मा के ज्ञानगुण में से आता है और सुख मुझ आत्मा के सुखगुण में से आता है –

१. —ऐसा जानकर ज्ञानस्वरूप सुखस्वरूप निजात्मा का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है।
२. —ऐसा जानकर ज्ञानस्वरूप सुखस्वरूप निजात्मा का ज्ञान सम्यग्ज्ञान है।
३. —ऐसा जानकर ज्ञानस्वरूप सुखस्वरूप निजात्मा में आचरण सम्यक्चारित्र है।

पर्याय सम्बन्धी अध्यवसान

मुझ आत्मा का कार्य ज्ञाता–दृष्टा है— इस बात का पता न होने से वीना आदि हम चार उठते–बैठते, खाते–पीते हैं –

१. —ऐसा अनादिकाल का श्रद्धान अगृहीत मिथ्यादर्शन है।
२. —ऐसा अनादिकाल का ज्ञान अगृहीत मिथ्याज्ञान है।
३. —ऐसा अनादिकाल का आचरण अगृहीत मिथ्याचारित्र है।
४. —ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ श्रद्धान गृहीत मिथ्यादर्शन है।
५. —ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ ज्ञान गृहीत मिथ्याज्ञान है।
६. —ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ आचरण गृहीत मिथ्याचारित्र है।

इस अध्यवसान के अभाव का उपाय

वीना आदि चार के उठने–बैठने, खाने–पीने से सर्वथा भिन्न मुझ आत्मा का कार्य ज्ञाता–दृष्टा है –

१. —ऐसा जानकर ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है।
२. —ऐसा जानकर ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव का ज्ञान सम्यग्ज्ञान है।
३. —ऐसा जानकर ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव में आचरण सम्यक्चारित्र है।

आत्मा की ४७ शक्तिया

(श्री अमृतचन्द्राचार्य कृत)

मुझ आत्मस्वभाव आपूर्णम् है अर्थात समस्तपने परिपूर्ण है।

१. जीवत्व शक्ति
२. चिति शक्ति
३. दृशि शक्ति
४. ज्ञान शक्ति
५. सुख शक्ति
६. वीर्य शक्ति
७. प्रभुत्व शक्ति
८. विभुत्व शक्ति
९. सर्वदर्शित्व शक्ति
१०. सर्वज्ञत्व शक्ति
११. स्वच्छत्व शक्ति
१२. प्रकाश शक्ति
१३. आसंकुचिविकासत्व शक्ति
१४. अकार्यकारणत्व शक्ति
१५. परिणम्यपरिणामक शक्ति
१६. त्यागउपादानशून्यत्व शक्ति
१७. अगुरूलघुत्व शक्ति
१८. उत्पादव्यय ध्रुवत्व शक्ति
१९. परिणाम शक्ति
२०. अमूर्तत्व शक्ति
२१. अकर्तृत्व शक्ति
२२. अभोक्तृत्व शक्ति
२३. निष्क्रियत्व शक्ति
२४. नियतप्रदेशत्व शक्ति
२५. स्वधर्मव्यापक शक्ति
२६. साधारणअसाधारण असाधारणसाधारण धर्मत्व शक्ति
२७. अनन्तधर्मत्व शक्ति
२८. विरूद्धधर्मत्व शक्ति
२९. तत्व शक्ति
३०. अतत्व शक्ति
३१. एकत्व शक्ति
३२. अनेकत्व शक्ति
३३. भाव शक्ति
३४. अभाव शक्ति
३५. भाव अभाव शक्ति
३६. अभाव भाव शक्ति
३७. भाव भाव शक्ति
३८. अभाव अभाव शक्ति
३९. भाव शक्ति
४०. क्रिया शक्ति
४१. कर्म शक्ति
४२. कर्तृत्व शक्ति
४३. करण शक्ति
४४. सम्प्रदान शक्ति
४५. अपादान शक्ति
४६. अधिकरण शक्ति
४७. स्व–स्वामी सम्बन्ध शक्ति............

आदि–२ अनन्त शक्तियों से मुझ आत्मा परिपूर्ण है। जिसके ज्ञान में ऐसा अनन्त शक्ति सम्पन्न, शाश्वत, भगवान आत्मा बसा वह धन्य है।

प्र०. निम्न प्रश्नों के उत्तर याद कीजिए –
१. विश्व २. विश्व की व्यवस्था ३. द्रव्य ४. गुण ५. पर्याय ६. द्रव्यों के नाम व संख्या ७. छहों द्रव्यों की परिभाषा ८. छहों द्रव्यों की सत्ता ९. पुद्गल के भेद १०. परमाणु ११. स्कंध १२. स्कंध के भेद १३. पुद्गल की २७ पर्यायें १४. तीन प्रकार का बंध व परिभाषा १५. गुणों के भेद १६. सामान्य गुण नाम व संख्या १७. विशेष गुण १८. सात तत्व के नाम व परिभाषा १९. तुम कौन हो और कौन नहीं हो २०. श्री समयसार गाथा ३७३ से ३८२ व ३९० से ४०४ का कर्म।

भजन

तीन लोक और तीन काल में है वीतराग विज्ञान धरम।
जन्म मरण का चक्र मिटा दे, जैन धर्म ही है उत्तम।।
देह से पूजा भक्ति हो, शब्दों से हो प्रभु का वंदन।
उपवास से सूखे काया, न पुण्य, पाप और न ही धरम।।
दुःख अपना उपचार देह का, है यही मिथ्यादर्शन।
गूंज रहा इक जैन धर्म है खुद की ही पहचान धरम।।१।।

दया दान पूजा भक्ति के भावों से बस पुण्य फला
शुभ में संवर के भरम से वीतराग विज्ञान टला।।
बेड़ी लोहे की सोने की, धरम है दोनों का बंधन।
गूंज रहा इक जैन धर्म है पुण्य का फल संसार भ्रमण।।२।।

शास्त्र पठन है धर्म नहीं, हो ग्यारह अंग का ज्ञान भले।
खुद को जाने सब कुछ जाने, सूत्रों को न जाने भले।।
स्वयं को पढ़ शिवभूति मुनि भये अरिहंत सिद्ध परमातम।
गूंज रहा इक जैन धर्म है मात्र 'स्व' का पठन धरम।।३।।

विषयों में उलझे उपयोग को अब निज घर में लाना है।
जिसमें मेरा ज्ञान है सुख है वो ही मेरा ठिकाना है।।
ज्ञानन्द स्वभावी देखा टूट गये तत्काल भरम।।
आतम को है उपयोग रूप बिन्मूरत चिन्मूरत अनुपम।।४।।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० 28 से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1. सोमवार से शुक्रवार कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.१५ से १०.३० बजे तक
2. शनिवार कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
3. ✓ रविवार कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- ७ जनवरी को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-२७ का पारितोषिक वितरण भी १५ अप्रैल २००७ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31- राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-२६

दिनांक 15 जुलाई 2007 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

आत्मा और शरीर आकाश के एक क्षेत्र में रहते हैं परन्तु दोनों सर्वथा अलग-अलग हैं। आचार्य भगवान कहते हैं -प्रकाश और अंधकार की भांति आत्मा और शरीर कभी भी एकरूप नहीं होते-ऐसा सर्वज्ञ भगवान ने देखा है ; इसलिये तू सर्व प्रकार से प्रसन्न हो, सावधान हो, और चैतन्यस्वरूप आत्मा को ही 'यह मैं हूँ' ऐसा अनुभव कर !

प्र०१. भगवान महावीर ने भगवान बनने के लिये क्या किया ?

उ० भगवान महावीर ने-शरीरादि अजीव तत्व हैं, जानने योग्य हैं, अर्थात् उनसे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है-ऐसा जानकर अपने जीव-तत्व का आश्रय लेकर, आस्रव-बंध अर्थात् मोह-राग-द्वेष को नाश करके, संवर-निर्जरा अर्थात सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र प्रकट करके क्रम से मोक्ष प्राप्त किया।

प्र० मन्दिर की बेदी में विराजमान पूर्ण वीतरागी और सर्वज्ञ भगवान क्या कर रहे हैं ?

उ० भगवान अपनी आत्मा में पूर्णलीन अतीन्द्रिय सुख का भोग कर रहे हैं।

प्र० मन्दिर की बेदी में विराजमान भगवान हमें क्या संदेश दे रहे हैं ?

उ० 'मैंने शरीरादि परद्रव्यों से सर्वथा भिन्न अपनी आत्मा का स्वरूप समझकर अपनी आत्मा में पूर्ण लीनता करके, इस परमातम पद को प्राप्त किया, तू भी अपनी आत्मा का स्वरूप समझकर स्वयं में लीन हो जा' - यह संदेश भगवान दे रहे हैं।

प्र० मुझ आत्मा का स्वरूप कैसा है ?

उ० चेतन को है उपयोग रूप बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल इनतैं न्यारी है जीव चाल।

१. (चेतन को है उपयोग रूप) मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ और मेरा कार्य ज्ञाता दृष्टा है।

... कर्म, औदारिक आदि शरीररूप मेरा मूर्त नहीं है।

३. (चिन्मूरत) चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।
४. (अनूप) सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।
५. (पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल इनतें न्यारी है जीव चाल) मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म– अधर्म–आकाश एक एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं–इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। (छहढाला की दूसरी ढाल से)

प्र०२. श्री कुन्दकुन्दाचार्य ने संसार परिभ्रमण का कारण क्या बताया है ?

उ०१. श्री कुन्दकुन्दाचार्य ने श्री प्रवचनसार गाथा १६० में कहा है–जो देह–धनादिक में यह मैं हूं और यह मेरा है अर्थात 'शरीर है सो मैं हूँ' ऐसी ममता को नहीं छोड़ता वह संसार में परिभ्रमण करता है।

प्र० अनादिकाल से जीव को कैसा श्रद्धान है ?

उ० श्री मोक्षमार्गप्रकाशक पृष्ठ ८० पर कहते हैं –
जीव अनादिकाल से अनेक शरीर धारण करता है, पूर्व का शरीर छोड़ता है नवीन धारण करता है; वहां एक तो स्वयं आत्मा–जीव द्रव्य और अनन्त पुद्गल परमाणुमय शरीर–इन दोनों के संयोगरूप मनुष्य–तिर्यंचादि अनेक अवस्थायें होती हैं, उन सब में 'यह मैं हूँ' ऐसी अहंबुद्धि करता है, आत्मा और शरीर–इन दोनों में मैं कौन हूँ और मैं कौन नहीं हूँ – ऐसा भेद नहीं कर पाता, दोनों को एक मानता है।

प्र०३. आत्मा और शरीर को एक मानने का फल क्या है ?

उ० आत्मा और शरीर को एक मानना ही मिथ्यात्व है जिसका फल अनन्त संसार है।

प्र०४. हमें अनन्त संसार में नहीं भटकना है हमें आत्मा और शरीर की भिन्नता कैसे भासित हो ?

उ० आत्मा और शरीर के पृथक–पृथक लक्षणों से –
१. मुझ आत्मा चैतन्य है और शरीर जड़–मिट्टी है।
२. मुझ आत्मा अरूपी है और शरीर रूपी है।
३. मुझ आत्मा असंख्यात प्रदेशी है और शरीर में एक–एक प्रदेशी अनंत परमाणु हैं।
४. मुझ आत्मा का एक आकार है और शरीर में अनन्त परमाणु हैं अतः शरीर के अनन्त आकार है।

प्र०५. मुझ आत्मा का शरीर से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है– इस ... अपने अनुमान से कैसे जानें ?

उ० पिछले जन्म का शरीर व संयोग साथ आये नहीं, वर्तमान का शरीर व धन आदि साथ जायेंगे नहीं–अतः सिद्ध होता है कि इस समय भी शरीर व धनादि से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

प्र०६. आचार्यकल्प पं० टोडरमल जी ने आत्मा और शरीर के भिन्न भिन्न लक्षण क्या बतायें हैं ?

उ० श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ २३ पर कहा है– वहां–
१. मुझ जीवद्रव्य तो देखने जानने रूप चेतना गुण का धारक है।
२. मुझ जीवद्रव्य इन्द्रियगम्य न होने योग्य अमूर्तिक है।
३. मुझ जीवद्रव्य संकोचविस्तार शक्तिसहित असंख्यातप्रदेशी एक द्रव्य है तथा –
४. कर्म और शरीर चेतनागुण रहित जड़ है।
५. कर्म और शरीर मूर्तिक है।
६. कर्म और शरीर अनंत पुद्गलपरमाणुओं का पिण्ड हैं, इसलिए एक द्रव्य नहीं, अनेक द्रव्य हैं।

मुझ जीव, कर्म व शरीर का अनादि से सम्बन्ध है–तो भी
७. मुझ जीव का कोई प्रदेश कर्म व शरीररूप नहीं होता।
८. कर्म व शरीर का कोई परमाणु मुझ जीवरूप नहीं होता।
९. अपने–अपने लक्षण को धारण किये भिन्न भिन्न ही रहते हैं। अतः
१०. मुझ जीव, कर्म व शरीर के इस बंधान में कोई किसी को करता तो है नहीं।
११. जब तक बंधान रहे तब तक साथ रहें, बिछुड़े नहीं
१२. और कारण–कार्यपना (निमित्त–नैमित्तिकपना) उनके बना रहे; इतना ही यहां बंधान जानना।

इसलिये अमूर्तिक निज आत्मा और मूर्तिक कर्म व शरीर के एक बंधान होने पर भी, कुछ भी सम्बन्ध नहीं है।

श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ३८ पर कहा है –

आत्मा – अमूर्तिक प्रदेशों का पुंज, प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी, अनादिनिधन वस्तु मुझ आत्मा है।

शरीर – मूर्तिक पुद्गल द्रव्यों का पिण्ड, प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों से रहित, स्पर्श–रस–गंध–वर्ण सहित, नवीन जिनका संयोग हुआ है ऐसे शरीरादि पुद्गल पर हैं।

प्र०. शरीर से भिन्न अपनी पहिचान होने पर धर्म किस प्रकार हो जाता है?

उ० 'मैं आत्मा हूँ, मुझमें ज्ञान है, मैं ज्ञान से जानता हूँ। शरीरादि जड़ हैं,

शरीर में ज्ञान नहीं है, शरीर कुछ जानता नहीं है–ऐसा निर्णय करने पर अपनी ज्ञान–दर्शन की पर्याय, शरीरादि परद्रव्यों से हटकर, निज आत्मा में एकाग्र होती है, यही सम्यग्दर्शन है और सम्यग्दर्शन ही धर्म का प्रारम्भ है।

श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार की गाथा २ में लिखा है –

'धर्म तो आत्मा का स्वभाव है। शरीरादि परद्रव्यों में आत्मबुद्धि छोड़कर अपनी ज्ञानस्वभावी आत्मा का श्रद्धान, ज्ञान और आचरण ही धर्म है।'

प्र० आत्मा की ४७ शक्तियाँ व विश्व आदि सभी प्रश्नों के उत्तर याद कीजिए।

भजन

स्वास स्वास में सुमिरन करले, करले आतम ज्ञान रे।
न जाने किस स्वास में बाबा, मिल जायें भगवान रे।।टेक।।
अनादिकाल से भूला चेतन, निज स्वरूप का ज्ञान रे।
जीव देह को एक गिने बस, इससे तू हैरान रे।।
शुभ को शुद्ध मानकर प्राणी, भ्रमत चर्तुगति माहि रे।।१।।
कभी नरक में हुआ नारकी, कभी स्वर्ग में देव रे।
कभी गया तिर्यंच गति में, कभी मनुज पर्याय रे।।
चौरासी में स्वांग धरे पर, किया न भेद विज्ञान रे।।२।।
भारी भूल भई अब सोचो, सतगुरू रहे जगाय रे।
यह अवसर यदि चूक गया तो, बार–बार पछताय रे।।
सत को समझो, समकित धरलो, होगा जग से पार रे।।३।।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० 29 से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1. सोमवार से शुक्रवार कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.१५ से १०.३० बजे तक
2. शनिवार कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
3. ✓ रविवार कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते हैं।
- १५ अप्रैल को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-२८ का पारितोषिक वितरण भी १५ जुलाई २००७ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-२६

दिनांक 15 जुलाई 2007 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

आत्मा और शरीर आकाश के एक क्षेत्र में रहते हैं परन्तु दोनों सर्वथा अलग–अलग हैं। आचार्य भगवान कहते हैं –प्रकाश और अंधकार की भांति आत्मा और शरीर कभी भी एकरूप नहीं होते–ऐसा सर्वज्ञ भगवान ने देखा है ; इसलिये तू सर्व प्रकार से प्रसन्न हो, सावधान हो, और चैतन्यस्वरूप आत्मा को ही 'यह मैं हूँ' ऐसा अनुभव कर !

प्र०१. भगवान महावीर ने भगवान बनने के लिये क्या किया ?

उ० भगवान महावीर ने–शरीरादि अजीव तत्व हैं, जानने योग्य हैं, अर्थात् उनसे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है–ऐसा जानकर अपने जीव–तत्व का आश्रय लेकर, आस्रव–बंध अर्थात् मोह–राग–द्वेष को नाश करके, संवर–निर्जरा अर्थात सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र प्रकट करके क्रम से मोक्ष प्राप्त किया।

प्र० मन्दिर की बेदी में विराजमान पूर्ण वीतरागी और सर्वज्ञ भगवान क्या कर रहे हैं ?

उ० भगवान अपनी आत्मा में पूर्णलीन अतीन्द्रिय सुख का भोग कर रहे हैं।

प्र० मन्दिर की बेदी में विराजमान भगवान हमें क्या संदेश दे रहे हैं ?

उ० 'मैंने शरीरादि परद्रव्यों से सर्वथा भिन्न अपनी आत्मा का स्वरूप समझकर अपनी आत्मा में पूर्ण लीनता करके, इस परमातम पद को प्राप्त किया, तू भी अपनी आत्मा का स्वरूप समझकर स्वयं में लीन हो जा' – यह संदेश भगवान दे रहे हैं।

प्र० मुझ आत्मा का स्वरूप कैसा है ?

उ० चेतन को है उपयोग रूप बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल इनतैं न्यारी है जीव चाल।

१. (चेतन को है उपयोग रूप) मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ और मेरा कार्य ज्ञाता दृष्टा है।

२. (बिन्मूरत) आंख, नाक, कान औदारिक आदि शरीरोंरूप मेरी मूर्ति नहीं है।
३. (चिन्मूरत) चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।
४. (अनूप) सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।
५. (पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल इनतें न्यारी है जीव चाल) मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म– अधर्म–आकाश एक एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं–इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। (छहढाला की दूसरी ढाल से)

प्र०२. श्री कुन्दकुन्दाचार्य ने संसार परिभ्रमण का कारण क्या बताया है ?

उ०१. श्री कुन्दकुन्दाचार्य ने श्री प्रवचनसार गाथा १६० में कहा है–जो देह–धनादिक में यह मैं हूं और यह मेरा है अर्थात 'शरीर है सो मैं हूँ' ऐसी ममता को नहीं छोड़ता वह संसार में परिभ्रमण करता है।

प्र० अनादिकाल से जीव को कैसा श्रद्धान है ?

उ० श्री मोक्षमार्गप्रकाशक पृष्ठ ८० पर कहते हैं –
जीव अनादिकाल से अनेक शरीर धारण करता है, पूर्व का शरीर छोड़ता है नवीन धारण करता है; वहां एक तो स्वयं आत्मा–जीव द्रव्य और अनन्त पुद्गल परमाणुमय शरीर–इन दोनों के संयोगरूप मनुष्य–तिर्यंचादि अनेक अवस्थायें होती हैं, उन सब में 'यह मैं हूँ' ऐसी अहंबुद्धि करता है, आत्मा और शरीर–इन दोनों में मैं कौन हूँ और मैं कौन नहीं हूँ – ऐसा भेद नहीं कर पाता, दोनों को एक मानता है।

प्र०३. आत्मा और शरीर को एक मानने का फल क्या है ?

उ० आत्मा और शरीर को एक मानना ही मिथ्यात्व है जिसका फल अनन्त संसार है।

प्र०४. हमें अनन्त संसार में नहीं भटकना है हमें आत्मा और शरीर की भिन्नता कैसे भासित हो ?

उ० आत्मा और शरीर के पृथक–पृथक लक्षणों से –
१. मुझ आत्मा चैतन्य है और शरीर जड़–मिट्टी है।
२. मुझ आत्मा अरूपी है और शरीर रूपी है।
३. मुझ आत्मा असंख्यात प्रदेशी है और शरीर में एक–एक प्रदेशी अनंत परमाणु हैं।
४. मुझ आत्मा का एक आकार है और शरीर में अनन्त परमाणु हैं अतः शरीर के अनन्त आकार है।

प्र०५. मुझ आत्मा का शरीर से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है– इस रहस्य को हम अपने अनुमान से कैसे जानें ?

उ० पिछले जन्म का शरीर व संयोग साथ आये नहीं, वर्तमान का शरीर व धन आदि साथ जायेंगे नहीं–अतः सिद्ध होता है कि इस समय भी शरीर व धनादि से मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

प्र०६. आचार्यकल्प पं० टोडरमल जी ने आत्मा और शरीर के भिन्न भिन्न लक्षण क्या बतायें हैं ?

उ० श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ २३ पर कहा है– वहां–
१. मुझ जीवद्रव्य तो देखने जानने रूप चेतना गुण का धारक है।
२. मुझ जीवद्रव्य इन्द्रियगम्य न होने योग्य अमूर्तिक है।
३. मुझ जीवद्रव्य संकोचविस्तार शक्तिसहित असंख्यातप्रदेशी एक द्रव्य है तथा –
४. कर्म और शरीर चेतनागुण रहित जड़ है।
५. कर्म और शरीर मूर्तिक है।
६. कर्म और शरीर अनंत पुद्गलपरमाणुओं का पिण्ड हैं, इसलिए एक द्रव्य नहीं, अनेक द्रव्य हैं।

मुझ जीव, कर्म व शरीर का अनादि से सम्बन्ध है–तो भी
७. मुझ जीव का कोई प्रदेश कर्म व शरीररूप नहीं होता।
८. कर्म व शरीर का कोई परमाणु मुझ जीवरूप नहीं होता।
९. अपने–अपने लक्षण को धारण किये भिन्न भिन्न ही रहते हैं। अतः
१०. मुझ जीव, कर्म व शरीर के इस बंधान में कोई किसी को करता तो है नहीं।
११. जब तक बंधान रहे तब तक साथ रहें, बिछुड़े नहीं
१२. और कारण–कार्यपना (निमित्त–नैमित्तिकपना) उनके बना रहे; इतना ही यहां बंधान जानना।

इसलिये अमूर्तिक निज आत्मा और मूर्तिक कर्म व शरीर के एक बंधान होने पर भी, कुछ भी सम्बन्ध नहीं है।

श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ३८ पर कहा है –

आत्मा – अमूर्तिक प्रदेशों का पुंज, प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी, अनादिनिधन वस्तु मुझ आत्मा है।

शरीर – मूर्तिक पुद्गल द्रव्यों का पिण्ड, प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों से रहित, स्पर्श–रस–गंध–वर्ण सहित, नवीन जिनका संयोग हुआ है ऐसे शरीरादि पुद्गल पर हैं।

प्र०. शरीर से भिन्न अपनी पहिचान होने पर धर्म किस प्रकार हो जाता है?

उ० 'मैं आत्मा हूँ, मुझमें ज्ञान है, मैं ज्ञान से जानता हूँ। शरीरादि जड़ हैं,

शरीर में ज्ञान नहीं है, शरीर कुछ जानता नहीं है–ऐसा निर्णय करने पर अपनी ज्ञान–दर्शन की पर्याय, शरीरादि परद्रव्यों से हटकर, निज आत्मा में एकाग्र होती है, यही सम्यग्दर्शन है और सम्यग्दर्शन ही धर्म का प्रारम्भ है।

श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार की गाथा २ में लिखा है –

'धर्म तो आत्मा का स्वभाव है। शरीरादि परद्रव्यों में आत्मबुद्धि छोड़कर अपनी ज्ञानस्वभावी आत्मा का श्रद्धान, ज्ञान और आचरण ही धर्म है।'

प्र० आत्मा की ४७ शक्तियाँ व विश्व आदि सभी प्रश्नों के उत्तर याद कीजिए।

भजन

स्वास स्वास में सुमिरन करले, करले आतम ज्ञान रे।
न जाने किस स्वास में बाबा, मिल जायें भगवान रे।।टेक।।
अनादिकाल से भूला चेतन, निज स्वरूप का ज्ञान रे।
जीव देह को एक गिने बस, इससे तू हैरान रे।।
शुभ को शुद्ध मानकर प्राणी, भ्रमत चर्तुगति माहि रे।।१।।
कभी नरक में हुआ नारकी, कभी स्वर्ग में देव रे।
कभी गया तिर्यंच गति में, कभी मनुज पर्याय रे।।
चौरासी में स्वांग धरे पर, किया न भेद विज्ञान रे।।२।।
भारी भूल भई अब सोचो, सतगुरु रहे जगाय रे।
यह अवसर यदि चूक गया तो, बार–बार पछताय रे।।
सत को समझो, समकित धरलो, होगा जग से पार रे।।३।।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० 29 से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

१.	सोमवार से शुक्रवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.३० बजे तक
२.	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
३. ✓	रविवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- १५ अप्रैल को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-२८ का पारितोषिक वितरण भी १५ जुलाई २००७ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

नाम एवं पता – वन्दना जैन, 82, मोती बाजार

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–३०

दिनांक 9 सितम्बर 2007 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

अरेरे ! शरीर तो प्रतिक्षण मृत्यु के सन्मुख जा रहा है। अवसर तो चला जा रहा है। अन्तर में सन्मुखता किये बिना कहीं शान्ति नहीं मिलेगी। ज्ञानी तो अन्तर में शरीर से भिन्न निज आत्मा का ग्रहण करके मोक्ष की चाल चलते हैं ; स्वयं अपने में मोक्षमार्ग को साधते हैं।

प्र०२ अन्तर सन्मुखता अर्थात आत्मा की पहचान के लिये क्या करना ?

उ० निरन्तर भेदविज्ञान का अभ्यास करना। श्री समयसार कलश १२६–१३० में कहा है –

'जब जीव को भेदविज्ञान होता है अर्थात् जब जीव आत्मा और शरीर को यथार्थतया भिन्न जानता है तब वह शुद्ध आत्मा का अनुभव करता है इसलिये जब तक परभावों से छूटकर ज्ञान ज्ञान में ही स्थिर न हो जाये तब तक भेदविज्ञान को निरन्तर भाते रहना चाहिए।'

प्र०३ 'परभावों से छूटकर' इसमें परभाव से क्या तात्पर्य है ?

उ० परभाव अर्थात संसार परिभ्रमण के कारणरूप भाव। जो भाव जीव को चारों गतियों के जन्म मरण के दुःखों में फंसाते हैं वे सभी भाव परभाव हैं।

प्र०४ जिनसे संसार परिभ्रमण होता है वे पांच कारण कौन–कौन से हैं?

उ० (१) मिथ्यात्व (२) अविरति (३) प्रमाद (४) कषाय और (५) योग

प्र०५ संसार परिभ्रमण का मूल कारण क्या है ?

उ० संसार परिभ्रमण का मूल कारण मिथ्यात्व ही है।

प्र०६. मिथ्यात्व क्या है ?

उ० जैसा इस जीव के श्रद्धान है वैसा तो पदार्थ का स्वरूप नहीं है, और जैसा पदार्थ का स्वरूप नहीं है वैसा इसके श्रद्धान है, यही मिथ्यादर्शन है। स्वयं आत्मा है उसे जानता नहीं और शरीर को ही अपना मानता है यही मिथ्यात्व है।

प्र०७. मिथ्यात्व को समझाने के लिये आचार्य कल्प पं० टोडरमलजी ने क्या दृष्टान्त और सिद्धान्त समझाया है ?

उ०१. (अ) जैसे पागल को किसी ने वस्त्र पहिना दिया। वह पागल उस वस्त्र को अपना अंग जानकर अपने को और वस्त्र को एक मानता है ; उसी प्रकार इस जीव को कर्मोदय ने शरीर सम्बन्ध कराया। यह जीव इस शरीर को अपना अंग जानकर अपने को और शरीर को एक मानता है।

२. जैसे – वह वस्त्र पहिनाने वाले के आधीन होने से कभी वह फाड़ता है, कभी जोड़ता है, कभी खोंसता है, कभी नया पहिनाता है, इत्यादि चरित्र करता है ; उसी प्रकार वह शरीर कर्म के आधीन (निमित्त से) कभी कृष होता है कभी स्थूल होता है, कभी नष्ट होता है, कभी नवीन उत्पन्न होता है इत्यादि चरित्र होते हैं।

३. जैसे – वह पागल उसे अपने आधीन मानता है ; उसकी पराधीन क्रिया होती है, उससे वह महा खेदखिन्न होता है; उसी प्रकार जीव शरीर को अपने आधीन मानता है, उसकी पराधीन क्रिया होती है इससे वह महा खेद खिन्न होता है।

(आ) जैसे जहां वह पागल ठहरा था वहां अन्य स्थान से आकर, मनुष्य, घोड़ा और धनादिक उतरे। उन सबको वह पागल अपना मानता है। वे तो उन्हीं के आधीन कोई आते हैं, कोई जाते हैं, कोई अनेक अवस्थारूप परिणमन करते हैं। तथापि वह पागल उन्हें अपने आधीन मानता है उनकी पराधीन क्रिया होने पर खेदखिन्न होता है; – उसी प्रकार यह जीव जहां शरीर धारण करता है वहां किसी अन्य स्थान से आकर पुत्र, गाड़ी और धनादिक स्वयं प्राप्त होते हैं यह जीव उन सबको अपना जानता है। परन्तु ये सभी उन्हीं के आधीन कोई आते हैं कोई जाते हैं, और अनेक अवस्था रूप से परिणमते हैं। ये जीव के आधीन नहीं है तो भी यह जीव उसे अपने आधीन मानकर खेद खिन्न होता है यह सब मिथ्यादर्शन है।

प्र०८. मिथ्यात्व की कुछ पहिचान बताइये।

उ०१. (A) नौ प्रकार के पक्षों में अपनेपने की बुद्धि; (B) स्वपर की एकत्व बुद्धि; (C) शुभभावों से धर्म होता है ऐसी बुद्धि; (D) ज्ञेय से ज्ञान होना मानना; (E) अपने को नरकादि रूप मानने की बुद्धि; (F) पर में इष्ट–अनिष्ट की बुद्धि; (G) मनुष्य–तिर्यंचों के प्रति करूणाभाव आदि मान्यतायें; मिथ्यादर्शन के चिन्ह हैं।

२. पदार्थ का अयथार्थ धारण, करूणा मनुज तिर्यंच की।
विषयों की संगति ग्रहण, पहचान है सब मोह की।। (प्रवचनसार गाथा ८५)

३. द्रव्य-गुण पर्याय में जो मूढता अज्ञान है।
मोह से आच्छन्न को राग द्वेष कर क्षोभित बनें। (प्रवचनसार गाथा ८३)

४. इन्द्रिय विषयों में न कुछ आत्मलाभ की बात।
तो भी मूढ अज्ञान वश रमता इनके साथ।। (समाधितंत्र गाथा ५५)

५. नोकर्म कर्म जु मैं अवरू, मैं में कमं नोकर्म है।
यह बुद्धि जब तक जीव की अज्ञानी तब तक वो रहे।। (समयसार गाथा १९)

प्र०९ मिथ्यात्व की पहिचान क्यों बताई है ?

उ० मिथ्यात्व का स्वरूप जानकर, भव्य जीवों को मिथ्यात्व छोड़ देना चाहिए क्योंकि सब प्रकार के बंध का मूल कारण मिथ्यात्व हैं। मिथ्यात्व नष्ट हुए बिना अविरति आदि दूर नहीं होते, इसलिए प्रथम शरीर से भिन्न आत्मा की पहिचान करके मिथ्यात्व को छोड़ना चाहिए। श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक सातवें अधिकार में लिखा है –

इस भवतरू का मूल इक जानहु मिथ्याभाव।
ताको करि निर्मूल अब करिये मोक्ष उपाय।।

प्र०१०. क्या सम्यग्दर्शन होते ही संसार के पांच कारणों का अभाव हो जाता है?

उ०१. जैसे किसी को हमारा ९९९९९) रूपया देना है। वह यदि ९००००) हजार रूपया दे दे। तो ९९९९) रूपया बाकी रहता है; ९००००) हजार दे दिया तो बाकी आ ही जाता है। उसी प्रकार मिथ्यात्व का अभाव होना ९००००) देने के बराबर है। जहां मिथ्यात्व का अभाव हो गया वहां अविरति, प्रमाद, कषाय और योग का अभाव अल्पकाल में हो ही जाता है इसलिए सम्यक्त्व होते ही संसार के पांच कारणों का अभाव हो जाता है।

२. अनन्त संसार का कारण तो मिथ्यात्व है। उसका अभाव हो जाने पर अन्य बंध की गणना कौन करता है ? जैसे वृक्ष की जड़ कट जाने पर फिर हरे पत्ते की अवधि कितनी रहती है ? इसलिए सम्यग्दर्शन होने पर जो कुछ कमी होती है वह सहज मिट ही जाती है। अतः मिथ्यात्व का अभाव होते ही संसार के पांच कारणों का अभाव हो जाता है।

भजन

निर्विकार चिन्मात्रमूर्ति निज परमातमपद शरणरूप।
सुखनिधान ज्योतिस्वरूप है अनुपम है निज ज्ञानस्वरूप।।
१. द्रव्यपने स्थिर हैं सब ही पर्यायों से मचल रहे।
अपनी अपनी सत्ता में ही निज परिणति से बदल रहे।।
पर परिणति संसार रचे और निज परिणति रचती शिवरूप।
२. पूर्ण आनन्द का नाथ परम ईश्वर हो प्रभु तुम देह नहीं।।
आत्मा की चेतन सत्ता में जड़वाणी और राग नहीं।
अनुपम निज पद को तजकर चेतन क्यों ध्याता है पररूप।।
३. भिन्न ज्ञेय में प्रीति निज सम बस ये ही संसार है।
चर्तुगति में परिभ्रमण फिर दुःखों की भरमार है।।
ज्ञेय ज्ञान में झलकें तो क्या ज्ञान का है अपना ही रूप।
४. ज्ञान हीन जड़ सोच जरा तो ज्ञान तुझे कैसे देगा।।
परिपूर्ण निज ज्ञान भाव से पर आश्रय तो दुःख देगा।
स्व आश्रित हो, निजाधीन हो ज्ञान स्वभाव निरालम्ब रूप।।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1. सोमवार से शुक्रवार कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.१५ से १०.३० बजे तक
2. ✓शनिवार कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
3. रविवार कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- १५ जुलाई को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-२६ का पारितोषिक वितरण भी ६ सितम्बर २००७ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- सम्पर्क सूत्र - श्रीमती वीना जैन, ३१, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून। फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

नाम एवं पता - Sandeep Jain
82, Moti Bazar

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३१

दिनांक 16 दिसम्बर 2007 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

निज शुद्धात्मा को पहचानकर शुद्धात्मा में स्थिर हो जाना ही सर्वस्व है, शुभ भाव आये परन्तु वह सर्वस्व नहीं है। सर्वस्वरूपसे उपादेय मात्र शुद्धोपयोग है। अंतर्मुहुर्तको नहीं किन्तु जिनेन्द्र भगवान की भांति शाश्वत अंतरमें रह जाना वही निज स्वभाव है, वही कर्तव्य है। इसलिए चाहे जैसे कठिन समयमें अपने ज्ञान-ध्यानका समय निकाल लेना चाहिये। यह अमूल्य जीवन चला जा रहा है। इसे व्यर्थ नहीं गँवाना।

प्र०२. मोक्ष के प्रयत्न में कितनी बातें एक साथ होती हैं, और कौन-कौन सी होती हैं?

उ० मोक्ष के प्रयत्न में पांच बातें एक साथ होती हैं। (१) ज्ञायक स्वभाव (२) पुरूषार्थ (३) काललब्धि (४) भवितव्य, और (५) कर्म के उपशमादि। यह पाँच बातें धर्म करने की एक साथ होती हैं।

प्र०३. स्वभाव क्या है?

उ० अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान आत्मा अपना स्वभाव है। शरीरादि सारा विश्व अपना स्वभाव नहीं है।

प्र०४. पुरूषार्थ क्या है?

उ० अपने ज्ञान गुण की पर्याय जो पर सन्मुख है, उसे अपने स्वभाव के

सन्मुख करना ही पुरूषार्थ है–यह क्षणिक उपादान कारण है।

प्र०५. काललब्धि क्या है?

उ० काललब्धि कोई वस्तु नहीं किन्तु जिस काल में कार्य बना वही काललब्धि है।

प्र०६. भवितव्य क्या है?

उ० (१) भवितव्य अथवा नियति, उस समय पर्याय की योग्यता है यह भी क्षणिक उपादान कारण हैं। (२) जो कार्य होना था, सो हुआ इसको भवितव्य कहते हैं।

प्र०७. कर्म के उपशमादि क्या हैं? इनका कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उ० कर्म के उपशमादिक तो पुद्गल की पर्यायें हैं। उनका कर्ता कार्माणवर्गणा है, जीव और अन्य वर्गणायें इनका कर्ता नहीं है।

प्र०८.कर्म के उपशमादिक का और आत्मा का कैसा सम्बन्ध है?

उ० जब आत्मा यथार्थ पुरूषार्थ करता है तब कर्म के उपशमादिक स्वयं स्वतः हो जाते हैं। इनका स्वतन्त्र रूप से निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध है। जो स्वतन्त्रता का सूचक है, परतन्त्रता का सूचक नहीं है।

प्र०९. इन पाँच कारणों में से किसके द्वारा मोक्ष का उपाय बनता है?

उ० जब जीव अपने ज्ञायक स्वभाव के सन्मुख होकर यथार्थ पुरूषार्थ करता है, तब काललब्धि, भवितव्य और कर्म के उपशमादिक स्वयमेव हो जाते हैं।

प्र०१०.'समवाय' किसे कहते हैं?

उ० मिलाप, समूह को समवाय कहते हैं।

प्र०११.मोक्ष में किसकी मुख्यता है?

उ० पुरूषार्थ की मुख्यता है।

प्र०१२.मोक्ष के उपाय के लिए क्या करना चाहिए?

उ० जिनेन्द्र भगवान के उपदेशानुसार पुरूषार्थ पूर्वक मोक्ष का उपाय करना चाहिए। इसमें निमित्त और उपादान दोनों आ जाते हैं।

प्र०१३.जिनेन्द्र भगवान का उपदेश क्या है ?

उ० १. इस विश्व में जीव अनन्त है, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं, और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है–सब द्रव्य सत् हैं। इन सब द्रव्यों में हर समय स्वयमेव अपने अपने परिणमन स्वभाव के कारण कार्य हो रहा है – वही काललब्धि है।

२. सत् अर्थात स्वतंत्र अस्तिपना द्रव्य का लक्षण होने से द्रव्य सत् है, गुण सत् है और प्रत्येक समय की पर्याय भी स्वतंत्र सत् है। इसलिए जिस स्वतंत्र पर्याय का जन्म क्षण है वही पर्याय होती है–इसी का नाम भवितव्य है।

३. मैं ज्ञायक भगवान आत्मा हूं–शरीर नहीं हूं।

४. उपरोक्त बातों का निश्चय करके सारे विश्व के कर्तृत्व को छोड़कर शरीर में रहा हुआ, शरीर से भिन्न अपने आत्मा का आश्रय लेकर संसार के नाश का पुरूषार्थ करो– यह जिनेन्द्र भगवान का उपदेश है।

प्र०१४.जिनेन्द्र भगवान ने मोक्ष के लिए क्या उपाय बताया है?

उ० जो जीव पुरूषार्थ पूर्वक मोक्ष का उपाय करता है, उसे तो सर्वकारण मिलते हैं और अवश्य मोक्ष की प्राप्ति होती है। काललब्धि, भवितव्य, कर्म के उपशमादिक कारण मिलाना नहीं पड़ते। क्योंकि जब जीव स्वभाव सन्मुख यथार्थ पुरूषार्थ करता है तब वे कारण स्वयं होते हैं। जैसे–पुत्र का अर्थी विवाहादि का तो उद्यम करे और भवितव्य स्वयमेव हो तब पुत्र होगा, उसी प्रकार तत्व का अर्थी (सच्चा सुख पाने का अर्थी) तत्व विचारादिक का तो उद्यम करे और मोह–कर्म के उपशमादिक स्वयमेव हों तब रागादिक दूर होते हैं।

प्र०१६.क्या करे, तो सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर नियम से मोक्ष हो?

उ० (१) जीव का कर्तव्य तो तत्वज्ञान का अभ्यास (अपने स्वभाव का आश्रय) ही है और उसी से स्वयमेव दर्शनमोह का उपशम होता है। दर्शनमोह के उपशमादिक में जीव का कर्तव्य कुछ भी नहीं है। (२) तत्पश्चात् ज्यों–ज्यों जीव स्वसन्मुखता द्वारा वीतरागता में वृद्धि करता है त्यों–त्यों श्रावकदशा, मुनिदशा प्रगट होती है। (३) उस दशा में भी जीव अपने ज्ञायक स्वभाव में रमणतारूप पुरूषार्थ द्वारा धर्म परिणति (श्रेणी) को बढ़ाता है वहाँ परिणाम सर्वथा शुद्ध होने पर केवलज्ञान, केवलदर्शन और मोक्षदशारूप सिद्ध पद प्राप्त करता है।

प्र०१७.जीव को धर्म समझने का क्रम क्या है?

उ० (१) प्रथम तो परीक्षा द्वारा कुदेव, कुगुरू और कुधर्म की मान्यता छोड़कर अरहंत देवादिका श्रद्धान करना चाहिए, (२) फिर जिनमत में कहे हुए जीवादि तत्वों का विचार करना चाहिए, (३)फिर जिनसे स्व-पर का भिन्नत्व भासित हो वैसे विचार करते रहना चाहिए, (४) तत्पश्चात् एक स्व में स्व-पना मानने के हेतु स्वरूप का विचार करते रहना चाहिए।

प्र०१८.जिसको सच्चा देव-गुरू-धर्म का निमित्त बने और फिर भी वह अपना कल्याण ना करे, तो इस विषय में भगवान की क्या आज्ञा है?

उ० (१) जैसे-किसी महान दरिद्री को अवलोकन मात्र चिन्तामणि की प्राप्ति होने पर भी उसको न अवलोके। तथा जैसे- किसी कोढ़ी को अमृत पान कराने पर भी वह न करे, उसी प्रकार संसार पीड़ित जीव को सुगम मोक्षमार्ग के उपदेश का निमित्त बनने पर भी, वह अभ्यास ना करे, तो उसके अभाग्य की महिमा कौन कर सके ? (२) वर्तमान में सत्गुरू का योग मिलने पर भी तत्वनिर्णय करने का पुरूषार्थ ना करे, प्रमाद से काल गँवाये, या मन्द रागादि सहित विषय कषायों में ही प्रवर्ते या व्यवहार धर्म कार्यों में प्रवर्ते तो अवसर तो चला जायेगा और संसार में ही भ्रमण रहेगा। (३) यह अवसर चूकना योग्य नहीं, अब सर्व प्रकार से अवसर आया है, ऐसा अवसर पाना कठिन है। इसलिए वर्तमान में श्रीसत्गुरू दयालु होकर मोक्षमार्ग का उपदेश देते हैं। भव्य जीवों को उसमें प्रवृत्ति करनी चाहिए।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1. सोमवार से शुक्रवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.३० बजे तक
2.✓ शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
3. रविवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- ६ सितम्बर को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३० का पारितोषिक वितरण भी १६ दिसम्बर २००७ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- सम्पर्क सूत्र - श्रीमती वीना जैन, ३१, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून। फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

नाम एवं पता - Vandna Jain
82 Moti Bazar

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३२

दिनांक 24 फरवरी 2008 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

जीव अकेला आया है, अकेला रहता है और अकेला जाता है; वह अकेला ही है, उसे जगत् के साथ क्या सम्बन्ध है ? भाई ! इस शरीर के रजकण यहीं पड़े रहेंगे और यह महल-मकान भी सब पड़े रहेंगे। इनमें की कोई वस्तु तेरे स्वरूप में नहीं है, वे सब जीवस्वरूप से भिन्न हैं, तेरे चैतन्यस्वरूप में इन शरीरादि परवस्तुओं की नास्ति है, इसलिए हे प्रभु ! तू उनके मोहपाश में से छूट जा। अपने चैतन्यस्वरूप को प्राप्त करके अकेला निजानन्द का उपभोग कर।

प्र०२. अभाव किसे कहते हैं ?

उ० एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ में नास्तित्व होने को अभाव कहते हैं।

प्र०३. अभाव के कितने भेद हैं ?

उ० चार भेद हैं। अत्यन्ताभाव, अन्योन्याभाव, प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव।

प्र०४. अत्यन्ताभाव किसे कहते हैं ?

उ० एक द्रव्य में दूसरे द्रव्य के अभाव को अत्यन्ताभाव कहते हैं। अत्यन्ताभाव को न माना जाय तो कोई भी द्रव्य स्वतन्त्र और भिन्न न रहे।

प्र०५. अत्यन्ताभाव समझने से धर्म सम्बन्धी क्या लाभ हैं ?

उ० अत्यन्ताभाव से ऐसा समझना कि प्रत्येक द्रव्य में दूसरे द्रव्य का अभाव होने से कोई द्रव्य अन्य द्रव्य की पर्यायों को कुछ भी नहीं कर सकता अर्थात सहायता, असर, मदद, प्रेरणा इत्यादि कुछ नहीं कर सकता।

प्र०६. अन्योन्याभाव किसे कहते हैं ?

उ० एक पुद्गल द्रव्य की वर्तमान पर्याय का दूसरे पुद्गल की वर्तमान पर्याय में अभाव होने को अन्योन्याभाव कहते हैं। अन्योन्याभाव को न माना जाय तो एक पुद्गल द्रव्य की वर्तमान पर्याय अन्य पुद्गल द्रव्य की वर्तमान पर्याय से स्वतंत्र और भिन्न नहीं रहेगी।

प्र०७. अन्योन्याभाव समझने से धर्म सम्बन्धी क्या लाभ हैं ?

उ० अन्योन्याभाव से ऐसा समझना कि एक पुद्गल द्रव्य की पर्याय दूसरे पुद्गल द्रव्य की पर्यायों में कुछ भी नहीं कर सकती है अर्थात् एक दूसरे की मदद, सहायता, असर, प्रेरणादि कुछ नहीं कर सकते।

प्र०८. प्रागभाव किसे कहते हैं ?

उ० एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का उसी द्रव्य की पूर्व पर्याय में होने वाले अभाव को प्रागभाव कहते हैं। प्रागभाव को न माना जाये तो कार्य अनादि ठहरे।

प्र०९. प्रागभाव समझने से धर्म सम्बन्धी क्या लाभ हैं ?

उ० प्रागभाव से ऐसा समझना कि अनादि काल से अज्ञान मिथ्यात्वादि दोष किये, धर्म कभी नहीं किया, तो भी धर्म वर्तमान में नये पुरूषार्थ से हो सकता है, क्योंकि वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय में अभाव है।

प्र०१०. प्रध्वंसाभाव किसे कहते हैं ?

उ० एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का उसी द्रव्य की आगे होने वाली पर्याय में अभाव होने को प्रध्वंसाभाव कहते हैं। प्रध्वंसाभाव को न माना जाये तो वही कार्य अनन्तकाल रहे।

प्र०११. प्रध्वंसाभाव समझने से धर्म सम्बन्धी क्या लाभ हैं ?

उ० प्रध्वंसाभाव से ऐसा समझना कि वर्तमान अवस्था में धर्म न किया हो तो भी उस अधर्म दशा का तुरन्त व्यय करके पुरुषार्थ से धर्म कर सकता है।

प्र०१२. आप कहते हो एक द्रव्य में दूसरा द्रव्य कुछ नहीं कर सकता परन्तु शास्त्रों में तो ऐसे कथन भरे पड़े हैं।

उ० शास्त्रों में जो कुछ अन्य का करने–कराने आदि का कथन है वह घी के घड़े के समान व्यवहार का कथन मात्र है, सत्यार्थ नहीं है ऐसा समझना।

प्र०१३. मैं उठा–इस वाक्य पर अत्यन्ताभाव को कब माना और कब नहीं माना ?

उ० निज चैतन्य अरूपी ज्ञायक भगवान आत्मा का शरीर के उठने रूप पुद्गलों से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है–ऐसी मान्यता वाले ने अत्यन्ताभाव को माना और शरीर के उठने रूप पुद्गलों में मैं उठा–ऐसी मान्यता वालों ने अत्यन्ताभाव को नहीं माना।

प्र०१४. मैं उठा–इस वाक्य पर अन्योन्याभाव को कब माना और कब नहीं माना?

उ० शरीर का उठना आत्मा से तो नहीं हुआ परन्तु द्रव्यकर्म के कारण तो शरीर उठा ? ऐसा नहीं है क्योंकि द्रव्यकर्म के स्कन्धों की वर्तमान पर्याय का, शरीर के उठने रूप स्कन्धों की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है। जब एक जाति के पुद्गलों के कार्यों में आपस में सम्बन्ध नहीं है, तो मुझ आत्मा का शरीर के उठने के साथ सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? कभी भी नहीं हो सकता है– ऐसा मान्यता वाले ने अन्योन्याभाव को माना और शरीर के उठने रूप क्रिया का आत्मा के साथ तो सम्बन्ध नहीं है परन्तु द्रव्यकर्म के कारण शरीर उठा–ऐसी मान्यता वालों ने अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्र०१५. मैं उठा–इस वाक्य में प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव को कब माना और कब नहीं माना ?

उ० शरीर के उठने रूप वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय में प्रागभाव है और शरीर के उठने रूप वर्तमान पर्याय का भविष्य की पर्याय में प्रध्वंसाभाव है, ऐसी मान्यता वालों ने प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव को माना और शरीर के उठने रूप वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय से सम्बन्ध है और शरीर के उठने रूप कार्य का भविष्य की पर्याय से भी कुछ सम्बन्ध है–ऐसी मान्यता वाले ने प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव को नहीं माना।

प्र०१६. मैं उठा– इस वाक्य में चारो अभाव के समझने से वीतरागता कैसे निकलती है स्पष्टता से समझाइए।

उ० (१) उठने रूप पुद्गलों का मुझ चेतन आत्मा में अत्यन्ताभाव है। (२) द्रव्यकर्म और शरीर के उठने रूप वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है। (३) शरीर के उठने रूप वर्तमान पर्याय का भूत की पर्याय में प्रागभाव है। (४) शरीर के उठने रूप वर्तमान पर्याय का भविष्य की पर्याय में प्रध्वंसाभाव है। अब जैसे शरीर का उठना उस समय पर्याय की योग्यता से ही हुआ है, वैसे ही विश्व में जितने भी कार्य हैं, वे सब उस समय की पर्याय की योग्यता से हो चुके हैं, हो रहे हैं, और भविष्य में भी होते

रहेंगे। ऐसा समझने से पर में कर्ता–भोक्ता की खोटी मान्यता का अभाव होकर तत्काल वीतरागता की प्राप्ति हो जाती है और फिर क्रम से मोक्ष रूपी लक्ष्मी का नाथ बन जाता है।

प्र०१७. निम्न वाक्यों पर चार अभावों को समझाइए ?

(१) मैंने रोटी बनाई। (२) मैंने अग्नि से पानी को गरम किया। (३) मैंने किताब बनाई। (४) मैंने बिस्तर बिछाया। (५) मैं खड़ा हुआ। (६) यह मेरी दुकान है। (७) यह मेरा सोने का हार है। (८) मैंने हाथ से ताली बजाई। (९) मैंने डिब्बे में दवाई रखी। (१०) मैंने गले में माला पहनी।

प्र०१८. जिनदेव द्वारा प्ररूपित जिनशास्त्रों का रहस्य कौन समझ सकता है ?

उ० तराजु के एक पलड़े में मुझ आत्मा अस्तित्व गुण के कारण अनादिअनन्त कायम रहता हुआ, वस्तुत्व गुण के कारण अपनी जाननेरूप प्रयोजनभूत क्रिया करता हुआ, द्रव्यत्व गुण के कारण निरन्तर जाननेरूप परिणमित हो रहा है। तराजु के दूसरे पलड़े में शरीर रूप अनन्त पुद्गल परमाणु–एक दिखने वाले शरीर रूप स्कन्ध में प्रत्येक परमाणु अस्तित्व गुण के कारण अनादिअनन्त कायम रहता हुआ, वस्तुत्वगुण के कारण अपनी प्रयोजनभूत क्रिया करता हुआ, द्रव्यत्वगुण के कारण निरन्तर परिणमित हो रहा है। शरीर रूप अनन्त पुद्गलों से मुझ आत्मा का किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का कर्ता–भोक्ता का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है–ऐसा जानकर शरीर से भिन्न निरन्तर जाननेरूप परिणमित निज भगवान आत्मा में, ये मैं–ऐसा निर्णय करने वाला ही जिनदेव द्वारा प्ररूपित जिनशास्त्रों का रहस्य समझ सकता है। निज ज्ञायक भगवान आत्मा के ज्ञान से रहित शरीर रूप अनन्त पुद्गलों से ही अपनी पहचान करने वाला जीव जिनशास्त्रों का रहस्य समझ ही नहीं सकता है।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.३० बजे तक
2 ✓	शनिवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
3.	रविवार	कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- ६ सितम्बर को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३० का पारितोषिक वितरण भी १६ दिसम्बर २००७ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- सम्पर्क सूत्र - श्रीमती वीना जैन, ३१, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून। फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

नाम एवं पता – Harshita Jain

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–३३

दिनांक 27 अप्रैल 2008 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

जो न हो सके वह कार्य करने की बुद्धि करना मूर्खता की बात है। अनादि से यह जीव जो नहीं हो सकता उसे करने की बुद्धि करता है और जो हो सकता है वह नहीं करता। आचार्य भगवान कहते हैं कि जिसे भवभ्रमण से छूटना हो उसे अपने को परद्रव्य से भिन्न पदार्थ निश्चित करके, अपने ध्रुव ज्ञायकस्वभाव की महिमा लाकर सम्यक्दर्शन प्रगट करना चाहिये।

भजन –

अपने में अपनापन जब होगा, होगा तब पर में परायापन
और नहीं कुछ मात्र इसी का नाम है भाई जैन धर्म।।टेक।।
देह है रूपी, देह है नश्वर, अरूपी, अमर गुण निधान हैं हम,
आदि न अन्त, अनादिनिधन हम, अमृत सुख की खान है हम,
अजर अमर अविनाशी हैं हम, करले अमर में ही अपनापन।।१।।
न हम रागी, न हम द्वेषी, दोष रहित गुणधान हैं हम,
न हम देव–पशु–नर–नारक, केवल आतमराम हैं हम,
हम चेतन ज्योति, स्वरूप निरन्जन, करले निरन्जन मैं ही अपनापन।।२।।
निज चेतन पद को भूलके, चेतन चौरासी के चक्कर काटे,
विषय भोगों में बीता समय, फिर हाथ में वापस न आये,
आया सुअवसर, चेत रे चेतन, करले चेतन में ही अपनापन।।३।।

प्र०२. मिथ्यादृष्टि जीव को धर्म की प्राप्ति क्यों नहीं होती ?

उ० शरीरादि परद्रव्यों से सर्वथा भिन्न अपनी आत्मा को न पहचानने के कारण मिथ्यादृष्टि जीव आत्मा के कार्यों और शरीरादि के कार्यों के बीच निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध को नहीं जानता, दोनों को एक मानकर आत्मा और शरीर में कर्ता–कर्म मानता है, फलस्वरूप मोह, राग, द्वेष की वृद्धि करता हुआ संसार में ही परिभ्रमण करता रहता है।

प्र०३. एक ही समय में आत्मा और शरीरादि परद्रव्यों का कार्य भिन्न–भिन्न किस प्रकार हो रहा है ?

उ० एक ही समय में आत्मा और शरीरादि परद्रव्यों का कार्य भिन्न–भिन्न किस प्रकार होते हैं नीचे चार्ट में देखें –

त्रिकाली उपादान कारण	कुम्हार का ज्ञान गुण	कुम्हार का चारित्र गुण	हाथ चाक आदि आहारवर्गणा के स्कन्ध	मिट्टी
	व्यापक – सम्बन्ध १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	व्यापक – सम्बन्ध १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	व्यापक – सम्बन्ध १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	व्यापक – सम्बन्ध १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८
अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय क्षणिक उपादान कारण	व्याप्य ६	व्याप्य ६	व्याप्य ६	व्याप्य ६
उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादानकारण	१०	१०	१०	१०
(कार्य) उपादेय	ज्ञान हुआ	राग हुआ	हाथ, चाक आदि की क्रिया	घड़ा बना

निमित्त – नैमित्तिक – सम्बन्ध

प्र०४. निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध किसे कहते हैं ?

उ० उपादान स्वयं स्वतः कार्यरूप परिणमित होता है उस समय भावरूप या अभावरूप किस उचित निमित्त कारण का उस कार्य के साथ सम्बन्ध है यह बताने के लिए उस कार्य को नैमित्तिक कहते हैं। इस प्रकार भिन्न–भिन्न पदार्थों के स्वतंत्र सम्बन्ध को निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध कहते हैं।

प्र०५. कुम्हार ने घड़ा बनाया–इस वाक्य पर निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध की परिभाषा लगाकर बताइये ?

उ० उपादान अर्थात मिट्टी स्वयं स्वतः कार्यरूप अर्थात घड़ेरूप परिणमित होती है उस समय भावरूप या अभावरूप किस उचित निमित्त कारण का अर्थात कुम्हार के ज्ञान, राग, हाथ, चाक आदि का उस कार्य के साथ अर्थात घड़ा बनने के साथ सम्बन्ध है–यह बताने के लिये उस कार्य को अर्थात घड़ा बनने को नैमित्तिक कहते हैं। इस प्रकार भिन्न–भिन्न पदार्थों के अर्थात ज्ञान, राग, हाथ, चाक आदि के और घड़ा बनने के स्वतंत्र सम्बन्ध को निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध कहते हैं।

प्र०६. इस निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध से क्या सिद्ध हुआ ?

उ० जिस समय मिट्टी में घड़े रूप कार्य हुआ, उसी समय जीव के ज्ञानगुण में ज्ञानकार्य हुआ, जीव के चारित्रगुण में रागपरिणाम हुआ, हाथ रूप आहारवर्गणा में हाथ के

हलन चलन रूप परिणाम हुआ, चाक आदि रूप आहारवर्गणा में चाक के हलन
चलन रूप परिणाम हुआ। सबका द्रव्य क्षेत्र काल भाव अलग–अलग है अतः एक का
दूसरे से कोई सम्बन्ध नहीं है परन्तु सब कार्यों का समय एक है– इसे ही निमित्त
नैमित्तिक सम्बन्ध कहते हैं।

व्याप्यव्यापक किसे कहते हैं ?

जो सर्व अवस्थाओं में रहे वह व्यापक है और उस व्यापक की एक अवस्था विशेष
(उस व्यापक का) व्याप्य है। द्रव्य और गुण व्यापक है और पर्याय व्याप्य है।

निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध और व्याप्य व्यापक सम्बन्ध में क्या अन्तर है ?

१. निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध भिन्न–भिन्न द्रव्यों की एक समय की पर्यायो के बीच
होता है।

२. व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध एक द्रव्य का उसकी पर्यायों के साथ होता है।

निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध और व्याप्य व्यापक सम्बन्ध को कुछ उदाहरण देकर
समझाइये।

१. मिट्टी और घड़े में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। कुम्हार का ज्ञान, राग, हाथ
चाक आदि और घड़े में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है।

२. सोना और आभूषण में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। सुनार, औजार व आभूषण
में निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध है।

३. आटा और रोटी में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। बाई, हाथ, तवा, चकला आदि
और रोटी में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है।

४. गाली सुनकर क्रोध आया–इसमें आत्मा के चारित्रगुण और क्रोधपरिणाम में
व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। अन्य जीव, गाली के शब्द, कान व क्रोध परिणाम
में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है।

५. मैंने मुँह से शब्द बोला– इसमें भाषावर्गणा और शब्द कार्य में व्याप्य–व्यापक
सम्बन्ध है। आत्मा, शरीर, मुँह व शब्द कार्य में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है।

१०. एक कार्य के कितने कर्ता कहलाते हैं ?

एक कार्य के चार कर्ता कहलाते हैं – (१) निमित्त कारण (२) त्रिकाली उपादान
कारण (३) अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय क्षणिक उपादान कारण (४) उस समय पर्याय
की योग्यता क्षणिक उपादान कारण।

११. निमित्त कारण किसे कहते हैं ?

जो पदार्थ स्वयं कार्यरूप न परिणमे, परंतु कार्य की उत्पत्ति में अनुकूल होने का
जिसमें आरोप आ सके उस पदार्थ को निमित्त कारण कहते हैं। जैसे–घड़े की
उत्पत्ति में कुम्हार, हाथ, चाक आदि।

१२. कुम्हार ने घड़ा बनाया, इस वाक्य पर निमित्त कारण की परिभाषा लगाइये।

जो पदार्थ अर्थात कुम्हार का ज्ञान, राग, हाथ, चाक आदि स्वयं स्वतः तो कार्यरूप
अर्थात घड़ा बनने रूप न परिणमें परन्तु कार्य अर्थात घड़े की उत्पत्ति में अनुकूल
होने का जिसपर आरोप आ सके उस पदार्थ को अर्थात कुम्हार के ज्ञान, राग, हाथ
चाक आदि को निमित्त कारण कहते हैं।

१३. उपादान कारण किसे कहते हैं ?

१. जो द्रव्य कार्यरूप परिणमित हो उसे त्रिकाली उपादान कारण कहते हैं जैसे
घड़े की उत्पत्ति में मिट्टी।

२. जो कार्य हुआ, उससे पहली पर्याय को अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय क्षणिक
उपादान कारण कहते हैं जैसे घड़ा बनने से पहले मिट्टी की पिंड रूप दशा।

३. जो कार्य हुआ उसे उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण कहते
हैं – जैसे घड़ा बना।

प्र०१४. पर्याय का सच्चा कारण कौन है और कौन नहीं है ?

उ० १. पर्याय का कारण पर तो हो ही नहीं सकता है, क्योंकि पर का तो द्रव्य, क्षेत्र,
काल, भाव सर्वथा पृथक–पृथक है और दोनों का अपने अपने कार्य का समय
एक ही है।

२. पर्याय का कारण त्रिकालीद्रव्य भी नहीं हो सकता है क्योंकि पर्याय एक समय
की है। यदि त्रिकाली कारण हो तो पर्याय भी त्रिकाल होनी चाहिये, सो है
नहीं।

३. पर्याय का कारण अनन्तरपूर्व क्षणवर्तीपर्याय भी नहीं हो सकती है क्योंकि अभाव
में से भाव की उत्पत्ति नही हो सकती है और पर्याय में से पर्याय नहीं आती
है।

४. पर्याय का सच्चा कारण उस समय पर्याय की योग्यता है क्योंकि पर्याय स्वय
एक समय का सत् है अतः वास्तव मे पर्याय की एक समय की सत्ता ही पर्याय
का सच्चा कारण है।

प्र०१५. निमित्त कारण क्या बताता है ?

उ० निमित्त कारण बताता है कि कार्य के समय कार्य के बाहर कौन उपस्थित था।

प्र०१६. त्रिकाली उपादान कारण क्या बताता है ?

उ० त्रिकाली उपादान कारण बताता है कि किस द्रव्य के अन्दर कार्य हुआ।

प्र०१७. अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय क्षणिक उपादान कारण क्या बताता है ?

उ० अनन्तरपूर्व कारण बताता है कि किस पर्याय का अभाव करके कार्य पूर्व हुआ।

प्र०१८. निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध क्या बताता है ?

उ० जीव, पुद्गल, शरीरादि प्रत्येक द्रव्य प्रतिसमय स्वतंत्र रूप से अपना–अपना कार्य कर
रहे हैं परस्पर कोई भी सम्बन्ध नहीं है।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओ में अपने बच्चों सहित आप
स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1. सोमवार से शुक्रवार कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.१५ से १०.३० बजे तक
2. ✓ शनिवार कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
3. रविवार कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.०० बजे तक

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार
पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- २४ फरवरी को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३२ का पारितोषिक वितरण
भी २७ अप्रैल २००८ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- सम्पर्क सूत्र - श्रीमती वीना जैन, ३१, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून।
फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

Mrs. Harshida Jain

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३४

दिनांक 13 जुलाई 2008 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

भली होनहार है इसलिये जिस जीव को ऐसा विचार आता है कि (१) मैं कौन हूँ ? (२) मेरा क्या स्वरूप है ? (३) यह चरित्र कैसे बन रहा है ? (४) ये मेरे भाव होते हैं उनका क्या फल लगेगा ? (५) मैं दुःखी हो रहा हूँ सो दुःख दूर होने का क्या उपाय है ? – इन बातों का निर्णय करने में उद्यमवन्त जीव, अति प्रीतिपूर्वक, गुरुओं के द्वारा बताये गये अर्थ को अपने अन्तरंग में बारम्बार विचारता है और सत्य स्वरूप का निश्चय करके मोक्षमार्ग में प्रवृत्ति करता है।

प्र०१. संसार का नाश करने के इच्छुक जीव को सर्वप्रथम क्या जानना चाहिए?

उ० मैं कौन हूँ और मुझ आत्मा का स्वरूप क्या है – सर्वप्रथम यह जानना चाहिये क्योंकि निज आत्मा की पहचान के बिना धर्म का प्रारम्भ नहीं होता।

प्र०२. निज जीव तत्व का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है जिसको जानते मानते ही संसार का नाश हो जाता है ?

उ० चेतन को है उपयोग रूप, बिनमूरत, चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल।।

१. चेतन को है उपयोग रूप अर्थात मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ और मुझ आत्मा का कार्य ज्ञाता दृष्टा है।
२. बिनमूरत अर्थात आंख–कान–नाक औदारिक आदि शरीरों रूप मेरी मूर्ति नहीं है।
३. चिन्मूरत अर्थात चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मुझ आत्मा का एक आकार है।
४. अनूप अर्थात सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।
५. पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल अर्थात् मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्त जीव हैं, अनन्तानन्त पुद्गल हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं और लोक प्रमाण असंख्यात काल द्रव्य हैं–इन सबकी सत्ता मुझ जीव से सर्वथा भिन्न ही है इसलिये मुझ आत्मा इन परद्रव्यों का कुछ भी करता नहीं है–ऐसा निज जीव तत्व का स्वरूप जानते–मानते ही तत्काल आस्रव–बंध का अभाव होकर संवर–निर्जरा की प्राप्ति कर क्रम से मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

प्र०३. निगोद से लेकर सिद्ध भगवान तक प्रत्येक जीव का सामान्य स्वरूप श्री समयसार गाथा २ में आचार्य भगवान ने क्या बताया है ?

उ० १. प्रत्येक जीव उत्पाद–व्यय–ध्रौव्यमयी सत्तास्वरूप है।
२. प्रत्येक जीव दर्शनज्ञानमयी चेतनास्वरूप है।
३. प्रत्येक जीव अनंतधर्मस्वरूप द्रव्य होने से वस्तु है।
४. प्रत्येक जीव गुणपर्यायवान है।
५. प्रत्येक जीव का स्वपरप्रकाशक ज्ञान अनेकाकाररूप एक है।
६. प्रत्येक जीव आकाशादि से भिन्न असाधारण चैतन्यगुणस्वरूप है।
७. तथा प्रत्येक जीव शरीर आदि अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरूप को नहीं छोड़ता।

ऐसा जीव नामक पदार्थ समय है। जब जीव अपने स्वभाव में स्थित हो, तक स्वसमय अर्थात् अन्तरात्मा व परमात्मा है, और जब जीव अपने स्वभाव को भूलकर शरीरादि परद्रव्यों में एकत्व करके रागद्वेष– मोहरूप होकर रहे तब परसमय अर्थात् बहिरात्मा है।

प्र०४. इस लोक में जीव कितने प्रकार के हैं ?

उ० प्रत्येक आत्मा ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व होने से एक ही प्रकार का है, पर्याय में तीन प्रकार के हैं – बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा।

प्र०५. बहिरात्मा किसे कहते हैं ?

उ० जो शरीर और आत्मा को एक मानते हैं उन्हें बहिरात्मा कहते हैं और वे तत्वमूढ़ मिथ्यादृष्टि हैं।

प्र०६. अन्तरात्मा किसे कहते हैं और अन्तरात्मा के कितने भेद हैं ?

उ० जो शरीर और आत्मा को अपने भेद विज्ञान से भिन्न–भिन्न मानते हैं वे अन्तरात्मा है। अन्तरात्मा के तीन भेद हैं – उत्तम, मध्यम और जघन्य।

अ. अन्तरंग तथा बहिरंग दोनों प्रकार के परिग्रहों से रहित सातवें गुणस्थान से लेकर बारहवें गुणस्थान तक वर्तते हुये शुद्ध उपयोगी

आत्मध्यानी दिगम्बर मुनि उत्तम अन्तरात्मा है।

आ. छठवें और पांचवे गुणस्थानवर्ती जीव मध्यम अन्तरात्मा है।

इ. चौथे गुणस्थानवर्ती जीव जघन्य अन्तरात्मा है।

प्र०७. परमात्मा किसे कहते हैं और परमात्मा के कितने भेद हैं ?

उ० जिन्होंने ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व में पूर्ण एकाग्रता करके सर्व कषायों का नाश करके केवलज्ञानादि गुण प्रगट किये हैं, वे परमात्मा हैं। परमात्मा के दो भेद हैं – अरिहन्त और सिद्ध। वे दोनों सर्वज्ञ होने से लोक अलोक सहित सर्व पदार्थों का त्रिकालवर्ती सम्पूर्ण स्वरूप एक समय में एक साथ जानने–देखने वाले सबके ज्ञाता–दृष्टा हैं।

प्र०८. त्रिकाल एकरूप ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व के पर्याय में तीन भेद जानकर पात्र जीव को क्या करना चाहिये ?

उ० आत्मा हितैषियों को चाहिये–बहिरात्मपने को छोड़कर अन्तरात्मा बनकर परमात्मपना प्राप्त करें क्योंकि उससे सदैव सम्पूर्ण और अनन्त आनन्द की प्राप्ति होती है।

प्र०९. प्रत्येक आत्मा ज्ञान दर्शन स्वरूप होने से निरन्तर मात्र जानता ही है तो फिर यह चरित्र कैसे बन रहा है अर्थात् शरीरादि परद्रव्यों के कार्य कैसे होते हैं ?

उ० इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक एक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी पर्यायें हैं। प्रत्येक समय क्रमबद्ध परिणाम का उत्पाद होता है, पूर्व पर्याय का व्यय होता है और द्रव्य–गुण सदाकाल एकरूप ध्रुवरूप रहते हैं। इस प्रकार विश्व के प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा –इसीलिए इस विश्व के शरीरादि परद्रव्यों के त्रिकालवर्ती कार्य मुझ आत्मा की अपेक्षा बिना स्वतंत्र रूप से होते हैं।

प्र०१०. इस विश्व के प्रत्येक द्रव्य का प्रत्येक कार्य स्वतंत्र होता है–यह जानकर पात्र मिथ्यादृष्टि जीव को क्या चिन्ता होती है ?

उ० इस विश्व के प्रत्येक द्रव्य का प्रत्येक कार्य अपने क्रमकाल में स्वतंत्र रूप से हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा–जब ऐसा है तो मुझे शरीर, धन, मकान आदि परद्रव्यों को परिणमाने के भाव चौबीस घंटे क्यों उत्पन्न होते हैं ? वस्तुस्वरूप से विरुद्ध इन भावों का फल तो घोर संसार है, अनन्त दुःख है तो ये भाव कैसे रुकें ? पात्र जीव को इस प्रकार आत्मकल्याण की चिन्ता होती है।

प्र०११. परद्रव्यों को परिणमाने के ये दुःख के कारणरूप भाव कैसे रुकें ?

उ० मुझ आत्मा का त्रिकाल ज्ञान स्वरूप और सम्पूर्ण विश्व की त्रिकाल व्यवस्था–जैसी उपरोक्त प्रकार जिनेन्द्र भगवान ने बताई है उसे अत्यन्त प्रीतिपूर्वक अन्तरंग मे बारम्बार विचारना। विश्व की त्रिकाल व्यवस्था का निश्चय करके विश्व के कर्तृत्व से स्वयं को छुड़ाकर और आत्मा के त्रिकाल एकरूप ज्ञायक स्वरूप का निश्चय करके, उसमें विश्राम करते ही परद्रव्यों को इच्छानुसार परिणमाने के भाव उत्पन्न ही नहीं होते तभी सच्चा धर्म होता है।

भजन

हूँ स्वतंत्र निश्चल निष्काम, ज्ञाता दृष्टा आतम राम।
मैं वह हूँ जो हैं भगवान, जो मैं हूँ वह हैं भगवान।।
अन्तर यही ऊपरी जान, वे विराग यहाँ राग वितान।।१।।
मम स्वरूप है सिद्ध समान, अमित शक्ति सुख ज्ञान निधान।
किन्तु आश वश खोया ज्ञान, बना भिखारी निपट अजान।।२।।
सुख दुख दाता कोई न आन, मोह राग रूष दुःख की खान।
निजको निज पर को पर जान, फिर दुःख का नहीं लेश निदान।।३।।
जिन शिव ईश्वर ब्रह्मा राम, विष्णु बुद्ध हरि जिसके नाम।
राग त्याग पहुँचूँ निजधाम, आकुलता का फिर क्या काम।।४।।
होता स्वयं जगत परिणाम, मैं जगका करता क्या काम।
दूर हटो परकृत परिणाम, सहजानन्द रहूँ अभिराम।।५।।

विश्व के कर्तृत्व से स्वयं को छुड़ाकर आत्मा के नित्य ज्ञायक स्वभाव में विश्राम करना।

DECEMBER 2008

12 Friday

मुझ आत्मा त्रिकाल ज्ञान स्वरूप है तथा विश्व का प्रत्येक द्रव्य का कार्य स्वतन्त्र रूप से होता है ऐसा अपने अन्तरंग मे अति प्रीति पूर्वक विचार कर। तथा आत्मा के एक रूप ज्ञायक स्वरूप का निश्चय करके उसमें विश्राम करते है तो पर द्रव्य को परिणमाने के भाव उत्पन्न ही नहीं होते तभी सच्चा धर्म होता

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३५

दिनांक 21 सितम्बर 2008 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

<u>पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है</u>

इस संसार में जीव अकेला जन्मता है, अकेला मरता है, अकेला परिभ्रमण करता है, अकेला मुक्त होता है। उसे किसी का साथ नहीं है। मात्र भ्रान्ति से वह दूसरे का आश्रय मानता है। भवपरिवर्तन करते-करते बड़ी मुश्किल से तुझे यह मनुष्यभव प्राप्त हुआ है, ऐसा उत्तम योग मिला है, उसमें आत्मा का हित कर लेने जैसा है। यह मनुष्यभव और उत्तम संयोग बिजली की चमक की भांति अल्प काल में विलीन हो जायेंगे। इसलिये जैसे तू अकेला ही दुःखी हो रहा है, वैसे अकेला ही सुख के मार्ग पर जा, अकेला ही मुक्ति को प्राप्त कर ले।

प्र०१. जैन धर्म का रहस्य जानकर स्वयं भी भगवान बनने के लिये क्या जानना आवश्यक है ?

उ० विश्व, द्रव्य-गुण-पर्याय, छह द्रव्य व सात तत्त्वों का ज्ञान आवश्यक है।

प्र०२. विश्व किसे कहते हैं ?

उ० जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं।

प्र०३. विश्व में जाति अपेक्षा व संख्या अपेक्षा छह द्रव्य कौन-कौन से हैं ?

उ० जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल यह छह द्रव्य है। जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है।

प्र०४. द्रव्य किसे कहते हैं ?

उ० गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्र०५. जीव द्रव्य किसे कहते हैं ?

उ० जिसमें चेतना अर्थात् ज्ञान-दर्शन रूप शक्ति है उसे जीव द्रव्य कहते हैं।

प्र०६. पुद्गल द्रव्य किसे कहते हैं ?

उ० जिसमें स्पर्श-रस-गंध-वर्ण पाया जाये उसे पुद्गल द्रव्य कहते हैं।

प्र०७. गुण किसे कहते हैं ? गुणों के कितने भेद हैं ?

उ० जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और उसकी सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहते हैं उन्हें गुण कहते हैं। गुण के दो भेद हैं - १. सामान्य गुण २. विशेष गुण

प्र०८. सामान्य गुण किसे कहते हैं ?

उ० जो गुण सर्व द्रव्यों में रहते हैं उन्हें सामान्य गुण कहते हैं।

प्र०९. सामान्य गुण कितने हैं और कौन-कौन से है ?

उ० सामान्य गुण अनंत है उनमें मुख्य छह हैं १. अस्तित्व २. वस्तुत्व ३. द्रव्यत्व ४. प्रमेयत्व ५. अगुरुलघुत्व ६. प्रदेशत्व

१. <u>अस्तित्व गुण</u> - जिस शक्ति के कारण द्रव्य का कभी नाश नहीं होता और किसी से उत्पन्न भी नहीं होता उसे अस्तित्व गुण कहते हैं।

२. <u>वस्तुत्व गुण</u> - जिस शक्ति के कारण द्रव्य में अर्थक्रियाकारित्व अर्थात प्रयोजनभूत क्रिया होती है उसे वस्तुत्व गुण कहते हैं।

३. <u>द्रव्यत्व गुण</u> - जिस शक्ति के कारण द्रव्य की अवस्थायें निरन्तर बदलती रहती हैं उसे द्रव्यत्व गुण कहते हैं।

४. <u>प्रमेयत्व गुण</u> - जिस शक्ति के कारण द्रव्य किसी न किसी ज्ञान का विषय अवश्य रहता है उसे प्रमेयत्व गुण कहते हैं।

५. <u>अगुरुलघुत्व गुण</u> - जिस शक्ति के कारण द्रव्य में द्रव्यपना कायम रहता है अर्थात एक द्रव्य दूसरे द्रव्यरूप नहीं होता, एक गुण दूसरे गुणरूप नहीं होता और द्रव्य में रहने वाले अनन्तगुण बिखर कर अलग-अलग नहीं होते उसे अगुरुलघुत्व गुण कहते हैं।

६. <u>प्रदेशत्व गुण</u> - जिस शक्ति के कारण द्रव्य का कोई न कोई आकार अवश्य रहता है उसे प्रदेशत्व गुण कहते हैं।

प्र०१०. अस्तित्व-वस्तुत्व-द्रव्यत्व गुणों का क्या रहस्य है ?

उ० अस्तित्व गुण के कारण प्रत्येक द्रव्य अनादिअनन्त कायम रहता हुआ, वस्तुत्व गुण के कारण अपनी प्रयोजनभूत क्रिया करता हुआ, द्रव्यत्व गुण के कारण वह कार्य निरन्तर बदल रहा है अर्थात् प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है, कोई किसी के आधीन नहीं है।

प्र०११. विशेष गुण किसे कहते हैं ?

उ० जो गुण सर्व द्रव्यों में न रहकर अपने-अपने द्रव्य में रहते हैं उन्हें विशेष गुण कहते हैं।

प्र०१२. जीवादि प्रत्येक द्रव्य में कौन-कौन से विशेष गुण हैं ?

उ० जीवद्रव्य - ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य, श्रद्धा, चारित्र, क्रियावतीशक्ति आदि।
पुद्गलद्रव्य - स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, क्रियावतीशक्ति आदि।
धर्मद्रव्य - गतिहेतुत्व आदि। अधर्म द्रव्य - स्थितिहेतुत्व आदि।
आकाश द्रव्य - अवगाहनहेतुत्व आदि। कालद्रव्य - परिणमनहेतुत्व आदि।

प्र०१३. पर्याय किसे कहते हैं ? पर्याय के कितने भेद हैं ?
उ० गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं। पर्याय के दो भेद हैं –
१. व्यंजन पर्याय २. अर्थ पर्याय

प्र०१४. विश्व, द्रव्य–गुण–पर्याय को जानने से क्या लाभ है ?
उ० कायम रहते हुये स्वयं ही बदलना–इस विश्व के प्रत्येक द्रव्य का स्वभाव है अर्थात PERMANANCY WITH A CHANGE.

प्र०१५. प्रयोजनभूत तत्व कितने हैं और कौन–कौन से हैं ?
उ० प्रयोजनभूत तत्व सात हैं – जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष।

प्र०१६. जीव तत्व किसे कहते हैं और जीव तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है ?
उ० जिसमें मेरा ज्ञान–दर्शन पाया जाये उसे जीव तत्व कहते हैं। एकमात्र जीव तत्व ही आश्रय करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र०१७. अजीव तत्व किसे कहते हैं और अजीव तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है ?
उ० जिनमें मेरा ज्ञान दर्शन नहीं है वे अजीव तत्व हैं। मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव द्रव्य अनन्त हैं, पुद्गल द्रव्य अनंतानंत हैं, धर्म–अधर्म आकाश एक–एक हैं और काल द्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अजीव तत्व जानने योग्य प्रयोजनभूत तत्व हैं।

प्र०१८. आस्रव तत्व किसे कहते हैं और आस्रव तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है ?
उ० शुभाशुभ विकारी भावों का उत्पन्न होना आस्रव तत्व है। आस्रव तत्व छोड़ने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र०१९. बंध तत्व किसे कहते हैं और बंध तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है ?
उ० शुभाशुभ विकारी भावों में अटकना बंध तत्व है। बंध तत्व छोड़ने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र०२०. संवर तत्व किसे कहते हैं और संवर तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है ?
उ० शुद्धि का प्रगट होना संवर तत्व है। संवर तत्व एकदेश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र०२१. निर्जरा तत्व किसे कहते हैं और निर्जरा तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है ?
उ० शुद्धि में वृद्धि होना निर्जरा तत्व है। निर्जरा तत्व एकदेश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र०२२. मोक्ष तत्व किसे कहते हैं ? और मोक्ष तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है?
उ० सम्पूर्ण शुद्धि का प्रगट होना मोक्ष तत्व है। मोक्ष तत्व पूर्ण प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र०२३. भगवान महावीर ने भगवान बनने के लिये क्या किया ?
उ० भगवान महावीर ने–शरीरादि अजीव तत्व हैं जानने योग्य है, अर्थात् मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जानकर अपने जीव–तत्व का आश्रय लेकर आस्रव–बंध अर्थात मोह राग–द्वेष को छोड़ संवर–निर्जरा अर्थात् सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र प्रगट करके क्र मोक्ष प्राप्त किया।

प्र०२४. द्रव्य–गुण–पर्याय का रहस्य समझने के लिये किस ग्रंथ की गाथाओं का सूक्ष्म रीति से अभ्यास आवश्यक है ?
उ० (१) श्री प्रवचनसार गाथा ६०, ६३, ६४, १५४ (२) श्री समयसार गाथ १०३, ३७२ (३) श्री पंचास्तिकाय गाथा ६, ७।

भजन

समय उठ चेत रे चेतन, भरोसा है नहीं पल का।
खड़ी मुख फाड़कर मृत्यु, भरोसा नहीं पल का।। टेक।।
बालपन खेल में खोया, जवानी नींद भर सोया।
बुढ़ापे में बढ़ी तृष्णा, हुआ नहीं बोझ भी हलका।।१।।
प्रभु का नाम नहीं लीना, उमर सारी बितादी यूँ।
बुलावा मौत का आया, चखो अब स्वाद निजफल का।।२।।
सिफारिश भी नहीं चलती, किसी की मौत के आगे।
राम–रावण बली हारे, पता जिनके न था बल का।।३।।
विजय गर मृत्यु पर चाहो, करो निज आत्म का चिंतन।
ज्ञान का दीप जागेगा, दिखेगा मार्ग शिवपुर का।।४।।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्स नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० 35 से प्रारम्भ कर धर्म ला अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इ प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आ स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.३० बजे
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे
3.	रविवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे
4.	मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
6.	बृहस्पतिवार	पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी	सांय ०४.०० से ०५.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- 13 जुलाई को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३४ का पारितोषिक वितरण भी २१ सितम्बर २००८ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

Harshida Jain के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३६

दिनांक 23 नवम्बर 2008 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं। जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल–प्रत्येक द्रव्य अनन्त सामान्य गुणों और अनन्त विशेष गुणों का समूह हैं। प्रत्येक द्रव्य में समान रूप से पाये जाने वाले गुण–सामान्य गुण हैं जो कि अनन्त हैं, उनमें मुख्य छह हैं–अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरूलघुत्व और प्रदेशत्व। सब द्रव्यों में न रहकर अपने–अपने द्रव्य में रहने वाले गुण–विशेष गुण हैं जिनसे द्रव्यों की पृथकता का ज्ञान होता है। प्रत्येक द्रव्य में गुण संख्या अपेक्षा समान हैं कम या ज्यादा नहीं। प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी पर्यायें हैं। इसलिये प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण में हर समय क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद और पूर्व पर्याय का व्यय स्वयं से ही होता है और द्रव्य गुण अनादिअनन्त एकरूपध्रुव रहते हैं। अतः प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र हैं, कोई किसी के आधीन नहीं है। इस वस्तुस्वरूप का पता न होने के कारण अनादि काल से जीव की शरीर, धन मकान आदि पुद्गलों में एकत्वबुद्धि है जिसके कारण अमूर्तिक आत्मा की पहचान नहीं होती और जीव चारों गतियों में जन्म मरण के दुःख उठाता है, यदि पुद्गलों के स्वरूप का ज्ञान हो जाये तो शरीरादि में एकत्वरूप मोह का नाश करके जीव स्वयं भगवान बन सकता है।

प्र०१. पुद्गल किसे कहते हैं ?

उ० जिसमें स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण पाये वह पुद्गल है।

प्र०२. पुद्गल द्रव्य के स्पर्श आदि गुणों की कितनी पर्यायें होती हैं ?

उ० पुद्गल द्रव्य के स्पर्श आदि गुणों की २७ पर्यायें होती हैं।

स्पर्श गुण – हल्का–भारी, ठंडा–गरम, रूखा–चिकना, कड़ा–नरम = यह आठ पर्यायें पुद्गल द्रव्य के स्पर्श गुण में से आती हैं।

रस गुण – खट्टा–मीठा–कड़वा–चरपरा–कषायला= ये पाँच पर्यायें पुद्गल के रस गुण में से आती हैं।

पंच परमेष्ठि द्वारा बताया गया वस्तु स्वरूप ...

गंध गुण – सुगन्ध और दुर्गन्ध = ये दो पर्यायें पुद्गल द्रव्य के गंध गुण में से आती हैं।

वर्ण गुण – काला–पीला–नीला–लाल–सफेद = ये पाँच पर्यायें पुद्गल द्रव्य के वर्ण गुण में से आती है।

शब्द की – सात पर्यायें होती हैं जो शब्द रूप पुद्गल स्कन्धों में से आती हैं।

प्र०३. पुद्गल के कितने भेद हैं ?

उ० दो भेद हैं (१) परमाणु (२) स्कन्ध

प्र०४. परमाणु किसे कहते हैं ?

उ० जिसका दूसरा विभाग नहीं हो सकता ऐसे सबसे छोटे पुद्गल को परमाणु कहते हैं।

प्र०५. स्कन्ध किसे कहते हैं ?

उ० दो या दो से अधिक परमाणुओं के बंध को स्कन्ध कहते हैं।

प्र०६. स्कन्ध के कितने भेद हैं ?

उ० स्कन्ध के आहारवर्गणा, तैजसवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माणवर्गणा इत्यादि २२ भेद हैं।

प्र०७. आहारवर्गणा किसे कहते हैं ?

उ० जो पुद्गल स्कन्ध औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीरों की रचना करता है उसको आहारवर्गणा कहते हैं ?

प्र०८. तैजसवर्गणा किसे कहते हैं ?

उ० जिस वर्गणा से तैजस शरीर बनता है उसको तैजसवर्गणा कहते हैं।

प्र०९. भाषावर्गणा किसे कहते हैं ?

उ० जो पुद्गल स्कन्ध शब्द रूप से परिणत होता है उसको भाषावर्गणा कहते हैं।

प्र०१०. मनोवर्गणा किसे कहते हैं ?

उ० जिस पुद्गल स्कन्ध से अष्टदल कमल के आकार द्रव्यमन की रचना होती है उसको मनोवर्गणा कहते हैं।

प्र०११. कार्माणवर्गणा किसे कहते हैं ?

उ० जिस पुद्गल स्कन्ध से कार्माण शरीर बनता है उसको कार्माणवर्गणा कहते हैं।

प्र०१२. शरीर कितने हैं ?

उ० शरीर पाँच हैं – (१) औदारिक शरीर (२) वैक्रियक शरीर (३) आहारक शरीर (४) तैजस शरीर (५) कार्माण शरीर

प्र०१३. औदारिक शरीर किसे कहते हैं ?

उ० मनुष्य और तिर्यंचों के स्थूल शरीर को औदारिक शरीर कहते हैं।

प्र०१४. वैक्रियक शरीर किसे कहते हैं ?

उ० जो छोटे–बड़े, पृथक–अपृथक आदि अनेक क्रियाओं को करे ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियक शरीर कहते हैं।

प्र०१५.आहारक शरीर किसे कहते हैं ?

उ० आहारक ऋद्धिधारी छठे गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्वों में कोई शंका होने पर अथवा जिनालयादि की वन्दना करने के लिए मस्तक से एक हाथ प्रमाण स्वच्छ और सफेद, सप्तधातु रहित पुरूषाकार जो पुतला निकलता है उसको आहारक शरीर कहते हैं।

प्र०१६.तैजस शरीर किसे कहते हैं ?

उ० औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीनों शरीरों में कान्ति उत्पन्न करने वाले शरीर को तैजस शरीर कहते हैं।

प्र०१७.कार्माण शरीर किसे कहते हैं ?

उ० आठ कर्मों के समूह को कार्माण शरीर कहते हैं।

प्र०१८.बंध किसे कहते हैं ?

उ० जिस संबंध विशेष से अनेक वस्तुओं में एकपने का ज्ञान होता है उस संबंध विशेष को बंध कहते हैं।

प्र०१९ बंध कितने प्रकार के होते हैं ?

उ० बंध तीन प्रकार के हैं – (१) पुद्गल बंध (२) उभय बंध (३) जीव बंध

प्र०२०.पुद्गल बंध किसे कहते हैं ? पुद्गल बंध में क्या समझना है ?

उ० जिस संबंध विशेष से अनेक पुद्गलों में एकपने का ज्ञान होता है उस संबंध विशेष को पुद्गल बंध कहते हैं। जैसे–शरीर, कार, मकान, धन, जेवर आदि। पुद्गल बंध में यह समझना है कि शरीर, कार आदि एक दिखने वाली वस्तु में अनेक पुद्गल हैं, एक पुद्गल का दूसरे पुद्गल से संबंध नहीं है, तो मुझ आत्मा से संबंध कैसे हो सकता है।

प्र०२१.उभय बंध किसे कहते हैं ? उभय बंध में क्या समझना है ?

उ० जिस संबंध विशेष से आत्मा और शरीर में एकपने का ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशेष को उभय बंध कहते हैं। जैसे–मनुष्य, देव, नारकी, पशु आदि। उभय बंध में यह समझना है कि मनुष्य आदि उभय बंधों में ज्ञान स्वरूप आत्मा अलग है और अनेक पुद्गलों का पिंड मनुष्य शरीर अलग है।

प्र०२२.जीव बंध किसे कहते हैं ? जीव बंध में क्या समझना है ?

उ० जिस संबंध विशेष से आत्मा और राग द्वेष के भावों में एकपने का ज्ञान होता है उस संबंध विशेष को जीव बंध कहते हैं। जैसे– मैं रागी हूँ, मैं द्वेषी हूँ, मैं क्रोधी हूँ, आदि। जीव बंध में यह समझना है कि आत्मा अलग है और राग–द्वेषादि भाव अलग हैं।

अभ्यास के लिए प्रश्न

१. निम्नलिखित पर्यायें किस द्रव्य के किस गुण का कार्य है–
हल्कापन, गोरापन, दुर्गंध, खट्टापन, मीठापना, नरमपना, मीठे का ज्ञान, रूखा, कड़ा, राग–द्वेष, सुख, पीला व लाल।

२. निम्न कौन–कौन सा बंध है, इसमें अनेक वस्तुयें क्या है ?
मनुष्य, मैं क्रोधी हूँ, स्त्री, कार, मकान, मैं दयावाला, मैं रागी हूँ, देव, शेर बिच्छू, कीड़ी, लड़का, पुत्री।

३. निम्नलिखित के शरीर का नाम क्या है ? और उसका कर्ता कौन है?
निगोदिया शरीर, पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, कीड़ा–मकोड़ा, मक्खी, मच्छर, चिड़िया, कौआ, तोता, मछली, हाथी–शेर, कुत्ता, बिल्ली, मनुष्य, नारक, आहारक ऋद्धिधारी के मस्तक का पुतला, आठ कर्म, मनुष्य शरीर की चमक, आहारक शरीर की चमक।

४. निम्न कार्यों की कर्ता कौन सी वर्गणा है –
बोलना, चलना, हार, कपड़े, मकान, द्रव्यमन, तैजस शरीर, घंटे की आवाज, दौड़ना, कार्माण शरीर, रोटी, मधुर स्वर।

भजन

मैं ज्ञानानन्द स्वभावी हूँ, मैं ज्ञानानन्द स्वभावी हूँ।।टेक।।
मैं हूँ अपने में स्वयं पूर्ण, परकी मुझे कुछ गन्ध नहीं।
मैं अरस अरूपी अस्पर्शी, परसे कुछ भी सम्बन्ध नहीं।।१।।
मैं राग–रंग से भिन्न भेद से, भी मैं भिन्न निराला हूँ।।
मैं हूँ अखन्ड चैतन्य पिण्ड, निज रस में रमने वाला हूँ।।२।।
मैं ही मेरा कर्त्ता धर्ता, मुझ में पर का कुछ काम नहीं।।
मैं मुझ में रमने वाला हूँ, पर में मेरा विश्राम नहीं।।३।।
मैं शुद्ध बुद्ध अविरूद्ध एक, पर परणति से अप्रभावी हूं।।
आत्मानुभूति से प्राप्त तत्व, मैं ज्ञानानन्द स्वभावी हूँ।।४।।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० ३६ से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.३० बजे
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे
3.	रविवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे
4.	मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
6.	बृहस्पतिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी		सांय ०४.०० से ०५.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं मे हिस्सा ले सकते है।
- २१ सितम्बर को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३५ का पारितोषिक वितरण भी २३ नवम्बर २००८ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३७

दिनांक 15 फरवरी 2009 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

हे आत्मा ! शरीर, धन परिवार वह कहीं संसार नहीं है। अपनी पर्याय में जो मोह-राग-द्वेषरूप विभाव भाव हैं वही संसार है। यदि शरीर, धन आदि संसार हो तो मृत्यु होने पर यह शरीर, धन आदि सब यहीं पड़े रह जायेंगे, तो क्या तेरा संसार मिट जायेगा और मोक्ष हो जायेगा ? भाई ! शरीर-धन आदि तो संसार हैं ही नहीं। अपने ज्ञानस्वरूप की महिमा से च्युत होकर पर में एकत्व, कर्तृत्व और भोक्तृत्व का भाव अर्थात द्रव्य-गुण-पर्याय सम्बन्धी जो मूढ़तारूप परिणाम है वहीं संसार है।

प्र०१. श्री कार्तिकेय अनुप्रेक्षा गाथा ३२१ से ३२३ तक में विश्व किसे कहते हैं और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ० (१) जिस जीव को जिस देश में, जिस काल में, जिस विधि से जन्म-मरण सुख-दुःख तथा रोग और द्रारिद्रय इत्यादि जैसे सर्वज्ञ देव ने जाने हैं उसी प्रकार वे सब नियम से होंगे। (गाथा-३२१)

(२) सर्वज्ञदेव ने जिस प्रकार जाना है उसी प्रकार उस जीव के उसी देश में, उसी काल में और उसी विधि से नियमपूर्वक सब होता है। उसके निवारण करने के लिए इन्द्र या जिनेन्द्र, तीर्थंकरदेव कोई भी समर्थ नहीं है। (गाथा ३२२)

(३) इस प्रकार निश्चय से सर्वद्रव्यों अर्थात् जीव अनन्त, पुद्‌गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक एक और कालद्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात को तथा इन द्रव्यों की समस्त पर्यायों को जो सर्वज्ञ दे अर्थात अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार जानता, है श्रद्ध करता है वह शुद्ध सम्यग्दष्टि है; और जो ऐसी श्रद्धा नहीं कर शंका-सन्देह करता है वह सर्वज्ञ के आगम के प्रतिकूल है - प्रगट में मिथ्यादृष्टि है। (गाथा ३२३)

प्र०२. अरहंत भगवान ने अपने केवलज्ञान में विश्व में कितने द्रव्य देखे हैं और सब द्रव्यों का स्वरूप कैसा देखा है ?

उ० (१) इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्‌गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक एक और कालद्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात हैं। ये सब वस्तुयें अनादिअनन्त है, स्वतः सिद्ध है अर्थात् किसी के द्वारा बनाई नहीं गई है। ये सब अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न हैं। यह सब अनादिनिधन वस्तुएँ अपनी-अपनी मर्यादासहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुएँ कोई किसी के आधीन नहीं हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुएँ कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती।

(श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ ५२)

(२) जिनेन्द्र कथित विश्व व्यवस्था- इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्‌गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और कालद्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं, उतनी पर्यायें हैं, ये सब पर्यायें क्रम में बन्धी हुई हैं। प्रत्येक गुण में, एक ही समय में क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय स्वयं होता है और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

(श्री प्रवचनसार, गाथा ६३)

(३) इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्‌गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और कालद्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात हैं। ये सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अनन्त धर्मों अर्थात अपने अनन्त गुण और उनकी त्रिकालवर्ती पर्यायों के चक्र को स्पर्श करते हैं ; तथापि वे परस्पर एक-दूसरे को स्पर्श नहीं करते हैं। (समयसार गाथा ३१)

प्र०३. अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार पदार्थों के स्वरूप को न जानने का फल क्या है ?

उ० अज्ञानता के कारण यह जीव अपने ज्ञानस्वरूप की महिमा से च्युत होकर परद्रव्य गुण पर्याय में एकत्वरूप मिथ्या अध्यवसान करता है। जिसका फल चारों गतियों में घूमकर निगोद है।

प्र०४. परद्रव्य-गुण-पर्याय में एकत्वरूप मिथ्या अध्यवमान क्या है और इस अनादिकाल की उल्टी मान्यता का अभाव हम कैसे करें ताकि हमें चारों गतियों में जन्म-मरण के दुख न उठाने पड़े ?

उ० श्री समयसार गाथा २३७ से २७० तक का रहस्य नीचे दिये अनुसार समझे।

द्रव्य सम्बन्धी मिथ्या अध्यवसान

मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ-इस बात का पता न होने से, मैं बीना हूं और हम चार हैं-

१. –ऐसा अनादिकाल का श्रद्धान अगृहीत मिथ्यादर्शन है।
२. –ऐसा अनादिकाल का ज्ञान अगृहीत मिथ्याज्ञान है।
३. –ऐसा अनादिकाल का आचरण अगृहीत मिथ्याचारित्र है।
४. –ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ श्रद्धान गृहीत मिथ्यादर्शन है।
५. –ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ ज्ञान गृहीत मिथ्याज्ञान है।
६. –ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ आचरण गृहीत मिथ्याचारित्र है।

<u>इस अध्यवसान के अभाव का उपाय</u>

वीना आदि चार से सर्वथा भिन्न, मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूं –
१. –ऐसा जानकर, निज आत्मा का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है।
२. –ऐसा जानकर, निज आत्मा का ज्ञान सम्यकज्ञान है।
३. –ऐसा जानकर निज आत्मा में आचरण सम्यकचारित्र है।

<u>गुण सम्बन्धी मिथ्या अध्यवसान</u>

ज्ञान मुझ आत्मा के ज्ञान गुण में से आता है और सुख मुझ आत्मा के सुख गुण में से आता है–इस बात का पता न होने से ज्ञेयों से ज्ञान होता है, इन्द्रियों से ज्ञान होता है और पांच इन्द्रियों के विषयों से सुख मिलता है।
१. –ऐसा अनादिकाल का श्रद्धान अगृहीत मिथ्यादर्शन है।
२. –ऐसा अनादिकाल का ज्ञान अगृहीत मिथ्याज्ञान है।
३. –ऐसा अनादिकाल का आचरण अगृहीत मिथ्याचारित्र है।
४. –ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ श्रद्धान गृहीत मिथ्यादर्शन है।
५. –ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ ज्ञान गृहीत मिथ्याज्ञान है।
६. –ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ आचरण गृहीत मिथ्याचारित्र है।

<u>इस अध्यवसान के अभाव का उपाय</u>

ज्ञेयों से, इन्द्रियों से और पांचों इन्द्रियों के विषयों से सर्वथा भिन्न ज्ञान मुझ आत्मा के ज्ञानगुण में से आता है और सुख मुझ आत्मा के सुखगुण में से आता है –
१. –ऐसा जानकर ज्ञानस्वरूप सुखस्वरूप निजात्मा का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है।
२. –ऐसा जानकर ज्ञानस्वरूप सुखस्वरूप निजात्मा का ज्ञान सम्यग्ज्ञान है।
३. –ऐसा जानकर ज्ञानस्वरूप सुखस्वरूप निजात्मा में आचरण सम्यक्चारित्र है।

<u>पर्याय सम्बन्धी मिथ्या अध्यवसान</u>

मुझ आत्मा का कार्य ज्ञाता–दृष्टा है–इस बात का पता न होने से वीना आदि हम चार उठते–बैठते, खाते–पीते हैं –
१. –ऐसा अनादिकाल का श्रद्धान अगृहीत मिथ्यादर्शन है।
२. –ऐसा अनादिकाल का ज्ञान अगृहीत मिथ्याज्ञान है।
३. –ऐसा अनादिकाल का आचरण अगृहीत मिथ्याचारित्र है।

श्री f
31. श

४. –ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ श्रद्धान गृहीत मिथ्यादर्शन है।
५. –ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ ज्ञान गृहीत मिथ्याज्ञान है।
६. –ऐसा दूसरों के कहने से दृढ़ आचरण गृहीत मिथ्याचारित्र है।

<u>इस अध्यवसान के अभाव का उपाय</u>

वीना आदि चार के उठने–बैठने, खाने–पीने से सर्वथा भिन्न मुझ आत्मा का कार्य ज्ञाता–दृष्टा है–
१. –ऐसा जानकर ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है।
२. –ऐसा जानकर ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव का ज्ञान सम्यग्ज्ञान है।
३. –ऐसा जानकर ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव में आचरण सम्यक्चारित्र है।

प्र०५. निम्न प्रश्नों के उत्तर याद कीजिए –
१. विश्व २. विश्व की व्यवस्था ३. द्रव्य ४. गुण ५. पर्याय ६. द्रव्यों के नाम व संख्या ७. छहों द्रव्यों की परिभाषा ८. छहों द्रव्यों की सत्ता ९. पुद्गल के भेद १०. परमाणु ११. स्कंध १२. स्कंध के भेद १३. पुद्गल की २७ पर्यायें १४. तीन प्रकार का बंध व परिभाषा १५. गुणों के भेद १६. सामान्य गुण नाम व संख्या १७. विशेष गुण १८. सात तत्व के नाम व परिभाषा।

प्र०६. निम्नलिखित पर्यायों का कर्ता कौन है–
हल्कापन, दुर्गंध, शब्द का ज्ञान, सुरीला गाना, लड़का, मकान, सोने का हार, बोलना, चलना, आठकर्म, नारकशरीर, मनुष्यशरीर, द्रव्यमन, राग–द्वेष, खट्टापना।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० 37 से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1. सोमवार से शुक्रवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.३० बजे
2. शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे
3. रविवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे
4. मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
5. बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
6. बृहस्पतिवार	पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी	सांय ०४.०० से ०५.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते हैं।
- <u>२३ नवम्बर को सम्पन्न</u> वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३६ का पारितोषिक वितरण भी १५ फरवरी २००६ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में.

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३८

दिनांक 26 अप्रैल 2009 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

आत्मा ने अज्ञान से चार गतियों में भ्रमण करते हुए सबसे अधिक भव एकेन्द्रियादि तिर्यंचगति के धारण किये हैं। तदुपरांत मनुष्य, नरक, और स्वर्ग के भव भी अनन्तबार किये हैं। उनमें भी मनुष्य की अपेक्षा नरक के और नरक की अपेक्षा स्वर्ग के भव अनन्तगुने किये हैं। प्रमाण में असंख्य भव स्वर्ग के और नरक के करे तब एक भव मनुष्य का मिलता है ; ऐसी मनुष्यभव की दुर्लभता है, और ऐसे दुर्लभ मनुष्य भव में जैन धर्म का वीतरागी उपदेश सुनने को मिलना अत्यन्त दुर्लभ है। ऐसा दुर्लभ मनुष्यभव और वीतरागी जैनधर्म का उपदेश तुझे वर्तमान में महाभाग्य से प्राप्त हुआ है, तो अब तू शीघ्र जाग, सावधान हो और शरीरादि परद्रव्यों की प्रीति छोड़कर आत्मा की प्रतीति द्वारा सम्यग्दर्शन प्रगट करके भवदुःखों का अन्त कर।

प्र०१. तुम कौन हो ?

उ० मैं ज्ञान–दर्शन–चारित्र आदि अनन्तगुणों का अभेद पिण्ड आत्मा हूँ।

प्र०२. तुम कौन नहीं हो ?

उ० अत्यन्त भिन्न पर पदार्थ, आँख, नाक, कान, शरीर–मन–वाणी, आठ कर्म, शुभाशुभ विकारीभाव मैं नहीं हूँ।

प्र०३. तुम कब से हो ?

उ० मैं तो जन्म–मरण रहित, अनादिअनन्त, अनादिकाल से हूँ।

प्र०४. जन्म–मरण तो होता है, क्या यह बात असत्य है ?

उ० शरीर का संयोग–वियोग होता है, मुझ आत्मा का नहीं।

प्र०५. तुम दुखी क्यों हो ?

उ० ज्ञान-दर्शनादि अभेद, एक, निज आत्मा को भूलकर, मोहरूपी शराब पीने के कारण अनादिकाल से एक-एक समय करके, अपनी मूर्खता से दुःखी हो रहा हूँ।

प्र०६. अपनी मूर्खता क्या है ?

उ० शरीरादि पर पदार्थों में अपनेपने की मान्यता अर्थात् मिथ्यात्व-यह अपनी मूर्खता है।

प्र०७. मिथ्यात्व कैसा पाप है ?

उ० मिथ्यात्व जुआ, माँस आदि सप्त व्यसनों से भी बड़ा पाप है।

प्र०८. मिथ्यात्व कितने प्रकार का है ?

उ० दो प्रकार का है। (१) अगृहीत मिथ्यादर्शन-ज्ञान-चारित्र-जो अनादिकाल से एक-एक समय करके चला आ रहा है। (२) गृहीत मिथ्यादर्शन-ज्ञान-चारित्र – जो विशेषरूप से मनुष्य जन्म पाने पर कुदेव, कुगुरु, कुधर्म से समय-समय पर नया-नया ग्रहण करता है।

प्र०९. अगृहीत-गृहीत मिथ्यादर्शन ज्ञान चारित्र कितने प्रकार का है ?

उ० (१) मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूं, इस बात का पता न होने से-मैं वीना हूँ, हम चार हैं- ऐसा पर में एकत्व का भावरूप द्रव्य सम्बन्धी अगृहीत-गृहीत मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान, मिथ्याचारित्र।

(२) ज्ञान मुझ आत्मा के ज्ञान गुण में से आता है और सुख मुझ आत्मा के सुख गुण में से आता है, इस बात का पता न होने से ज्ञेयों से ज्ञान होता है, इन्द्रियों से ज्ञान होता है, पांच इन्द्रियों के विषयों से सुख मिलता है- ऐसा पर में भोक्तृत्व का भावरूप गुण सम्बन्धी अगृहीत-गृहीत मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान, मिथ्याचारित्र।

(३) मुझ आत्मा का कार्य ज्ञाता दृष्टा है, इस बात का पता न होने से वीना आदि हम चार उठते बैठते, खाते पीते हैं – ऐसा पर में कृर्तत्व का भावरूप पर्याय सम्बन्धी अगृहीत-गृहीत मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान, मिथ्याचारित्र।

प्र०१०. द्रव्य-गुण-पर्याय सम्बन्धी मिथ्यात्व के अभाव का उपाय क्या है ?

उ० (१) वीना आदि चार से सर्वथा भिन्न मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ, (२) ज्ञेयों से, इन्द्रियों से, पांच इन्द्रियों के विषयों से सर्वथा भिन्न, ज्ञान मुझ आत्मा के ज्ञानगुण में से आता है और सुख मुझ आत्मा के सुखगुण में से आता है, (३) वीना आदि चार के उठने-बैठने, खाने-पीने से सर्वथा भिन्न मुझ आत्मा का कार्य ज्ञाता-दृष्टा है – – ऐसा जानकर निज आत्मा का श्रद्धान-ज्ञान-आचरण करना ही अगृहीत-गृहीत मिथ्यात्व के अभाव का उपाय है।

प्र०११. तुमने आज तक क्या किया ?

उ० शरीर, धन, मकान आदि पर पदार्थों को अपना मानकर मात्र मोह-राग द्वेष किया।

प्र०१२. अब मैं क्या करूँ ?

उ० ज्ञान-दर्शन-चारित्र आदि अनंतगुणों का अभेद पिण्ड जो स्वयं आत्मा है उसकी पहचानकर।

प्र०१३. मैं अपनी पहचान कैसे करूं ?

उ० मिथ्यादृष्टि के कार्यक्षेत्र की मर्यादा विकारी भावों तक हैं, ज्ञानियों की मर्यादा शुद्ध भावों तक है। परन्तु पर पदार्थों में ज्ञानी-अज्ञानी कुछ भी नहीं कर सकता है-ऐसा जानकर अपनी आत्मा का आश्रय ले तो स्वयं की पहचान हो।

प्र०१४. श्री समयसार कलश २११ के चार बोल क्या है ?

उ० कर्ता-कर्म सम्बन्धी भेदज्ञान कराते हुए आचार्य देव कहते हैं कि –

ननु परिणाम एव किल कर्म विनिश्चयतः
स भवति नापरस्य परिणामिन एव भवेत्।
न भवति कर्तृशून्यमिह कर्म न चैकतया
स्थितिरिह वस्तुनो भवतु कर्तृ तदेव ततः।।२११।।

(१) वास्तव में <u>परिणाम</u> ही निश्चय से कर्म है।

(२) <u>परिणाम</u> अपने आश्रयभूत <u>परिणामी</u> का ही होता है, अन्य का नहीं।

(३) <u>कर्म</u> <u>कर्ता</u> के बिना नहीं होता।

(४) <u>वस्तु</u> की एकरूप स्थिति नहीं रहती।

प्र०१५. निम्न वाक्यों पर कलश २११ के चार बोल लगाकर समझाइये।

(१) मैं वीना हूँ (२) मैंने मुँह से शब्द बोला (३) मैंने रूपया कमाया (४) मैंने किताब उठाई (५) मुझे आँख से रूप का ज्ञान हुआ (६) मुझे शास्त्र से ज्ञान हुआ (७) यह मेरा सोने का हार है (८) मैंने रोटी बनाई (९) मैं दौड़ा (१०) मैंने गाड़ी चलाई।

प्र०१६. मोक्षार्थी को सदा स्मरण रखने योग्य परमागम के अमूल्य सिद्धान्त।

उ० (१) एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का स्पर्श नहीं करता है।
(श्री समयसार, गाथा ३)

(२) प्रत्येक द्रव्य की प्रत्येक पर्याय क्रमबद्ध ही होती है।
(श्री समयसार, गाथा ३०८ से ३११ तक)

(३) उत्पाद उत्पाद से है व्यय या ध्रुव से नहीं है।
(श्री प्रवचनसार गाथा १०१)

(४) प्रत्येक पर्याय अपने जन्मक्षण में ही होती है।
(श्री प्रवचनसार गाथा १०२)

देव स्तुति

सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानंद रसलीन।
सो जिनेंद्र जयवंत नित, अरिरजरहस विहीन।।१।।

जय वीतराग विज्ञानपूर। जय मोहतिमिर को हरन सूर।।
जय ज्ञान अनंतानंत धार। दृगसुख वीरजमंडित अपार।।२।।

जय परमशांत मुद्रा समेत। भविजन को निज अनुभूति हेत।।
भवि भागन वचजोगेवशाय। तुम धुनि ह्वैसुनिविभ्रमनशाय।।३।।

तुम गुण चिंतत् निजपर विवेक। प्रगटै विघटै आपद अनेक।।
तुम जगभूषण दूषणवियुक्त। सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त।।४।।

प्र०१७. निम्न प्रश्नों के उत्तर याद कीजिए –

१. विश्व २. विश्व की व्यवस्था ३. द्रव्य ४. गुण ५. पर्याय ६. द्रव्यों के नाम व संख्या ७. छहों द्रव्यों की परिभाषा ८. छहों द्रव्यों की सत्ता ९. पुद्गल के भेद १०. परमाणु ११. स्कंध १२. स्कंध के भेद १३. पुद्गल की २७ पर्यायें १४. तीन प्रकार का बंध व परिभाषा १५. गुणों के भेद १६. सामान्य गुण नाम व संख्या १७. विशेष गुण १८. सात तत्व के नाम व परिभाषा।

प्र०१८. निम्नलिखित पर्यायों का कर्त्ता कौन है–

हल्कापन, दुर्गंध, शब्द का ज्ञान, सुरीला गाना, लड़का, मकान, सोने का हार, बोलना, चलना, आठकर्म, नारकशरीर, मनुष्यशरीर, द्रव्यमन, राग–द्वेष, खट्टापना।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० 37 से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन.धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.३० बजे
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे
3.	रविवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे
4.	मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
6.	बृहस्पतिवार	पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी	सांय ०४.०० से ०५.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- <u>१५ फरवरी को सम्पन्न</u> वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३७ का पारितोषिक वितरण भी २६ अप्रैल २००९ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३९

दिनांक 12 जुलाई 2009 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

<u>पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है</u>

जैसे किसी को ग्रीष्म ऋतु में पर्वत के शिखर पर अधिक ताप और तीव्र तृषा लगी हो, उस समय पानी की एक बूँद की ओर भी उसका लक्ष जाता है और वह उसे लेने को दौड़ता है, उसी प्रकार जिस जीव को संसार का ताप लगा हो और सत् की तीव्र पिपासा जागी हो, वह सत् की प्राप्ति के लिये उग्र प्रयत्न करता है। वह आत्मार्थी जीव 'ज्ञान' लक्षण द्वारा ज्ञायक आत्मा की प्रतीति करके अंतर में देह से भिन्न ज्ञानस्वरूप आत्मा के अस्तित्व को ख्याल में ले, तो उसे ज्ञायक तत्व प्रगट हो, संसार का नाश हो।

प्र०१. श्री समयसार ग्रन्थ का, प्रत्येक जीव के शुद्ध स्वरूप को दर्शाने वाला प्रथम कलश क्या है ?

उ० सर्वप्रथम मंगलाचरण के रूप में शुद्ध आत्मा को नमस्कार करते हैं :–

नमः समयसाराय स्वानुभूत्या चकासते।
चित्स्वभावाय भावाय सर्वभावान्तरच्छिदे।।१।।

(१) (नमः समयसाराय) 'समय' अर्थात् जीव नामक पदार्थ, उसमें सार जो द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म रहित शुद्ध आत्मा–उसे मेरा नमस्कार हो।

(२) शुद्ध आत्मा कैसा है (भावाय) शुद्ध सत्तास्वरूप वस्तु है, और

(३) शुद्ध आत्मा कैसा है (चित्स्वभावाय) आत्मा का स्वभाव चेतनागुणरूप है, और

(४) शुद्ध आत्मा कैसा है (स्वानुभूत्या चकासते) अपने को अपने से ही जानता है, और

(५) शुद्ध आत्मा कैसा है (सर्वभावान्तरच्छिदे) निज आत्मा के अलावा विश्व के अनन्त जीव, अनन्तान्त पुद्गल, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और लोक प्रमाण असंख्यात काल द्रव्यों को, उनकी त्रिकालवर्ती पर्यायों सहित, एक समय में स्वतः ही जानने वाला है, करने वाला नहीं है।

इस प्रकार से शुद्ध आत्मा को ही इष्टदेव सिद्ध करके शुद्ध आत्मा को ही नमस्कार किया है।

प्र०२. 'नमः समयसाराय' में अपनी आत्मा को ही क्यों नमस्कार किया है औरों को क्यों नहीं ?

उ० इस विश्व में समयसार अर्थात निज शुद्धजीव ही परमार्थ से नमस्कार करने योग्य है दूसरा कुछ नहीं है क्योंकि निज जीव तत्व सारे विश्व से भिन्न है।

प्र०३. आदिनाथ जी, महावीर स्वामी आदि किसी इष्टदेव का नाम लेकर नमस्कार क्यों नहीं किया ?

उ० परमार्थतः सर्व इष्टदेवों का सामान्यस्वरूप सर्व कर्म रहित, सर्वज्ञ, वीतराग शुद्ध आत्मा ही है इसलिए शुद्ध आत्मा के नमस्कार में सर्व इष्टदेवों का नमस्कार गर्भित है।

प्र०४. नमस्कार कितने हैं ?

उ० पाँच है ; (१) शक्तिरूप नमस्कार (जीव तत्व)। (२) एकदेश भाव नमस्कार (संवर निर्जरा)। (३) द्रव्य नमस्कार (आस्रव–बंध)। (४) जड़ नमस्कार (अजीव तत्व)। (५) पूर्ण भाव नमस्कार (मोक्ष तत्व)।

प्र०५. इन पाँच नमस्कारों का स्वरूप समझाइए।

उ० (१) ज्ञान दर्शन चारित्र आदि अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड रूप भगवान आत्मा शक्तिरूप नमस्कार है।

(२) शक्तिरूप नमस्कार का आश्रय लेने से प्रथम एकदेश भाव नमस्कार की प्राप्ति होती है।

(३) शक्तिरूप नमस्कार का जब तक पूर्ण आश्रय नहीं होता है तो ज्ञानियों को अपनी–अपनी भूमिकानुसार वीतराग सर्वज्ञदेव को नमस्कार करने आदि का जो राग उत्पन्न होता है वह द्रव्य नमस्कार है।

(४) शरीर की हाथ जोड़ने आदि की क्रिया रूप जो नमस्कार होता है वह जड़ नमस्कार है। द्रव्य नमस्कार और जड़ नमस्कार का निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है।

(५) ज्ञानी जानता है कि ये शुभ राग हेय हैं, बंध का कारण है, शरीर की हाथ जोड़ने आदि रूप क्रिया सर्वथा पुद्गलों की है, मुझ आत्मा की नहीं, अतः शरीरादि परद्रव्यों का लक्ष्य छोड़कर शक्तिरूप रूप नमस्कार में पूर्ण स्थिरता करके पूर्ण भाव नमस्कार की प्राप्ति कर लेता है।

प्र०६. इन पांच नमस्कारों पर (१) हेय–ज्ञेय–उपादेय (२) नौ पदार्थ (३) सुखदायक–दुःखदायक और (४) चार काल लगाकर समझाइये ?

–: हेय–ज्ञेय–उपादेय :–

(क) हेय अर्थात् छोड़ने योग्य (ख) ज्ञेय अर्थात् जानने योग्य

(ग) उपादेय अर्थात् – १. आश्रय करने उपादेय
२. एकदेश प्रगट करने योग्य उपादेय
३. पूर्ण प्रगट करने योग्य उपादेय

–: नौ पदार्थ :–

(२) नौ पदार्थ – (१) जीव (२) अजीव (३) आस्रव (४) बंध (५) पुण्य (६) पाप (७) संवर (८) निर्जरा (९) मोक्ष

–: सुखदायक–दुःखदायक :–

(१) परम सुखदायक (२) एकदेश सुखदायक (३) दुःखदायक (४) न सुखदायक न दुःखदायक (५) पूर्ण सुखदायक

–: चार काल :–

(१) अनादिअनन्त (२) अनादिसान्त (३) सादिसान्त (४) सादिअनन्त

प्र०७. श्री समयसार कलश २११ के चार बोल क्या है ?

उ० कर्ता–कर्म सम्बन्धी भेदज्ञान कराते हुए आचार्य देव कहते हैं कि –

ननु परिणाम एव किल कर्म विनिश्चयतः
स भवति नापरस्य परिणामिन एव भवेत्।
न भवति कर्तृशून्यमिह कर्म न चैकतया
स्थितिरिह वस्तुनो भवतु कर्तृ तदैव ततः।।२११।।

(१) वास्तव में परिणाम ही निश्चय से कर्ता का कर्म है।

(२) परिणाम अपने आश्रयभूत परिणामी का ही होता है, अन्य का नहीं।

(३) कर्म कर्ता के बिना नहीं होता।

(४) वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती।

प्र०८. निम्न वाक्यों पर कलश २११ के चार बोल लगाकर समझाइये।

(१) मैं स्त्री हूँ (२) दिव्यध्वनि सुनकर मुझे ज्ञान हुआ (३) मैं पलंग पर सोता हूँ (४) मैंने सिर पर संदूक उठाया (५) मैंने पैरों में जूते पहने (६) भगवान ने आठ कर्मों का नाश किया (७) डाक्टर ने दवाई दी (८) मैं कसरत करता हूँ (९) मेरी कपड़ों की दुकान है (१०) मैं हल्का हूँ।

प्र०९. निम्न प्रश्नों के उत्तर याद कीजिए –

१. विश्व २. विश्व की व्यवस्था ३. द्रव्य ४. गुण ५. पर्याय ६. द्रव्यों के नाम व संख्या ७. छहों द्रव्यों की परिभाषा ८. छहों द्रव्यों की सत्ता ९. पुद्गल के भेद १०. परमाणु ११. स्कंध १२. स्कंध के भेद १३. पुद्गल की २७ पर्यायें १४. तीन प्रकार का बंध व परिभाषा १५. गुणों के भेद १६. सामान्य गुण नाम व संख्या १७. विशेष गुण १८. सात तत्व के नाम व परिभाषा।

...पर्यायों का कर्ता कौन है–

हल्कापन, दुर्गंध, शब्द का ज्ञान, सुरीला गाना, लड़का, मकान, सोने का हार, बोलना, चलना, आठकर्म, नारकशरीर, मनुष्यशरीर, द्रव्यमन, राग–द्वेष, खट्टापना, घंटे की आवाज, रोटी, गाड़ी, भगवान की प्रतिमा।

–: भजन :–

जीव स्वतन्त्र है कोई बन्धन नहीं इसका पुद्गल में आना गजब हो गया।
आपको भूल बैठा जरा लोभ में, पर में दृष्टि लगाना गजब हो गया।
राज वैभव मिला इन्द्री सुख भी मिला,
तुझको तत्व समझना गजब हो गया।।१।।

दुर्लभ मानुष जन्म पाके हे आत्मन, तुझको ज्ञानी कहाना गजब हो गया।
आत्म शक्ति बराबर है हर जीव में,
सच्चे ज्ञान का होना गजब हो गया।।२।।

मिथ्याभावों को लेकर स्वर्ग गया, वहाँ माला मुरझाना गजब हो गया।
चारों गति में गया सुख कहीं न मिला,
सम्यग्दर्शन का पाना गजब हो गया।।३।।

अपने मंडल में भक्ति का भाव जगा, सच्चे देव गुरू का समागम मिला।
मेरे आतम में आनन्द की लहरें उठीं,
सच्चे दर्शन का पाना सुगम हो गया।।४।।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० ३9 से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमितं कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.३० बजे
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे
3.	रविवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे
4.	मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
6.	बृहस्पतिवार	पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी	सांय ०४.०० से ०५.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओ में हिस्सा ले सकते है।
- ३ मई को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३८ का पारितोषिक वितरण भी १२ जुलाई २००६ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–४०

दिनांक 20 सितम्बर 2009 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

१. अनादिकाल से आज तक किसी भी परद्रव्य ने मेरा भला–बुरा किया ही नहीं।
२. अनादिकाल से आज तक मैंने भी किसी भी परद्रव्य का भला बुरा किया ही नहीं।
३. अनादिकाल से आज तक नुकसानी का ही धंधा किया है; यदि नुकसानी का धंधा ना किया होता तो संसारपरिभ्रमण मिट गया होता, सो हुआ नहीं।
४. वह नुकसानी मात्र एक समय की पर्याय में है, द्रव्य–गुण में नहीं है ;
५. यदि पर्याय की नुकसानी मिटानी हो और पर्याय में शान्ति लानी हो तो एक मात्र अपने अनन्तगुणों के अभेदपिण्ड की ओर दृष्टिकर। दृष्टि कैसे आवे ? मुझ ज्ञानस्वरूप आत्मा में ज्ञान मात्र भाव की अस्ति है और शरीर सहित सारे विश्व की नास्ति है।

प्र०१. आचार्य श्री अमृतचन्द्र जी ने श्री समयसार कलश १० में शरीर सहित सारे विश्व से सर्वथा भिन्न और अपने ज्ञानादि गुणों से अभिन्न निज शुद्धात्मा का स्वरूप क्या बताया है ?

उ० आत्मस्वभावं परभावभिन्नम् आपूर्णमाद्यन्तविमुक्तमेकम्।
विलीनसंकल्पविकल्पजालम् प्रकाशयन् शुद्धनयोभ्युदेति।।

अर्थ (१) परभावभिन्नम् अर्थात् मुझ आत्मस्वभाव परद्रव्यों व परभावों से भिन्न है।
(२) आपूर्णम् अर्थात मुझ आत्मा समस्तपने परिपूर्ण है।
(३) आदिअन्तविमुक्तम् अर्थात् मुझ आत्मा जन्म मरण रहित अनादिअनन्त है।
(४) एकम् अर्थात् मुझ आत्मा अपने अनन्त गुण पर्यायों में व्याप्त एक है।
(५) विलीन संकल्प विकल्प जालम् अर्थात् मुझ आत्मा संकल्प विकल्पों के जाल से रहित है– ऐसा मानसिक ज्ञान में आते ही शुद्धनय का पता चल जाता है।

प्र०२. परभावभिन्नम् का क्या रहस्य है ?

उ० (१) परद्रव्य हैं – अर्थात् इस विश्व में मुझ आत्मा के अलावा जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म, अधर्म आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है।

(२) इन परद्रव्यों में भी अनन्त–अनन्त गुण हैं

(३) इन परद्रव्यों में भी जितने तीन काल के समय हैं उतनी उतनी पर्यायें हैं और प्रति समय प्रत्येक परद्रव्य के प्रत्येक गुण में क्रमबद्ध परिणमन हो रहा है।

(४) मुझ आत्मा में ज्ञान मात्र भाव की अस्ति है और शरीरादि समस्त परद्रव्यों की नास्ति है – ऐसा पता न होने के कारण अपने में मोह–राग–द्वेष रूप परिणमन भी है–परन्तु परभावभिन्नम् निज आत्मा में इन सब परद्रव्यों व परभावों का प्रवेश ही नहीं है – ऐसा मानसिक ज्ञान में आते ही शुद्धात्मा का अनुभव हो जाता है।

प्र०३. शुद्ध ज्ञान में शुद्ध आत्मा का अनुभव होते ही ज्ञानी क्या–क्या जान जाता है ?

उ० (१) सिद्धदशा क्या है ? सिद्ध भगवान क्या करते हैं ?
(२) अरहन्तदशा क्या है? अरहन्त भगवान क्या करते हैं ?
(३) श्रेणीपना क्या है ? श्रेणी में मुनिराज क्या करते हैं ?
(४) आचार्य, उपाध्याय, साधुपना क्या है ? आचार्य, उपाध्याय और साधु क्या करते हैं ?
(५) श्रावकपना, सम्यग्दृष्टिपना क्या हैं ? श्रावक, सम्यग्दृष्टि क्या करते हैं ?
(६) अनादि का मिथ्यादृष्टिपना क्या है ? अनादि के मिथ्यादृष्टि क्या करते हैं ? आदि सर्व बातों का सच्चा ज्ञान, केवली के समान हो जाता है ?

नोट : परभावभिन्नम का रहस्य और स्पष्ट करने के लिये श्री प्रवचनसार गाथा ६० व श्री समयसार गाथा ३७ व ६५ से नियमित कक्षाओं में लिया जायेगा।

प्र०४. तत्व कितने हैं ?

उ० तत्व सात है : जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा और मोक्ष

प्र०५. जीव द्रव्य और जीव तत्व में क्या अन्तर है ?

उ० (१) जिसमें ज्ञान–दर्शन पाया जावे वह जीव द्रव्य है। जीव द्रव्य में निगोद से लेकर सिद्ध दशा तक के सर्व जीव आ जाये। (२) जीव तत्व में निजजीव को छोड़कर दूसरे अनन्त जीवों से भी पृथक करना है, क्योंकि जब तक दूसरे जीवों पर भी दृष्टि रहेगी कल्याण नहीं हो सकता है। (३) इसलिये जिसमें मेरा ज्ञान–दर्शन हो वह जीवतत्व जानना।

प्र०६. अजीव द्रव्य और अजीव तत्व में क्या अन्तर है ?

उ० (१) जिनमें चेतना–ज्ञातृत्व नहीं हैं–वे अजीव द्रव्य हैं – पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल द्रव्य। (२) जिनमें मेरा ज्ञान–दर्शन नहीं है वे अजीव तत्व है।

प्र०७. अजीव तत्व में कौन–कौन आये ?

उ० मुझ निज आत्मा के अलावा अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश एक एक और कालद्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात–ये सब अजीव तत्व में आये।

प्र०७. जीव तत्व किसे कहते हैं और जीव तत्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है ?

उ० जिसमें मेरा ज्ञान दर्शन हो वह जीव तत्व है और जीव तत्व एक मात्र आश्रय करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है क्योंकि जीव तत्व ही परम सुखदायक है।

प्र०८. अजीव तत्व किसे कहते हैं और अजीव तत्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है?

उ० जिनमें मेरा ज्ञान–दर्शन नहीं है वे अजीव तत्व हैं और अजीव तत्व जानने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है क्योंकि अजीव तत्व न सुखदायक है न दुःखदायक है।

प्र०९. आस्रव तत्व और बंध तत्व किसे कहते हैं और आस्रव–बंध तत्व प्रयोजनभूत किस प्रकार हैं?

उ० शुभाशुभ विकारी भावों का उत्पन्न होना आस्रव तत्व है और शुभाशुभ विकारी भावों में अटकना बन्ध तत्व है। आस्रव और बन्धतत्व छोड़ने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है क्योंकि आस्रव–बंध तत्व दुःखदायक है।

प्र०११. संवर तत्व और निर्जरा तत्व किसे कहते हैं और संवर–निर्जरा तत्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है?

उ० शुद्धि का प्रगट होना संवरतत्व है और शुद्धि की वृद्धि होना निर्जरा तत्व है संवर–निर्जरा तत्व एकदेश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है क्योंकि संवर–निर्जरा तत्व एकदेश सुखदायक है।

प्र०१३. मोक्ष तत्व किसे कहते हैं और और मोक्ष तत्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है ?

उ० सम्पूर्ण शुद्धि का प्रगट होना मोक्ष तत्व है और मोक्ष तत्व पूर्ण प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है क्योंकि मोक्ष तत्व पूर्ण सुखदायक है।

प्र०७. श्री समयसार कलश २११ के चार बोल क्या है ?

उ० कर्ता–कर्म सम्बन्धी भेदज्ञान कराते हुए आचार्य देव कहते हैं कि –

(१) वास्तव में परिणाम ही निश्चय से कर्ता का कर्म है।

(२) परिणाम अपने आश्रयभूत परिणामी का ही होता है, अन्य का नहीं।

(३) कर्म कर्ता के बिना नहीं होता।

(४) वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती।

प्र०८. निम्न वाक्यों पर कलश २११ के चार बोल लगाकर समझाइये।

(१) यह मेरी कार है (२) भगवान ने आठ कर्मों का नाश किया (३) यह मेरी सोने की अंगूठी है (४) मैंने रोटी बनाई।

प्र०९. निम्न प्रश्नों के उत्तर याद कीजिए –

१. विश्व २. विश्व की व्यवस्था ३. द्रव्य ४. गुण ५. पर्याय ६. द्रव्यों के नाम व संख्या ७. छहों द्रव्यों की परिभाषा ८. छहों द्रव्यों की सत्ता ९. पुद्गल के भेद १०. परमाणु ११. स्कंध १२. स्कंध के भेद १३. पुद्गल की २७ पर्यायें १४. तीन प्रकार का बंध व परिभाषा १५. गुणों के भेद १६. सामान्य गुण नाम व संख्या १७. विशेष गुण १८. सात तत्व के नाम व परिभाषा।

प्र०१०. निम्नलिखित पर्यायों का कर्त्ता कौन है–

हल्कापन, दुर्गंध, शब्द का ज्ञान, सुरीला गाना, लड़का, मकान, सोने का हार, बोलना, चलना, आठकर्म, नारकशरीर, मनुष्यशरीर, द्रव्यमन, राग–द्वेष, खट्टापना, घंटे की आवाज, रोटी, गाड़ी, भगवान की प्रतिमा।

विशेष नोट

- जो प्रतियोगी किसी कारणवश अब तक की वीतराग- विज्ञान प्रतियोगिताओं में हिस्सा नहीं ले पाये हैं वे इस वीतराग-विज्ञानप्रतियोगिता नं० 40 से प्रारम्भ कर धर्म लाभ अवश्य उठायें। यहाँ से विषय पुनः प्रारम्भ हो रहा है। अपने बच्चों को भी इस प्रतियोगिता से प्रवेश दिलाकर नैतिक संस्कारों में वृद्धि करें।
- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ९.१५ से १०.३० बजे
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे
3.	रविवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ९.०० से १०.०० बजे
4.	मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
6.	सोमवार से शनिवार	पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी	सांय ०४.०० से ०५.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- १२ जुलाई को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-३९ का पारितोषिक वितरण भी २० सितम्बर २००९ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४१

दिनांक 6 दिसम्बर 2009 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

अध्यात्मप्रेमी पं० दौलतरामजी कृत छहढाला की पहली ढाल

मंगलाचरण

तीन भुवन में सार, वीतराग विज्ञानता;
शिवस्वरूप शिवकार, नमहुँ त्रियोग सम्हारिकैं ।।१।।

जे त्रिभुवन में जीव अनन्त, सुख चाहैं दुखतैं भयवन्त।
तातैं दुखहारी सुखकार, कहैं सीख गुरु करुणा धार।।२।।

ताहि सुनो भवि मन थिर आन, जो चाहो अपनो कल्यान ;
मोह महामद पियो अनादि, भूल आपको भरमत वादि।।३।।

तास भ्रमन की है बहु कथा, पै कछु कहूँ कही मुनि यथा ;
काल अनन्त निगोद मँझार, बीत्यो एकेन्द्री तन धार।।४।।

एक श्वास में अठदस बार, जन्म्यो मर्‍यो भर्‍यो दुखभार;
निकसि भूमि जल पावक भयो, पवन प्रत्येक वनस्पति थयो।।५।।

दुर्लभ लहि ज्यों चिन्तामणि, त्यों पर्याय लही त्रसतणी ;
लट पिपील अलि आदि शरीर, धर धर मर्‍यो सही बहु पीर।।६।।

कबहूँ पंचेन्द्रिय पशु भयो, मन बिन निपट अज्ञानी थयो;
सिंहादिक सैनी ह्वै क्रूर, निबल पशु हति खाये भूर।।७।।

कबहूँ आप भयो बलहीन, सबलनि करि खायो अतिदीन ;
छेदन भेदन भूख पियास, भार-वहन, हिम, आतप त्रास।।८।।

वध बंधन आदिक दुख घने, कोटि जीभतैं जात न भने ;
अति संक्लेश भावतैं मर्‍यो, घोर श्वभ्रसागर में पर्‍यो।।९।।

तहां भूमि परसत दुख इसो, बिच्छू सहस डसे नहिं तिसो ;
तहां राध-श्रोणितवाहिनी, कृमि-कुल-कलित, देह-दाहिनी।।१०।।

सेमर तरु दलजुत असिपत्र, असि ज्यों देह विदारैं तत्र ;
मेरु समान लोह गलि जाय, ऐसी शीत उष्णता थाय।।११।।

तिल-तिल करैं देह के खण्ड, असुर भिड़ावैं दुष्ट प्रचण्ड ;
सिन्धुनीर तैं प्यास न जाय, तो पण एक न बूँद लहाय।।१२।।

तीनलोक को नाज जु खाय, मिटै न भूख कणा न लहाय ;
ये दुख बहु सागर लौं सहै, करम जोगतैं नरगति लहै।।१३।।

जननी उदर वस्यो नव मास, अंग सकुचतैं पायो त्रास ;
निकसत जे दुख पाये घोर, तिनको कहत न आवे ओर।।१४।।

बालपने में ज्ञान न लह्यो, तरूण समय तरूणी-रत रह्यो।
अर्धमृतकसम बूढ़ापनो, कैसे रूप लखै आपनो।।१५।।

कभी अकामनिर्जरा करै, भवनत्रिकमें सुरतन धरै;
विषय-चाह-दावानल दह्यो, मरत विलाप करत दुख सह्यो।।१६।।

जो विमानवासी हूँ थाय, सम्यग्दर्शन बिन दुख पाय,
तहतैं चय थावर तन धरै, यो परिवर्तन पूरे करै।।१७।।

नोट : Underline किये गये सभी शब्दों के अर्थ लिखिए।

पहली ढाल के दोहों का अर्थ

अर्थ १. रागद्वेष रहित, केवलज्ञान, तीन लोक में उत्तम वस्तु, आनन्दस्वरूप और मोक्ष प्राप्त कराने वाला है, उसे मैं तीन योग अर्थात् मन-वचन-काय की सावधानीपूर्वक नमस्कार करता हूँ।

अर्थ २. तीनों लोक में जो अनन्त जीव हैं वे सुख की इच्छा करते हैं और दुःख से डरते हैं इसलिये आचार्य दया करके दुःख का नाश करने वाली और सुख को देने वाली शिक्षा कहते हैं।

अर्थ ३. हे भव्य जीवों ! यदि अपना हित चाहते हो तो गुरू की यह शिक्षा मन को स्थिर करके सुनो कि इस संसार में प्रत्येक जीव अनादिकाल से मोहरूपी महामदिरा पीकर, अपने आत्मा को भूलकर व्यर्थ भटक रहा है।

अर्थ ४. उस संसार में भटकने की कथा बड़ी है तथापि जैसी पूर्वाचार्यों ने कही है तदनुसार मैं भी थोड़ी सी कहता हूँ कि इस जीव का निगोद में एकेन्द्रिय जीव के शरीर धारण करके अनंत काल व्यतीत हुआ है।

अर्थ ५. निगोद में यह जीव एक साँस में अठारह बार जनमा, और मरा तथा दुःखों के समूह सहन किये और वहाँ से निकलकर पृथ्वीकायिक, अग्निकायिक जलकायिक, वायुकायिक और प्रत्येक वनस्पतिकायिक जीव हुआ।

अर्थ ६. जिस प्रकार चिन्तामणि रत्न कठिनाई से प्राप्त होता है उसी प्रकार त्रसकी पर्याय भी बड़ी कठिनाई से प्राप्त हुई। वहां भी इल्ली चींटी भँवरा इत्यादि के शरीर बारम्बार धारण करके मरण को प्राप्त हुआ और अत्यन्त पीड़ा सहन की।

अर्थ ७. यह जीव कभी पंचेन्द्रिय तिर्यंच हुआ तो मन के बिना अत्यन्त मूर्ख हुआ और संज्ञी भी हुआ तो सिंह आदि शरीरों आदि में रहकर क्रूर परिणामों से अपने से निर्बल अनेक तिर्यंच मार-मार कर खाये।

अर्थ ८. यह जीव तिर्यंच गति में कभी स्वयं निर्बल हुआ तो असमर्थ होने से अपने से बलवान प्राणियों द्वारा खाया गया और छेदा जाना, भेदा जाना, भूख प्यास, बोझ ढोना, ठण्ड गर्मी आदि के दुख सहन किये।

अर्थ ९. इस तिर्यंच गति में जीव ने अन्य भी मारा जाना, बंधना, आदि अनेक दुःख सहन किये। वे करोड़ो जीभों से नहीं कहे जा सकते। इस कारण अत्यन्त अशुभ परिणामों से मरकर भयानक नरकरूपी समुद्र में जा गिरा।

अर्थ १०. उस नरक में धरती स्पर्श करने से ऐसा दुःख होता है कि हजारों बिच्छू डंक मारे तथापि उसके समान दुःख नहीं होता तथा वहाँ रक्त और मवाद बहाने वाली वैतरणी नामक नदी है जो छोटे–छोटे क्षुद्र कीड़ों से भरी है तथा शरीर में दाह उत्पन्न करने वाली है।

अर्थ ११. उन नरकों में तलवार की धार की भांति तीक्ष्ण पत्तों वाले सेमल के वृक्ष है जो शरीर को तलवार की भांति चीर देते हैं और वहाँ ऐसी ठण्ड और गरमी होती है कि मेरू पर्वत के बराबर लोहे का गोला भी गल सकता है।

अर्थ १२. उन नरकों में नारकी जीव एक–दूसरे के शरीर के तिल्ली के दाने बराबर टुकड़े कर डालते हैं और अत्यन्त क्रूर असुरकुमार जाति के देव अपने अवधिज्ञान के द्वारा पूर्व के परस्पर बैर को बतलाकर एक दूसरे के साथ लड़ाते हैं तथा इतनी प्यास लगती हैं कि समुद्रभर पानी पीने से भी शांत न हो, तथापि एक बूंद भी नहीं मिलती।

अर्थ १३. उन नरकों में इतनी भूख लगती है कि तीनों लोक का अनाज खा जाये तथापि क्षुधा शांत न हो परन्तु खाने के लिये एक दाना भी नहीं मिलता। ऐसे दुःख अनेक सागरोपमकाल तक सहन करता है, किसी विशेष शुभकर्मके योग से मनुष्य गति प्राप्त करता है।

अर्थ १४. मनुष्यगति में भी यह जीव नौ महीने तक माता के पेट में रहा तब वहाँ शरीर सिकोड़कर रहने से दुःख पाया और निकलते समय जो भयंकर दुःख पाये उन दुःखों को कहने से अन्त नहीं आ सकता।

अर्थ १५. मनुष्यगति में जीव बचपन में ज्ञान प्राप्त नहीं कर सका और युवावस्था में जब समझने की योग्यता थी, तब युवती स्त्री में लीन रहा और वृद्धावस्था में अधमरा जैसा रहा, इस प्रकार तीनों ही अवस्थाओं में आत्मस्वरूप की पहचान नहीं कर सका।

अर्थ १६. इस जीव ने कभी अकामनिर्जरा की तो मरने के पश्चात् भवनवासी, व्यंतर और ज्योतिषी में देवपर्याय धारण की परन्तु वहां भी पांच इन्द्रियों के विषयों की इच्छा रूपी भयंकर अग्नि में जलता रहा और मरते समय रो रो कर दुःख सहन किया।

अर्थ १७. यदि वैमानिक देव भी हुआ तो वहाँ भी सम्यग्दर्शन बिना दुःख प्राप्त किया और वहाँ से भी मरकर पृथ्वीकाय आदि स्थावरों के शरीर धारण करता है। इस प्रकार यह जीव अनादिकाल से निज आत्मा को भूलकर और चारों ही गतियों के शरीरों में अपनत्व के कारण संसार में भटक रहा है और पांच परिवर्तन पूर्ण करता रहता है।

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर याद करके कापी में लिखिए।

प्र०१. छहढाला का मंगलाचरण क्या है ? अर्थ सहित लिखिए।
प्र०२. इस विश्व के सब जीव क्या चाहते हैं ?
प्र०३. इस ग्रन्थ की रचना का उद्देश्य और गुरूशिक्षा सुनने का आदेश क्या है ?
प्र०४. मुझ आत्मा के संसार परिभ्रमण का कारण क्या है ?
प्र०५. इस ग्रन्थ की प्रामाणिकता तथा निगोद के दुःख क्या है ?
प्र०६. निगोद के दुःख और वहाँ से निकलकर प्राप्त की हुई पर्यायें क्या है?
प्र०७. तिर्यंचगति में त्रय पर्याय की दुर्लभता का वर्णन करो ?
प्र०८. तिर्यंचगति में असंज्ञी, संज्ञी, निर्बलता आदि के दुःख क्या है ?
प्र०९. नरक गति की प्राप्ति का कारण क्या है ?
प्र०१०. नरकों की भूमि और नदियों का वर्णन करो।
प्र०११. नरकों के सेमल वृक्ष तथा सर्दी–गर्मी के दुःख क्या है ?
प्र०१२. नरकों में अन्य नारकी, असुर कुमार तथा भूख प्यास और आयु के दुःख क्या है ?
प्र०१३. मनुष्य गति प्राप्ति का कारण क्या है ?
प्र०१४. मनुष्यगति में गर्भनिवास तथा प्रसवकाल के दुःख क्या है ?
प्र०१५. मनुष्यगति में बाल, युवा और वृद्धावस्था के दुःख क्या हैं ?
प्र०१६. देवगति में भवनत्रिक की प्राप्ति का कारण व दुःख क्या हैं ?
प्र०१७. देवगति में वैमानिक देवों का दुःख क्या है ?
प्र०१८. वैमानिक में देव होकर भी जीव को शांति क्यों नहीं मिली ?
प्र०१९. चारों गतियों में कौन सी गति सुख देने वाली है ?
प्र०२०. छहढाला की पहली ढाल का सारांश क्या है ?
प्र०२१. वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता नं० ४० के अन्तिम पृष्ठ पर प्रश्न ७ से १० तक के उत्तर व इस छहढाला के प्रश्न व उत्तर अपनी कापी में लिखकर कापी १५ नवम्बर तक पाठशाला में जमा कराइये।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.१५ से १०.३० बजे
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे
3.	रविवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे
4.	मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
6.	सोमवार से शनिवार	पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी	सांय ०४.०० से ०५.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- २० सितम्बर को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४० का पारितोषिक वितरण भी ६ दिसम्बर २००६ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४२

दिनांक 28 फरवरी 2010 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

अध्यात्मप्रेमी पं० दौलतरामजी कृत छहढाला की दूसरी ढाल

ऐसे मिथ्यादृग-ज्ञान-चर्णवश, भ्रमत भरत दुख जन्म-मरण;
तातैं इनको तजिये सुजान, सुन तिन संक्षेप कहूँ बखान।।१।।
जीवादि प्रयोजनभूत तत्त्व, सरधैं तिनमांहि विपर्ययत्व ;
चेतनको है उपयोग रूप, विनमूरत चिन्मूरत अनूप।।२।।
पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल,
ताकों न जान विपरीत मान, करि करै देहमें निज पिछान।।३।।
मैं सुखी दुखी मैं रंक राव, मेरे धन गृह गोधन प्रभाव ;
मेरे सुत तिय मैं सबल दीन, बेरूप सुभग मूरख प्रवीण।।४।।
तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान;
रागादि प्रगट ये दुःख देन, तिनही को सेवत गिनत चैन।।५।।
शुभ-अशुभ बन्धके फल मंझार, रति-अरति करै निजपद विसार;
आतमहित हेतु विराग ज्ञान, ते लखै आपको कष्टदान।।६।।
रोके न चाह निजशक्ति खोय, शिवरूप निराकुलता न जोय ;
याही प्रतीतिजुत कछुक ज्ञान, सो दुखदायक अज्ञान जान।।७।।
इन जुत विषयनिमें जो प्रवृत्त, ताको जानो मिथ्याचरित्त ;
यों मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह, अब जे गृहीत, सुनिये सु तेह।।८।।
जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव, पोषै चिर दर्शनमोह एव ;
अन्तर रागादिक धरैं जेह, बाहर धन अम्बरतैं सनेह।।९।।
धारैं कुलिंग लहि महत भाव, ते कुगुरु जन्मजल उपलनाव;
जो राग-द्वेष मलकरि मलीन, वनिता गदादिजुत चिह्न चीन।।१०।।
ते हैं कुदेव तिनकी जु सेव, शठ करत न तिन भवभ्रमण छेव;
रागादि भावहिंसा समेत, दर्वित त्रस थावर मरण खेत।।११।।
जे क्रिया तिन्हैं जानहु कुधर्म, तिन सरधै जीव लहै अशर्म ;
याकू गृहीत मिथ्यात्व जान, अब सुन गृहीत जो है अज्ञान।।१२।।
एकान्तवाद-दूषित समस्त, विषयादिक पोषक अप्रशस्त।
कपिलादि रचित श्रुत को अभ्यास सो है कुबोध बहु देन त्रास।।१३।।
जो ख्याति लाभ पूजादि चाह, धरि करन विविध विध देहदाह;
आतम अनात्मके ज्ञानहीन, जे जे करनी तन करन छीन।।१४।।
ते सब मिथ्याचारित्र त्याग, अब आतमके हित पंथ लाग ;
जगजाल-भ्रमणको देहु त्याग, अब दौलत! निज आतम सुपाग।।१५।।

दूसरी ढाल के प्रश्न उत्तर

प्र०१. इस जीव के संसार में परिभ्रमण का कारण क्या हैं ?

उ० यह जीव मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्रके वश होकर इस प्रकार जन्म और मरणके दुःखको भोगता हुआ (चारों गतियोंमें) भटकता फिरता है। इसलिये इन तीनोंको भली भांति जानकर छोड़ देना चाहिये। इन तीनोंका इस दूसरी ढाल में संक्षेपसे वर्णन किया गया है।

प्र०२. अगृहीत-मिथ्यादर्शन का स्वरूप क्या है ?

उ० जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष प्रयोजनभूत तत्त्व हैं, उनमें विपरीत श्रद्धा करना सो अगृहीत मिथ्यादर्शन है।

प्र०३. जीवतत्त्वका स्वरूप क्या है ?

उ० लघु जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के पृष्ठ ३३ के प्रश्न २०१ का उत्तर देखें।

प्र०४. जीवतत्त्वके विषय में जीव की भूल-अभूल को स्पष्ट करिये ?

उ०ताको न जान	विपरीत मान करि	करे देह में निज पिछान	इसका फल
मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीव तत्त्व हूँ इस बात को नहीं जानता	वीना नामरूप अनन्त पुद्गल द्रव्यों में अपनापना मान कर	वीना नामरूप पुद्गलद्रव्यों से ही अपनी पहचान करता है	चारों गतियों में घूमकर निगोद है।
इस बात को जान	अविपरीत मान करि	करे आत्मा में निज पिछान	इसका फल
मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीव तत्त्व हूँ इस बात को जान	वीना नामरूप पुद्गल द्रव्यों से सर्वथा भिन्न, ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व में अपनापना मान कर:	ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व से ही अपनी पहचान करता है ;	तुरन्त संवर-निर्जरा की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष है।

प्र०५. जीव तत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल क्या है ?

उ० लघु जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के पृष्ठ ३१ के प्रश्न १६३ का उत्तर देखें।

प्र०६. अजीव तत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल क्या है ?

उ० लघु जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के पृष्ठ ३१ के प्रश्न १६४ का उत्तर देखें।

प्र०७. आस्रव तत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल क्या है ?

उ० लघु जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के पृष्ठ ३२ के प्रश्न १६५ का उत्तर देखें।

प्र०८. बंध तत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल क्या है ?

उ० लघु जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के पृष्ठ ३२ के प्रश्न १६६ का उत्तर देखें।

प्र०९. संवर तत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल क्या है ?

उ० लघु जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के पृष्ठ ३२ के प्रश्न १६७ का उत्तर देखें।

०१०. निर्जरा तत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल क्या है?

उ० लघु जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के पृष्ठ ३२ के प्रश्न १९८ का उत्तर देखें।

०११. मोक्ष तत्त्व सम्बन्धी जीव की भूल क्या है ?

उ० लघु जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के पृष्ठ ३२ के प्रश्न १९९ का उत्तर देखें।

प्र०१२. प्रयोजनभूत तत्त्वों की विपरीत श्रद्धारूप अगृहीत मिथ्यादर्शन का फल क्या है ?

उ० सात तत्त्वों की भूल से अज्ञानी जीव अनन्त काल से संसार में भटक रहा है।

प्र०१३. अगृहीतमिथ्याज्ञान का स्वरूप क्या है ?

उ० अगृहीत मिथ्यादर्शनके रहते हुए, इन प्रयोजनभूत सात तत्त्वों का जो कुछ ज्ञान हो उसे अगृहीत मिथ्याज्ञान कहते हैं, वह महान दुःखदाता है। उपदेशादि बाह्य निमित्तोंके आलम्बन द्वारा उसे नवीन ग्रहण नहीं किया है, किन्तु अनादिकालीन है, इसलिये उसे अगृहीत मिथ्याज्ञान कहते हैं।

प्र०१४. अगृहीत मिथ्याचारित्र (कुचारित्र) का लक्षण क्या है ?

उ० अगृहीत मिथ्यादर्शन तथा अगृहीत मिथ्याज्ञान सहित पाँच इन्द्रियोंके विषयोंमें प्रवृत्ति करना उसे अगृहीत मिथ्याचारित्र कहा जाता है। इन तीनोंको दुःखका कारण जानकर तत्त्वज्ञान द्वारा उनका त्याग करना चाहिये।

प्र०१५. गृहीत मिथ्यादर्शन का लक्षण व फल क्या है ?

उ० जो मिथ्या गुरुकी, मिथ्या देवकी और मिथ्या धर्मकी सेवा करता है, वह अति दीर्घकाल तक मिथ्यादर्शन ही पोषता है।

प्र०१६. कुगुरूके लक्षण क्या है ?

उ० जो अन्तरमें मिथ्यात्व–राग–द्वेष आदि धारण करता है और बाह्यमें धन तथा वस्त्रादिसे प्रेम रखता है; तथा महात्मापनेका भाव ग्रहण करके मिथ्यावेषोंको धारण करता है वह कुगुरू कहलाता है और वह कुगुरू संसाररूपी समुद्रमें पत्थरकी नौका समान है।

प्र०१७.कुदेव (मिथ्यादेव) का स्वरूप क्या है ?

उ० जो राग–द्वेष रूपी मैलसे मलिन हैं और स्त्री गदा आदि सहित चिह्नसे पहिचाने जाते हैं वे झूठे देव हैं, उन कुदेवों की जो मूर्ख सेवा करते हैं उनका संसार में भ्रमण करना नहीं मिटता।

प्र०१८.कुधर्म का स्वरूप क्या है ?

उ० जिस धर्ममें मिथ्यात्व तथा रागादिरूप भाव–हिंसा और त्रस तथा स्थावर जीवोंके घातरूप द्रव्यहिंसाको धर्म माना जाता है उसे कुधर्म कहते हैं। जो जीव उस कुधर्मकी श्रद्धा करता है वह दुःख प्राप्त करता है। ऐसे मिथ्या गुरू, देव और धर्मकी श्रद्धा करना उसे "गृहीत मिथ्यादर्शन" कहते हैं।

प्र०१९.गृहीत मिथ्याज्ञानका लक्षण क्या है?

उ० वस्तु अनेक धर्मात्मक है; उसमेंसे किसी भी एक ही धर्मको पूर्ण वस्तु कहनेके कारणसे दूषित तथा विषय–कषायादि की पुष्टि करनेवाले कुगुरूओंके रचे हुए सर्व प्रकार के मिथ्या शास्त्रोंको धर्मबुद्धिसे लिखना–लिखाना, पढ़ना–पढ़ाना, सुनना और सुनाना उसे गृहीत मिथ्याज्ञान कहते हैं।

.गृहीत मिथ्याचारित्रका लक्षण क्या है ?

उ० जो, प्रसिद्धि, लाभ और आदर–सम्मान आदिकी इच्छा करके, शरीरको कष्ट देनेवाली, आत्मा और परवस्तुओंके भेदज्ञानसे रहित, शरीरको क्षीण करनेवाली अनेक–प्रकारकी क्रियाएँ हैं वे सब गृहीत मिथ्याचारित्र हैं।

प्र०२२.अन्त में पं० दौलतरामजी ने क्या आदेश दिया है ?

उ० आत्महितैषी जीवको निश्चय सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र ग्रहण करके अगृहीत–गृहीत मिथ्यादर्शन–ज्ञान–चारित्रका त्याग करके आत्मकल्याणके मार्ग में लगना चाहिये। पण्डित दौलतरामजी कहते है कि हे आत्मन्! पराश्रय–रूप संसार अर्थात् पुण्य पापमें भटकना छोड़कर सावधानी से आत्मस्वरूपमें लीन हो।

प्र०२३. छहढाला की दूसरी ढाल का सारांश क्या है ?

उ० *यह जीव मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्रके वश होकर चार गतियोंमें परिभ्रमण करके प्रतिसमय अनन्त दुःख भोग रहा है। जबतक देहादिसे भिन्न अपने आत्माकी सच्ची प्रतीति न करे तब तक आत्मा का हित नहीं हो सकता।*

आत्महितके लिये (१) सच्चे देव,गुरू और धर्मकी यथार्थ प्रतीति (२) जीवादि सात तत्त्वोंकी यथार्थ प्रतीति (३) स्व–परके स्वरूप की श्रद्धा (४) निज शुद्धात्माके प्रतिभासरूप आत्माकी श्रद्धा–इन चार लक्षणों के अविनाभावसहित निश्चय सम्यदर्शन जबतक प्रगट न करे तबतक आत्मा में धर्म का प्रारम्भ भी नहीं हो सकता और आत्मामें अंशमात्र भी सुख प्रगट नहीं होगा।

प्र०२४. वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता नं० ४० के अन्तिम पृष्ठ पर प्रश्न ७ से १० तक के उत्तर व इस छहढाला के प्रश्न व उत्तर अपनी कापी में लिखकर कापी १५ फरवरी तक पाठशाला में जमा कराइये।

नोट :– लघु जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला साथ में दी जा रही है कृपया सम्भाल कर रखे और कक्षा में अवश्य लायें।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ९.१५ से १०.३० बजे
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे
3.	रविवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ९.०० से १०.०० बजे
4.	मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
6.	सोमवार से शनिवार	पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी	सांय ०४.०० से ०५.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं मे उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- ६ दिसम्बर को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४१ का पारितोषिक वितरण भी २८ फरवरी २०१० दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४३

दिनांक 16 मई 2010 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

—प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न—

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

अध्यात्मप्रेमी पं० दौलतरामजी कृत छहढाला की तीसरी ढाल

आतमको हित है सुख, सो सुख आकुलता विन कहिये;
आकुलता शिवमांहि न तातैं शिवमग लाग्यो चहिये।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरन शिव मग सो द्विविध विचारो;
जो सत्यारथ-रूप सो निश्चय, कारण सो व्यवहारो।।१।।

परद्रव्यनतैं भिन्न आपमें रूचि, सम्यक्त्व भला है;
आपरूपको जानपनों, सो सम्यग्ज्ञान कला है।
आपरूपमें लीन रहे थिर, सम्यग्चारित सोई;
अब व्यवहार मोक्षमग सुनिये, हेतु नियतको होई।।२।।

जीव अजीव तत्व अरू आस्रव, बन्ध रू संवर जानो ;
निर्जर मोक्ष कहे जिन तिनको ज्यों का त्यों सरधानो।
है सोई समकित व्यवहारी, अब इन रूप बखानो ;
तिनको सुन सामान्य विशेषैं, दिढ़ प्रतीत उर आनो।।३।।

बहिरातम, अन्तरआतम परमातम, जीव त्रिधा हैं ;
देह जीव को एक गिने बहिरातम तत्त्वमुधा है।
उत्तम मध्यम जघन त्रिविधके अन्तर-आतम ज्ञानी ;
द्विविध संगबिन शुध उपयोगी मुनि उत्तम निजध्यानी।।४।।

मध्यम अन्तर-आतम हैं जे देशव्रती अनगारी ;
जघन कहे अविरत-समदृष्टि, तीनों शिवमग-चारी।
सकल निकल परमातम द्वैविध तिनमें घाति निवारी;
श्री अरिहन्त सकल परमातम लोकालोक निहारी।।५।।

ज्ञान शरीरी त्रिविध कर्ममल-वर्जित सिद्ध महन्ता;
ते हैं निकल अमल परमातम भोगैं शर्म अनन्ता।
बहिरातमता हेय जानि तजि, अन्तर आतम हूजै ;
परमातम को ध्याय निरन्तर जो नित आनन्द पूजै।।६।।

चेतनता बिन सो अजीव है, पंच भेद ताके हैं ;
पुद्गल पंच वरन-रस, गंध-दो फरस वसू जाके हैं।
जिय पुद्गलको चलन सहाई, धर्म द्रव्य अनरूपी ;
तिष्ठत होय अधर्म सहाई जिन बिन-मूर्ति निरूपी।।७।।

सकल द्रव्यको वास जासमें सो आकाश पिछानो ;
नियत वर्तना निशिदिन सो व्यवहारकाल परिमानो।
यों अजीव, अब आस्रव सुनिये मन–वच–काय त्रियोगा;
मिथ्या अविरत अरू कषाय परमाद सहित उपयोगा।।८।।

ये ही आतमको दु:ख–कारण, तातें इनको तजिये,
जीवप्रदेश बंधै विधि सों सो बंधन कबहुँ न सजिये।
शम–दम तैं जो कर्म न आवैं, सो संवर आदरियें;
तप–बल तैं विधि–झरन निरजरा ताहि सदा आचरिये।।९।।

सकल कर्मतैं रहित अवस्था, सो शिव सुखकारी;
इहि विध जो सरधा तत्त्वनकी, सो समकित व्यवहारी।
देव जिनेन्द, गुरू परिग्रह बिन, धर्म दयाजुत सारो;
येहु मान समकितको कारण, अष्ट–अंग–जुत धारो।।१०।।

तीसरी ढाल के दोहों का अर्थ

प्र०१. आत्मा का भला किसमें है ?
उत्तर (१) आत्मा का भला सुख की प्राप्ति में है। (२) आकुलता–चिन्ता–क्लेश
–झंझटरहित; वस्तु स्वरूप की सच्ची समझ को सुख कहते हैं। (३) आकुलता
मोक्ष दशा में नहीं है। (४) इसलिये मोक्ष मार्ग में लगना चाहिए।
प्र०२. मोक्ष का मार्ग क्या है और मोक्षमार्ग कितने प्रकार का है ?
उत्तर सम्यग्दर्शन–सम्यग्ज्ञान और सम्यकचारित्र इन तीनो की एकता ही एक ही
मोक्षमार्ग है। लेकिन मोक्षमार्ग का कथन दो प्रकार से है। जहाँ मोक्षमार्ग के रूप
में सच्चे मोक्षमार्ग का कथन है वह निश्चय मोक्षमार्ग है ओर जो मोक्षमार्ग तो नहीं
है लेकिन निश्चय मोक्षमार्ग का निमित्त कारण है उसे उपचार से मोक्षमार्ग कहना
सो व्यवहार मोक्षमार्ग है।
प्र०३. निश्चय मोक्षमार्ग अर्थात् निश्चय सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र का स्वरूप क्या है?
उत्तर पर पदार्थों से त्रिकाल भिन्न ऐसे निज–आत्मा का अटल विश्वास करना
निश्चयसम्यग्दर्शन हैं। आत्मा को परवस्तुओं से भिन्न जानना निश्चयसम्यग्ज्ञान
है। तथा परद्रव्यों का आलम्बन छोड़कर आत्मस्वरूप में एकाग्रता से मग्न होना
वह निश्चय सम्यक्चारित्र (यथार्थ आचरण) है।
प्र०४. व्यवहार सम्यग्दर्शन का स्वरूप क्या है ?
उत्तर जिनेन्द्रदेव ने जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा और मोक्ष यह सात तत्व
कहे हैं ; उन सबकी यथावत यथार्थरूप से श्रद्धा करना सो व्यवहार से सम्यग्दर्शन
है। सात तत्वों की यह श्रद्धा भेदरूप है, राग सहित है इसलिये यह व्यवहार
सम्यग्दर्शन है।
प्र०५. जिनेन्द्रदेव ने जीव तत्व का ज्यों का त्यों भेदरूप श्रद्धान क्या बताया है ?
उत्तर (१) प्रत्येक आत्मा ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व होने से एक ही प्रकार का
है, पर्याय में तीन प्रकार के हैं– बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा। (२) जो
शरीर और आत्मा को एक मानते हैं उन्हें बहिरात्मा कहते हैं और वे तत्व मूढ़
मिथ्यादृष्टि हैं। (३) जो शरीर और आत्मा को अपने भेद विज्ञान से भिन्न भिन्न
मानते हैं वे अन्तरात्मा है। अन्तरात्मा के तीन भेद हैं – उत्तम मध्यम और
जघन्य। (अ) अन्तरंग तथा बहिरंग दोनों प्रकार के परिग्रहों से रहित सातवें
गुणस्थान से लेकर बारहवें गुणस्थान तक वर्तते हुये शुद्ध उपयोगी आत्मध्यानी
दिगम्बर मुनि उत्तम अन्तरात्मा है। (आ) छठवें और पांचें गुणस्थानवर्ती जीव
मध्यम अन्तरात्मा है। (इ) चौथे गुणस्थानवर्ती जीव जघन्य अन्तरात्मा है। (४)
परमात्मा के दो भेद हैं– अरिहन्त और सिद्ध। वे दोनों सर्वज्ञ होने से लोक
अलोक सहित सर्व पदार्थों का त्रिकालवर्ती सम्पूर्ण स्वरूप एक समय में एक साथ
जानने–देखने वाले सबके ज्ञाता–दृष्टा हैं। (५) इसलिये आत्म हितैषियों को
चाहिये–बहिरात्मपने को छोड़कर अन्तरात्मा बनकर परमात्मपना प्राप्त करें
क्योंकि उससे सदैव सम्पूर्ण और अनन्त आनन्द की प्राप्ति होती है। यह जिनेन्द्र
कथित जीव तत्व का ज्यो का त्यों भेद रूप श्रद्धान है।
प्र०६. जिनेन्द्रदेव ने अजीव तत्व का ज्यों का त्यों भेदरूप श्रद्धान क्या बताया है?
उत्तर (१) जिनमें ज्ञान दर्शन न हो वे अजीव द्रव्य हैं और वे पांच हैं। पुद्गल, धर्म–अध
र्म, आकाश और काल।
(२) जिनमें मेरा ज्ञान दर्शन नहीं है वे अजीव तत्व हैं। मुझ निज आत्मा के अलावा
विश्व में अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म अधर्म आकाश एकेक और लोक
प्रमाण असंख्यात काल द्रव्य हैं ये सब अजीव तत्व हैं। इन सब अजीव तत्वों का
मुझ आत्मा से कर्ता–भोक्ता का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है क्योंकि वे सब व्यवहार
से ज्ञान का ज्ञेय है।
(३) जिसमें स्पर्श–रस–गंध वर्ण पाया जाय वह पुद्गल है। स्पर्श की आठ
पर्यायें, रस की पांच पर्यायें, गंध की दो पर्यायें, वर्ण की पांच पर्यायें और शब्द
की सात पर्यायें हैं – इस प्रकार पुद्गल की २७ पर्यायें हैं। इन सत्ताइस पर्यायों
से मुझ जीव तत्व का किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का सर्वथा सम्बन्ध नहीं
हैं क्योंकि मुझ जीव तत्व अस्पर्श, अरस, अगंध, अवर्ण और अशब्द स्वभावी है।
(४) जीव पुद्गल जब अपनी–अपनी क्रियावती शक्ति से स्वयं स्वतः गमन रूप
होते हैं तब धर्म द्रव्य निमित्त होता है।
(५) जीव–पुद्गल जब अपनी–अपनी क्रियावती शक्ति से स्वयं स्वतः चलकर
स्थिर होते हैं तब अधर्म द्रव्य निमित्त होता है।
(६) सर्व द्रव्य अनादिकाल से अपने–अपने निज क्षेत्र में रहते है उसमें आकाश
द्रव्य निमित्त है।
(७) सर्व द्रव्य निज परिणमन स्वभाव के कारण स्वयं स्वतः परिणमते हैं उसमें
काल द्रव्य निमित्त हैं।
(८) मुझ निज जीव तत्व का इन सब अजीव तत्वों से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।
क्योंकि इन सब की चाल मुझ जीव तत्व से सर्वथा भिन्न है।
(९) अजीव तत्व से सर्वथा भिन्न अपने को आप रूप जानकर पर का अंश
भीअपने न मिलाना ओर अपना अंश भी पर में न मिलाना। यह अजीव तत्व का
ज्यों का त्यों भेदरूप श्रद्धान जिनेन्द्रदेव ने बताया है।
प्र०७. जिनेन्द्रदेव ने आस्रव तत्व का ज्यों का त्यों भेदरूप श्रद्धान क्या बताया है?
उत्तर (१) जीव के मिथ्यात्व–मोह–राग–द्वेष रूप परिणाम भाव आस्रव हैं। भाव आस्रव
के पांचभेद हैं। मिथ्यात्व–अविरत–प्रमाद–कषाय और योग।
(२) मिथ्यात्वादि ही आत्मा को दु:ख का कारण है किन्तु पर पदार्थ दु:ख का
कारण नहीं है।
(३) इसलिये दोषरहित त्रिकाली निज भगवान आत्मा का आश्रय लेकर दोषरूप
मिथ्यात्वादि भावों का अभाव करना चाहिए।
प्र०८. जिनेन्द्रदेव ने बंध तत्व का ज्यों का त्यों भेदरूप श्रद्धान क्या बताया है ?
उत्तर (१) राग परिणाम मात्र ऐसा भाव बन्ध है वह द्रव्य बन्ध का हेतु होने से वही निश्चय

बन्ध है जो छोड़ने योग्य है। (२) तत्व दृष्टि से तो पुण्य–पाप बंधन कर्ता ही है। ये बंध तत्व का ज्यों का त्यों भेद रूप श्रद्धान है।

प्र०९. जिनेन्द्रदेव ने संवर तत्व का ज्यों का त्यों भेदरूप श्रद्धान क्या बताया है?

उत्तर (१) कषाय के अभाव को शम कहते हैं और द्रव्येन्द्रिय, भावेन्द्रिय और इन्द्रियों के विषयभूत पदार्थों से आत्मा के भिन्न जानने को दम कहते हैं। (२) द्रव्येन्द्रिय–भावेन्द्रिय–इन्द्रियों के विषयभूत पदार्थों से तथा कषाय से आत्मा को भिन्न जानना ही संवर तत्व का ज्यों का त्यों भेद रूप श्रद्धान है।

प्र०१०. जिनेन्द्रदेव ने निर्जरा तत्व का ज्यों का त्यों भेदरूप श्रद्धान क्या बताया है?

उत्तर शुभाशुभ इच्छाओं के अभाव रूप तप की शक्ति से कर्मों का एक देश खिर जाना सो निर्जरा है। उस निर्जरा को सदैव प्राप्त करना चाहिए। आत्मा में विशेष एकाग्रता द्वारा शुद्धि की वृद्धि होते–होते सम्पूर्ण निर्जरा होती है तब जीव सुख की पूर्णता रूप मोक्ष प्राप्त करता है–यह निर्जरा तत्व का ज्यों का त्यों भेद रूप श्रद्धान है।

प्र०११. जिनेन्द्रदेव ने मोक्ष तत्व का ज्यों का त्यों भेदरूप श्रद्धान क्या बताया है?

उत्तर आठों कर्मों के सर्वथा नाश पूर्वक आत्मा की जो सम्पूर्ण शुद्ध दशा प्रगट होती है उसे मोक्ष कहते हैं। यह दशा अविनाशी तथा अनन्त सुखमयी है यह मोक्ष तत्व का ज्यों का त्यों भेद रूप श्रद्धान है।

प्र०१२. इन सात तत्वों के ज्यों के त्यों भेदरूप श्रद्धान के अर्थात् व्यवहार सम्यग्दर्शन के निमित्त कारण कौन से हैं ?

उत्तर वीतराग, सर्वज्ञ और हितोपदेशी सच्चे देव, चौबीस परिग्रह से रहित वीतरागी गुरू तथा अंहिसामय जैनधर्म उस व्यवहार सम्यग्दर्शन के कारण हैं अर्थात इन तीनों का (देव–गुरू–धर्म का) यथार्थ श्रद्धान भी व्यवहार सम्यग्दर्शन कहलाता है। निश्चयसम्यक्त्व के बिना मात्र सात तत्वों की भेदरूप श्रद्धा को या देव गुरु धर्म की श्रद्धा को व्यवहारसम्यकत्व नहीं कहा जाता।

प्र०१३. वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता नं० ४० के अन्तिम पृष्ठ पर प्रश्न ७ से १० तक के उत्तर व इस तीसरी ढाल के प्रश्न व उत्तर अपनी कॉपी में लिखकर कापी १ मई तक पाठशाला में जमा कराइये।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.३० बजे
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे
3.	रविवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे
4.	मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
6.	सोमवार से शनिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी		सांय ०४.०० से ०५.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- २८ फरवरी को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४२ का पारितोषिक वितरण भी १६ मई २०१० दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४४

दिनांक 22 अगस्त 2010 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

अध्यात्मप्रेमी पं० दौलतरामजी कृत छहढाला की तीसरी ढाल का उत्तरार्ध

(सम्यक्त्व के २५ दोष व आठ गुण)

वसु मद टारि निवारि त्रिशठता, षट् अनायतन त्यागो।
शंकादिक वसु दोष बिना, संवेगादिक चित पागो।।
अष्ट अंग अरू दोष पचीसों, तिन संक्षेप हु कहिये।
बिन जाने तैं दोष–गुणन को, कैसे तजिये गहिये।।११।।

(सम्यक्त्व के आठ अंग और शंकादि आठ दोषों का लक्षण)

जिन–वच में शंका न धार, वृष भवसुख–वांछा भानै।
मुनि–तन मलिन न देख घिनावै, तत्व कुतत्व पिछानै।।
निज–गुण अरू पर–औगुण ढाँकै, वा निज धर्म बढावै।
कामादिककर वृष तैं चिगते, निज–पर को सु दिढावै।।१२।।
धर्मी सौं गौ–बच्छ प्रीति सम, कर निज धर्म दिपावै।
इन गुन तैं विपरीत दोष वसु, तिनको सतत खिपावै।।

(मद नामक आठ दोष)

पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय न तौ मद ठानै।
मद न रूप कौ, मद न ज्ञान कौ, धन–बल कौ मद भानै।।१३।।
तप कौ मद न मद जु प्रभुता कौ करै न सो निज जानै।
मद धारै तो यही दोष वसु, समकित को मल ठानै।।

(छह अनायतन तथा तीन मूढ़ता दोष)

कुगुरु कुदेव कुवृष सेवक की, नहिं प्रशंस उचरै हैं।
जिन मुनि जिनश्रुत बिन, कुगुरादिक तिन्है न नमन करै हैं।।१४।।

(अविरति सम्यकदृष्टि की देवों द्वारा पूजा और गृहस्थपने में अप्रीति)

दोष–रहित गुण–सहित सुधी जे, सम्यग्दर्श सजै हैं।
चरितमोहवश लेश न संजम, पै सुरनाथ जजै हैं।
गेही पै गृह में न रचै ज्यों, जल तैं भिन्न कमल हैं।
नगर–नारि को प्यार यथा, कादे में हेम अमल हैं।।१५।।

(सम्यक्त्व की महिमा)

प्रथम नरक बिन षट् भू ज्योतिष, वान भवन षँढ नारी।
थावर विकलत्रय पशु में नहिं, उपजत सम्यक् धारी।।
तीनलोक तिहुँकाल माँही नहिं, दर्शन सो सुखकारी।
सकल धरम को मूल यही, इस बिन करनी दुखकारी।।१६।।

(सम्यक्त्व प्राप्ति ही मनुष्य भव की सफलता)

मोक्षमहल की परथम सीढ़ी, या बिन ज्ञान–चरित्रा।
सम्यकता न लहै सो दर्शन, धारौ भव्य पवित्रा।।
दौल समझ सुन चेत सयाने, काल वृथा मत खोवै।
यह नरभव फिर मिलन कठिन है, जो सम्यक् नहिं होवै।।१७।।

प्र०१. सम्यग्दर्शन के आठ अंगों के नाम व परिभाषा लिखिए।

उत्तर १. निःशंकित अंग २. निःकांक्षित अंग ३. निर्विचिकित्सा अंग ४. अमूढ़दृष्टि अंग ५. उपगूहन अंग ६. स्थितिकरण अंग ७. वात्सल्य अंग ८. प्रभावना अंग

निःशंकित अंग– सर्वज्ञदेव के कहे हुए तत्वों में शंका धारण नहीं करना, उसे निःशंकित अंग कहते हैं।

निःकांक्षित अंग– धर्म को धारण करके सांसारिक सुखों की इच्छा नहीं करना, उसे निःकांक्षित अंग कहते हैं।

निर्विचिकित्सा अंग–मुनियों के शरीरादि मैले देखकर घृणा न करना, उसे निर्विचिकित्सा अंग कहते हैं।

अमूढ़दृष्टि अंग– सच्चे और झूठे तत्वों की परीक्षा करके मूढ़ताओं तथा अनायतनों में न फँसना, उसे अमूढ़दृष्टि अंग कहते हैं।

उपगूहन अंग– अपनी प्रशंसा कराने वाले गुणों को तथा दूसरे की निंदा कराने वाले दोषों को ढकना और आत्मधर्म को बढ़ाना, उसे उपगूहन अंग कहते हैं।

स्थितिकरण अंग– काम, क्रोध, लोभ आदि किसी भी कारण से भ्रष्ट होते हुए अपने को तथा पर को पुनः धर्म में स्थिर करना, उसे स्थितिकरण अंग कहते हैं।

वात्सल्य अंग– अपने साधर्मी जन पर बछड़े से प्यार रखने वाली गाय की भांति निरपेक्ष प्रेम रखना, उसे वात्सल्य अंग कहते हैं।

प्रभावना अंग– अपनी सामर्थ्य अनुसार जैन धर्म की शोभा में वृद्धि करना, उसे प्रभावना अंग कहते हैं।

(श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार श्लोक ११ से २० व श्री समयसार गाथा २२९ से २३६ से विशेष जानना)

प्र०२. आठ मदों के नाम व स्वरूप बताइए।

उत्तर १. कुलमद २. जातिमद ३. रूपमद ४. ज्ञानमद ५. धनमद ६. बलमद ७. तपमद ८. प्रभुतामद

कुलमद– पिता आदि पितृपक्ष में राजादि प्रतापी पुरुष होने पर अभिमान करना, उसे कुलमद कहते हैं।

जातिमद– माता आदि मातृपक्ष में राजादि प्रतापी पुरुष होने का अभिमान करना, उसे जातिमद कहते हैं।

रूपमद– शारीरिक सौन्दर्य का मद करना, उसे रूपमद कहते हैं।

ज्ञानमद– अपनी विद्या का अभिमान करना, उसे ज्ञानमद कहते हैं।

धनमद– अपनी धन–सम्पत्ति का अभिमान करना, उसे धनमद कहते हैं।

बलमद– अपनी शारीरिक शक्ति का गर्व करना, उसे बलमद कहते हैं।

तपमद– अपने व्रत–उपवासादि तप का गर्व करना, उसे तपमद कहते हैं।

प्रभुतामद– अपने बड़प्पन और आज्ञा का गर्व करना, उसे प्रभुता मद कहते हैं।

प्र०३. कुल और जाति में क्या अन्तर है ?

उत्तर पिता के वंश को कुल और माता के वंश को जाति कहते हैं।

प्र०४. मूढ़ता और अनायतन में क्या अन्तर है ?

उत्तर मूढ़ता में कुदेवादि की सेवा, पूजा और विनय करते हैं, किन्तु अनायतन में तो उनकी प्रशंसा की जाती है।

प्र०५. मूढ़ता के कितने भेद हैं ?

उत्तर मूढ़ता के तीन भेद हैं – १. देवमूढ़ता २. गुरूमूढ़ता ३. लोकमूढ़ता

प्र०६. देवमूढ़ता किसे कहते हैं ?

उत्तर भय, आशा, स्नेह व लोभवश रागी–द्वेषी देवों की सेवा करना अथवा वंदन–नमस्कार करना, उसे देवमूढ़ता कहते हैं।

प्र०७. गुरूमूढ़ता किसे कहते हैं ?

उत्तर राग–द्वेषी और वस्त्रादि परिग्रहधारी, झूठे तथा कुलिंगी साधुओं की सेवा करना अथवा वंदन–नमस्कार करना, उसे गुरूमूढ़ता कहते हैं।

प्र०८. लोकमूढ़ता किसे कहते हैं ?

उत्तर धर्म समझकर जलाशयों में स्नान करना तथा रेत, पत्थर आदि का ढेर बनाना आदि कार्य, उसे लोकमूढ़ता कहते हैं।

(श्री रत्नकरण्डश्रावकाचार श्लोक २२ से २७ तक विशेष जानना)

प्र०९. अनायतन कितने हैं ? नाम बताइये।

उत्तर अनायतन छह हैं– १. कुगुरू २. कुदेव ३. कुधर्म ४. कुगुरु सेवक ५. कुदेव सेवक ६. कुधर्म सेवक

प्र०१०. सम्यक्त्व के आठ शंकादि दोषों के नाम लिखिए।

उत्तर सम्यक्त्व के आठ गुणों के विपरीत, सम्यक्त्व के आठ दोष निम्नांकित हैं– १. शंका, २. कांक्षा, ३. विचिकित्सा, ४. मूढ़दृष्टि ५. अनुपगूहन, ६. अस्थितिकरण ७. अवात्सल्य ८. अप्रभावना

प्र०११. प्रशम किसे कहते हैं ?

उत्तर अनंतानुबन्धी कषाय के अभावपूर्वक शेष कषायों का अंशतः मंद होना, उसे प्रशम कहते हैं।

प्र०१२. संवेग किसे कहते हैं ?

उत्तर संसार से भय होना और धर्म तथा धर्म के फल में परम उत्साह होना, उसे संवेग कहते हैं।

प्र०१३. अनुकम्पा किसे कहते हैं ?

उत्तर प्राणीमात्र पर दया का भाव, उसे अनुकम्पा कहते हैं।

प्र०१४. आस्तिक्य किसे कहते हैं ?

उत्तर जीवादि द्रव्यों व तत्वों का अस्तित्व आगम और युक्ति प्रमाण से मानना, उसे आस्तिक्य कहते हैं।

प्र०१५. सम्यग्दर्शन के आठ गुणों व पच्चीस दोषों को जानना क्यों आवश्यक है ?

उत्तर गुणों को व दोषों को जाने बिना दोषों को कैसे छोड़ा जा सकता है तथा गुणों को कैसे ग्रहण किया जा सकता है; अतः सम्यग्दर्शन के दोषों व गुणों को जानना आवश्यक है।

प्र०१६. सम्यग्दृष्टि जीव कहाँ–कहाँ उत्पन्न (जन्म) नहीं होते ?

उत्तर सम्यग्दृष्टि जीव पहले नरक के अतिरिक्त शेष छह नरकों में, ज्योतिषी देवों में, व्यंतर देवों में, भवनवासी देवों में, स्त्रियों में, नपुंसक में, पाँच स्थावरों में, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीव में तथा कर्मभूमि के पशुओं में नहीं होते।

प्र०१७. गुणस्थान किसे कहते हैं ?

उत्तर मोह और योग के सद्भाव या अभाव से आत्मा के गुण (सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र) की हीनाधिकतानुसार होने वाली अवस्थाओं को गुणस्थान कहते हैं।

प्र०१८. सम्यक्दृष्टि की विचारधारा कैसी होती है ?

उत्तर श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार श्लोक ४१ से देखिये।

प्र०१९. अन्त में श्री दौलतराम जी सम्यक्दर्शन की महिमा बताते हुए क्या आदेश देते हैं?

उत्तर यह सम्यग्दर्शन मोक्षरूपी महल की प्रथम सीढ़ी है, इस सम्यग्दर्शन के बिना ज्ञान और चारित्र सच्चाई प्राप्त नहीं करते ; इसलिये हे भव्य जीवों ! ऐसे पवित्र सम्यग्दर्शन को धारण करो। हे समझदार दौलतराम सुन, समझ और सावधान हो, समय को व्यर्थ न गंवा क्योंकि यदि सम्यग्दर्शन नहीं हुआ तो यह मनुष्य पर्याय पुनः मिलना दुर्लभ है।

प्र०२०. कारण किसे कहते हैं ? इसके कितने भेद हैं ?

उत्तर कार्य की उत्पादक सामग्री को ही कारण कहते हैं। इसके दो भेद हैं–
१. उपादान कारण २. निमित्त कारण

प्र०२१. उपादान कारण किसे कहते हैं ?

उत्तर जो स्वयं कार्यरूप परिणमित हो, उसे उपादान कारण कहते हैं।

प्र०२२. निमित्त कारण किसे कहते हैं ?

उत्तर जो स्वयं कार्यरूप परिणमित न हो, परन्तु कार्य की उत्पत्ति में अनुकूल होने का आरोप जिस पर आ सके, उसे निमित्त कारण कहते हैं। जैसे घट की उत्पत्ति में कुम्भकार।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें–

1.	सोमवार से शुक्रवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.३० बजे
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे
3.	रविवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे
4.	मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
6.	सोमवार से शनिवार	पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी	सांय ०४.०० से ०५.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- १६ मई को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४३ का पारितोषिक वितरण भी २२ अगस्त २०१० दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाल

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 983725791

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४५

दिनांक 21 नवम्बर 2010 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

अध्यात्मप्रेमी पं० दौलतरामजी कृत छहढाला की चौथी ढाल का

(सम्यग्ज्ञान का लक्षण और उसका समय)

सम्यक् श्रद्धा धारि पुनि, सेवहु सम्यग्ज्ञान।
स्व–पर अर्थ बहु धर्मजुत, जो प्रगटावन भान।।१।।

(सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान में अन्तर)

सम्यक् साथै ज्ञान होय, पै भिन्न अराधौ।
लक्षण श्रद्धा जानि, दुहू में भेद अबाधौ।।
सम्यक् कारण जान, ज्ञान कारज है सोई।
युगपत् होते हूँ, प्रकाश दीपक तैं होई।।२।।

(सम्यग्ज्ञान के भेद, परोक्ष और देशप्रत्यक्ष के लक्षण)

तास भेद दो हैं, परोक्ष परतछि तिन माँही।
मति श्रुत दोय परोक्ष, अक्ष मन तैं उपजाहीं।।
अवधिज्ञान मनपर्जय, दो हैं देश प्रतच्छा।
द्रव्य क्षेत्र परिमाण लिये, जानैं जिय स्वेच्छा।।३।।

(सकल–प्रत्यक्ष ज्ञान का लक्षण और ज्ञान की महिमा)

सकल द्रव्य के गुन अनन्त, परजाय अनन्ता।
जानैं एकै काल प्रगट, केवलि भगवन्ता।।
ज्ञान समान न आन जगत में, सुख को कारण।
इह परमामृत जन्म–जरा–मृति रोग निवारण।।४।।

(ज्ञानी और अज्ञानी के कर्मनाश के विषय में अन्तर)

कोटि जन्म तप तपैं, ज्ञान बिन कर्म झरैं जे।
ज्ञानी के छिन माहिं, त्रिगुप्ति तैं सहज टरैं ते।।
मुनिव्रत धार अनन्त बार, ग्रीवक उपजायौ।
पै निज आतम ज्ञान बिना, सुख लेश न पायौ।।५।।

(ज्ञान के दोष और मनुष्य पर्याय आदि की दुर्लभता)
तातैं जिनवर कथित, तत्व अभ्यास करीजै।
संशय विभ्रम मोह त्याग, आपो लख लीजै।।
यह मानुष पर्याय, सुकुल सुनिवौ जिनवानी।
इह विधि गये न मिलै, सुमणि ज्यों उदधि समानी।।६।।

(सम्यग्ज्ञान की महिमा और कारण)
धन समाज गज बाज, राज तो काज न आवे।
ज्ञान आपको रूप भये, फिर अचल रहावै।।
तास ज्ञान को कारण, स्व-पर विवेक बखानो।
कोटि उपाय बनाय, भव्य ताको उर आनो।।७।।

(सम्यग्ज्ञान की महिमा और विषयेच्छा रोकने का उपाय)
जो पूरब शिव गये, जाहिं अरू आगे जेहैं।
सो सब महिमा ज्ञानतनी, मुनिनाथ कहै हैं।।
विषय चाह दव दाह, जगत जन अरनि दझावै।
तास उपाय न आन, ज्ञान घनघान बुझावै।।८।।

(पुण्य-पाप में हर्ष-विषाद का निषेध और तात्पर्य की बात)
पुण्य-पाप फल माहिं, हरख बिलखौ मत भाई।
यह पुद्गल परजाय, उपजि विनसै फिर थाई।।
लाख बात की बात, यहै निश्चय उर लाओ।
तोरि सकल जग दन्द-फन्द, निज आतम ध्याओ।।६।।

नोट : उपरोक्त सभी दोहों का छहढाला ग्रन्थ से हिन्दी में अन्वयार्थ याद करिये।

प्र०१. सम्यग्ज्ञान किसे कहते हैं ?
उत्तर जिस प्रकार सूर्य समस्त पदार्थों को तथा स्वयं अपने को यथावत् दर्शाता है, उसी प्रकार जो अनेक धर्मयुक्त स्वयं अपने को (आत्मा को) तथा पर पदार्थों को ज्यों का त्यों बतलाता है उसे सम्यग्ज्ञान कहते हैं।
प्र०२. सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान में क्या अन्तर है ?
उत्तर सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान यद्यपि एक साथ प्रगट होते हैं तथापि वे दोनों भिन्न-भिन्न गुणों की पर्यायें हैं। सम्यग्दर्शन श्रद्धागुण की शुद्धपर्याय है और सम्यग्ज्ञान ज्ञान गुण की शुद्ध पर्याय है। पुनश्च, सम्यग्दर्शन का लक्षण विपरीत अभिप्रायरहित तत्वार्थश्रद्धा है और सम्यग्ज्ञान का लक्षण संशय आदि दोष रहित स्व-परका यथार्थतया निर्णय है-इस प्रकार दोनों के लक्षण भिन्न-भिन्न है।
प्र०३. सम्यग्ज्ञान का लक्षण बताइये।
उत्तर संशय, विपर्यय और अनध्यवसाय दोषों से रहित, स्व-पर के यथार्थ निर्णय को सम्यग्ज्ञान कहते हैं।

प्र०४. संशय किसे कहते हैं ?
उत्तर 'यह यों है या यों है' इस प्रकार परस्पर विरूद्धता सहित दो रूप ज्ञान कहते हैं। जैसे-मैं आत्मा हूँ या शरीर।
प्र०५. विपर्यय किसे कहते हैं ?
उत्तर ऐसा ही है-इस प्रकार वस्तु स्वरूप से विरुद्ध एकरूप ज्ञान को वि हैं। जैसे – मैं शरीर ही हूँ।
प्र०६. अनध्यवसाय किसे कहते हैं ?
उत्तर कुछ है- इस तरह के निश्चय रहित ज्ञान को अनध्यवसाय कहते है कोई हूँ।
प्र०७. सम्यग्ज्ञान के कितने भेद हैं ?
उत्तर सम्यग्ज्ञान के दो भेद हैं- १. प्रत्यक्षज्ञान २. परोक्षज्ञान
प्र०८. प्रत्यक्षज्ञान और परोक्षज्ञान किसे कहते हैं ?
उत्तर इन्द्रिय और मन के निमित्त बिना होने वाले पदार्थों के स्पष्ट ज्ञान क कहते हैं और इन्द्रिय और मन के निमित्त से होने वाले पदार्थों के को परोक्ष ज्ञान कहते हैं।
प्र०९. परोक्षज्ञान के कितने भेद हैं ?
उत्तर परोक्षज्ञान के दो भेद हैं- १. मतिज्ञान २. श्रुतज्ञान।
प्र०१०. मतिज्ञान किसे कहते हैं ?
उत्तर १. पराश्रय की बुद्धि छोड़कर दर्शन-उपयोगपूर्वक स्वसन्मुखता वाले निज आत्मा के ज्ञान को मतिज्ञान कहते हैं।
२. इन्द्रियाँ और मन जिसमें निमित्त हैं ऐसे ज्ञान को मतिज्ञान
प्र०११. श्रुतज्ञान किसे कहते हैं ?
उत्तर १. मतिज्ञान से जाने हुए पदार्थों के सम्बन्ध से अन्य पदार्थों को ज्ञान को श्रुतज्ञान कहते हैं।
२. आत्मा की शुद्ध अनुभूतिरूप श्रुतज्ञान को भावश्रुतज्ञान कहत
प्र०१२. प्रत्यक्षज्ञान के कितने भेद हैं ?
उत्तर प्रत्यक्षज्ञान के दो भेद हैं- १. देशप्रत्यक्ष २. सकलप्रत्यक्ष।
प्र०१३. देशप्रत्यक्षज्ञान के कितने भेद हैं ?
उत्तर देशप्रत्यक्ष के दो भेद हैं – १. अवधिज्ञान २. मनःपर्ययज्ञान।
प्र०१४. अवधिज्ञान किसे कहते हैं ?
उत्तर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादापूर्वक रूपी पदार्थों के स अवधिज्ञान कहते हैं।
प्र०१५. मनःपर्ययज्ञान किसे कहते हैं ?
उत्तर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादासहित दूसरे के मन में स्थित र स्पष्ट ज्ञान को मनःपर्ययज्ञान कहते हैं।

प्र०१६. सकलप्रत्यक्षज्ञान अर्थात केवलज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर जो तीन लोक व तीन कालवर्ती सर्व पदार्थों (अनंत धर्मात्मक सर्व द्रव्य–गुण–पर्यायों) को एकसमय में यथास्थित, परिपूर्ण रूप से, स्पष्ट और एकसाथ जानता है, ऐसे केवलज्ञान को सकलप्रत्यक्षज्ञान कहते हैं।

प्र०१७. सम्यग्ज्ञान का कारण क्या है ?

उत्तर 'तास ज्ञान को कारण स्व–पर विवेक बखानो' अर्थात् सम्यग्ज्ञान का कारण स्व–पर का भेदज्ञान है।

प्र०१८. उपरोक्त नौ दोहों का सार क्या है ?

उत्तर १. मुझ आत्मा ज्ञानस्वरूप है। प्रत्येक जीव में निरन्तर मति–श्रुत आदि कोई भी ज्ञान की पर्याय होती है। जिसमें शरीर, धन आदि पदार्थों का प्रतिभास होता है, पदार्थ नहीं– ऐसे विवेक पूर्वक शरीर, धन आदि पदार्थों के ज्ञानरूप परिणमित निज आत्मा को शरीर आदि सम्पूर्ण विश्व से भिन्न देखना ही सम्यग्ज्ञान है।

२. पूर्वकाल में जो जीव मोक्ष गये हैं ; भविष्य में जायेंगे और वर्तमान में महाविदेह क्षेत्र से जा रहे हैं– वह सब सम्यग्ज्ञान का प्रभाव है। जिस प्रकार मूसलाधार वर्षा वन की भयंकर अग्नि को क्षणमात्र में बुझा देती है उसी प्रकार यह सम्यग्ज्ञान विषय वासना को क्षणमात्र में नष्ट कर देता है।

३. आत्मा और परवस्तुओं का भेदविज्ञान होने पर सम्यग्ज्ञान होता है इसलिये संशय, विपर्यय और अनध्यवसाय का त्याग करके तत्व के अभ्यास द्वारा सम्यग्ज्ञान प्राप्त करना चाहिये। सावधान ! ऐसा दुर्लभ सुयोग प्राप्त करके सम्यग्धर्म प्राप्त न करना मूर्खता है।

प्र०१९. छहढाला की पहली ढाल, दूसरी ढाल व तीसरी ढाल का सारांश क्या है ?

प्र०२०. वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता नं० ४० के अन्तिम पृष्ठ पर प्रश्न ७ से १० तक के उत्तर व इस छहढाला के प्रश्न व उत्तर अपनी कापी में लिखकर कापी १ नवम्बर तक पाठशाला में जमा कराइये।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.३० बजे
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे
3.	रविवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे
4.	मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
6.	सोमवार से शनिवार	पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी	सांय ०४.०० से ०५.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- २२ अगस्त को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४४ का पारितोषिक वितरण भी २१ नवम्बर २०१० दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४६

दिनांक 27 मार्च 2011 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

अध्यात्मप्रेमी पं० दौलतरामजी कृत छहढाला की चौथी ढाल का उत

(सम्यक्चारित्र का समय और भेद तथा अहिंसाणुव्रत और सत्याणुव्रत का

सम्यग्ज्ञानी होय बहुरि, दृढ चारित लीजै।
एकदेश अरु सकलदेश, तसु भेद कहीजै।।
त्रसहिंसा को त्याग, वृथा थावर न संघारै।
पर–वधकार कठोर निंद्य, नहिं वचन उचारै।।१०।।

(अचौर्याणुव्रत, ब्रह्मचर्याणुव्रत, परिग्रहपरिमाणाणुव्रत तथा दिग्व्रत का ल

जल मृत्तिका बिन और, नाहिं कछु गहै अदत्ता।
निज वनिता बिन सकल, नारि सौं रहै विरत्ता।।
अपनी शक्ति विचार, परिग्रह थोरो राखै।
दश दिशि गमन प्रमान ठान, तसु सीम न नाखै।।११।।

(देशव्रत नामक गुणव्रत का लक्षण)

ताहू में फिर ग्राम, गली गृह बाग बजारा।
गमनागमन प्रमान, ठान, अन सकल निवारा।।

(अनर्थ दण्डव्रत के भेद और उनका लक्षण)

काहू की धन–हानि, किसी जय–हार न चिन्तैं।
देय न सो उपदेश, होय अघ बनज कृषी तैं।।१२।।
कर प्रमाद जल भूमि, वृक्ष पावक न विराधै।
असि धनु हल हिंसोपकरन, नहिं दे जस लाधै।।
राग–द्वेष करतार कथा, कबहूँ न सुनीजै।
और हु अनरथदंड, हेतु अघ तिन्हैं न कीजै।।१३।।

(सामायिक, प्रोषध, भोगोपभोगपरिमाण और अतिथिसंविभाग

धर उर समता भाव, सदा सामायिक करिये।
परब चतुष्टय माहिं, पाप तज प्रोषध धरिये।।
भोग और उपभोग, नियम करि ममत निवारै।
मुनि को भोजन देय, फेर निज करहिं अहारै।।१४।।

(निरतिचार श्रावकव्रत पालन करने का फल)

बारह व्रत के अतिचार, पन पन न लगावै।
मरण समय सन्यास धारि, तसु दोष नशावै।।
यों श्रावक व्रत पाल, स्वर्ग सोलह उपजावै।
तहँ तैं चय नर जन्म पाय, मुनि ह्वै शिव जावै।।१५।।

नोट : उपरोक्त सभी दोहों का छहढाला ग्रन्थ से हिन्दी में अन्वयार्थ याद करिये।

प्र०१. सम्यक्चारित्र के कितने भेद हैं ?

उत्तर सम्यक्चारित्र के चार भेद हैं–१ स्वरूपाचरण चारित्र २. देशचारित्र ३. सकलचारित्र ४. यथाख्यातचारित्र।

प्र०२. देशचारित्र और सकलचारित्र के स्वामी कौन हैं ?

उत्तर देशचारित्र के स्वामी श्रावक व सकलचारित्र के स्वामी मुनिराज हैं।

प्र०३. श्रावक के कितने व्रत होते हैं ?

उत्तर श्रावक के १२ व्रत होते हैं– ५ अणुव्रत, ३ गुणव्रत, ४ शिक्षाव्रत।

प्र०४. अणुव्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर पाँच पापों के एकदेश त्याग को अणुव्रत कहते हैं।

प्र०५. अणुव्रत के कितने भेद हैं ?

उत्तर अणुव्रत के पाँच भेद हैं– १. अहिंसाणुव्रत २. सत्याणुव्रत ३. अचौर्याणुव्रत ४. ब्रह्मचर्याणुव्रत ५. परिग्रहपरिमाण अणुव्रत

अहिंसाणुव्रत– त्रसजीवों की संकल्पी हिंसा का सर्वथा त्याग करके, निष्प्रयोजन स्थावर जीवों का घात न करना अहिंसाणुव्रत है।

सत्याणुव्रत– दूसरे के प्राणों के घातक, कठोर तथा निंदनीय वचन न बोलना, न दूसरों से बुलवाना व न ही अनुमोदन करना सत्याणुव्रत है।

अचौर्याणुव्रत– पानी और मिट्टी के अतिरिक्त बिना दिये अन्य कोई वस्तु नहीं लेना अचौर्याणुव्रत है।

ब्रह्मचर्याणुव्रत– अपनी विवाहिता स्त्री के अतिरिक्त अन्य सर्व स्त्रियों से विरक्त रहना ब्रह्मचर्याणुव्रत है।

परिग्रहपरिमाण अणुव्रत–अपनी शक्ति और योग्यता को ध्यान रखकर जीवन पर्यंत के लिए धन–धान्यादि बाह्य परिग्रह का परिमाण बांधकर उससे अधिक की इच्छा न करना परिग्रहपरिमाणव्रत है।

प्र०६. गुणव्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर अणुव्रतों तथा मूलगुणों को पुष्ट करने वाले व्रत को गुणव्रत कहते हैं।

प्र०७. गुणव्रत के कितने भेद हैं ?

उत्तर गुणव्रत के तीन भेद हैं– १ दिग्व्रत २. देशव्रत ३. अनर्थदण्डव्रत।

दिग्व्रत– दसों दिशाओं में गमन की मर्यादा निश्चित करके, जीवनपर्यंत उसका उल्लंघन नहीं करने का दिग्व्रत कहते हैं।

देशव्रत– दिग्व्रत में बाँधी हुई जीवनपर्यंत मर्यादा में भी घड़ी, घण्टा, दिन, महीना आदि की मर्यादापूर्वक आने–जाने की सीमा को और मर्यादित कर लेने को देशव्रत कहते हैं।

अनर्थदण्डव्रत– प्रयोजनरहित, मन, वचन, काय की अशुभ–प्रवृत्ति के त्
अनर्थदण्डव्रत कहते है।

प्र०८. अनर्थदण्डव्रत कितने प्रकार का है?

उत्तर स्थूलरूप से अनर्थदण्डव्रत पांच प्रकार का है– १.अपध्यान अनर्थ
२. पापोपदेश अनर्थदण्डव्रत ३. प्रमादचर्या अनर्थ
४. हिंसादान अनर्थदण्डव्रत ५. दुःश्रुति अनर्थदण्डव्रत

अपध्यान – किसी के धन का नाश, पराजय अथवा विजय आदि का
करना अपध्यान अनर्थदण्डव्रत है।

पापोपदेश – हिंसारूप, पापजनक व्यापार तथा खेती आदि का उ
देना पापोपदेश अनर्थदण्डव्रत है।

प्रमादचर्या – प्रमादवश होकर, पांच स्थावरकाय के जीवों की हिंसा
प्रमादचर्या अनर्थदण्डव्रत है।

हिंसादान – यशप्राप्ति के लिये किसी के मांगने पर हिंसा के
हथियार का न देना हिंसादान अनर्थदण्डव्रत है।

दुःश्रुति – राग–द्वेष उत्पन्न करने वाली विकथा और उपन्यास या
कथाओं के श्रवण का त्याग करना दुःश्रुति अनर्थदण्

प्र०९. शिक्षाव्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर मुनिव्रत पालन करने की शिक्षा देने वाले व्रत को शिक्षाव्रत कहते

प्र०१०.शिक्षाव्रत कितने प्रकार का है ?

उत्तर शिक्षाव्रत चार प्रकार है– १सामायिक २. प्रोषधोपवास ३. भोगोपभो
४. अतिथि संविभाग।

सामायिक – स्वोन्मुखता द्वारा अपने परिणामों को स्थिर कर
विधिपूर्वक सामायिक करना शिक्षाव्रत है।

प्रोषधोपवास – कषाय, विषय और आहार का त्याग करके उ
के समीप रहना, उपवास है। प्रत्येक अष्टमी त
के दिन सर्व आरंभ का त्याग करके उप
प्रोषधोपवास शिक्षाव्रत है।

भोगोपभोग परिमाण– परिग्रहपरिमाण अणुव्रत में निश्चय की हुई भो
वस्तुओं में जीवनपर्यंत के लिए अथवा किसी नि
के लिए नियम करना भोगोपभोग परिमाण शि

अतिथिसंविभाग– निग्रंथ मुनि आदि सत्पात्रों को आहार देने
स्वयं भोजन करना अतिथिसंविभागव्रत है।

प्र०११. सामायिक किसे कहते हैं ?

उत्तर सर्व द्रव्यों में राग–द्वेष के त्यागपूर्वक समताभाव का अवलंबन करके आ
की प्राप्ति करने को सामायिक कहते हैं।

प्र०१२. भोग किसे कहते है ?

उत्तर पांच इन्द्रियों के विषय में जो विषय एक बार भोगने में आ सकें उसे भोग कहते हैं। जैसे–भोजन आदि।

प्र०१३. उपभोग किसे कहते हैं ?

उत्तर पांच इन्द्रियों के विषयों में जो विषय पुनः–पुनः भोगने में आ सकें उसे उपभोग कहते हैं। जैसे–वस्त्र, आभूषण।

प्र०१४. अतिचार किसे कहते हैं ?

उत्तर व्रत की अपेक्षा रखने पर भी उसका एकदेश भंग होना अतिचार है।

प्र०१५. छहढाला में संसार परिभ्रमण का कारण क्या बताया है ? (अनिवार्य)

उत्तर	ताको न जान	विपरीत मान करि	करे देह में निज पिछान	इसका फल
	मैं ज्ञान दर्शन उपयोग मयी जीव तत्व हूँ, इस बात को नहीं जानता,	वीना शरीर रूप अनन्त पुद्गल द्रव्यों में अपनापना मान करि,	वीना शरीर रूप अनन्त पुद्गल द्रव्यों से ही अपनी पहचान करता है।	चारों गतियों में घूमकर निगोद है।

प्र०१६. छहढाला में संसार के अभाव का उपाय क्या बताया है ?(अनिवार्य)

उत्तर	ताको न जान	विपरीत मान करि	करे देह में निज पिछान	इसका फल
	मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ, इस बात को जान	वीना शरीरादि पुद्गलों से सर्वथा भिन्न मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ, ऐसा मान करि,	ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व से ही अपनी पहचान करता है।	तुरन्त संवर –निर्जरा की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष है।

प्र०१७. चौथी ढाल के १५ दोहों को छहढाला में से अर्थ सहित पढ़िये।

प्र०१५. पहली–दूसरी–तीसरी ढाल की प्रतियोगिता के प्रश्नों का पुनर्अभ्यास करिये।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

सोमवार से शुक्रवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.३० बजे
शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे
रविवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे
मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
सोमवार से शनिवार	पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी	सांय ०४.०० से ०५.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- २१ नवम्बर को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४५ का पारितोषिक वितरण भी २० मार्च २०११ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४७

दिनांक 15 मई 2011 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है

अध्यात्मप्रेमी पं० दौलतरामजी कृत छहढाला की पांचवी ढाल

(भावनाओं के चिंतवनका कारण, उसके अधिकारी और उसका फल)

मुनि सकलव्रती बड़भागी भव–भोगनतैं वैरागी;
वैराग्य उपावन माई, चिन्तैं अनुप्रेक्षा भाई।।१।।

(भावनाओंका फल और मोक्षसुखकी प्राप्तिका समय)

इन चिनतत सम सुख जागै, जिमि ज्वलन पवनके लागै;
जब ही जिय आतम जानै, तब ही जिय शिवसुख ठानै।।२।।

अनित्य – जोबन गृह गो धन नारी, हय गय जन आज्ञाकारी;
इन्द्रिय भोग छिन थाई, सुरधनु चपला चपलाई।।३।।

अशरण– सुर असुर खगाधिप जेते, मृग ज्यों हरि, काल दले ते;
मणि मंत्र तंत्र बहु होई, मरते न बचावै कोई।।४।।

संसार– चहुँगति दुखः जीव भरै है, परिवर्तन पंच करै है;
सबविधि संसार असारा, यामें सुख नहीं लगारा।।५।।

एकत्व– शुभ अशुभ करम फल जेते, भोगे जिय एक हि ते ते ;
सबविधि संसार असारा, यामें सुख नहीं लगारा।।५।।

अन्यत्व– जल–पय ज्यों जिय–तन मेला, पै भिन्न–भिन्न नहिं भेला;
तो प्रगट जुदे धन धामा, क्यों हैं इक मिलि सुत रामा।।७।।

अशुचि– पल रुधिर राध मल थैली, कीकस वसादितैं मैली,
नव द्वार बहैं घिनकारी, अस देह करे किम यारी।।८।।

आस्रव– जो योगनकी चपलाई तातैं हैं आस्रव भाई;
आस्रव दुखकार घनेरे, बुधिवन्त तिन्हें निरवेरे।।८।।

जिन पुण्य–पाप नहिं कीना, आतम अनुभव चित दीना;
तिनही विधि आवत रोके, संवर लहि सुख अवलोके।।१०।।

रा– निज काल पाय विधि झरना, तासों निज काज न सरना;
तप करि जो कर्म खिपावै, सोई शिवसुख दरसावै।।११।।

लोक– किनहू न करौ न धरै को, षडद्रव्यमयी न हरै को,
सो लोकमांहि बिन समता, दुख सहै जीव नित भ्रमता।।१२।।

बोधिदुर्लभ– अंतिम–ग्रीवकलौंकी हद, पायो अनन्त विरियां पद;
पर सम्यग्ज्ञान न लाधो, दुर्लभ निजमें मुनि साधौ।।१३।।

धर्म– जो भाव, मोहतैं न्यारे, दृग–ज्ञान–व्रतादिक सारे;
सो धर्म जबै जिय धारै, तब ही सुख अचल निहारे।।१४।।

(आत्मानुभवपूर्वक भावलिंगी मुनिका स्वरूप)

सो धर्म मुनिनकरि धरिये, तिनकी करतूत उचरिये;
ताको सुनिये भवि प्रानी, अपनी अनुभूति पिछानी।।१५।।

नोट : उपरोक्त सभी दोहों का छहढाला ग्रन्थ से हिन्दी में अन्वयार्थ याद करिये।

विशेष– पाँचवी ढाल की सम्पूर्ण विषयवस्तु बारह भावनायें को मूल छहढाला ग्रन्थ से पढ़ना व याद करना है।

प्र०१. अनुप्रेक्षा अर्थात् भावना किसे कहते हैं ?

उत्तर भेदज्ञानपूर्वक संसार, शरीर और भोगादि के स्वरूप का बारम्बार विचार करके उनके प्रति उदासीनभाव उत्पन्न करना अनुप्रेक्षा है।

प्र०२. भावनायें (अनुप्रेक्षा) कितने प्रकार की होती हैं ?

उत्तर भावनायें बारह प्रकार की हैं–

१. अनित्यभावना २. अशरणभावना ३. संसारभावना ४. एकत्वभावना
५. अन्यत्वभावना ६. अशुचिभावना ७. आस्रवभावना ८. संवरभावना
९. निर्जरा भावना १०. लोकभावना ११. बोधिदुर्लभभावना १२.धर्मभावना

प्र०३. बारह भावनाओं के चिन्तन का फल बताइये ?

उत्तर बारह भावनाओं के चिन्तन द्वारा वीतरागता की प्राप्ति होती है।

प्र०४. बारह भावनाओं का वास्तविक चिन्तन किसे होता है ?

उत्तर बारह भावनाओं का चिंतवन मुख्यता से दिगम्बर जैन मुनिराज को तथा गौणरूप से सम्यग्दृष्टि को होता है।

प्र०५. अनुप्रेक्षा और भावना में क्या अन्तर है ?

उत्तर अनुप्रेक्षा और भावना पर्यायवाची शब्द हैं, उनमें कोई अन्तर नहीं है।

प्र०६. अनित्यआदि भावनाओं बाह में किस विषय पर वैराग्यपरक चिन्तन किया जाता है ?

उत्तर १. अनित्य भावना में मुख्यतः संयोगों और पर्यायों की (जैसे–शरीर, स्त्री, पुत्रादि) की अनित्यता का वैराग्यपरक चिन्तन किया जाता है।

२. अशरणभावना में मुख्यता संयोगें और पर्यायों की अशरणता (यथासमय विघटन) का ....

३. संसारभावना में मुख्यतः संयोगों की दुःखरूपता व निःसारता का ....

४. एकत्व भावना में स्वकृत शुभाशुभ कर्मों का फल जीव अकेला ही भोगता है, उसमें अन्य का साथ संभव नहीं है – इस वस्तुस्थिति का ....

५. अन्यत्वभावना में आत्मा का संयोगों से अत्यन्त भिन्नत्व है – इस विषय का. ....

६. अशुचिभावना में संयोगो (शरीर) की मलिनता, अपवित्रता का..............

७. आस्रवभावना में पुण्यपापरूप आस्रवभाव आत्मस्वभावसे अन्य है, दुःखदायक है; अतः त्याज्य है–मुख्यतः इस प्रकार का ....

८-९ संवर तथा निर्जरा भावना में सम्यक्त्वादि सुखरूप हैं, सुख के कारण हैं– मुख्यतः इस प्रकार का ....

१०. लोकभावना में लोक के स्वरूप का भेदविज्ञानपरक व ....

११. बोधिदुर्लभ भावना में निज आत्मा का यथार्थ स्वरूप समझकर स्वसंवेदन द्वारा सम्यक्ज्ञान की आराधना की भावना का चिंतन है।

१२. धर्मभावना में रत्नत्रयरूप धर्म के स्वरूप का महिमापरक चिन्तन किया जाता है।

प्र०७. संसार को असार क्यों कहा गया है ?

उत्तर संसार में किंचित्मात्र भी सुख नहीं है, इसलिए इसे असार कहा गया है।

प्र०८. क्या जीव की अशुद्धपर्याय को भी संसार कहा जाता है ?

उत्तर हाँ, जीव की अशुद्धपर्याय को भी संसार कहा जाता है।

प्र०९. योग के कितने भेद हैं ?

उत्तर योग के दो भेद हैं– १. द्रव्ययोग २. भावयोग।

प्र०१०. द्रव्ययोग किसे कहते हैं ?

उत्तर मन, वचन तथा काया के निमित्त से आत्मा के प्रदेशों में कम्पन होना द्रव्ययोग है।

प्र०११. भावयोग किसे कहते हैं ?

उत्तर कर्म और नोकर्म के ग्रहण में निमितरूप जीव की शक्ति को भावयोग कहते हैं।

प्र०१२. सविपाक और अविपाक निर्जरा किसे कहते हैं ?

उत्तर १. कर्मों का स्वसमयानुसार उदय में आकर खिर जाना सविपाक निर्जरा है।

२. तप द्वारा कर्मों को उदयकाल के पहिले ही खिरा देना अविपाक निर्जरा है। यह निर्जरा ज्ञानीजनों द्वारा उद्यमपूर्वक की जाती है।

प्र०१३. धर्मभावना और धर्म में क्या अंतर है ?

उत्तर धर्मभावना में तो बारम्बार विचार की मुख्यता है और धर्म में निजगुणों में स्थिर होने की प्रधानता है।

प्र०१४. धर्म की विभिन्न परिभाषायें बताइये ?

उत्तर १. वस्तु के स्वभाव को धर्म कहते हैं; २. अहिंसा परम धर्म है;
३. उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्म हैं; ४. निश्चय रत्नत्रय धर्म है।

प्र०१६. जीव तत्व का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?

उत्तर चेतन को है उपयोग रूप बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल इनतैं न्यारी है जीव चाल।।

अर्थः १. 'चेतन को है उपयोग रूप' अर्थात् मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ और मेरा कार्य ज्ञाता दृष्टा है।

२. 'बिन्मूरत' अर्थात् आँख, नाक, कान औदारिक आदि शरीरों रूप मेरी मूर्ति नहीं हैं।

३. 'चिन्मूरत' अर्थात् चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।

४. 'अनूप' अर्थात् सर्वज्ञ स्वभावी होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।

५. 'पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल इनतें न्यारी है जीव चाल' अर्थात् मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अन्नत, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं– इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

पहली–दूसरी–तीसरी, चौथी ढाल की प्रतियोगिता के प्रश्नों का पुनर्अभ्यास करिये।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.३० बजे
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे
3.	रविवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे
4.	मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
6.	सोमवार से शनिवार	पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी	सांय ०४.०० से ०५.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- २७ मार्च को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४६ का पारितोषिक वितरण भी १५ मई २०११ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४८

दिनांक 24 जुलाई 2011 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

पहली से चौथी ढाल तक के अनिवार्य प्रश्न

प्र०१. आत्मा के संसार में परिभ्रमण का कारण छहढाला की पहली ढाल में क्या बताया है ?

उ० "मोह महामद पियो अनादि भूल आपको भरमत वादि" – अर्थात् मैं आत्मा हूँ इस बात को भूलकर शरीरादि परद्रव्यों को अपना मानने के कारण ही मुझ आत्मा संसार मे परिभ्रमण कर रहा है।

प्र०२. जीवादि प्रयोजनभूत तत्व सरधै तिनमाहि विपर्ययत्व – से क्या तात्पर्य है ?

उ० जीवादि प्रयोजनभूत तत्व अर्थात् जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष– ये सात प्रयोजनभूत तत्व हैं।

(१) जीव तत्व – जिसमें मेरा ज्ञान–दर्शन हो वह जीवतत्व है, वह जीवतत्व एकमात्र आश्रय करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

(२) अजीव तत्व – जिनमें मेरा ज्ञान–दर्शन नहीं है वे अजीव तत्व हैं, मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्त जीव द्रव्य, अनंतानंत पुद्गल द्रव्य, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक द्रव्य, लोकप्रमाण असंख्यात काल द्रव्य हैं, ये सब द्रव्य जानने योग्य प्रयोजनभूत तत्व हैं।

(३) आस्रव तत्व – शुभाशुभ विकारी भावों का उत्पन्न होना आस्रव तत्व है, आस्रव तत्व छोड़ने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

(४) बंध तत्व – शुभाशुभ विकारी भावों में अटकना बंध तत्व है, बंध तत्व छोड़ने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

(५) संवर तत्व – शुद्धि का प्रगट होना संवर तत्व है, संवर तत्व एक देश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

(६) निर्जरा तत्व – शुद्धि की वृद्धि होना निर्जरा तत्व है, निर्जरा तत्व एक देश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

(७) मोक्ष तत्व – संपूर्ण शुद्धि का प्रगट होना मोक्ष तत्व है, मोक्ष तत्व पूर्ण प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

इन प्रयोजनभूत सात तत्वों का अनादिकाल से विपरीत श्रद्धान अगृहीत मिथ्यादर्शन है, अनादिकाल से विपरीत ज्ञान अगृहीत मिथ्याज्ञान है और अनादिकाल से विपरीत आचरण अगृहीत मिथ्याचारित्र है। इन्हीं के कारण मुझ आत्मा अनादिकाल से चारों गतियों में जन्म–मरण के दुःख भोग रहा है।

प्र०३. चेतन को है उपयोग रूप, बिनमूरत, चिन्मूरत, अनूप पर (१) ताको न जान (२) विपरीत मान करि (३) करै देह में निज पिछान को समझाइये ?

उ० (१) चेतन को है उपयोगरूप अर्थात् मैं ज्ञानदर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ – इस बात को न जान कर; शरीर रूप अनन्त पुद्गल द्रव्यों मे अपनापना मान कर; शरीर रूप पुद्गलों से अपनी पहचान करता है।

(२) मेरा कार्य ज्ञाता दृष्टा है – इस बात को न जानकर; शरीर के कार्यों में अपनापना मान कर; शरीर के कार्यों से अपनी पहचान करता है।

(३) बिनमूरत अर्थात् आँख–नाक–कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नहीं है – इस बात को न जानकर; आँख–नाक–कान औदारिक आदि शरीरों में अपनापना मान कर; आँख–नाक–कान औदारिक आदि शरीरो से अपनी पहचान करता है।

(४) चिन्मूरत अर्थात् चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है– इस बात को न जानकर; जड़रूपी एक–एक प्रदेशी पुद्गल के अनन्त आकारों में अपनापना मान कर; जड़रूपी एक–एक प्रदेशी पुद्गल के अनन्त आकारों से अपनी पहचान करता है।

(५) अनूप अर्थात् सर्वश्र स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है– इस बात को न जानकर; अजीव तत्व मे अपनापना मान कर; अजीव तत्व से ही अपनी पहचान करता है

इसका फल – चारों गतियों में घूमकर निगोद है।

प्र०४. जीव तत्व का ज्यों का त्यों भेद रूप श्रद्धान छहढाला की तीसरी ढाल मे क्या बताया है

उ० प्रत्येक आत्मा ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व है। अवस्था की अपेक्षा वह तीन प्रका[र] का है– १. बहिरात्मा २. अन्तरात्मा ३. परमात्मा

(१) बहिरात्मा – जो शरीर और आत्मा को एक मानते है उन्हें बहिरात्मा कहते है।

(२) अन्तरात्मा – जो शरीर और आत्मा को अपने भेदविज्ञान से भिन्न–भिन्न जानते मानते हैं और अनुभव करते हैं, उन ज्ञानी आत्मा को अन्तरात्मा कहते है। अंतरात्मा ती[न] प्रकार के हैं– १. उत्तम अंतरात्मा २. मध्यम अंतरात्मा ३. जघन्य अंतरात्मा

(१) उत्तम अंतरात्मा – अंतरंग और बहिरंग दोनो प्रकार के परिग्रह से रहित, सातवें से ले[कर] बारहवे गुणस्थान तक वर्तते हुए शुद्धोपयोगी आत्मध्यानी दिगम्बर मुनि उत्तम अंतरात्मा

(२) मध्यम अंतरात्मा – छठवें गुणस्थानवर्ती मुनिराज और पंचम गुणस्थानव[र्ती] श्रावक मध्यम अंतरात्मा है।

(३) जघन्य अंतरात्मा – चतुर्थ गुणस्थानवर्ती अविरत (व्रत रहित) सम्यग्दृष्टि जघन्य अंतरात्म[ा]

(३) परमात्मा – जो अपनी आत्मा में पूर्ण लीन हैं, वे परमात्मा हैं। परम[ात्मा] दो प्रकार के हैं– १. सकल परमात्मा २. निकल परमा[त्मा]

(१) सकल परमात्मा – चार घाती कर्मों से रहित, अनन्त चतुष्टय सहित, वीतरागी केवलज्ञानी, श्री अरिहंत भगवान को शरीरसहित होने से सकल परमात्मा कह[े]

(२) निकल परमात्मा – द्रव्यकर्म–भावकर्म–नोकर्म रहित श्री सिद्ध भगवान को शरीररहित होने से निकल परमात्मा कहते हैं।

बहिरात्मा, अंतरात्मा और परमात्मा का स्वरूप जानकर हमे क्या करना चाहिये ? हमे पुरुषार्थ पूर्वक बहिरात्मपना छोड़कर अंतरात्मा बनकर निरन्तर परमात्मा बनने की भावना करनी चाहिये।

अजीव तत्व का ज्यो का त्यो भेदरूप श्रद्धान तीसरी ढाल मे क्या बताया है ?

(१) अजीव द्रव्य – जिनमे ज्ञान दर्शन न हो वे अजीव द्रव्य हैं और वे पांच हैं। पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल।

(२) अजीव तत्व – जिनमें मेरा ज्ञान दर्शन नहीं है वे अजीव तत्व हैं। मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म–अधर्म, आकाश एकेक और लोक प्रमाण असंख्यात काल द्रव्य है ये सब अजीव तत्व हैं। इन सब अजीव तत्व का मुझ आत्मा से कर्ता–भोक्ता का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है क्योंकि वे सब व्यवहार से ज्ञान का ज्ञेय है।

(३) पुद्गल द्रव्य – जिसमें स्पर्श–रस–गंध–वर्ण पाया जाय वह पुद्गल है। स्पर्श की आठ पर्यायें, रस की पांच पर्यायें, गंध की दो पर्यायें, वर्ण की पांच पर्यायें और शब्द की सात पर्यायें है– इस प्रकार पुद्गल की २७ पर्यायें होती हैं। इन सत्ताइस पर्यायों से मुझ जीव तत्व का किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है क्योंकि मुझ जीव तत्व अस्पर्श, अरस, अगंध, अवर्ण और अशब्द स्वभावी है।

(४) धर्म द्रव्य – जीव पुद्गल जब अपनी–अपनी क्रियावती शक्ति से स्वयं स्वतः गमन रूप होते हैं तब धर्म द्रव्य निमित्त होता है।

(५) अधर्म द्रव्य – जीव पुद्गल जब अपनी–अपनी क्रियावती शक्ति से स्वयं स्वतः चलकर स्थिर होते हैं तब अधर्म द्रव्य निमित्त होता है।

(६) आकाश द्रव्य – सर्व द्रव्य अनादिकाल से अपने–अपने निज क्षेत्र में रहते हैं उसमें आकाश द्रव्य निमित्त है।

(७) काल द्रव्य – सर्व द्रव्य परिणमन स्वभाव के कारण स्वयं स्वतः परिणमते हैं उसमें काल द्रव्य निमित्त हैं।

अजीव तत्व का स्वरूप जानकर हमें क्या करना चाहिये ?

८ मुझ निज जीव तत्व का इन सब अजीव तत्वों से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। क्योंकि इन सब की चाल मुझ जीव तत्व से सर्वथा भिन्न ही है।

९. अजीव तत्व से सर्वथा भिन्न अपने को आप रूप जानकर पर का अंश भी अपने न मिलाना और अपना अंश भी पर में न मिलाना। यह अजीव तत्व का ज्यों का त्यों भेद रूप श्रद्धान है।

प्र०६. इस लोक के प्रत्येक द्रव्य की पृथकता जानने के लिये किसका ज्ञान आवश्यक है ?

उ० प्रत्येक द्रव्य के विशेष गुणों का ज्ञान आवश्यक है –

(१) जीव द्रव्य में ज्ञान–दर्शन, श्रद्धा, चारित्र, सुख, क्रियावती शक्ति आदि।
(२) पुद्गल द्रव्य मे स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, क्रियावती शक्ति आदि।
(३) धर्म द्रव्य में गति हेतुत्व आदि; (४) अधर्म द्रव्य में स्थिति हेतुत्व आदि।
(५) आकाश द्रव्य मे अवगाहन हेतुत्व आदि; (६) कालद्रव्य मे परिणमन हेतुत्व आदि।

प्र०७. मोक्ष का मार्ग क्या है ?

उ० सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यकचारित्र की एकता ही मोक्ष का मार्ग है।

प्र०८. क्या मोक्षमार्ग दो प्रकार का है ? (निश्चय व व्यवहार मोक्षमार्ग)

उ० नहीं, मोक्षमार्ग तो एक ही प्रकार का है, निश्चय सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र की एकता स्वरूप, परन्तु उसका निरूपण दो प्रकार से है।

प्र०९. निश्चय सम्यग्दर्शन, सम्यक्ज्ञान व सम्यक्चारित्र के लक्षण बताईये ?

उ० (१) परपदार्थों से त्रिकाल भिन्न, निजात्मा की रूचि व श्रद्धान ही निश्चय सम्यग्दर्शन है।
(२) आत्मा को परवस्तुओं से भिन्न जानना ही निश्चय सम्यग्ज्ञान है।
(३) परद्रव्यों का आलम्बन छोडकर, आत्मस्वरूप में एकाग्रता से मग्न होना ही निश्चय सम्यग्चारित्र है।

प्र०१०. व्यवहार सम्यग्दर्शन किसे कहते हैं ?

उ० निश्चय सम्यग्दर्शन के साथ होनेवाले सात तत्वों की विकल्प–रागसहित श्रद्धा को व्यवहार सम्यग्दर्शन कहते हैं।

प्र०११. कारण किसे कहते हैं ? इसके कितने भेद हैं ?

उ० कार्य की उत्पादक सामग्री को ही कारण कहते हैं। इसके दो भेद होते हैं–
(१) उपादान कारण (२) निमित्त कारण।

प्र०१२. उपादान कारण किसे कहते हैं ?

उ० जो स्वयं कार्यरूप परिणमित हो, उसे उपादान कारण कहते हैं।

प्र०१३. निमित्त कारण किसे कहते हैं ?

उ० जो स्वयं कार्यरूप परिणमित न हो, परन्तु कार्य की उत्पत्ति में अनुकूल होने का जिसपर आरोप आ सके उसे निमित्त कारण कहते हैं।जैसे–घट की उत्पत्ति मे कुम्भकार।

नोट :– उपरोक्त प्रश्नोत्तर के साथ–साथ पाँचवी ढाल की परीक्षा पुनः होगी।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1. सोमवार से शुक्रवार — स्वाध्याय मन्दिर — प्रातः ९.०० से १०.३० बजे
2. शनिवार — स्वाध्याय मन्दिर — प्रातः १०.०० से ११.०० बजे
3. रविवार — स्वाध्याय मन्दिर — प्रातः ९.०० से १०.०० बजे
4. मंगलवार — श्री सरनीमल जैन मन्दिर — सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
5. बुधवार — श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार — सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
6. सोमवार से शनिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी — सांय ०४.०० से ०५.० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आ पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते
- १५ मई को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४७ का पारितोषिक वितरण २४ जुलाई २०११ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

(२) निकल परमात्मा – द्रव्यकर्म–भावकर्म–नोकर्म रहित श्री सिद्ध भगवान को शरीररहित होने से निकल परमात्मा कहते हैं।

बहिरात्मा, अंतरात्मा और परमात्मा का स्वरूप जानकर हमे क्या करना चाहिये ? हमे पुरुषार्थ पूर्वक बहिरात्मपना छोड़कर अंतरात्मा बनकर निरन्तर परमात्मा बनने की भावना करनी चाहिये।

अजीव तत्व का ज्यों का त्यों भेदरूप श्रद्धान तीसरी ढाल मे क्या बताया है ?

(१) अजीव द्रव्य – जिनमे ज्ञान दर्शन न हो वे अजीव द्रव्य हैं और वे पांच हैं। पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल।

(२) अजीव तत्व – जिनमें मेरा ज्ञान दर्शन नहीं है वे अजीव तत्व हैं। मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म–अधर्म, आकाश एकेक और लोक प्रमाण असंख्यात काल द्रव्य है ये सब अजीव तत्व हैं। इन सब अजीव तत्व का मुझ आत्मा से कर्ता–भोक्ता का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है क्योंकि वे सब व्यवहार से ज्ञान का ज्ञेय है।

(३) पुद्गल द्रव्य – जिसमे स्पर्श–रस–गंध–वर्ण पाया जाय वह पुद्गल है। स्पर्श की आठ पर्यायें, रस की पांच पर्यायें, गंध की दो पर्यायें, वर्ण की पांच पर्यायें और शब्द की सात पर्यायें हैं– इस प्रकार पुद्गल की २७ पर्यायें होती है। इन सत्ताइस पर्यायों से मुझ जीव तत्व का किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है क्योंकि मुझ जीव तत्व अस्पर्श, अरस, अगंध, अवर्ण और अशब्द स्वभावी है।

(४) धर्म द्रव्य – जीव पुद्गल जब अपनी–अपनी क्रियावती शक्ति से स्वयं स्वतः गमन रूप होते हैं तब धर्म द्रव्य निमित्त होता है।

(५) अधर्म द्रव्य – जीव पुद्गल जब अपनी–अपनी क्रियावती शक्ति से स्वयं स्वतः चलकर स्थिर होते हैं तब अधर्म द्रव्य निमित्त होता है।

(६) आकाश द्रव्य – सर्व द्रव्य अनादिकाल से अपने–अपने निज क्षेत्र में रहते हैं उसमें आकाश द्रव्य निमित्त है।

(७) काल द्रव्य – सर्व द्रव्य परिणमन स्वभाव के कारण स्वयं स्वतः परिणमते हैं उसमें काल द्रव्य निमित्त हैं।

अजीव तत्व का स्वरूप जानकर हमें क्या करना चाहिये ?

८. मुझ निज जीव तत्व का इन सब अजीव तत्वों से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। क्योंकि इन सब की चाल मुझ जीव तत्व से सर्वथा भिन्न ही है।

९. अजीव तत्व से सर्वथा भिन्न अपने को आप रूप जानकर पर का अंश भी अपने न मिलाना और अपना अंश भी पर में न मिलाना। यह अजीव तत्व का ज्यों का त्यों भेद रूप श्रद्धान है।

प्र०६. इस लोक के प्रत्येक द्रव्य की पृथकता जानने के लिये किसका ज्ञान आवश्यक है ?

उ० प्रत्येक द्रव्य के विशेष गुणों का ज्ञान आवश्यक हैं –

(१) जीव द्रव्य में ज्ञान–दर्शन, श्रद्धा, चारित्र, सुख, क्रियावती शक्ति आदि।
(२) पुद्गल द्रव्य में स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, क्रियावती शक्ति आदि।
(३) धर्म द्रव्य में गति हेतुत्व आदि; (४) अधर्म द्रव्य में स्थिति हेतुत्व आदि।
(५) आकाश द्रव्य मे अवगाहन हेतुत्व आदि; (६) कालद्रव्य मे परिणमन हेतुत्व आदि।

प्र०७. मोक्ष का मार्ग क्या है ?

उ० सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यकचारित्र की एकता ही मोक्ष का मार्ग है।

प्र०८. क्या मोक्षमार्ग दो प्रकार का है ? (निश्चय व व्यवहार मोक्षमार्ग)

उ० नहीं, मोक्षमार्ग तो एक ही प्रकार का है, निश्चय सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र की एकता स्वरूप, परन्तु उसका निरूपण दो प्रकार से है।

प्र०९. निश्चय सम्यग्दर्शन, सम्यक्ज्ञान व सम्यक्चारित्र के लक्षण बताईये ?

उ० (१) परपदार्थों से त्रिकाल भिन्न, निजात्मा की रुचि व श्रद्धान ही निश्चय सम्यग्दर्शन है।
(२) आत्मा को परवस्तुओं से भिन्न जानना ही निश्चय सम्यग्ज्ञान है।
(३) परद्रव्यों का आलम्बन छोडकर, आत्मस्वरूप में एकाग्रता से मग्न होना ही निश्चय सम्यग्चारित्र है।

प्र०१०. व्यवहार सम्यग्दर्शन किसे कहते हैं ?

उ० निश्चय सम्यग्दर्शन के साथ होनेवाले सात तत्वों की विकल्प–रागसहित श्रद्धा को व्यवहार सम्यग्दर्शन कहते हैं।

प्र०११. कारण किसे कहते हैं ? इसके कितने भेद हैं ?

उ० कार्य की उत्पादक सामग्री को ही कारण कहते हैं। इसके दो भेद होते हैं–
(१) उपादान कारण (२) निमित्त कारण।

प्र०१२. उपादान कारण किसे कहते हैं ?

उ० जो स्वयं कार्यरूप परिणमित हो, उसे उपादान कारण कहते है।

प्र०१३. निमित्त कारण किसे कहते हैं ?

उ० जो स्वयं कार्यरूप परिणमित न हो, परन्तु कार्य की उत्पत्ति में अनुकूल होने का जिसपर आरोप आ सके उसे निमित्त कारण कहते हैं।जैसे–घट की उत्पत्ति में कुम्भकार।

नोट :– उपरोक्त प्रश्नोत्तर के साथ–साथ पाँचवी ढाल की परीक्षा पुनः होगी।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1.	सोमवार से शुक्रवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.३० बजे
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे
3.	रविवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.०० बजे
4.	मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
6.	सोमवार से शनिवार	पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी	सांय ०४.०० से ०५.८ बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आ पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते
- <u>१५ मई को सम्पन्न</u> वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४७ का पारितोषिक वितरण २४ जुलाई २०११ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४६

दिनांक 9 अक्टूबर 2011 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न—

छठवीं ढाल के अनिवार्य प्रश्न

अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य महाव्रत के लक्षण

षट्काय जीव न हननतैं, सब विध दरवहिंसा टरी;
रागादि भाव निवारतैं, हिंसा न भावित अवतरी।
जिनके न लेश मृषा न जल, मृण हू बिना दीयो गहैं;
अठदशसहस विध शील धर, चिद्ब्रह्ममें नित रमिरहैं।।१।।

परिग्रह त्याग महाव्रत, ईर्या समिति– और भाषा समिति

अंतर चतुर्दस भेद बाहिर, संग दसधा तैं टलैं;
परमाद तजि चौकर मही लखि, समिति ईर्या तैं चलैं।
जग सुहितकर सब अहितहर, श्रुति सुखद सब संशय हरैं;
भ्रमरोग– हर जिनके वचन–मुखचन्द तैं अमृत झरैं ।।२।।

एषणा, आदान–निक्षेपण और प्रतिष्ठापन समिति

छयालीस दोष बिना सुकुल, श्रावकतनैं घर अशनको;
लैं तप बढावन हेतु, नहिं तन–पोषते तजि रसनको।
शुचि ज्ञान संयम उपकरण, लखिकैं गहैं लखिकैं धरैं;
निर्जन्तु थान विलोकि तन–मल मूत्र श्लेष्म परिहरैं ।।३।।

मुनियोंकी तीन गुप्ति और पाँच इन्द्रियों पर विजय

सम्यक् प्रकार निरोध मन वच काय, आतम ध्यावते;
तिन सुथिर मुद्रा देखि मृगगण उपल खाज खुजावते।
रस रूप गंध तथा फरस अरु शब्द शुभ असुहावने;
तिनमें न राग विरोध पंचेन्द्रिय–जयन पद पावने।।४।।

मुनियों के छह आवश्यक और शेष सात मूलगुण

समता सम्हारैं, थुति उचारैं, वन्दना जिनदेवको;
नित करैं श्रुति रति करैं प्रतिक्रम, तजैं तन अहमेवको।
जिनके न न्हौन, न दंतधोवन लेश अम्बर आवरन;
भूमांहि पिछली रयनिमें कछुशयन एकासन करन ।।५।।

मुनियों के शेष गुण तथा राग–द्वेषका अभाव

इकबार दिन में लें अहार, खड़े अलप निज–पानमें;
कचलोंच करत न डरत परिषह सौं, लगे निज ध्यान में।
अरि मित्र महल मसान कंचन काँच निन्दन थुति करन;
अर्घावतारन असि–प्रहारनमें सदा समता धरन।।६।।

मुनियों के तप, धर्म, विहार तथा स्वरूपाचरणचारित्र

तप तपैं द्वादश, धरैं वृष दश, रतनत्रय सेवैं सदा;
मुनि साथ में वा एक विचरैं चहैं नहीं भवसुख कदा।
यों है सकल संयम चरित, सुनिये स्वरूपाचरन अब;
जिस होत प्रगटै अपनी निधि, मिटै परकी प्रवृत्ति सब ।।७।।

स्वरूपाचरणचारित्र (शुद्धोपयोग) का वर्णन

जिन परम पैनी सुबुधि छैनी, डारि अन्तर भेदिया,
वरणादि अरु रागादितैं निज भावको न्यारा किया।
निजमाहिं निजके हेतु निजकर, आपको आपै गह्यो;
गुण गुणी ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय मँझार कछु भेद न रह्यो।।८।।

स्वरूपाचरणचारित्र (शुद्धोपयोग) का वर्णन

जहँ ध्यान ध्याता ध्येयको न विकल्प, वच भेद न जहाँ;
चिद्भाव कर्म, चिदेश करता, चेतना किरिया तहाँ।
तीनों अभिन्न अखिन्न शुध उपयोगकी निश्चल दशा;
प्रगटी जहाँ दृग–ज्ञान–व्रत ये, तीनधा एकै लसा।।९।।

स्वरूपाचरणचारित्र लक्षण और निर्विकल्प ध्यान

परमाण नय निक्षेपको न उद्योत अनुभवमें दिखै;
दृग–ज्ञान–सुख–बलमय सदा, नहीं आन भाव जु मो विखै।
मैं साध्य साधक मैं अबाधक, कर्म अरु तसु फलनितैं;
चित् पिंड चंड अखंड सुगुणकरंड च्युत पुनि कलनितैं।।१०।।

स्वरूपाचरणचरित्र और अरिहन्त दशा

यों चिन्त्य निजमें थिर भये; तिन अकथ जो आनंद लह्यो,
सो इन्द नाग नरेन्द वा अहमिन्द्रको नाहीं कह्यो।
तब ही शुकल ध्यानाग्नि करि, चउघाति विधिकानन दह्यो;
सब लख्यो केवलज्ञानकरि, भविलोकको शिवमग कह्यो।।११।।

सिद्धदशाका (सिद्ध स्वरूपका) वर्णन

पुनि घाति शेष अघाति विधि, छिनमांहिं अष्टमभू वसैं;
वसु कर्म विनसैं सुगुण वसु, सम्यक्त्व आदिक सब लसैं।
संसार खार अपार पारावार तरि तीरहिं गये,
अविकार अकल अरूप शुचि, चिद्रूप अविनाशी भये।।१२।।

मोक्षदशाका वर्णन

निजमांहि लोक–अलोक गुण, परजाय प्रतिबिम्बित थये;
रहिहैं अनन्तानन्त काल, यथा तथा शिव परिणये।
धनि धन्यहैं जे जीव, नरभव पाय यह कारज किया;
तिनही अनादि भ्रमण पंच प्रकार तजि वर सुख लिया।।१३।।

रत्नत्रयका फल और आत्महित में प्रवृत्तिका उपदेश

मुख्योपचार दु भेद यों बड़भागि रत्नत्रय धरैं;
अरु धरेंगे ते शिव लहैं, तिन सुयश–जल जग–मल हरैं।
इमि जानि आलस हानि साहस ठानि, यह सिख आदरौ;
जबलौं न रोग जरा गहै, तबलौं झटिति निज हित करौ।।१४।।

अन्तिम सीख

यह राग–आग दहै सदा, तातैं समामृत सेइये;
चिर भजे विषय–कषाय अब तो, त्याग निजपद बेइये।
कहा रच्यो पर पदमें, न तेरो पद यहै, क्यों दुख सहै;
अब "दौल"! होउ सुखी स्वपद–रचि, दाव मत चूको यहै ।।१५।।

छठवीं ढाल प्रश्नोत्तर

प्र०१. छठवीं ढाल का सारांश बताइये ?

उत्तर छठवीं ढाल में मुनिराज के निश्चय–व्यवहार सकलचारित्र के वर्णनपूर्वक स्वरूपाचरणचारित्र तथा मोक्ष का स्वरूप स्पष्ट किया गया है।

प्र०२. महाव्रत किसे कहते है ?

उत्तर निश्चयरत्नत्रयपूर्वक हिंसादि पाँचों पापों का सर्वथा त्याग (तीनों योग तथा कृत–कारित–अनुमोदना पूर्वक) महाव्रत हैं।

प्र०३. मुनिराज के २८ मूलगुणों के नाम बताइये ?

उत्तर १. पाँच महाव्रत २. पाँच समिति ३. पाँच इन्द्रिय–विजय
४. छः आवश्यक ५. शेष सात गुण।

प्र०४. पाँच महाव्रतों के नाम बताइये ?

उत्तर १. अहिंसाव्रत २. सत्य महाव्रत ३. अचौर्य महाव्रत
४. ब्रह्मचर्य महाव्रत ५. परिग्रहत्याग महाव्रत

प्र०५. अहिंसा महाव्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर द्रव्यहिंसा तथा भावहिंसा का त्याग ही अहिंसा महाव्रत है।

प्र०६. द्रव्यहिंसा किसे कहते हैं ?

उत्तर छह काय के जीवों का घात करना वह द्रव्यहिंसा है।

प्र०७. भावहिंसा किसे कहते हैं ?

उत्तर आत्मा में रागादि भावों की उत्पत्ति होना ही भावहिंसा है।

प्र०८. सत्य महाव्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर स्थूल या सूक्ष्म– ऐसे दोनों प्रकार के झूठ बोलने का त्याग होना, सत्य महाव्रत है।

प्र०९. अचौर्य महाव्रत किसे कहते हैं

उत्तर पानी और मिट्टी भी बिना दिये ग्रहण न करना अचौर्य महाव्रत है।

प्र०१०. ब्रह्मचर्य महाव्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर शील के अठारह हजार भेदों का सदा पालन करना, ब्रह्मचर्य महाव्रत है।

प्र०११. परिग्रह त्याग महाव्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर चौदह प्रकार अंतरंग और दस प्रकार के बहिरंग परिग्रह से रहित होना परिग्रहत्याग महाव्रत है।

प्र०१२. अंतरंग परिग्रह कितने है ? कौन–कौन से ?

उत्तर अंतरंग परिग्रह चौदह है – १. मिथ्यात्व २. क्रोध ३. मान ४. माया ५. लोभ ६. हास्य ७. रति ८. अरति ६. शोक १०. भय ११. जुगुप्सा १२. स्त्रीवेद १३. पुरूषवेद १४. नपुंसकवेद।

प्र०१३. बहिरंग परिग्रह कितने है ? कौन–कौन से ?

उत्तर बहिरंग परिग्रह दश है – १. क्षेत्र २. वास्तु (निर्मित भवन) ३. धन (चांदी, सोना, मुद्रा) ४. धान्य ५. द्विपद (मनुष्य, पक्षी) ६. चतुष्पद (पशु) ७. यान (सवारी) ८. शयासन ६. कुप्य (वस्त्र) १०. भांड (बर्तन)।

प्र०१४. समिति किसे कहते हैं ?

उत्तर प्रमादरहित, यत्नाचारसहित सम्यक्प्रवृत्ति को समिति कहते हैं।

प्र०१५. पाँच समिति के नाम बताइये ?

उत्तर १. ईया समिति २. भाषा समिति ३. एषणा समिति
४. आदान–निक्षेपण समिति ५. प्रतिष्ठापन समिति

प्र०१६. ईया समिति किसे कहते हैं ?

उत्तर दिन में सावधानीपूर्वक चार हाथ आगे की भूमि देखकर चलना ईर्या समिति है।

प्र०१७. भाषा समिति किसे कहते हैं ?

उत्तर हित–मित–प्रिय वचन बोलना भाषा समिति है।

प्र०१८. एषणा समिति किसे कहते हैं ?

उत्तर दिन में एकबार निर्दोष (३२ अन्तराय, ४६ दोष टालकर) आहार लेना एषणा समिति है।

प्र०१६. आदान निक्षेपण समिति किसे कहते हैं ?

उत्तर जीवरहित स्थान देखकर सावधानी पूर्वक वस्तु रखना तथा उठाना, आदान निक्षेपण समिति है।

प्र०२०. प्रतिष्ठापन समिति किसे कहते हैं ?

उत्तर जीवरहित स्थान में मलमूत्र का क्षेपण करना प्रतिष्ठापन समिति है।

प्र०२१. पंच इन्द्रिय विजय का स्वरूप स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर मुनिराज इन्द्रियों के प्रिय विषयों में राग और इन्द्रियों के अप्रिय विषयों में द्वेष नहीं करते हैं, यही इन्द्रिय विजय है।

प्र०२२. आवश्यक किसे कहते हैं ?

उत्तर मुनियों को अवश्य करने योग्य स्ववश शुद्ध आचरण को आवश्यक कहते हैं।

प्र०२३. छः आवश्यक के नाम बताइये ?

उत्तर १. सामायिक २. स्तुति ३. वन्दना ४. स्वाध्याय ५. प्रतिक्रमण ६. कायोत्सर्ग।

प्र०२४. मुनियों के शेष सात गुणों के नाम बताइये ?

उत्तर १. अस्नानता २. अदंतधोवन ३. नग्नता ४. भूमिशयन ५. दिन में एकबार आहार लेना ६. खड़े–खड़े आहार लेना ७. केशलोंच।

प्र०२५. मुनिराज कितने प्रकार के दोष टालकर भोजन ग्रहण करते है ?

उत्तर१. मुनिराज 'छयालीस' प्रकार के दोष टालकर भोजन ग्रहण करते है।

प्र०२६. परिषहजय किसे कहते हैं ?

उत्तर तत्वज्ञान के अभ्यास से कोई पदार्थ इष्ट–अनिष्ट भासित न हो, सुख का कारण मिलने पर सुखी तथा दुःख का कारण मिलने पर दुःखी न हो, किन्तु ज्ञेयरूप उनका ज्ञाता ही रहे, वही परिषहजय है।

प्र०२७. तप किसे कहते हैं ?

उत्तर आत्मलीनता द्वारा विकारों पर विजय प्राप्त करना तप है।

प्र०२८. तप के कितने भेद है ? कौन–कौन से ?

उत्तर तन के मुख्य दो भेद हैं – १. अंतरंग तप २. बहिरंग तप।

प्र०२६. अंतरंग तप किसे कहते हैं ?

उत्तर शुभाशुभ इच्छाओं के निरोधपूर्वक आत्मलीनता ही अंतरंग तप है।

प्र०३०. अंतरंग तप के कितने है एवं कौन–कौन से ?

उत्तर अंतरंग तप छः प्रकार के है – १. प्रायश्चित २. विनय ३. वैयावृत्य ४. स्वाध्याय ५. व्युत्सर्ग ६. ध्यान।

प्र०३१. बहिरंग तप किसे कहते हैं ?

उत्तर दूसरे देख सके ऐसा पर – पदार्थों से सम्बन्धित इच्छानिरोध, बहिरंग तप है।

प्र०३२. बहिरंग तप कितने है एवं कौन–कौन से ?

उत्तर बहिरंग तप छः प्रकार के हैं– १. अनशन २. अवमौदर्य ३. रस परित्याग ४. वृति परिसंख्यान ५. विविक्त शय्यासन ६. कायक्लेश।

प्र०३३. धर्म के दशलक्षणों के नाम बताइये ?

उत्तर १. उत्तम क्षमा २. उत्तम मार्दव ३. उत्तम आर्जव ४. उत्तम शौच ५. उत्तम सत्य ६. उत्तम संयम ७. उत्तम तप ८. उत्तम त्याग ६. उत्तम आकिंचन्य १०. उत्तम ब्रह्मचर्य।

प्र०३४. मुनिराज के तेरह प्रकार के चारित्र कौन–कौन से है ?

उत्तर १. पाँच महाव्रत २. पाँच समिति ३. तीन गुप्ति।

प्र०३५. गुप्ति किसे कहते हैं ?

उत्तर वीतरागभावसहित मन–वचन तथा काय की चेष्टा न होना, वह गुप्ति है।

प्र०३६. गुप्ति के कितने भेद हैं ? कौन–कौन से ?

उत्तर गुप्ति के तीन भेद हैं – १. मनोगुप्ति २. वचनगुप्ति ३. कायगुप्ति।

प्र०३७. मनोगुप्ति किसे कहते हैं ?

उत्तर मन की चेष्टा न होकर आत्मा में ही लीनता होना मनोगुप्ति है।

प्र०३८. वचनगुप्ति किसे कहते हैं ?

उत्तर बोलने की इच्छा न होना अर्थात् आत्मा में ही लीनता होना, वह वचनगुप्ति है।

प्र०३९. कायगुप्ति किसे कहते हैं ?

उत्तर काय की ओर उपयोग न जाकर मात्र आत्मा में ही लीनता होना, वह कायगुप्ति है।

प्र०४०. प्रमाण किसे कहते हैं ?

उत्तर स्व–पर वस्तु का निश्चय करनेवाले सम्यग्ज्ञान को प्रमाण कहते हैं।

प्र०४१. प्रमाण के कितने भेद हैं ? कौन–कौन से ?

उत्तर प्रमाण के मुख्य दो भेद हैं – १. प्रत्यक्ष प्रमाण २. परोक्ष प्रमाण।

प्र०४२. नय किसे कहते हैं ?

उत्तर प्रमाण द्वारा ग्रहण की हुई वस्तु के एक अंश को ग्रहण करने वाले ज्ञान को नय कहते हैं।

प्र०४३. नय के कितने भेद हैं ? कौन–कौन से ?

उत्तर नय के मुख्य दो भेद हैं – १. निश्चय नय २. व्यवहार नय।

प्र०४४. नय और प्रमाण में अन्तर स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर नय वस्तु के एक भाग को मुख्य रखकर जानता है किन्तु प्रमाण तो वस्तु के सामान्य–विशेष समस्त भागों को जानता है।

प्र०४५. निक्षेप किसे कहते हैं ?

उत्तर प्रमाण और नय के अनुसार प्रचलित लोक व्यवहार को निक्षेप कहते हैं।

प्र०४६. निक्षेप के कितने भेद हैं ? कौन–कौन से ?

उत्तर निक्षेप के चार भेद हैं– १. नाम निक्षेप २. स्थापना निक्षेप ३. द्रव्य निक्षेप ४. भाव निक्षेप।

प्र०४७. नय और निक्षेप में क्या अन्तर है ?

उत्तर नय तो ज्ञाता अर्थात् जाननेवाला है और निक्षेप ज्ञेय अर्थात् ज्ञान में ज्ञात होने योग्य है।

प्र०४८. शुक्लध्यान किसे कहते हैं ?

उत्तर अत्यंत निर्मल वीतरागतापूर्ण ध्यान को शुक्लध्यान कहते हैं।

प्र०४९. सिद्ध भगवान के आठ मूलगुणों के नाम बताइये ?

उत्तर १. सम्यक्त्व २. अनंतदर्शन ३. अनंतज्ञान ४. अनंतवीर्य ५. अगुरुलघुत्व ६. अवगाहनत्व ७. सूक्ष्मत्व ८. अव्याबाधत्व।

प्र०५०. सिद्ध परमात्मा कहाँ निवास करते हैं ?

उत्तर सिद्ध परमात्मा आठवीं पृथ्वी–ईषत् प्राग्भार–मोक्षक्षेत्र में निवास करते हैं।

प्र०५१. छहढाला ग्रंथ की रचना कब हुई थी ?

उत्तर छहढाला ग्रन्थ की रचना विक्रम संवत् १८९१, वैशाख शुक्ला, अक्षय तृतीया के दिन हुई थी।

प्र०५२. छहढाला ग्रंथ की रचना किस ग्रंथ के आधार पर की गई है ?

उत्तर छहढाला ग्रंथ की रचना बुधजन की कृत छहढाला के आधार पर की गई है।

नोट :– पहली, दूसरी, तीसरी, चौथी व पांचवी ढाल के दोहे व प्रश्न उत्तर याद करें व लिखें।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

१.	प्रतिदिन	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ९.०० से १०.३० बजे व
२.	प्रतिदिन	स्वाध्याय मन्दिर	सांयः ६.४५ से ७.३० बजे तक
३.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
४.	मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
५.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
६.	सोमवार से शनिवार	पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी	सांय ०४.०० से ०५.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं मे उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं मे हिस्सा ले सकते है।
- <u>२४ जुलाई को सम्पन्न</u> वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४८ का पारितोषिक वितरण भी ९ अक्टूबर २०११ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५०

दिनांक 18 दिसम्बर 2011 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

"विश्व द्रव्य-गुण-पर्याय, छह सामान्य गुणों की परिभाषा, व जीव पुद्गल धर्म अधर्म आकाश काल छहों द्रव्यों की परिभाषा व विशेष गुण लघु जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला से"

प्र०१. इस विश्व में कितनी क्रियायें हैं ?

उ० दो क्रिया है- १. सहज ज्ञानक्रिया २. सहज परिणमनक्रिया

प्र०२. यह जीव अनादिकाल से चारों गतियों में परिभ्रमण क्यों कर रहा है ?

उ० इस विश्व में दो द्रव्य है १. जीव-जिसमें ज्ञान है, २. अजीव-पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल - जिनमें ज्ञान नहीं है। अतः हर समय दो प्रकार का कार्य है। जीव और अजीव अपने-अपने कार्य रूप परिणमित होते है। जीव मे एक विशेषता है कि अपने कार्यरूप परिणामित होते हुये अपने और विश्व के परिणमन को जानता भी है। जीव और अजीव के भेद का ज्ञान न होने के कारण, अपने ज्ञान में अजीव का जो भी परिणमन दिखता है, अज्ञानी उसे भी अपना मानता है, - इसी का नाम मोह है - जिसका फल संसार है।

प्र०३. जीव-अजीव की एकत्वबुद्धि रूप-इस मोह का अभाव कैसे हो ?

उ० मोह के अभाव के दो उपाय है- १. अरंहत भगवान के समान अपने (जीव के) द्रव्य-गुण-पर्याय का स्वरूप समझना २. विश्व का (अजीव का) स्वरूप समझना।

प्र०४. अरहंत भगवान से अपने द्रव्य-गुण-पर्याय स्वरूप का मिलान क्यों करना ?

उ० क्योंकि अरहंत भगवान सर्वज्ञ हैं और पूर्ण वीतरागी हैं अर्थात् अरहंत भगवान के ज्ञान में तो पूरा लोक-अलोक दिखता है लेकिन मोह राग-द्वेष का एक अंश भी नहीं है।

प्र०५. मोह के अभाव के लिये विश्व का स्वरूप क्यों समझना ?

उ० क्योंकि अरहंत भगवान के ज्ञान में जो छहद्रव्यरूप लोक, त्रिकालवर्ती पर्यायों सहित यथास्थित दिखता है, वे सब पदार्थ यथास्थित हैं, हैं, हैं। लेकिन अरहंत भगवान के ज्ञान में छह द्रव्यस्वरूप लोक का अभाव है। इस प्रकार अजीव पदार्थों से भिन्नता का ज्ञान होने पर जीव-अजीव की एकताबुद्धि रूप मोह का अभाव हो जाता है।

प्र०६. अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार विश्व का स्वरूप क्या है ?

उ० इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म-अधर्म-आकाश एकेक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व-वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की सत्ता है, अनन्त गुणों की एक समय में अनन्त पर्यायों की सत्ता है, प्रत्येक द्रव्य-गुण अपनी वर्तमान सत् पर्याय के एकत्वपूर्वक सहज ही परिणामित होते हैं। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अपने जन्म क्षण में एक समय की पर्याय उत्पन्न होती है, और द्रव्य-गुण सहज ही उस पर्यायरूप परिणमित होते है, इसी का नाम परिणमन क्रिया है। किसी भी द्रव्य को अपनी सत्ता में और पर की सत्ता में कुछ करने का तो अधिकार ही नहीं है।

प्र०७. जीव-अजीव का भेदज्ञान करने के लिये इस विश्व में दो विभाग किस प्रकार करना चाहिये ?

उ० (१) तराजु के एक पलड़े में मुझ जीव तत्व-जिसमें मेरा ज्ञान है।
(२) तराजु के दूसरे पलड़े में- मुझ जीव तत्व के अलावा अनन्त जीव द्रव्य, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म-अधर्म-आकाश एकेक और काल द्रव्य, लोक प्रमाण असंख्यात-जिनमें मेरा ज्ञान-दर्शन नहीं है।

प्र०८. मुझ जीव तत्व का स्वरूप क्या है ?

उ० मुझ जीव पदार्थ भी सदा ही उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य युक्त सत्ता सहित है। अतः मुझ आत्मा भी अनन्त गुणों की वर्तमान अनन्त पर्यायों के एकत्वपूर्वक परिणमित होता है।

प्र०९. मुझ जीव पदार्थ का असाधारण गुण क्या है ?

उ० जीव पदार्थ के अनन्त गुणों में से एक ज्ञान गुण-अपनी वर्तमान ज्ञान पर्याय के एकत्वपूर्वक परिणमित भी होता है और वर्तमान ज्ञान पर्याय को जानता भी है।

प्र०१०. मुझ जीव पदार्थ वर्तमान ज्ञान पर्याय के एकत्वपूर्वक परिणमित होते हुये उसे एकत्वपूर्वक जानता भी क्यों है ?

उ० क्योंकि मुझ जीव पदार्थ चैतन्यस्वरूपता से नित्य उद्योतरूप, निर्मल, स्पष्ट, दर्शन-ज्ञान ज्योतिस्वरूप है।

प्र०११. दर्शन- ज्ञान ज्योतिस्वरूप मुझ जीव पदार्थ को अपनी ज्ञान पर्याय को जानते हुये जीव व अजीव के भेद का ज्ञान हर पर्याय में क्यों भाना चाहियें ?

उ० क्योंकि दर्शन-ज्ञान ज्योतिस्वरूप प्रत्येक पर्याय में अपने और परद्रव्यों के आकारों को प्रकाशित करने की सामर्थ्य है। लेकिन जीव का स्व-पर प्रकाशक ज्ञान एकरूप ही रहता है। भेदज्ञान के अभाव में अज्ञानी को ज्ञानमात्र सत्ता में शरीर, धन, मकान, परिवार, शत्रु-मित्र की भ्रांति होती है, जिसके कारण कषायें उत्पन्न होती है।

प्र०१२. अपने और परद्रव्यों के आकारों को प्रकाशित करने वाला जीव का स्व-पर प्रकाशक ज्ञान एकरूप किस प्रकार है ?

उ० क्योंकि जीव के प्रतिसमय, स्वयं उत्पन्न होने वाले, स्व-पर प्रकाशक ज्ञान में, केवल असाधारण चैतन्य गुण का सद्भाव है और परद्रव्यों के विशिष्ट गुणों का अभाव है अतः परद्रव्यों से भिन्न है। इसलिये स्व-पर प्रकाशक ज्ञान एकरूप-दर्शन ज्ञानज्योति स्वरूप है।

प्र०१३. इस लोक में क्या एक मुझ जीव द्रव्य ही है, अन्य द्रव्यों का अभाव है ?

उ० ऐसा नहीं है। इस लोक में जहाँ दर्शन-ज्ञान ज्योतिस्वरूप मुझ जीव है वहीं अन्य जीव हैं, अनन्त परमाणु है, धर्म-अधर्म-आकाश, काल सभी है, ऐसे अत्यन्त एक क्षेत्रावगाह होते हुये भी मुझ जीव अपने चैतन्यस्वरूप से छुटता नहीं है, द्रव्य-गुण से भी और पर्यायरूप से भी, टंकोत्कीर्ण चैतन्यस्वरूप ही रहता है।

प्र०१४. जीव के वर्तमान स्व-पर प्रकाशक ज्ञान पर्याय का स्वरूप दृष्टान्त द्वारा समझाइये ?

उ० दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है। सिद्धान्त – इसीप्रकार स्व–पर प्रकाशक ज्ञानपर्याय–दर्शनज्ञान ज्योतिस्वरूप चैतन्य दर्पण है। उसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा बराबर ज्ञान रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो चैतन्य–ज्योति स्वरूप आत्मा की निर्मल परिणति ही है।

प्र०१५. चैतन्यस्वरूप आत्मा विश्व को जानता है या अपनी निर्मल परिणति को जानता है ?

उ० प्रत्येक द्रव्य अपने गुण–पर्याय का स्पर्श करता है। अतः ज्ञानस्वरूप आत्मा अपनी प्रत्येक ज्ञान पर्याय को जानता है। एक समय की ज्ञान पर्याय में स्वद्रव्यों व परद्रव्यों के आकार भी प्रकाशित होते हैं तो व्यवहार से कहने में आता है कि ज्ञानस्वरूप आत्मा विश्व को जानता है।

प्र०१६. मोह का नाश करने के लिये ज्ञानस्वरूप आत्मा को प्रतिसमय स्वयं उत्पन्न होती हुई नई–नई ज्ञान पर्याय का स्वरूप किस प्रकार ध्यान रखना पड़ेगा।

उ० (१) ज्ञान पर्याय – एक समय का सत् है, अर्थात् बाह्य विश्व से, आश्रयभूत ज्ञानस्वरूप आत्मा से, भूत व भविष्य की पर्यायों से निरपेक्ष है।
(२) ज्ञान पर्याय – विश्व के प्रतिभासरूप है अर्थात् विश्व नहीं है।
(३) ज्ञान पर्याय में विश्व का अभाव है अर्थात् ज्ञानज्योतिस्वरूप आत्मा परद्रव्यों का स्वामी नहीं है, परद्रव्यों का कर्ता नहीं है, परद्रव्यों का भोक्ता नहीं है, परद्रव्यों का ज्ञाता भी नहीं है।
(४) प्रत्येक ज्ञान पर्याय टंकोत्कीर्ण चैतन्यस्वरूप है।
(५) निष्कर्ष – शुद्ध चैतन्यस्वरूप ही ज्ञायक है, शुद्ध चैतन्यस्वरूप ही ज्ञान है, शुद्ध चैतन्यस्वरूप ही ज्ञेय है। इस प्रकार वर्तमान ज्ञान पर्याय का स्वरूप जानकर जिसने पर्याय बुद्धि छोड़ दी है, वे स्वयं को भी और अन्य जीवों को भी पूर्ण प्रभु रूप देखते है। एक समय की ज्ञान पर्याय का लक्ष छोड़ दे, तो सब जीव भगवान समान है। इस प्रकार अरहंत भगवान से अपने द्रव्य–गुण–पर्याय का मिलान करते ही मोह का अभाव हो जाता है।

प्र०१७. मुझ आत्मा को अजीव के ज्ञान का ज्ञान करते हुये निरन्तर किस प्रकार भेदविज्ञान करना।

उ० जैसे – रोटी बन रही है तो दो कार्य है – (१) रोटी का ज्ञान – जीव में उत्पन्न हुआ कार्य (२) रोटी, शरीर का हलन चलन आदि–परमाणुओं में उत्पन्न हुआ कार्य तो अनन्त परमाणु है।
अतः रोटी के ज्ञान का ज्ञान करते हुये मुझ आत्मा को –'रोटी का ज्ञान' – इस पर्याय का स्वरूप ध्यान में रखना पड़ेगा–
१. 'रोटी का ज्ञान'– एक समय का 'सत्' है अर्थात् रोटी रूप परमाणुओं से, आश्रयभूत मुझ आत्मा से, रोई से व भविष्य की पर्यायों से निरपेक्ष है।
२. 'रोटी का ज्ञान'– रोटी के प्रतिभासरूप है, रोटी नहीं है।
३. 'रोटी का ज्ञान' में रोटी रूप परमाणुओं का सर्वथा अभाव है अर्थात् मुझ आत्मा रोटी का स्वामी नहीं, रोटी का कर्ता नहीं, रोटी का भोक्ता नहीं व रोटी का ज्ञाता भी नहीं।
४. 'रोटी का ज्ञान'–टंकोत्कीर्ण चैतन्यस्वरूप है। अतः शुद्धचैतन्यस्वरूप ही ज्ञायक, शुद्धचैतन्यस्वरूप ही ज्ञान, और शुद्धचैतन्यस्वरूप ही ज्ञेय है।
(३) शुद्ध ज्ञान और रोटी के इस भेदज्ञान पूर्वक रोटी के ज्ञान का ज्ञान करते हुये चैतन्यस्वरूप में ही एकत्व होगा। रोटी का एकत्व नहीं होगा अतः मैंने रोटी बनाई ऐसी मोहरूपी शराब उत्पन्न नही होगी।

प्र०१८. ज्ञानस्वरूप आत्मा को, अपनी ज्ञान पर्याय को जानते हुये, निरन्तर स्व–पर का भेदज्ञान करने के लिये और किसका ज्ञान आवश्यक है।

उ० चार अभावों का ज्ञान आवश्यक है।

प्र०१९. अभाव किसे कहते है ?

उ० एक पदार्थ की सत्ता में, दूसरे पदार्थ की सत्ता न होने को अभाव कहते हैं।

प्र०२०. अभाव के कितने भेद हैं ?

उ० चार भेद हैं। प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, अन्योन्याभाव और अत्यन्ताभाव ।

प्र०२१. प्रागभाव किसे कहते हैं ?

उ० वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय में होने वाले अभाव को प्रागभाव कहते हैं । (इसे न माना जाये तो कार्य अनादि ठहरे।)

प्र०२२. प्रध्वंसाभाव किसे कहते हैं ?

उ० एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का उसी द्रव्य की आगे होने वाली पर्याय में अभाव होने को प्रध्वंसाभाव कहते हैं। (इसे न माना जाय तो वही कार्य अनन्तकाल रहे)।

प्र०२३. अत्यन्ताभाव किसे कहते हैं ?

उ० एक द्रव्य में दूसरे द्रव्य के अभाव को अत्यन्ताभाव कहते हैं। (उसे न माना जाय तो कोई भी द्रव्य स्वतन्त्र और भिन्न न रहे) ।

प्र०२४. अन्योन्याभाव किसे कहते हैं ?

उ० एक पुद्गल द्रव्य की वर्तमान पर्याय का दूसरे पुद्गल की वर्तमान पर्याय में अभाव होने को अन्योन्याभाव कहते हैं। (इसे न माना जाय तो एक पुद्गल द्रव्य की वर्तमान पर्याय अन्य पुद्गल द्रव्य की वर्तमान पर्याय से स्वतंत्र और भिन्न नहीं रहेगी) ।

प्र०२४. प्र० १७. के अनुसार निम्न वाक्यों पर लगाकर लिखकर अभ्यास कीजिये। मैं सुबह उठा, यह मेरा मकान है, मैं स्त्री हूँ, मैंने रोटी बनाई, यह मेरा सोने का हार है, मैं बूढ़ा हो गया हूँ।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें–

1.	प्रतिदिन	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.०० से १०.३० बजे व
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	सांयः ६.३० से ७.०० बजे तक
4.	मंगलवार	श्री सरनीमल जैन मन्दिर	सांय ०६.३० से ०७.०० बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०७.०० से ०८.०० बजे
6.	सोमवार से शनिवार	पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी	सांय ०४.०० से ०५.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। आप सुविधानुसार किसी भी दिन की सभाओं में हिस्सा ले सकते है।
- ६ अक्टूबर २०११ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-४८ का पारितोषिक वितरण भी १८ दिसम्बर २०११ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

प्र०१६. आत्मा का अतीन्द्रिय मोक्षसुखरूप धर्म कहाँ कहाँ नहीं मिलता ?

उ० आत्मा का उत्तम, अविनाशी, अतीन्द्रिय मोक्ष सुखरूप धर्म – १. पैसे के बदले में नहीं मिलता २. .... किसी की सेवा उपासना द्वारा नहीं मिलता ३. .... मंदिर, पर्वत, जल, अग्नि, देवमूर्ति, तीर्थक्षेत्रादि में जाकर नहीं मिलता ४. .... उपवास, व्रत, कायक्लेशादि तप से भी नहीं मिलता ५. .... जिनदेव के मन्दिर में उपकरणदान, मण्डल, पूजन आदि करके नहीं मिलता ६. .... घर छोडकर वन श्मशान आदि में निवास करने से नहीं मिलता ७. .... परमेश्वर के नाम जाप आदि करके भी नहीं मिलता, आदि–आदि। (श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार गाथा २)

प्र०१७. आत्मा का अतीन्द्रिय मोक्षसुख रूप धर्म कैसे मिलता है ?

उ० धर्म तो आत्मा का स्व–भाव है अरहंत भगवान के अनुसार परद्रव्यों में आत्मबुद्धि छोडकर अपने ज्ञातादृष्टारूप स्वभाव का श्रद्धान, अपने ज्ञाता–दृष्टारूप स्वभाव का ज्ञान और ज्ञायक स्वभाव में ही प्रवर्तनरूप जो आचरण है–वह धर्म है। यह रत्नत्रयरूप धर्म ही आत्मा के अतीन्द्रिय मोक्षसुख का साधन है। (श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार गाथा २)

प्र०१८. जिनागम में मंदिर, प्रतिमा, तीर्थ, दान आदि को भी धर्मरूप क्यों कहा है ?

उ० जिस समय यह आत्मा स्व–पर के भेद विज्ञान द्वारा रागादिरूप परिणति छोडकर वीतरागरूप होता है, तभी मंदिर, प्रतिमा, तीर्थ, दान, तप, जप समस्त ही धर्मरूप है; यदि अपना आत्मा उत्तमक्षमादिरूप, वीतरागरूप, सम्यग्ज्ञान रूप नहीं होता है, तो बाहर कहीं भी धर्म नहीं होगा। (श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार गाथा २)

प्र०१९. आत्मा के मोक्ष सुख का कारणरूप सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति के लिये क्या करें ?

उ० सम्यग्दर्शन तो स्व–पर का सत्य श्रद्धान करने से ही होगा। और वह स्व–पर का सत्य श्रद्धान–ज्ञान तो विनय सहित स्याद्वादरूप परमागम के सेवन से अर्थात् जिनेन्द्र भगवान की वाणी के सेवन से ही होगा। (श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार पेज ७६)

प्र०२०. स्व–पर के भेदज्ञान से किस किस भय का अभाव हो जाता है ?

उ० अरहंत भगवान के समान जिसने अपने ज्ञान में, अपने ज्ञान से, शरीरादि परद्रव्यों से भिन्न ज्ञानस्वरूप का अनुभव करके निज ज्ञान को, निज ज्ञानरूप माना है उसे निम्न सप्त भय नहीं होते – १. इस लोक का भय २. परलोक का भय ३. मरण का भय ४. वेदना का भय ५. अनरक्षा भय ६. अगुप्ति भय ७. अकस्मात् भय।

नोट :–इसका विशेष स्पष्टीकरण श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार पेज २२ से २४ तक देखें।

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें–

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.१५ बजे
2. शनिवार — स्वाध्याय मन्दिर — प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
4. मंगलवार — स्वाध्याय मन्दिर — सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार — श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार — सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
6. सेमवार व बृहस्पतिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय ०३.३० से ०४.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- १८ दिसम्बर २०११ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५० का पारितोषिक वितरण भी १२ फरवरी २०१२ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५१

दिनांक 12 फरवरी 2012 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र०१. लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका (गुलाबी किताब) के प्रश्न १, ४, ८, ११, १३, १४, १५, १६, १७, २०, २३, २६, २९, ३२, ३५, ३६, ३८, ४०, ४१, ४२, ४३, ४८ से ६०, ६७, ६८, ६९, ८६, ८७, ८८, ११० से ११४, १२०, १२८, १३० – ये सब प्रश्न पक्के याद करके नई कापी में लिखिये।

प्र०२. २४ तीर्थकरो के नाम व चिन्ह कंठस्थ करिये।

प्र०३. तीर्थंकर किसे कहते हैं।

उ० वीतराग–सर्वज्ञ होकर जो धर्मतीर्थ का उपदेश देते है, वे हमारे तीर्थंकर है। अपनी इस भारतभूमि में असंख्य वर्षों पूर्व, भगवान ऋषभदेव हुए, उन्होंने धर्म का सच्चा स्वरूप समझाकर भवसमुद्र से तिरने का उपाय दिखाया, इसलिये वे हमारे प्रथम तीर्थंकर हुए। ऋषभदेव तीर्थंकर के बाद असंख्य वर्षों में २३ तीर्थंकर और हुए, जिनमें अन्तिम तीर्थंकर थे महावीरभगवान; वे हमारे २४ वें तीर्थंकर थे, उन्होंने राजगृही में विपुलाचल से जो धर्मतीर्थ का उपदेश दिया वह आज भी चल रहा है, एवं आगे हजारों वर्ष तक चलता रहेगा।

तीर्थंकर भगवान ने मोक्ष का मार्ग बताया है। मोक्ष का मार्ग सभी तीर्थंकरों ने एक सा ही बताया है। अपने आत्मा को पहचानकर सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र को प्रगट करना–यही मोक्ष का मार्ग है, उसी को जैनधर्म कहते हैं। जैनधर्म का अर्थ है वीतरागधर्म। आज ये तीर्थंकर तो हमारे समक्ष नहीं है, परन्तु उनके द्वारा दिखाया हुआ धर्मतीर्थ ज्ञानी–धर्मात्माओं के द्वारा आज भी हमें मिल रहा है। भगवान ने सम्यग्दर्शन–ज्ञान– चारित्ररूप मोक्षमार्ग बताया है, हम सबको उसकी उपासना करनी चाहिये। ऐसा करने से हम भी एक दिन भगवान बनेंगे।

प्र०४. भगवान बनने के लिये सर्वप्रथम क्या निर्णय करना पडेगा ?

उ० १. जिस प्रकार अरहंत भगवान अठारह दोषरहित, परम औदारिक शरीर में रहते हुये, शरीर से सर्वथा भिन्न, केवलज्ञान रूप परिणमित पूर्ण वीतरागी परमात्मा है शरीर नहीं। उसी प्रकार मुझ आत्मा भी अपवित्र शरीर में रहता हुआ, शरीर से सर्वथा भिन्न, मति–श्रुतज्ञानरूप परिणामित, मोही रागी–द्वेषी बहिरात्मा है, शरीर नहीं।

२. यदि मुझ आत्मा मोह राग द्वेष का अभाव कर दे, तो मुझ ज्ञानस्वरूप आत्मा भी बना बनाया भगवान ही है।

३. मुझ आत्मा का मतिश्रुतज्ञान केवलज्ञान का ही अंश होने से मोह राग द्वेष के अभाव का साधन है।

४. निज ज्ञान में इतनी सावधानी रखनी है कि – अपने मतिश्रुत ज्ञान में जो बाहय शरीर आदि अर्थात निज ज्ञान से शून्य पदार्थ दिखते है, उनका ध्यान छोडकर, निज ज्ञान में, निज ज्ञान को, मात्र निज ज्ञानस्वरूप जानकर निरन्तर निज ज्ञानस्वरूप का ही ध्यान करना – बस यही मोह राग–द्वेष के अभाव का उपाय है।

प्र०५. जैन धर्म का सार क्या है ?

उ० आत्मा के परिणामों में मोह–राग–द्वेष आदि का उत्पन्न नहीं होना ही अहिंसा है, धर्म है तथा आत्मा के परिणामों में मोह–राग–द्वेष आदि की उत्पत्ति हो जाना ही हिंसा है। जिनेन्द्र भगवान के आगम (केवलज्ञान) का संक्षेप तो इतना है। (श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार पेज ६३)

प्र०६. मोह–राग–द्वेष भावों की उत्पत्ति का कारण क्या है ?

उ० इस विश्व में दो द्रव्य है १ जीव – जिसमें ज्ञान है। २. अजीव – पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश व काल – जिनमें ज्ञान नहीं है। अतः हर समय दो प्रकार का कार्य है। जीव और अजीव अपने–अपने कार्य रूप परिणमित होते है। जीव के ज्ञान गुण मे एक विशेषता है कि अपने ज्ञान कार्यरूप परिणमित होते हुये अपने और विश्व के परिणमन को जानता भी है। जीव और अजीव के भेद का ज्ञान न होने के कारण, अपने ज्ञान मे अजीव का जो भी परिणमन दिखता है, अज्ञानी उसे भी अपना मानता है – इसी का नाम मोह है – जिसका फल रागादि रूप संसार है।

प्र०७. इस विषय में श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ८८ पर पं० टोडरमलजी ने क्या कहा है ?

उ० आत्मा का स्वभाव तो दृष्टा–ज्ञाता है, सो आत्मा स्वयं केवल (मात्र) देखने–जानने वाला तो रहता नहीं। जिन पदार्थो को देखता जानता है अर्थात जो शरीर–धनादि बाहय पदार्थ ज्ञान मे मात्र दिखते है उन्हें अपना मानकर इष्ट–अनिष्ट की बुद्धि करता है और व्यर्थ ही कषाय भाव से आकुलित होता है। व्यर्थ ही इसलिये–क्योंकि आत्मा से बाहय शरीर, धनादि अनन्त परमाणु अपने–अपने स्वभावरूप परिणमित होते हैं, मुझ आत्मा की इच्छानुसार नहीं।

प्र०८. जीव–अजीव के भेद का ज्ञान करने के लिये सर्वप्रथम हम विश्व मे दो विभाग किस प्रकार करना चाहिये ?

उ० १. तराजु के एक पलडे मे मुझ जीव तत्व–जिसमें मेरा ज्ञान है।
२. तराजु के दूसरे पलडे मे जिनमे मेरा ज्ञान–दर्शन नही है ऐसे मुझ जीव तत्व के अलावा अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात हैं, जो मात्र ज्ञान के ज्ञेय हैं।

प्र०९. जीव–अजीव की एकत्वबुद्धि रूप मोह का अभाव कैसे हो ?

उ० मोह के अभाव के दो उपाय हैं – १. केवलज्ञान रूप परिणमित अरहंत भगवान के समान निज जीव का स्वरूप समझना। २. केवलज्ञान में प्रकाशित विश्व के समस्त जीवादि पदार्थों का स्वरूप केवलज्ञान के अनुसार समझना।

प्र०१०. भगवान महावीर के केवलज्ञान के अनुसार विश्व के पदार्थों का स्वरूप क्या है ?

उ० १. इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है; और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजनपर्याय व अनन्त अर्थपर्यायों की सत्ता है। इसप्रकार भगवान के केवलज्ञान में प्रत्येक द्रव्य की सत्ता पृथक–पृथक प्रकाशित हो रही है।

२. इस विश्व के जीवादि समस्त द्रव्यों में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक गुण में हर समय एक क्रमबद्ध पर्याय उत्पन्न होती है, पूर्व पर्याय का व्यय होता है और द्रव्य–गुण ध्रौव्य रहते हैं। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा। इस प्रकार भगवान के केवलज्ञान में इस विश्व की सभी अनादिनिधन वस्तुयें अपनी–अपनी मर्यादा सहित सहज परिणमित होती हुई प्रकाशित हो रही हैं।

३. इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य अपने गुण–पर्यायों का स्पर्श मात्र करता है। किसी भी द्रव्य को अपनी सत्ता में और पर की सत्ता में कुछ करने का तो अधिकार ही नहीं है।

निष्कर्ष– केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर, शरीरादि पर द्रव्यों की कर्ताबुद्धि छोड़कर, एकमात्र निज जीव तत्व को जानना ही प्रयोजन रह गया।

प्र०११. केवलज्ञानरूप परिणमित अरहंत भगवान के समान निज जीव तत्व का स्वरूप क्यो समझना ?

उ० क्योंकि अरहंत भगवान सर्वज्ञ है लेकिन पूर्ण वीतरागी है अर्थात् अरहंत भगवान के केवलज्ञान रूप दर्पण मे विश्व के समस्त पदार्थ त्रिकालवर्ती पर्यायों सहित दिखते हैं लेकिन मोह राग द्वेष का एक अंश भी नहीं है।
श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार के प्रथम श्लोक में कहा है – "जिनके केवलज्ञान रूप दर्पण में अलोकाकाश सहित छह द्रव्यों के समूहरूप लोक, अपनी भूत–भविष्य–वर्तमान की समस्त अनंतानंत पर्यायों सहित प्रतिबिम्बित हो रहा है और जिनका आत्मा सर्व कषायमल से रहित हो गया है, ऐसे श्री वर्धमान भगवान अन्तिम तीर्थंकर को, मैं अपने कषायादि मल रहित–सम्यग्ज्ञान प्रकाश के प्रगट होने के लिये नमस्कार करता हूँ।"

प्र०१२. अरहंत भगवान के केवलज्ञान होने पर भी मोह राग द्वेष का अंश भी नहीं है; क्यों ?

उ० १. प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव अलग–अलग है।
२. प्रत्येक द्रव्य का कायम रहकर बदलना सहज स्वभाव है।
३. एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का सर्वथा स्पर्श नहीं करता है – इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य का स्वतंत्र स्वरूप जानने के कारण अरहंत भगवान अपने केवलज्ञान में प्रतिबिम्बित समस्त पदार्थों का केवलज्ञान में अभाव देखते हैं अर्थात् एक मात्र शुद्ध आत्मा का ही ध्यान करते है इसलिये अरहंत भगवान सर्वज्ञ होने पर भी पूर्ण वीतरागी है।

प्र०१३. केवलज्ञानरूप परिणमित अरहंत भगवान के समान निज तत्व का स्वरूप क्या है ?

उ० १. मुझ जीव तत्व भी उत्पाद–व्यय–ध्रौव्ययुक्त सत्ता सहित है। अतः मुझ जीव तत्व के अनन्त गुण भी अपनी–अपनी मर्यादा सहित सहज परिणमित हो रहे हैं। एक गुण दूसरे गुण के आधीन नहीं है।
२. मुझ जीव पदार्थ चैतन्यस्वरूपता से नित्य उद्योतरूप, निर्मल, स्पष्ट, दर्शनज्ञानज्योतिस्वरूप है।
३. मुझ आत्मा का ज्ञानगुण अपनी वर्तमान क्रमबद्ध पर्याय रूप परिणमित भी होता है और जानता भी है।

निष्कर्ष– केवलज्ञान के अनुसार निज जीव तत्व के ज्ञान गुण सहित, अनन्त गुणों की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर सत्पर्यायों की कर्त्ताबुद्धि छोडकर एकमात्र ज्ञानस्वरूप को जानना ही प्रयोजन रह गया।

प्र०१४. अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार मुझ ज्ञानस्वरूप आत्मा की ज्ञानपर्याय का स्वरूप क्या है ?

उ० १. ज्ञान पर्याय स्व–पर प्रकाशक है लेकिन एक रूप है क्योंकि ज्ञान में एकमात्र ज्ञानस्वरूप की सत्ता है और प्रकाशित पदार्थों का सर्वथा अभाव है। अर्थात –
२. पर से सर्वथा भिन्न ज्ञानादि से अभिन्न शुद्ध ज्ञानस्वरूप ही ज्ञाता है, पर से सर्वथा भिन्न ज्ञानादि से अभिन्न शुद्ध ज्ञानस्वरूप ही ज्ञान है, परसे सर्वथा भिन्न ज्ञानादि से अभिन्न शुद्ध ज्ञानस्वरूप ही ज्ञेय है।
३. जिनके केवलज्ञानरूप दर्पण मे विश्व के समस्त पदार्थ त्रिकालवर्ती पर्यायों सहित प्रतिबिम्बित हो रहे हैं, वे केवली भगवान केवल शुद्ध आत्मा का ही ध्यान करते है, विश्व का नहीं, इसलिये उनके मोह राग द्वेष उत्पन्न नहीं होते – जिन धर्म के इस रहस्य का पता चल जाता है।

प्र०१५. श्री रत्नकरण्डश्रावकाचार गाथा २ मे धर्म किसे कहा है ?

उ० धर्म शब्द का अर्थ इस प्रकार है – जो नरक तिर्यचादि गतियों मे परिभ्रमणरूप दुःखो से आत्मा को छुडाकर उत्तम, आत्मीक, अविनाशी, अतीन्द्रिय मोक्ष सुख में धर दे वह धर्म है।

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५२

दिनांक 15 अप्रैल 2012 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र०१. लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका (गुलाबी किताब) के प्रश्न १, ४, ८, ११, १३, १४, १५, १६, १७, २०, २३, २६, २९, ३२, ३५, ३६, ३७, ३८, ४०, ४१, ४२, ४३, ४५, ४६, ४८ से ६०, ६२, ६४,, ६६, ६७, ६८, ६९, ७१, ७६, ७७, से ८८, ९० से ९९, १०१ से १०४, १०६ से १२८, १३०, १८६ से १९२ – ये सब प्रश्न पक्के याद करके नई कापी में लिखिये।

प्र०२. २४ तीर्थकरो के नाम व चिन्ह और सीमंधर आदि २० तीर्थकरों के नाम कंठस्थ करिये।

प्र०३. तीर्थंकर किसे कहते हैं।
उ० वीतराग–सर्वज्ञ होकर जो धर्मतीर्थ का उपदेश देते हैं, वे हमारे तीर्थंकर है।

प्र०४. तीर्थंकर भगवान ने मोक्ष का मार्ग क्या बताया है ?
उ० अपने आत्मा को पहचानकर सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र को प्रगट करना–यही मोक्ष का मार्ग है, उसी को जैनधर्म कहते हैं। ऐसा करने से हम भी एक दिन भगवान बनेंगे।

प्र०५. भगवान बनने के लिये सर्वप्रथम क्या निर्णय करना पड़ेगा ?
उ० मैं–वीना शरीर रूप अनन्त पुद्गल परमाणुओं के ढेर से सर्वथा भिन्न, स्वभाव से अभिन्न अर्थात् स्वयं सिद्ध निज एकरुप ज्ञायक भाव से अभिन्न, अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड भगवान आत्मा हूँ।

प्र०६. जैन धर्म का सार क्या है ?
उ० आत्मा के परिणामों में मोह–राग–द्वेष आदि का उत्पन्न नहीं होना ही अहिंसा है, धर्म है तथा आत्मा के परिणामों में मोह–राग–द्वेष आदि की उत्पत्ति हो जाना ही हिंसा है। यदि मुझ आत्मा मोह राग द्वेष का अभाव कर दे, तो बना बनाया भगवान ही है।

प्र०७. मोह–राग–द्वेष भावों की उत्पत्ति का कारण क्या है ?
उ० अपने ज्ञान में अजीव का जो भी परिणमन दिखता है, अज्ञानी उसे भी अपना मानता है, – इसी का नाम मोह है – जिसका फल रागादि रूप संसार है।
इस विषय में श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ८८ पर पं० टोडरमलजी ने कहा है – आत्मा का स्वभाव तो दृष्टा–ज्ञाता है, सो आत्मा स्वयं केवल (मात्र) देखने–जानने वाला तो रहता नहीं। जिन पदार्थो को देखता जानता है अर्थात जो शरीर–धनादि बाहय पदार्थ ज्ञान में मात्र दिखते है, जो अनन्त–अनन्त परमाणुओं के ढेर हैं, उन्हें अपना मानकर इष्ट–अनिष्ट की बुद्धि करता है और व्यर्थ ही कषाय भाव से आकुलित होता है।

प्र०८. जीव–अजीव के भेद का ज्ञान करने के लिये सर्वप्रथम इस विश्व मे दो विभाग किस प्रकार करना चाहिये ?
उ० १. तराजु के एक पलड़े में मुझ जीव तत्व–जिसमें मेरा ज्ञान है।
२. तराजु के दूसरे पलड़े में जिनमें मेरा ज्ञान–दर्शन नही है ऐसे मुझ जीव तत्व के अलावा अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात हैं, जो मात्र ज्ञान के ज्ञेय हैं।

प्र०९. जीव द्रव्य किसे कहते हैं ?

उ० जिसमें चेतना अर्थात् ज्ञान दर्शन रूप शक्ति है उसे जीव द्रव्य कहते हैं।

प्र०१०. चेतना अर्थात् ज्ञानदर्शन किसे कहते हैं ?

उ० जिसमें पदार्थों का प्रतिभास होता है उसे चेतना कहते हैं।

प्र०११. जिसमें पदार्थों का प्रतिभास होता है ऐसी शुद्ध चेतना का स्वरूप श्री समयसार गाथा ९६ में क्या बताया है ?

उ० दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि मे ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है। सिद्धान्त – इसीप्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है। जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य–ज्योति स्वरूप आत्मा ही है।

प्र०१२. जीव–अजीव की एकत्वबुद्धि रूप मोह का अभाव कैसे हो ?

उ० मोह के अभाव के दो उपाय है – १. जिसमें पदार्थों का प्रतिभास होता है – ऐसी शुद्ध चेतना स्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप अरहंत भगवान के समान समझना। २. जिन पदार्थों का प्रतिभास होता है उन विश्व के समस्त पदार्थों का स्वरूप अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार समझना। (श्री प्रवचनसार गाथा ८० व ८६)

–: मोह के अभाव का प्रथम उपाय :–

प्र०१३. अरहंत भगवान के समान शुद्ध चेतनास्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?

उ० चेतन को है उपयोग रूप, बिनमूरत चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल, नभ, धर्म, अधर्म, काल, इनतैं न्यारी है जीवचाल।।

(१) मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ। (२) मुझ आत्मा का स्वभाव ज्ञाता–दृष्टा है। (३) आंख–नाक–कान औदारिक आदि शरीरों रूप मेरी मूर्ति नहीं है। (४) चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है। (५) सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है। (६) मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्त जीव द्रव्य हैं, अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एकेक द्रव्य हैं, लोक प्रमाण असंख्यात काल द्रव्य हैं– इनकी सत्ता मुझ जीव से भिन्न ही है। ऐसा निज जीवतत्व का स्वरूप जानते–मानते ही विश्व का राग उत्पन्न नहीं होता और त्रिकाली स्वभाव अर्थात् अनादिअनन्त ज्ञाता दृष्टा स्वभाव का आश्रय हो जाता है।

प्र०१४. अरहंत भगवान के समान शुद्ध चेतनास्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप श्री समयसार गाथा २ में क्या बताया है ?

उ० (१) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य युक्त सत्ता सहित है।
(२) मुझ जीव पदार्थ दर्शनज्ञानमयी चेतनास्वरूप है।
(३) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्मस्वरूप द्रव्य है, द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।
(४) मुझ जीव पदार्थ का स्व–पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकाररूप एक है।
(५) मुझ जीव पदार्थ–अन्य जीव, पुद्गल, धर्म–अधर्म–आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्यगुण स्वरूप है।
(६) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरूप को नहीं छोड़ता।

(७) मुझ जीव पदार्थ भेदज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव में स्थित रहे तो स्व समय है।

(८) मुझ जीव पदार्थ भेदज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव से छुटकर परस्वभाव में स्थित रहे अर्थात् मोह राग द्वेष रूप होकर रहे तब पर समय है।

प्र०१५. अरहंत भगवान के समान शुद्ध चेतनास्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप श्री समयसार गाथा ६ में क्या बताया है ?

उ० १. मुझ ज्ञायकभाव स्वतः सिद्ध अनादिअनन्त है।

२. मुझ ज्ञायकभाव नित्य प्रकाशमान है।

३. मुझ ज्ञायकभाव स्पष्ट प्रतिभास रूप है।

४. मुझ ज्ञायकभाव संसार अवस्था में शुभाशुभ भावों रूप परिणमता हुआ होने पर भी, स्वभाव दृष्टि से देखने में आवे, तो शुभाशुभभावोंरूप परिणमता ही नहीं है।

५. मुझ ज्ञायकभाव समस्त परद्रव्यों के भावों से भिन्नरूप से उपासने में आने पर शुद्ध कहलाता है। (वीना आदि हम पांच हैं ऐसी मान्यता हटते ही ज्ञायकभाव अनुभव में आ जाता है।)

६. अन्तरंग में ज्ञेयाकार रूप से परिणमता होने पर भी ज्ञेय पदार्थों के साथ मुझ ज्ञायकभाव का वास्तव में कोई सम्बन्ध नहीं है। ऐसा जानते ही शरीरादि बाह्य पदार्थों का राग उत्पन्न नहीं होता और केवल ज्ञाता दृष्टा स्वभाव का आश्रय हो जाता है।

—: मोह के अभाव का दूसरा उपाय :—

प्र०१६. जिन पदार्थों का प्रतिभास होता है, विश्व के उन समस्त पदार्थों का स्वरूप अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार क्या है ?

उ० १. इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है; और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजनपर्याय व अनन्त अर्थपर्यायों की सत्ता है। इसप्रकार भगवान के केवलज्ञान में प्रत्येक द्रव्य की सत्ता पृथक–पृथक प्रकाशित हो रही है।

२. इस विश्व के जीवादि समस्त द्रव्यों में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक गुण में हर समय एक क्रमबद्ध पर्याय उत्पन्न होती है, पूर्व पर्याय का व्यय होता है और द्रव्य–गुण ध्रौव्य रहते हैं। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा। इस प्रकार भगवान के केवलज्ञान में इस विश्व की सभी अनादिनिधन वस्तुयें अपनी–अपनी मर्यादा सहित सहज परिणमित होती हुई प्रकाशित हो रही हैं।

३. इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य अपने गुण–पर्यायों का मात्र स्पर्श करता है। किसी भी द्रव्य को अपनी सत्ता में और पर की सत्ता में कुछ करने का तो अधिकार ही नहीं है।

४. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर द्रव्यों में या स्वद्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा। तो फिर क्या करना–'बस अपने स्वरूप का ध्यान करना'–यही प्रयोजन रहा।

प्र०१७. विश्व के समस्त पदार्थों का स्वरूप श्री समयसार गाथा ३ में क्या बताया है ?

उ० श्री समयसार गाथा ३ में आता है– "लोक में सर्वत्र जो कुछ जितने पदार्थ हैं, वे सब निश्चय से एकत्वनिश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को प्राप्त होते हैं।

(१) वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को चुम्बन करते हैं–स्पर्श करते हैं, तथापि वे परस्पर एक दूसरे को स्पर्श नहीं करते।

(२) वे सब पदार्थ अत्यंत निकट एक क्षेत्रावगाहरूप से तिष्ठ रहे हैं, तथापि वे सदाकाल अपने स्वरूप से च्युत नहीं होते।

(३) वे सब पदार्थ पररूप परिणमन न करने से अनन्तव्यक्तिता नष्ट नहीं होती, इसलिए वे टंकोत्कीर्ण की भाँति शाश्वत स्थिर रहते हैं।

(४) वे सब पदार्थ समस्त विरुद्धकार्य तथा अविरुद्धकार्य दोनों की हेतुता से वे विश्व का सदा उपकार करते हैं अर्थात् टिकाये रखते हैं।

प्र०१८. हमें हर समय निश्चय व्यवहार का स्वरूप किस प्रकार समझना चाहिये जिससे शरीर, धन आदि बाह्य पदार्थों के प्रति आसक्ति का अभाव हो।

उ०(१) मैं वीना हूँ–ऐसा व्यवहारनय से जो निरूपण किया हो उसे असत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान छोड़ना।

मैं–वीना नाम रूप अनन्त पुद्गल परमाणुओं के ढेर से सर्वथा भिन्न, स्वभावों से अभिन्न अर्थात् स्वयं सिद्ध निज एकरूप ज्ञायकभाव से अभिन्न अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड भगवान आत्मा हूँ–ऐसा निश्चयनय से जो निरूपण किया हो उसे सत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान अंगीकार करना।

(२) 'यह मेरा मकान है'– ऐसा व्यवहारनय से जो निरूपण किया हो, उसे असत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान छोड़ना।

'मकान औदारिक शरीर है', मकान का मालिक आहारवर्गणा है, आहारवर्गणा एक स्कंध है अर्थात् ये मकान–एक मकान नहीं है, अनन्त परमाणुओं का ढेर है जिसमें एक परमाणु की सत्ता में, दूसरे परमाणु का सर्वथा अभाव है– ऐसा निश्चयनय से जो निरूपण किया है, उसे सत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान अंगीकार करना।

नोट– मैं मनुष्य हूँ, मैं स्त्री हूँ, यह मेरा सोने का हार है, मैंने रोटी बनाई, मैं उत्पन्न हुआ, मैं मर जाऊँगा, मैं उठा, मैं बोला, मैंने हाथ जोड़े, ये महावीर भगवान हैं, ये सीमंधर भगवान हैं, यह मेरी साड़ी है,–इन वाक्यों पर उपरोक्त प्रश्न–१८ के अनुसार अभ्यास करिये।

प्र०१९. आत्मा के मोक्ष सुख का कारणरूप सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति के लिये क्या करें ?

उ० सम्यग्दर्शन तो स्व–पर का सत्य श्रद्धान करने से ही होगा। और वह स्व–पर का सत्य श्रद्धान–ज्ञान तो विनय सहित स्याद्वादरूप परमागम के सेवन से अर्थात् जिनेन्द्र भगवान की वाणी के सेवन से ही होगा। (श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार पेज ७६)

विशेष नोट

- वीतराग विज्ञान पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित आप स्वयं भी उपस्थित हों और जैन धर्म के रहस्यों को जानें-

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.३० ये ७.३० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
6. सेमवार व बृहस्पतिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय ०३.३० से ०४.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- १२ फरवरी २०१२ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–५० का पारितोषिक वितरण भी १५ अप्रैल २०१२ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

पूज्य गुरूदेव श्री कानजी स्वामी की जन्मजयन्ती के मंगल अवसर पर

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५३

दिनांक 20 मई 2012 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

०१. लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका (गुलाबी किताब) के प्रश्न १, ४, ८, ११, १३, १४, १५, १६, १७, २०, २३, २६, २९, ३२, ३५, ३६, ३७, ३८, ४०, ४१, ४२, ४३, ४५, ४६, ४८ से ६०, ६२, ६४., ६६, ६७, ६८, ६९, ७१, ७६, ७७, से ८८, ९० से ९९, १०१ से १०४, १०६ से १२८, १३०, १८६ से १९२ – ये सब प्रश्न पक्के याद करके नई कापी में लिखिये।

०२. २४ तीर्थंकरो के और सीमंधर आदि २० तीर्थंकरों के नाम कंठस्थ करिये।

०३. तीर्थंकर किसे कहते हैं।

वीतराग–सर्वज्ञ होकर जो धर्मतीर्थ का उपदेश देते हैं, वे हमारे तीर्थंकर हैं।

०४. तीर्थंकर भगवान ने मोक्ष का मार्ग क्या बताया है ?

अपने आत्मा को पहचानकर सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र को प्रगट करना–यही मोक्ष का मार्ग है, उसी को जैनधर्म कहते हैं। ऐसा करने से हम भी एक दिन भगवान बनेंगे।

०५. भगवान बनने के लिये सर्वप्रथम क्या निर्णय करना पड़ेगा ?

मैं–पीना शरीर रूप अनन्त पुद्गल परमाणुओं के ढेर से सर्वथा भिन्न, स्वभाव से अभिन्न अर्थात् स्वयं सिद्ध, एकरुप, निज ज्ञायक भाव से अभिन्न, अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड भगवान आत्मा हूँ।

०६. जैन धर्म का सार क्या है ?

आत्मा के परिणामों में मोह–राग–द्वेष आदि का उत्पन्न नहीं होना ही अहिंसा है, धर्म है तथा आत्मा के परिणामों में मोह–राग–द्वेष आदि की उत्पत्ति हो जाना ही हिंसा है। यदि मुझ आत्मा मोह राग द्वेष का अभाव कर दे तो बना बनाया भगवान ही है।

०७. मोह–राग–द्वेष भावों की उत्पत्ति का कारण क्या है ?

जीव और अजीव के भेद का ज्ञान न होने के कारण, अपने ज्ञान में अजीव का जो भी परिणमन दिखता है, अज्ञानी उसे भी अपना मानता है, – इसी का नाम मोह है – जिसका फल रागादि रूप संसार है।

इस विषय में श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ८८ पर पं० टोडरमलजी ने कहा है – आत्मा का स्वभाव तो दृष्टा–ज्ञाता है, सो आत्मा स्वयं केवल (मात्र) देखने–जानने वाला तो रहता नहीं। जिन पदार्थो को देखता जानता है अर्थात जो शरीर–धनादि बाहय पदार्थ ज्ञान में मात्र दिखते हैं, जो अनन्त–अनन्त परमाणुओं के ढेर हैं, उन्हें अपना मानकर इष्ट–अनिष्ट की बुद्धि करता है और व्यर्थ ही कषाय भाव से आकुलित होता है।

०८. जीव–अजीव के भेद का ज्ञान करने के लिये सर्वप्रथम इस विश्व मे दो विभाग किस प्रकार करना चाहिये ?

१. तराजु के एक पलड़े में मुझ जीव तत्व–जिसमें मेरा ज्ञान है।

२. तराजु के दूसरे पलड़े में जिनमें मेरा ज्ञान–दर्शन नही है ऐसे मुझ जीव तत्व के अलावा अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात हैं, जो मात्र ज्ञान के ज्ञेय हैं।

प्र०९. जीव द्रव्य किसे कहते है ?

उ० जिसमें चेतना अर्थात् ज्ञान दर्शन रूप शक्ति है उसे जीव द्रव्य कहते हैं।

प्र०१०. चेतना अर्थात् ज्ञानदर्शन किसे कहते हैं ?

उ० जिसमें पदार्थों का प्रतिभास होता है उसे चेतना कहते हैं।

प्र०११. जिसमें पदार्थों का प्रतिभास होता है ऐसी शुद्ध चेतना का स्वरूप श्री समयसार गाथा १९ में क्या बताया है ?

उ० दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है। सिद्धान्त – इसीप्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है। जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य–ज्योति स्वरूप आत्मा ही है।

प्र०१२. जीव–अजीव की एकत्वबुद्धि रूप मोह का अभाव कैसे हो ?

उ० मोह के अभाव के दो उपाय है – १. जिसमें पदार्थों का प्रतिभास होता है – ऐसी शुद्ध चेतना स्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप अरहंत भगवान के समान समझना। २. जिन पदार्थों का प्रतिभास होता है उन विश्व के समस्त पदार्थों का स्वरूप अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार समझना। (श्री प्रवचनसार गाथा ८० व ८६)

–: मोह के अभाव का प्रथम उपाय :–

प्र०१३. अरहंत भगवान के समान शुद्ध चेतनास्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?

उ०

चेतन को है उपयोग रूप, बिनमूरत चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल, नभ, धर्म, अधर्म, काल, इनतैं न्यारी है जीवचाल।।

चेतन को है उपयोग रूप अर्थात (१) मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ और (२) मुझ आत्मा का स्वभाव ज्ञाता–दृष्टा है। (३) बिनमूरत अर्थात आंख–नाक–कान औदारिक आदि शरीरों रूप मेरी मूर्ति नहीं है। (४) चिन्मूरत अर्थात चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है। (५) अनूप अर्थात सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है। (६) पुद्गल, नभ, धर्म, अधर्म, काल, इनतैं न्यारी है जीवचाल अर्थात मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व मे अनन्त जीव द्रव्य हैं, अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एकेक द्रव्य हैं, लोक प्रमाण असंख्यात काल द्रव्य हैं– इनकी सत्ता मुझ जीव से भिन्न ही है। ऐसा निज जीवतत्व का स्वरूप जानते–मानते ही विश्व का राग उत्पन्न नही होता और त्रिकाली स्वभाव अर्थात् अनादिअनन्त ज्ञाता दृष्टा स्वभाव का आश्रय हो जाता है।

प्र०१४. अरहंत भगवान के समान शुद्ध चेतनास्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप श्री समयसार गाथा २ में क्या बताया है ?

उ० (१) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य युक्त सत्ता सहित है।

(२) मुझ जीव पदार्थ दर्शनज्ञानमयी चेतनास्वरूप है।

(३) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्मस्वरूप द्रव्य है, द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।

(४) मुझ जीव पदार्थ का स्व–पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकाररूप एक है।

(५) मुझ जीव पदार्थ–अन्य जीव, पुद्गल, धर्म–अधर्म–आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्यगुण स्वरूप है।

(६) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरूप को नहीं छोड़ता।

(७) मुझ जीव पदार्थ भेदज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव में स्थित रहे तो स्व समय है।

(८) मुझ जीव पदार्थ भेदज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव से छूटकर परस्वभाव में स्थित रहे अर्थात् मोह राग द्वेष रूप होकर रहे तब पर समय है।

प्र०१५. अरहंत भगवान के समान शुद्ध चेतनास्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप श्री समयसार गाथा ६ में क्या बताया है ?

उ० १. मुझ ज्ञायकभाव स्वतः सिद्ध अनादिअनन्त है।
२. मुझ ज्ञायकभाव नित्य प्रकाशमान है।
३. मुझ ज्ञायकभाव स्पष्ट प्रतिभास रूप है।
४. मुझ ज्ञायकभाव संसार अवस्था में शुभाशुभ भावों रूप परिणमता हुआ होने पर भी, स्वभाव दृष्टि से देखने में आवे, तो शुभाशुभभावोंरूप परिणमता ही नहीं है।
५. मुझ ज्ञायकभाव समस्त परद्रव्यों के भावों से भिन्नरूप से उपासने में आने पर शुद्ध कहलाता है। (वीना आदि हम पांच हैं ऐसी मान्यता हटते ही ज्ञायकभाव अनुभव में आ जाता है।)
६. अन्तरंग में ज्ञेयाकार रूप से परिणमता होने पर भी ज्ञेय पदार्थों के साथ मुझ ज्ञायकभाव का वास्तव में कोई सम्बन्ध नहीं है। ऐसा जानते ही शरीरादि बाह्य पदार्थों का राग उत्पन्न नहीं होता और केवल ज्ञाता दृष्टा स्वभाव का आश्रय हो जाता है।

—: मोह के अभाव का दूसरा उपाय :—

प्र०१६. जिन पदार्थों का प्रतिभास होता है, विश्व के उन समस्त पदार्थों का स्वरूप अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार क्या है ?

उ० १. इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है; और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजनपर्याय व अनन्त अर्थपर्यायों की सत्ता हैं। इसप्रकार भगवान के केवलज्ञान में प्रत्येक द्रव्य की सत्ता पृथक–पृथक प्रकाशित हो रही है।
२. इस विश्व के जीवादि समस्त द्रव्यों में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक गुण में हर समय एक क्रमबद्ध पर्याय उत्पन्न होती है, पूर्व पर्याय का व्यय होता है और द्रव्य–गुण ध्रौव्य रहते हैं। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा। इस प्रकार भगवान के केवलज्ञान में इस विश्व की सभी अनादिनिधन वस्तुयें अपनी–अपनी मर्यादा सहित सहज परिणमित होती हुई प्रकाशित हो रही हैं।
३. इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य अपने गुण–पर्यायों का मात्र स्पर्श करता है। किसी भी द्रव्य को अपनी सत्ता में और पर की सत्ता में कुछ करने का तो अधिकार ही नहीं है।
४. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर द्रव्यों में या स्वद्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा। तो फिर क्या करना–'बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात् "केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करना"–यही प्रयोजन रहा।

प्र०१७. विश्व के समस्त पदार्थों का स्वरूप श्री समयसार गाथा ३ में क्या बताया है ?

उ० श्री समयसार गाथा ३ में आता है– "लोक में सर्वत्र जो कुछ जितने पदार्थ हैं, वे सब निश्चय से एकत्वनिश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को प्राप्त होते हैं, क्योंकि–
(१) वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को चुम्बन करते हैं–स्पर्श करते हैं, तथापि वे परस्पर एक दूसरे को स्पर्श नहीं करते।
(२) वे सब पदार्थ अत्यंत निकट एक क्षेत्रावगाहरूप से तिष्ठ रहे हैं, तथापि वे सदाकाल अपने स्वरूप से च्युत नहीं होते।
(३) वे सब पदार्थ पररूप परिणमन न करने से अनन्तव्यक्तिता नष्ट नहीं होती, इसलिए वे टंकोत्कीर्ण की भांति शाश्वत स्थिर रहते हैं।
(४) वे सब पदार्थ समस्त विरुद्धकार्य तथा अविरुद्धकार्य दोनों की हेतुता से वे विश्व का सदा उपकार करते हैं अर्थात् टिकाये रखते हैं।

प्र०१८. केवलज्ञानरूप परिणमित अरहंत भगवान के समान निज जीव तत्व का स्वरूप क्यों समझना ?

उ० क्योंकि अरहंत भगवान सर्वज्ञ हैं लेकिन पूर्ण वीतरागी हैं अर्थात् अरहंत भगवान के केवलज्ञान रूप दर्पण में विश्व के समस्त पदार्थ त्रिकालवर्ती पर्यायों सहित दिखते हैं लेकिन मोह राग द्वेष का एक अंश भी नहीं है।

श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार के प्रथम श्लोक में कहा है – "जिनके केवलज्ञान रूप दर्पण में अलोकाकाश सहित छह द्रव्यों के समूहरूप लोक, अपनी भूत–भविष्य–वर्तमान की समस्त अनंतानंत पर्यायों सहित प्रतिबिम्बित हो रहा है और जिनका आत्मा सर्व कषायमल से रहित हो गया है, ऐसे श्री वर्धमान भगवान अन्तिम तीर्थंकर को, मैं अपने कषायादि मल रहित–सम्यग्ज्ञान प्रकाश के प्रगट होने के लिये नमस्कार करता हूँ।"

प्र०१९. अरहंत भगवान के केवलज्ञान होने पर भी मोह राग द्वेष का अंश भी क्यों नहीं है; और हम भी क्या जाने कि मुझ आत्मा में भी मोह राग द्वेष उत्पन्न न हो ?

उ० १. प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव अलग–अलग है।
२. प्रत्येक द्रव्य का कायम रहकर बदलना सहज स्वभाव है।
३. एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का सर्वथा स्पर्श नहीं करता है – इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य का स्वतंत्र स्वरूप जानने के कारण अरहंत भगवान अपने केवलज्ञान में प्रतिबिम्बित समस्त पदार्थों का केवलज्ञान में अभाव देखते हैं इसलिये जिनके केवलज्ञानरूप दर्पण में विश्व के समस्त पदार्थ त्रिकालवर्ती पर्यायों सहित प्रतिबिम्बित हो रहे हैं, वे केवली भगवान केवल शुद्ध आत्मा का ही ध्यान करते हैं, विश्व का नहीं, इसलिये उनके मोह राग द्वेष उत्पन्न नहीं होते – जिन धर्म के इस रहस्यको माने तो मुझ आत्मा में भी मोह राग द्वेष उत्पन्न नहीं होंगे।

प्र०२०. आत्मा के मोक्ष सुख का कारणरूप सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति के लिये क्या करें ?

उ० सम्यग्दर्शन तो स्व–पर का सत्य श्रद्धान करने से ही होगा। और वह स्व–पर का सत्य श्रद्धान–ज्ञान तो विनय सहित स्याद्वादरूप परमागम के सेवन से अर्थात् जिनेन्द्र भगवान की वाणी के सेवन से ही होगा। (श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार पेज ७६)

गुरुदेव वन्दना

द्रव्य अलौकिक गुरुवर तुमरा, अमृत तुल्य वाणी अहो।
वाणी का दाता कहान गुरु हो कहान गुरु जयवंत वर्तो।
मुक्ति का मार्ग तुमसे मिला है, शासन प्रभावक अहो–अहो !
शान्तिदायक मुक्ति के दाता कहान गुरु जयवंत वर्तो। ।।१।। द्रव्य ....
चरण कमल में दासत्व मांगू, भक्तों को तुने भगवान कहा !
आश्चर्यकारी ज्ञाणी के दाता कहान गुरु जयवंत वर्तो !।।२।। द्रव्य ....
मोक्षमार्ग सच्चा दरशाके सार समय का आप दियो !
जग के तारणहार गुरु हो कहान गुरु जयवंत वर्तो !।।३।। द्रव्य ....
भरतक्षेत्र को विदेह समान, पंचम को चौथा काल किया !
वाणी की अदभुत धारा बहा, जीवों को मुक्तिमार्ग दिया !
उपकार गुरु तुमरा कैसे चुकाऊं, कहान गुरु जयवंत वर्तो !।।४।। द्रव्य ....

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.३० से ७.३० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
6. सोमवार व बृहस्पतिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय ०३.३० से ०४.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओ में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- १५ अप्रैल २०१२ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–५२ का पारितोषिक वितरण भी २० मई २०१२ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५४

दिनांक 5 अगस्त 2012 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र०१. लघु जैन सिद्वान्त प्रवेशिका (गुलाबी किताब) के प्रश्न १, ४, ८, ११, १३, १४, १५, १६, १७, २०, २३, २६, २९, ३२, ३५, ३६, ३७, ३८, ४०, ४१, ४२, ४३, ४५, ४६, ४८ से ६०, ६२, ६४,, ६६, ६७, ६८, ६९, ७१, ७६, ७७, से ८८, ९० से ९९, १०१ से १०४, १०६ से १२८, १३०, १८६ से १९२ – ये सब प्रश्न पक्के याद करके नई कापी मे लिखिये।

प्र०२. २४ तीर्थकरो के और सीमंधर आदि २० तीर्थकरों के नाम कंठस्थ करिये।

प्र०३. तीर्थकर भगवान ने मोक्ष का मार्ग क्या बताया है ?

उ० अपने आत्मा को पहचानकर सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का प्रगट करना-यही मोक्ष का मार्ग है, उसी को जैनधर्म कहते है। ऐसा करने से हम भी एक दिन भगवान बनेंगे।

प्र०४. जैन धर्म का सार क्या है ?

उ० आत्मा के परिणामो में मोह-राग-द्वेष आदि का उत्पन्न नहीं होना ही अहिंसा है, धर्म है तथा आत्मा के परिणामों में मोह-राग-द्वेष आदि की उत्पत्ति हो जाना ही हिंसा है। यदि मुझ आत्मा मोह राग द्वेष का अभाव कर दे, तो बना बनाया भगवान ही है।

प०५. मोह-राग-द्वेष भावों की उत्पत्ति का कारण क्या है ?

उ० जीव और अजीव के भेद का ज्ञान न होने के कारण, अपने ज्ञान में अजीव का जो भी परिणमन दिखता है, अज्ञानी उसे भी अपना मानता है, – इसी का नाम मोह है – जिसका फल रागादि रूप संसार है।

प्र०६. आत्मा के परिणामों में से मोह राग द्वेष भावों का अभाव करके भगवान बनने के लिये क्या निर्णय करना पड़ेगा ?

उ० (१) मैं कौन हूँ (२) मैं कौन नही हूँ ? – यह निर्णय करना पड़ेगा।

प्र०८. तुम कौन हो ?

उ० मैं ज्ञान-दर्शन श्रद्धा चारित्र आदि अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड भगवान आत्मा हूँ।

प्र०८. तुम कौन नही हो ?

उ० धन, मकान, परिवार आदि अत्यन्त भिन्न पर पदार्थ, आँख-नाक-कान रूप औदारिक शरीर, मन, वाणी, आठ कर्म और शुभाशुभ विकारी भाव मैं नही हूँ।

प्र०९. तुम कब से हो ?

उ० मैं तो जन्म मरण रहित अनादिअनन्त अनादिकाल से हूँ।

प्र०१०. जन्म मरण तो होता है क्या यह बात असत्य है ?

उ० शरीर का संयोग-वियोग होता है, मुझ आत्मा का नही।

प्र०११. फिर तुम दुःखी क्यों हो ?

उ० ज्ञान-दर्शन-श्रद्धा-चारित्र आदि अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड निज आत्मा का पता न होने से, धन-मकान-शरीर आदि जो मैं नही हूँ उन पदार्थो को अपना मानने रूप अपनी मूर्खता से दुःखी हूँ।

प्र०१२. तुमने आज तक क्या किया ?

उ० जिनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, ऐसे शरीर-धन आदि पर पदार्थों को अपना मानकर आत्मा के परिणामों में मात्र मोह-राग-द्वेष किया।

प्र०१३. अब मैं क्या करूं ?

उ० ज्ञान–दर्शन–श्रद्धा चारित्र आदि अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड जो स्वयं आत्मा है – उसको पहचानकर सम्यकदर्शन–ज्ञान–चारित्र प्रगट कर।

प्र०१४. मैं अपनी पहचान कैसे करूँ ?

उ० मिथ्यादृष्टि के कार्यक्षेत्र की मर्यादा शुभ–अशुभ विकारी भावों तक है। ज्ञानियों की मर्यादा शुद्ध भावों तक है। परन्तु शरीर–धन–मकान आदि पर पदार्थों में ज्ञानी–अज्ञानी कुछ भी नहीं कर सकता है–ऐसा जानकर अपने त्रिकाली ज्ञाता दृष्टा स्वभाव का आश्रय ले तो स्वयं की पहचान हो।

प्र०१५. शरीर व राग आदि के प्रतिभासरूप परिणमित त्रिकाल ज्ञाता दृष्टा स्वभावी आत्मा का स्वरूप श्री समयसार गाथा १६ में क्या बताया है ?

उ० <u>दृष्टान्त</u> – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है। <u>सिद्धान्त</u> – इसीप्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है। जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य–ज्योति स्वरूप आत्मा ही है।

प्र०१६. त्रिकाल ज्ञाता दृष्टा स्वभावी अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड निज आत्मा का स्वरूप श्री समयसार गाथा २ में क्या बताया है ?

उ० (१) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य युक्त सत्ता सहित है।

(२) मुझ जीव पदार्थ चैतन्यस्वरूपता से नित्य उद्योतरूप निर्मल, स्पष्ट, दर्शन–ज्ञान ज्योतिस्वरूप है।

(३) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्मस्वरूप द्रव्य है, द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।

(४) मुझ जीव पदार्थ का स्व–पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकाररूप एक है।

(५) मुझ जीव पदार्थ–अन्य जीव, पुद्गल, धर्म–अधर्म–आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्यगुण स्वरूप है।

(६) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरूप को नहीं छोड़ता।

(७) मुझ जीव पदार्थ भेदज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव में स्थित रहे तो स्व समय है।

(८) मुझ जीव पदार्थ भेदज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव से छुटकर परस्वभाव में स्थित रहे अर्थात् मोह राग द्वेष रूप होकर रहे तब पर समय है।

प्र०१७. संसार और मोक्ष क्या है ?

उ० (१) आत्मा ज्ञाता दृष्टा के उपयोग को, भेदज्ञान के अभाव में परपदार्थ की ओर लक्ष्य करके– पर में 'यह मैं' ऐसा दृढ़ कर लेता है – इसका नाम संसार है।

(२) आत्मा ज्ञाता दृष्टा के उपयोग को, भेदज्ञान के बल से जब स्व की ओर लक्ष्य करके स्व में 'यह मैं' ऐसा दृढ़ कर लेता है – इसका नाम मोक्ष है।

प्र०१८. सम्बन्ध कितने प्रकार का है ?

उ० सम्बन्ध तीन प्रकार का है – (१) तादात्मयसिद्ध सम्बन्ध (२) संयोगसिद्ध सम्बन्ध (३) परस्पर अवगाहसिद्ध सम्बन्ध

(१) तादात्मयसिद्ध सम्बन्ध – अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड मुझ आत्मा का शुद्ध चैतन्य प्रकाश के साथ तादात्मयसिद्ध सम्बन्ध है।

(२) संयोगसिद्ध सम्बन्ध – अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड मुझ आत्मा का शुभ–अशुभ विकारी भावों के साथ संयोगसिद्ध सम्बन्ध है।

(३) परस्पर अवगाहसिद्ध सम्बन्ध – अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड मुझ आत्मा का आठ कर्मों के साथ परस्पर अवगाहसिद्ध सम्बन्ध है।

प्र०१९. शरीर, धन, मकान, पति, बच्चे, आदि पूरे विश्व के साथ मुझ आत्मा का कौन सा सम्बन्ध है ?

उ० इस विश्व में सम्बन्ध तीन ही प्रकार का है। इसके अलावा विश्व में कोई सम्बन्ध नही होता। शरीर–धन आदि पुद्गल स्कन्धों के साथ मुझ अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड आत्मा का इन तीनों में से कोई भी सम्बन्ध नहीं है।

शरीर, धन आदि के साथ सर्वथा सम्बन्ध नहीं है तो भी यह मूर्ख जीव–अर्थात् अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड आत्मा उनसे सम्बन्ध मानकर व्यर्थ ही पागल हो रहा है।

प्र०२१. यह पागलपन कैसे मिटे ?

उ० जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था को जानकर अपने त्रिकाली ज्ञाता दृष्टा स्वभाव का आश्रय ले तो यह पागलपन मिटे।

प्र०२२. इस विश्व में कितने द्रव्य हैं और प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?

उ० इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है; और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजनपर्याय व अनन्त अर्थपर्यायों की सत्ता है।

प्र०२३. श्री प्रवचनसार गाथा ९३ के अनुसार जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था क्या है ?

उ० इस विश्व के जीवादि समस्त द्रव्यों में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक गुण में हर समय एक क्रमबद्ध पर्याय उत्पन्न होती है, पूर्व पर्याय का व्यय होता है और द्रव्य–गुण ध्रौव्य रहते हैं। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र०२४. श्री समयसार गाथा ३ में जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था क्या बताई है।

उ० श्री समयसार गाथा ३ में आता है– "लोक में सर्वत्र जो कुछ जितने पदार्थ हैं, वे सब निश्चय से एकत्वनिश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को प्राप्त होते हैं, क्योंकि–

(१) वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को चुम्बन करते हैं–स्पर्श करते हैं, तथापि वे परस्पर एक दूसरे को स्पर्श नहीं करते।

(२) वे सब पदार्थ अत्यंत निकट एक क्षेत्रावगाहरूप से तिष्ठ रहे हैं, तथापि वे सदाकाल अपने स्वरूप से च्युत नहीं होते।

(३) वे सब पदार्थ पररूप परिणमन न करने से अनन्तव्यक्तिता नष्ट नहीं होती, इसलिए वे टंकोत्कीर्ण की भाँति शाश्वत स्थिर रहते हैं।

(४) वे सब पदार्थ समस्त विरुद्धकार्य तथा अविरुद्धकार्य दोनों की हेतुता से वे विश्व का सदा उपकार करते हैं अर्थात् टिकाये रखते हैं।

प्र०२५. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ५२ में जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था क्या बताई है?

उ० इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के आधीन नहीं है। कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती – इस प्रकार विश्व के प्रत्येक द्रव्य की व्यवस्थित व्यवस्था जाने तो सर्व दुःख दूर हो जाये।

प्र०२६. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था को जानने से क्या लाभ रहा ?

उ० १. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर द्रव्यों में या स्वद्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा। तो फिर क्या करना–'बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात् "केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करना"–यही प्रयोजन रहा।

२. विश्व के प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण में हर समय एक क्रमबद्ध पर्याय उत्पन्न होती है यह उत्पाद है, अगले समय की अपेक्षा वही पर्याय व्यय है और अपने निश्चित जन्म क्षण की अपेक्षा वही पर्याय ध्रौव्य है। अतः जिस प्रकार प्रत्येक द्रव्य व गुण स्वतः सिद्ध व निरपेक्ष हैं, उसी प्रकार प्रत्येक पर्याय भी स्वतः सिद्ध है, निरपेक्ष है, तो फिर, कुछ करना ही नही रहा, तटस्थ भाव ही होगा, ज्ञाता दृष्टा का उपयोग स्व सन्मुख ही होगा।

'सांत्वनाष्टक'

शान्तचित्त हो निर्विकल्प हो, आत्मन् निज में तृप्त रहो।
व्यग्र न होओ क्षुब्ध न होओ, चिदानन्द रस सहज पिओ।।टेक।।
स्वयं स्वयं में सर्व वस्तुएँ, सदा परिणमित होती हैं।
इष्ट–अनिष्ट न कोई जग में, व्यर्थ कल्पना झूठी है।।
धीर–वीर हो मोहभाव तज, आतम–अनुभव किया करो।।१।।व्यग्र.।।
देखो प्रभु के ज्ञान माँहिं, सब लोकालोक झलकता है।
फिर भी सहज मग्न अपने में, लेश नहीं आकुलता है।।
सच्चे भक्त बनो प्रभुवर के ही पथ का अनुसरण करो।।२।। व्यग्र.।।
देखो मुनिराजों पर भी, कैसे–कैसे उपसर्ग हुए।
धन्य–धन्य वे साधु साहसी, आराधन से नहीं चिगे।।
उनको निज आदर्श बनाओ, उर में समताभाव धरो।।३।। व्यग्र.।।
व्याकुल होना तो, दुख से बचने का कोई उपाय नहीं।
होगा भारी पाप बंध ही, होवे भव्य अपाय' नहीं।।
ज्ञानाभ्यास करो मन माहीं, दुर्विकल्प दुखरूप तजो।।४।। व्यग्र.।।
अपने में सर्वस्व है अपना, परद्रव्यों में लेश नहीं।
हो विमूढ़ पर में ही क्षण–क्षण, करो व्यर्थ संक्लेश नहीं।।
अरे विकल्प अकिंचित्कर ही, ज्ञाता हो ज्ञाता ही रहो।।५।। व्यग्र.।।
अन्तर्दृष्टि से देखो नित, परमानन्दमय आत्मा।
स्वयंसिद्ध निर्द्वन्द्व निरामय, शुद्ध बुद्ध परमात्मा।।
आकुलता का काम नहीं कुछ, ज्ञानानन्द का वेदन हो।।६।। व्यग्र.।।
सहज तत्त्व की सहज भावना, ही आनन्द प्रदाती है।
जो भावे निश्चय शिव पावे, आवागमन मिटाती है।।
सहजतत्त्व ही सहज ध्येय है, सहजरूप नित ध्यान धरो।।७।। व्यग्र.।।
उत्तम जिन वचनामृत पाया, अनुभव कर स्वीकार करो।
पुरुषार्थी हो स्वाश्रय से इन, विभावों का परिहार करो।।
ब्रह्मभावमय मंगल चर्या, हो निज में ही मग्न रहो।।८।। व्यग्र.।।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ८.०० से १०.३० व सांयः ६.३० से ७.३० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
6. सोमवार व बृहस्पतिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय ०३.३० से ०४.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- २७ मई २०१२ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५३ का पारितोषिक वितरण भी ५ अगस्त २०१२ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

Eishna Jain

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५५

दिनांक 21 अक्टूबर 2012 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

नोटः- लघु जैन सिद्वान्त प्रवेशिका (गुलाबी किताब) के प्रश्न १, ४, ८, ११, १३, १४, १५, १६, १७, २०, २३, २६, २९, ३२, ३५, ३६, ३७, ३८, ४०, ४१, ४२, ४३, ४५, ४६, ४८ से ६०, ६२, ६४,, ६६, ६७, ६८, ६९, ७१, ७६, ७७, से ८८, ९० से ९९, १०१ से १०४, १०६ से १२८, १३०,१६७ से १७६, १८६ से १९२ – ये सब प्रश्न पक्के याद करके नई कापी में लिखिये।

प्र१. केवलज्ञान किसे कहते हैं ?

उ० जो ज्ञान तीन कालवर्ती जीव आदि सर्वपदार्थों को (अनन्त धर्मात्मक सर्व द्रव्य-गुण पर्याय को) प्रत्येक समय में यथास्थित, परिपूर्णरूप से स्पष्ट और एक साथ जानता है। उसको केवलज्ञान कहते है।

'केवलज्ञान में प्रकाशित विश्व की व्यवस्था'

प्र०२. इस विश्व में कितने द्रव्य हैं और प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?

उ० इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक है; और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व-वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजनपर्याय व अनन्त अर्थपर्यायों की सत्ता है।

प्र०३. श्री प्रवचनसार गाथा ९३ के अनुसार जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था क्या है ?

उ० इस विश्व के जीवादि समस्त द्रव्यों में अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक गुण में हर समय एक क्रमबद्ध पर्याय उत्पन्न होती है, पूर्व पर्याय का व्यय होता है और द्रव्य-गुण ध्रौव्य रहते हैं। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र०४. श्री समयसार गाथा ३ में जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था क्या बताई है।

उ० श्री समयसार गाथा ३ में आता है– "लोक में सर्वत्र जो कुछ जितने पदार्थ हैं, वे सब निश्चय से एकत्वनिश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को प्राप्त होते हैं, क्योंकि–

(१) वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को चुम्बन करते हैं-स्पर्श करते हैं, तथापि वे परस्पर एक दूसरे को स्पर्श नहीं करते।

(२) वे सब पदार्थ अत्यंत निकट एक क्षेत्रावगाहरूप से तिष्ठ रहे हैं, तथापि वे सदाकाल अपने स्वरूप से च्युत नहीं होते।

(३) वे सब पदार्थ पररूप परिणमन न करने से अनन्तव्यक्तिता नष्ट नहीं होती, इसलिए वे टंकोत्कीर्ण की भाँति शाश्वत स्थिर रहते हैं।

(४) वे सब पदार्थ समस्त विरुद्धकार्य तथा अविरुद्धकार्य दोनों की हेतुता से वे विश्व का सदा उपकार करते हैं अर्थात् टिकाये रखते हैं।

प्र०५. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ५२ में जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था क्या बताई है?

उ० इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म आकाश एक-एक और काल

द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के आधीन नहीं है। कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती – इस प्रकार विश्व के प्रत्येक द्रव्य की व्यवस्थित व्यवस्था जाने तो सर्व दुःख दूर हो जाये।

प्र०६. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था को जानने से क्या लाभ रहा ?

उ० १. विश्व के प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण मे हर समय एक क्रमबद्ध पर्याय उत्पन्न होती है यह उत्पाद है, अगले समय की अपेक्षा वही पर्याय व्यय है और अपने निश्चित जन्म क्षण की अपेक्षा वही पर्याय ध्रौव्य है। अतः जिस प्रकार प्रत्येक द्रव्य–गुण स्वतः सिद्ध व निरपेक्ष हैं, उसी प्रकार प्रत्येक पर्याय भी स्वतः सिद्ध है, निरपेक्ष है, तो फिर, कुछ करना ही नही रहा, ज्ञाता दृष्टा का उपयोग विश्व से उदासीन होगा।

२. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर द्रव्यों में या स्वद्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा। तो फिर क्या करना–"बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात' "केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करना"–यही प्रयोजन रहा।

प्र०७. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा १९ मे क्या बताई है ?

उ० दृष्टान्त – जैसे दर्पण मे अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि मे ही है, दर्पण मे जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।

सिद्धान्त – इसीप्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है। जिसमे विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य–ज्योति स्वरूप आत्मा ही है।

प्र०८. अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड निज आत्मा का स्वरूप श्री समयसार गाथा २ मे क्या बताया है?

उ० (१) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य युक्त सत्ता सहित है।

(२) मुझ जीव पदार्थ चैतन्यस्वरूपता से नित्य उद्योतरूप निर्मल, स्पष्ट, दर्शन–ज्ञान ज्योतिस्वरूप है।

(३) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्मस्वरूप द्रव्य है, द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।

(४) मुझ जीव पदार्थ का स्व–पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकाररूप एक है।

(५) मुझ जीव पदार्थ–अन्य जीव, पुद्गल, धर्म–अधर्म–आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्यगुण स्वरूप है।

(६) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरूप को नहीं छोड़ता।

(७) मुझ जीव पदार्थ भेदज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव में स्थित रहे तो स्व समय है।

(८) मुझ जीव पदार्थ भेदज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव से छूटकर परस्वभाव में स्थित रहे अर्थात् मोह राग द्वेष रूप होकर रहे तब पर समय है।

प्र०९. तीर्थंकर भगवान ने मोक्ष का मार्ग क्या बताया है ?

उ० अपने आत्मा को पहचानकर सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र को प्रगट करना–यही मोक्ष का मार्ग है, उसी को जैनधर्म कहते है। ऐसा करने से हम भी एक दिन भगवान बनेंगे।

प्र०१०. जैन धर्म का सार क्या है ?

उ० आत्मा के परिणामों मे मोह–राग–द्वेष आदि का उत्पन्न नहीं होना ही अहिंसा है, धर्म है तथा आत्मा के परिणामो मे मोह–राग–द्वेष आदि की उत्पत्ति हो जाना ही हिंसा है। यदि मुझ आत्मा मोह राग द्वेष का अभाव कर दे, तो बना बनाया भगवान ही है।

प०११. मोह–राग–द्वेष भावों की उत्पत्ति का कारण क्या है ?

उ० जीव और अजीव के भेद का ज्ञान न होने के कारण, अपने ज्ञान मेअजीव का जो भी परिणमन दिखता है अज्ञानी उसे भी अपना मानता है – इसी का नाम मोह है – जिसका फल रागादि रूप संसार है।

प्र०१२. आत्मा के परिणामों में से मोह राग द्वेष भावों का अभाव करके भगवान बनने के लिये क्या निर्णय करना पड़ेगा ?

उ० तराजू के एक पलड़े में वीना शरीर सहित सारे विश्व से सर्वथा भिन्न चेतना गुण से अभिन्न अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड मुझ आत्मा तथा तराजू के दूसरे पलड़े में वीना शरीर सहित सारा विश्व।

१. मुझ जीवद्रव्य तो देखने जानने रूप चेतना गुण का धारक है।

२. मुझ जीवद्रव्य इन्द्रिय गम्य न होने योग्य अमूर्तिक है।

३. मुझ जीवद्रव्य संकोचविस्तार शक्तिसहित असंख्यातप्रदेशी एक द्रव्य है।

४. वीना शरीर अर्थात् अनन्त परमाणु चेतनागुण रहित जड़ हैं।

५. वीना शरीर अर्थात् अनन्त परमाणु मूर्तिक है स्पर्श–रस–गंध–वर्ण सहित हैं।

६. वीना शरीर अनंत पुद्गलपरमाणुओं का ढेर है इसलिए एक द्रव्य नहीं, अनेक द्रव्य है।

मुझ जीव, व शरीर का अनादि से सम्बन्ध है–तो भी–

७. मुझ जीव का कोई प्रदेश वीना शरीररूप नहीं होता।

८. वीना शरीर का कोई परमाणु मुझ जीवरूप नहीं होता।

९. अपने–अपने लक्षण को धारण किये भिन्न–भिन्न ही रहते हैं। तथा

१०. मुझ जीव, व वीना शरीर के इस बंधान में कोई किसी को करता तो है नहीं।

११. जब तक बंधान रहे तब तक साथ रहें, बिछुड़े नहीं;

१२. और कारण– कार्यपना अर्थात् निमित्त–नैमित्तिकपना उनके बना रहे इतना ही यहाँ बंधान जानना। इसलिए अमूर्तिक निज आत्मा और मूर्तिक वीना शरीर के बंधान होने में कुछ विरोध है नहीं और कोई सम्बन्ध भी नहीं है।

प्र०१३. आत्मा के परिणामों में से मोह राग द्वेष भावों का अभाव करके भगवान बनने के लिए श्री समयसार ग्रन्थ का क्या रहस्य समझना पड़ेगा ?

उ० १. निज भगवान आत्मा का (१) शास्त्र, शब्द, गुरू का वचन, दिव्यध्वनि के साथ, (२) किसी प्रकार के आकार के साथ, काला–पीला–नीला–लाल–सफेदरूप के साथ, (३) सुगन्ध–दुर्गन्धरूप गन्ध के साथ, (४) खट्टा–मीठा–कड़ुआ–चरपरा–कषायलारूप रस के साथ, (५) हल्का–भारी–ठंडा–गरम–रूखा–चिकना–कड़ा–नर्मरूप स्पर्श के साथ, (६) आठ कर्मों के साथ, (७) धर्म–अधर्म–आकाश–काल के साथ, (८) कर्म के उदयरूप अध्यवसान के साथ सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, ऐसा अनादि से जिनदेव कहते हैं।

२. क्योंकि आत्मा निरन्तर जानता है, इसलिये शास्त्र आदि के ज्ञान रूप परिणमित मुझ ज्ञायक ऐसा जीव ज्ञान वाला है और ज्ञान ज्ञायक से अभिन्न है और शास्त्र आदि से सर्वथा भिन्न है–ऐसा जानना चाहिए।

३. तात्पर्य यह है कि जीव अजीव के भेद का ज्ञान करके अपने ज्ञान में जो शास्त्र–शब्द आदि का परिणमन दिखता है, उन शब्द आदि का लक्ष्य छोड़कर केवल चैतन्य प्रकाश का जो कि पूर्ण शुद्ध आत्मद्रव्य है उसका आश्रय करना चाहिये।

४. तो मैं बोलता हूँ या शब्द से ज्ञान होता है ऐसी अनादि अज्ञान से होने वाली परसमय की प्रवृत्ति दूर हो जायेगी और सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र की प्राप्ति होगी।

प्र०१४. आत्मा के परिणामों में से मोह राग द्वेष भावों का अभाव करके भगवान बनने के लिए कौन से पाँच बोल निरन्तर स्मरण रखने पड़ेंगे ?

उ० १. अनादिकाल से आज तक किसी भी परद्रव्य ने मेरा भला–बुरा किया ही नहीं।

२. अनादिकाल से आज तक मैंने भी किसी भी परद्रव्य का भला बुरा किया ही नहीं।

३. अनादिकाल से आज तक नुकसानी का ही धंधा किया है; यदि नुकसानी का धंधा ना किया होता तो संसारपरिभ्रमण मिट गया होता, सो हुआ नहीं।

४. वह नुकसानी मात्र एक समय की पर्याय में है, द्रव्य–गुण में नहीं है;

५. यदि पर्याय की नुकसानी मिटानी हो और पर्याय में शान्ति लानी हो तो एक मात्र अपने अनन्तगुणों के अभेदपिण्ड की ओर दृष्टिकर।

'ज्ञानाष्टक'

निरपेक्ष हूँ कृतकृत्य मैं, बहु शक्तियों से पूर्ण हूँ। मैं निरालम्बी मात्र ज्ञायक, स्वयं में परिपूर्ण हूँ।
पर से नहीं सम्बन्ध कुछ भी, स्वयं सिद्ध प्रभु सदा। निर्बाध अरु निश्शंक निर्भय, परम आनन्दमय सदा।।१।।

निज लक्ष से होऊँ सुखी, नहि शेष कुछ अभिलाष है। निज में ही होवे लीनता, निज का हुआ विश्वास है।।
अमूर्तिक चिन्मूर्ति मैं, मंगलमयी गुणधाम हूँ। मेरे लिए मुझसा नहीं, सच्चिदानन्द अभिराम हूँ।।२।।

स्वाधीन शाश्वत मुक्त अक्रिय अनन्त वैभववान हूँ। प्रत्यक्ष अन्तर में दिखे, मैं ही स्वयं भगवान हूँ।।
अव्यक्त वाणी से अहो, चिन्तन न पावे पार है। स्वानुभव में सहज भासे, भाव अपरम्पार है।।३।।

श्रद्धा स्वयं सम्यक् हुई, श्रद्धान ज्ञायक हूँ हुआ। ज्ञान में बस ज्ञान भासे, ज्ञान भी स्म्यक् हुआ।।
भग रहे दुर्भाव सम्यक्, आचरण सुखकार है। ज्ञानमय जीवन हुआ, अब खुला मुक्ति द्वार है।।४।।

जो कुछ झलकता ज्ञान मे वह ज्ञेय नहि बस ज्ञान है। नहीं ज्ञेयकृत किंचित् अशुद्धि, सहज स्वच्छ सुज्ञान है।।
परभाव शून्य स्वभाव मेरा, ज्ञानमय ही ध्येय है। ज्ञान मैं ज्ञायक अहो, मम ज्ञानमय ही ज्ञेय है।।५।।

ज्ञान ही साधन, सहज अरु ज्ञान ही मम साध्य है। ज्ञानमय आराधना, शुद्ध ज्ञान ही आराध्य है।।
ज्ञानमय ध्रुव रूप मेरा, ज्ञानमय सब परिणमन। ज्ञानमय ही मुक्ति मम, मैं ज्ञानमय अनादिनिधन।।६।।

ज्ञान ही है सार जग में, शेष सब निस्सार है। ज्ञान से च्युत परिणमन का नाम ही संसार है।।
ज्ञानमय निजभाव को बस भूलना अपराध है। ज्ञान का सम्मान ही, संसिद्धि सम्यक् राध है।।७।।

अज्ञान से ही बंध, सम्यग्ज्ञान से ही मुक्ति है। ज्ञानमय संसाधना, दुख नाशने की युक्ति है।।
जो विराधक ज्ञान का, सो डूबता मंझधार है। ज्ञान का आश्रय करे, सो होय भव से पार है।।८।।

यों जान महिमाज्ञान की, निजज्ञान को स्वीकार कर। ज्ञान के अतिरिक्त सब, परभाव का परिहार कर।
निजभाव से ही ज्ञानमय हो, परम–आनन्दित रहो। होय तन्मय ज्ञान में अब शीघ्र शिव–पदवी वरो।।९।।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.३० से ७.३० बजे
2. शनिवार — स्वाध्याय मन्दिर — प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
4. मंगलवार — स्वाध्याय मन्दिर — सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
5. बुधवार — श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार — सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
6. सोमवार व बृहस्पतिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी — सांय ०३.३० से ०४.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओ में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- ५ अगस्त २०१२ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५४ का पारितोषिक वितरण भी २१ अक्टूबर २०१२ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५६

दिनांक 6 जनवरी 2013 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

नोटः– लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका (गुलाबी किताब) के प्रश्न १, ४, ८, ११, १३, १४, १५, १६, १७, २०, २३, २६, २९, ३२, ३५, ३६, ३७, ३८, ४०, ४१, ४२, ४३, ४५, ४६, ४८ से ६०, ६२, ६४, ६६, ६७, ६८, ६९, ७१, ७६, ७७, से ८८, ९० से ९९, १०१ से १०४, १०६ से १२८, १३०,१३२ से १६६, १६७ से १७६, १८६ से १९२ – ये सब प्रश्न पक्के याद करके नई कापी में लिखिये।

प्र१. इस विश्व में कितने द्रव्य हैं और प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?

उ० इस विश्व मे जीव अनन्त है, पुद्गल अनन्तानन्त है, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है; और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता मे अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजनपर्याय व अनन्त अर्थपर्यायों की सत्ता है।

प्र०२. श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ ५२ में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ० इस विश्व मे जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है/ये सब अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न–भिन्न है, ये सब अनादिनिधन वस्तुएँ अपनी–अपनी मर्यादासहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुएँ कोई किसी के० आधीन नहीं हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुएँ कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होतीं।

प्र०३. श्री प्रवचनसार गाथा ९३ मे विश्व किसे कहते हैं और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ० इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं/प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें है। प्रत्येक गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता हैं। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र०४. श्री समयसार गाथा ३ में विश्व किसे कहते हैं और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ० इस विश्व मे जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है/ये सब पदार्थ अपने द्रव्य मे अन्तर्मग्न रहने वाले अनन्त धर्मो अर्थात् गुण–पर्यायों के चक्र को स्पर्श करते है, तथापि ये परस्पर एक–दूसरे को स्पर्श नहीं करते हैं।

प्र०५. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था को जानने से क्या लाभ रहा ?

उ० केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर द्रव्यों में या स्वद्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा। तो फिर क्या करना–"बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात् "केवल शुद्ध आत्मा को प्रकाशित करना"–यही प्रयोजन रहा।

प्र०६. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्था को जानने का लाभ श्री कार्तिकेय अनुप्रेक्षा गाथा ३२१ से ३२३ तक में क्या बताया है।

उ०

जं जस्स जम्मि देसे जेण विहाणेण जम्मि कालम्मि।
णादं जिणेण णियदं जम्मं वा अहव मरणं वा।।३२१।।
तं तस्स तम्मि देसे तेण विहाणेण तम्मि कालम्मि।
को सक्कदि वारेदुं इंदो वा तह जिणिंदो वा।।३२२।।

अर्थ–१.जिस जीव को जिस देश में, जिस काल में, जिस विधि से जन्म–मरण सुख–दुःख तथा रोग और दारिद्रय इत्यादि जैसे सर्वज्ञ देव ने जाने हैं उसी प्रकार वे सब नियम से होंगे।
२. सर्वज्ञदेव ने जिस प्रकार जाना है उसी प्रकार उस जीव के उसी देश में, उसी काल में और उसी विधि से नियमपूर्वक सब होता है। उसके निवारण करने के लिए इन्द्र या जिनेन्द्र, तीर्थंकरदेव कोई भी समर्थ नहीं है।

एवं जो णिच्छयदो जाणदि दव्वाणि सव्वपज्जाए।
सो सद्दिट्ठी सुद्धो, जो संकदि सो हु कुद्दिट्ठी।।३२३।।

अर्थ–(१)इस प्रकार निश्चय से सर्वद्रव्यों अर्थात् जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक एक और कालद्रव्य लोकप्रमाण असंख्यात को तथा इन द्रव्यों की समस्त पर्यायों को जो सर्वज्ञ के केवलज्ञान के अनुसार जानता है श्रद्धा करता है वह शुद्ध सम्यग्दृष्टि है (२) और जो ऐसी श्रद्धा नहीं करता शंका–सन्देह करता है वह सर्वज्ञ के आगम के प्रतिकूल है – प्रगटरूप में मिथ्यादृष्टि है।

प्र०७. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा ९६ में क्या बताई है ?

उ० दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।

सिद्धान्त – इसीप्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है। जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य–ज्योति स्वरूप आत्मा ही है।

प्र०८. मुझ आत्मा का स्वरूप कैसा है।

उ० चेतन को है उपयोग रूप बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप। पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल इनतै न्यारी है जीव चाल।।

अर्थ १. 'चेतन को है उपयोग रूप' अर्थात् मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ और मेरा कार्य ज्ञाता दृष्टा है।
२. 'बिन्मूरत' अर्थात आँख, नाक, कान औदारिक आदि शरीररूप मेरी मूर्ति नहीं है।
३. 'चिन्मूरत' अर्थात चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।
४. 'अनूप' अर्थात सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।
५. 'पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल इतनें न्यारी है जीव चाल' अर्थात् मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है–इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बंध नही है।

प्र०९. मिथ्यादृष्टि जीव को धर्म की प्राप्ति क्यों नहीं होती ?

उ० एक तरफ अखण्ड चैतन्यस्वरूप निज आत्मा और दूसरी तरफ सारा विश्व इस भेदज्ञान के अभाव में मिथ्यादृष्टि जीव आत्मा के कार्यों और शरीरादि के कार्यों के बीच निमित नैमित्तिक सम्बन्ध में कर्ता–कर्म सम्बन्ध मानता है, फलस्वरूप मोह, राग, द्वेष की वृद्धि करता हुआ संसार में ही परिभ्रमण करता रहता है।

प्र०१०. आत्मा के परिणामों में से मोह राग द्वेष भावों का अभाव करके भगवान बनने के लिए किसका ज्ञान आवश्यक है ?

उ० १ निमित्त कारण २ निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध और ३ व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध का ज्ञान आवश्यक है।

प्र०११. निमित्त कारण किसे कहते हैं ?

उ० जो पदार्थ स्वयं स्वतः कार्यरूप न परिणमे, परंतु कार्यकी उत्पत्तिमें अनुकूल होने का जिसमें आरोप आ सके उस पदार्थ को निमित्त कारण कहते हैं। जैसे – घड़ेकी उत्पत्तिमें कुम्हार हाथ, चाक आदि।

प्र०१२. मैंने रोटी बनाई – इस वाक्य पर निमित कारण की परिभाषा लगाइयें।

उ० जो पदार्थ अर्थात् मुझ आत्मा का ज्ञान, राग, हाथ, चकला–बेलन–तवा आदि स्वयं स्वतः तो कार्यरूप अर्थात् रोटी बनने रूप न परिणमें परन्तु कार्य अर्थात् रोटी की उत्पत्ति में अनुकूल होने का जिस पर आरोप आ सके उस पदार्थ को अर्थात् मुझ आत्मा के ज्ञान,

राग, हाथ, चकला–बेलन–तवा आदि को निमित्त कारण कहते हैं।

प्र०१३. निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध किसे कहते है ?

उ० उपादान स्वयं स्वतः कार्यरूप परिणमित होता है उस समय भावरूप या अभावरूप किस उचित निमित्त कारण का उस कार्य के साथ सम्बन्ध है यह बताने के लिए उस कार्य को नैमित्तिक कहते हैं। इस प्रकार भिन्न–भिन्न पदार्थों के स्वतंत्र सम्बन्ध को निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध कहते हैं।

प्र०१४. मैने रोटी बनाई – इस वाक्य पर निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध की परिभाषा लगाकर बताइये ?

उ० उपादान अर्थात् आटा रूप आहारवर्गणा के अनन्त परमाणु स्वयं स्वतः कार्यरूप अर्थात् रोटी रूप परिणमित होते हैं उस समय भावरूप या अभावरूप किस उचित निमित्तकारण का अर्थात् मुझ आत्मा के ज्ञान, राग व हाथ–चकला–बेलन आदि का उस कार्य अर्थात् रोटी बनने के साथ सम्बन्ध है, यह बताने के लिए उस कार्य को अर्थात् रोटी बनने को नैमित्तिक कहते हैं। इस प्रकार भिन्न–भिन्न पदार्थों के अर्थात् मुझ आत्मा के ज्ञान, राग, हाथ–चकला–बेलन आदि के और रोटी बनने के स्वतंत्र सम्बन्ध को निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध कहते हैं।

इससे क्या सिद्ध हुआ – जिस समय आटे रूप अनन्त परमाणुओं मे रोटी रूप कार्य हुआ, उसी समय मुझ आत्मा के ज्ञान गुण मे ज्ञान कार्य हुआ, चारित्र गुण मे राग परिणाम हुआ, हाथ रूप आहारवर्गणा के परमाणुओं मे हलन चलनरूप परिणाम हुआ, चकला आदि आहारवर्गणा के परमाणुओं मे चकले के हलन चलन रूप परिणाम हुआ। सबका द्रव्य–क्षेत्र–काल भाव अलग–अलग है अतः एक का दूसरे से कोई सम्बन्ध नहीं है परन्तु सब कार्यो का समय एक है – इसे ही निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध कहते है।

प्र०१५. व्याप्य–व्यापक किसे कहते हैं ?

उ० जो सर्व अवस्थाओं में रहे उसे व्यापक कहते हैं। उस व्यापक की एक समय की अवस्था को व्याप्य कहते हैं। अर्थात् द्रव्य–गुण को व्यापक और पर्याय को व्याप्य कहते हैं।

प्र०१६. निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध और व्याप्य व्यापक सम्बन्ध में क्या अन्तर है ?

उ०१. निमित्त नैमित्तिक समबन्ध भिन्न–भिन्न द्रव्यों की एक समय की पर्यायों के बीच होता है।

२. व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध एक द्रव्य का उसकी पर्यायों के साथ होता है।

प्र०१७. निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध और व्याप्य व्यापक सम्बन्ध को कुछ उदाहरण देकर समझाइये ?

उ०१. मिट्टी और घड़े में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। कुम्हार का ज्ञान, राग, हाथ चाक आदि और घड़े मे निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है। कहने मे आया–कुम्हार ने घड़ा बनाया।

२. सोना और आभूषण में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। सुनार, औजार व आभूषण में निमित्त–निमित्तिक सम्बन्ध है। कहने में आया सुनार ने जेवर बनाया।

३. आटा और रोटी में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। बाई, हाथ, तवा, चकला आदि और रोटी में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है। कहने में आया बाई ने रोटी बनायी।

४. आत्मा के चरित्रगुण और क्रोधपरिणाम मे व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। अन्य जीव, गाली के शब्द, कान व क्रोध परिणाम में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है। कहने में आया गाली सुनकर क्रोध आया।

५. भाषावर्गणा और शब्द कार्य में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। आत्मा, शरीर, मुहँ व शब्द कार्य में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है। कहने में आया मैंने मुहँ से शब्द बोले।

प्र०१८. एक कार्य के कितने कर्त्ता कहलाते हैं ?

उ० एक कार्य के चार कर्त्ता कहलाते है

१ निमित्त कारण २.त्रिकाली उपादान कारण ३.अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय क्षणिक उपादान कारण ४.उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण।

प्र०१९. ये चारों कारण क्या बताते हैं ?

उ० १. निमित्त कारण बताता है कि कार्य के समय कार्य के बाहर कौन उपस्थित था।
२. त्रिकाली उपादान कारण बताता है कि किस द्रव्य के अन्दर कार्य हुआ।
३. अनन्तरपूर्व कारण बताता है कि किस पर्याय का अभाव करके कार्य हुआ।
४. उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान बताता है कि कार्य निरपेक्ष है एक समय का सत् है कार्य की एक समय की सत्ता ही कार्य का सच्चा कारण है जिसमें छहों कारक एक साथ वर्तते हैं।

प्र०२०. एक ही समय में आत्मा और शरीरादि परद्रव्यों का कार्य भिन्न-भिन्न किस प्रकार हो रहा है।

उ० एक ही समय में आत्मा और शरीरादि परद्रव्यों का कार्य भिन्न-भिन्न किस प्रकार होते हैं नीचे चार्ट में देखें -

त्रिकाली उपादान कारण	मुख्य आत्मा का ज्ञान गुण	मुख्य आत्मा का चारित्र गुण	हाथ चकला, बेलन आदि आहारवर्गणा के परमाणु	आटे के परमाणु
	सामान्य – व्यापक १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	सामान्य – व्यापक १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	सामान्य – व्यापक १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	सामान्य – व्यापक १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८
अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय क्षणिक उपादन कारण उस समय पर्याय की	व्याप्य ९	व्याप्य ९	व्याप्य ९	व्याप्य ९
योग्यता क्षणिक उपादानकारण (कार्य) उपादेय	१० रोटी का ज्ञान	१० रोटी का राग	१० हाथ, चकला, बेलन आदि की क्रिया	१० रोटी बनी

प्र०२१. श्री समयसार गाथा २ के अनुसार जीव तत्व का स्वरूप क्या है ?

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.३० से ७.३० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
6. सोमवार व बृहस्पतिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय ०३.३० से ०४.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- २१ अक्टूबर २०१२ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५५ का पारितोषिक वितरण भी ६ जनवरी २०१३ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५७

दिनांक 24 मार्च 2013 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

——प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न——

नोटः– 1. लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका (गुलाबी किताब) के प्रश्न 1, 4, 8, 11, 13, 14, 15, 16, 17, 20, 23, 26, 29, 32, 35, 36, 37, 38, 40, 41, 42, 43, 45, 46, 48 से 60, 62, 64,, 66, 67, 68, 69, 71, 76, 77, से 88, 90 से 99, 101 से 104, 106 से 128, 130,132 से 166, 167 से 176, 186 से 192 – ये सब प्रश्न पक्के याद करके नई कापी में लिखिये।

2. वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता 56 के प्रश्न 1 से 8 तक याद करके कापी में लिखिये।

3. वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता 56 व 57 की प्रतियोगिता एक साथ दिनांक 24 मार्च 2013 को ही होगी।

प्र1. आत्मा के परिणामों में से मोह राग द्वेष भावों का अभाव करके भगवान बनने के लिये किसका ज्ञान आवश्यक है ?

उ0 श्री प्रवचनसार गाथा 177 के अनुसार जीव बन्ध, पुद्गल बन्ध और उभयबन्ध का ज्ञान आवश्यक है।

प्र02. बन्ध किसे कहते है ?

उ0 जिस सम्बन्ध विशेष से अनेक वस्तुओं में एकपने का ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशेष को बन्ध कहते हैं।

प्र03. बन्ध की परिभाषा में चार बातें कौन–कौन सी जाननी चाहिए, जिनके जानने–मानने से मिथ्यात्वादि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति, वृद्धि और पूर्णता की प्राप्ति हो ?

उ0 1. सम्बन्ध विशेष होना चाहिए।

2. अनेक वस्तुयें होनी चाहिये।

3. बाहरी रूप से देखने में, कथन में एक आना चाहिये।

4. ज्ञान में जैसा–जैसा वस्तु स्वरूप है वैसा–वैसा ही आना चाहिये।

प्र04. बन्ध कितने प्रकार के होते हैं ?

उ0 बन्ध तीन प्रकार के हैं।

1. जीव बन्ध = जिस सम्बन्ध विशेष से आत्मा और रागदि मे एकपने का ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशेष को जीव बन्ध कहते हैं।

2. पुद्गल बन्ध = जिस सम्बन्ध विशेष से अनेक परमाणुओं में एकपने का ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशेष को पुद्गल बन्ध कहते हैं।

3. उभय बन्ध = जिस सम्बन्ध विशेष से आत्मा और शरीर में एकपनेका ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशेष को उभय बन्ध कहते हैं।

प्र05. मै क्रोधी हूँ – यह कौन सा बन्ध है और उसमें बन्ध की चार बातें लगाकर समझाइयें ?

उ0 मैं क्रोधी हूँ – यह जीव बन्ध है।

1. मैं क्रोधी हूँ – यह सम्बन्ध विशेष है।
2. एक मुझ आत्मा और क्रोध का भाव यह अनेक वस्तुयें हुई।
3. बाहरी रूप से देखने में तथा बोलने मे आता है कि मैं क्रोधी हूँ।

ज्ञान में कैसा आना चाहिये ?

4. मुझ आत्मा अबन्धस्भावी है और क्रोध का भाव बन्ध स्वभावी है – ऐसा जानकर अपनी ज्ञान की पर्याय को अबन्धस्भावी निजआत्मा की ओर झुका दे तो बंध भाव अलग पड़ जायेगा।

प्र06. जीव बन्ध को जानने–मानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 (अ) जैसे–जैसे अबन्धस्वभावी निजआत्मा में एकाग्र होता चला जावेगा, वैसे–वैसे बन्धस्वभावी से भिन्न होता चला जावेगा।

(ब) जैसे–जैसे बन्धस्वभावी से भिन्न होता चला जायेगा वैसे–वैसे अबंधस्वभावी निजआत्मा में एकाग्र होता हुआ क्रम से मोक्ष लक्ष्मी का नाथ बन जावेगा।

(आ) जीव बन्ध के जानने–मानने से समयसारादि सम्पूर्ण अध्यात्म ग्रन्थों का मर्म उसके हाथ में आ जावेगा।

पुद्गल बंध का स्पष्टीकरण

प्र07. यह मेरा सोने का हार है – यह कौन सा बन्ध है और उसमें बन्ध की चार बातें समझाइयें ?

उ0 सोने का हार – यह पुद्गल बन्ध है।

1. सोने का हार – यह सम्बन्ध विशेष है।
2. सोने के हार में अनन्त पुद्गलपरमाणु – यह अनेक वस्तुयें हुई।
3. बाहरी रूप से देखने में तथा कथन में आता है यह मेरा सोने का हार है।

ज्ञान में कैसा आना चाहिये ?

4. (अ) सोने का हार औदारिक शरीर है और इसका कर्त्ता आहारवर्गणा ही है।

(आ) सोने के हार में अनन्त पुद्गलपरमाणु हैं।

(इ) प्रत्येक परमाणु में अस्तित्व वस्तुत्वादि अनन्त सामान्यगुण हैं और स्पर्श–रस–गंध–वर्ण आदि अनन्त विशेष गुण हैं। प्रत्येक परमाणु एक–एक व्यंजन पर्याय और अनन्त अर्थपर्यायों सहित विराज रहा है।

(ई) जब सोने के हार में एक परमाणु का दूसरे परमाणु से किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है तो मुझ आत्मा से सोने के हार का सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? कभी भी नहीं हो सकता है – ऐसा श्रद्धान–ज्ञान वर्ते तो उपचरित असद्भूत व्यवहारनय से ऐसा कहा जा सकता है कि यह मेरा सोने का हार है, परन्तु ऐसा है नहीं।

प्र08. पुद्गल बन्ध को जानने–मानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 (अ) विश्व में जितने समानजातीय स्कन्ध द्रष्टिगोचर होते हैं उन सब में पुद्गल बन्ध के अनुसार ज्ञान–श्रद्धान वर्तेगा तो पुद्गल स्कन्धों में जो अनादिकाल से द्रव्यरूप बुद्धि वर्त रही है उसका अभाव होकर, क्रम से मोक्ष लक्ष्मी का नाथ बन जावेगा।

(आ) अज्ञानी अनादिकाल से पुद्गल बन्धों में अपनेपने की मान्यता से पागल हो रहा था – उसका अभाव हो जावेगा।

उभयबंध का स्पष्टीकरण

प्र09. मैं वीना हूँ–यह कौन सा बन्ध है और उसमें बन्ध की चार बातें लगाकर समझाइयें ?

उ0 मैं वीना हूँ – यह उभय बन्ध है।

1. मैं वीना हूँ – यह सम्बन्ध विशेष है।
2. एक मुझ आत्मा और वीना में अनंत पुद्गल परमाणु यह अनेक वस्तुयें हुई।
3. मैं वीना हूँ – ऐसा बाहरी रूप से देखने में तथा बोलने में आता है।

ज्ञान में कैसा आना चाहिये ?

4. (अ) मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व हूँ। वीना सर्वथा अजीवतत्त्व है।

(आ) अनादिकाल से एक–एक समय करके वीना अजीवतत्त्व में अपनेपने की मान्यता से अनंतबार निगोद गया और अपरिमित दुःख सहन किये।

(इ) वर्तमान में सच्चे देव–गुरू–धर्म का संयोग मिला, उन्होंने बताया तू तो ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व है। वीना

सर्वथा अजीवतत्त्व हैं। वीना अजीवतत्त्व से तेरा किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

(ई) ऐसा सुनते जानते मानते ही आस्रव बन्ध भागने शुरू हो गये और संवर – निर्जरा की प्राप्ति कर, क्रम से मोक्षलक्ष्मी का नाथ बन जायेगा।

प्र010. उभय बन्ध को जानने मानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 (अ) विश्व में निगोद से लेकर 14 वें गुणस्थान तक के असमानजातीय उभयबंध का सच्चा ज्ञान हो जाता है।

(आ) उभय बंध को समझने से प्रयोजनभूत साततत्वों का रहस्य समझ में आ जाता है।

प्र011. असमानजातीय उभयबंध के विषय में श्रीमोक्षमार्ग प्रकाशक तथा श्रीप्रवचनसार में क्या बताया है ?

उ0 1. श्रीमोक्षमार्ग प्रकाशक के सातवें अधिकार में लिखा है – "असमानजातीय उभयबंध का ज्ञान हो जावे तो मिथ्यादृष्टिपना न रहे।"

2. श्रीप्रवचनसार गाथा 154 की टीका व भावार्थ में आया है कि – "मनुष्य, देव इत्यादि अनेक द्रव्यात्मक असमानजातीय द्रव्य पर्यायों में भी जीव का स्वरूप अस्तित्व और प्रत्येक परमाणु का स्वरूपअस्तित्व सर्वथा भिन्न–भिन्न हैं। स्व–पर का भेदविज्ञान करने के लिए जीव के स्वरूपअस्तित्व को पद–पद पर लक्ष्य में लेना योग्य है।"

प्र012. 1. यह मेरी किताब है। 2. मैं बहू हूँ।
3. मैंने हिंसा का भाव किया। 4. यह मेरी हीरो की अंगूठी है।
5. मैंने ब्रह्मचर्य का भाव किया। 6. यह मेरा महल है।
7. यह मेरी कार है। 8. मैं डाक्टर हूँ।
9. मैं राष्ट्रपति हूँ। 10. यह मेरा पति है।

उक्त वाक्यों पर बन्ध की चार बातें लगाकर समझाइयें।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.३० से ७.३० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
6. सोमवार व बृहस्पतिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय ०३.३० से ०४.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- २१ अक्टूबर २०१२ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५५ का पारितोषिक वितरण भी २४ मार्च २०१३ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५८

दिनांक 26 मई 2013 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

—प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न—

नोटः– लघु जैन सिद्वान्त प्रवेशिका (गुलाबी किताब) के प्रश्न और वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता 56 के प्रश्न 1 से 8 तक याद करके कापी में लिखिये।

प्र1. आत्मा के परिणामों में से मोह राग द्वेष भावों का अभाव करके भगवान बनने के लिये किसका ज्ञान आवश्यक है ?

उ0 जीव द्रव्य का स्वरूप जानना आवश्यक है।

प्र2. जीवद्रव्य किसको कहते हैं ?

उ0 जिसमें चेतना अर्थात ज्ञान–दर्शन रूप शक्ति है उसको जीवद्रव्य कहते हैं।

प्र3. जीव द्रव्य में कौन–कौन से विशेष गुण हैं ?

उ0 जीव द्रव्य में चैतना (दर्शन ज्ञान) सम्यक्त्व, चारित्र, सुख, क्रियावती शक्ति इत्यादि।

प्र4. चेतना किसको कहते हैं ?

उ0 जिसमें पदार्थों का प्रतिभास होता है उसको चेतना कहते हैं।

प्र5. चेतना के कितने भेद हैं ?

उ0 दो भेद हैं – दर्शन चेतना और ज्ञान चेतना।

प्र6. दर्शन चेतना किसको कहते हैं ?

उ0 जिसमें पदार्थों के भेद रहित सामान्य प्रतिभास हो उसको दर्शन चेतना कहते हैं।

प्र7. ज्ञान चेतना किसको कहते हैं ?

उ0 जिसमें पदार्थों का विशेष प्रतिभास होता है उसको ज्ञान चेतना कहते हैं।

प्र8. दर्शन चेतना के कितने भेद हैं ?

उ0 चार भेद हैं–चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन।

प्र9. चक्षुदर्शन किसको कहते हैं ?

उ0 चक्षु इन्द्रिय के द्वारा होने वाले मतिज्ञान से पहले के सामान्य प्रतिभास को चक्षुदर्शन कहते हैं।

प्र10. अचक्षुदर्शन किसको कहते हैं ?

उ0 चक्षुइन्द्रिय को छोड़कर शेष चार इन्द्रियों और मन के द्वारा होने वाले मतिज्ञान से पहले के सामान्य प्रतिभास को अचक्षुदर्शन कहते हैं।

प्र11. अवधिदर्शन किसको कहते हैं ?

उ0 अवधिज्ञान के पहले होने वाले सामान्य प्रतिभास को अवधिदर्शन कहते हैं।

प्र12. केवलदर्शन किसको कहते हैं ?

उ0 केवलज्ञान के पहले होने वाले सामान्य प्रतिभास को केवलदर्शन कहते हैं।

प्र13. दर्शन कब उत्पन्न होता है ?

उ0 छद्मस्थ जीवों के ज्ञान के पहले और केवलज्ञानियों के ज्ञान के साथ ही साथ दर्शन होता है।

प्र14. ज्ञान चेतना के कितने भेद हैं ?

उ0 पांच भेद हैं–मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनः–पर्ययज्ञान और केवलज्ञान।

प्र15. मतिज्ञान किसको कहते हैं ?

उ0 (1) पराश्रय की बुद्धि छोड़कर दर्शन उपयोग पूर्वक स्वसन्मुखता से प्रकट होने वाले निज आत्मा के ज्ञान को मतिज्ञान कहते हैं। (2) इन्द्रियाँ और मन जिसमें निमित्त मात्र हैं, ऐसे ज्ञान को मतिज्ञान कहते हैं।

प्र16. श्रुतज्ञान किसको कहते हैं ?

उ0 (1) मतिज्ञान से जाने हुए पदार्थों के सम्बन्ध से अन्य पदार्थ को जानने वाले ज्ञान को श्रुतज्ञान कहते हैं। (2) आत्मा की शुद्ध अनुभूति रूप श्रुतज्ञान को भावश्रुतज्ञान कहते हैं।

प्र17. अवधिज्ञान किसको कहते हैं ?

उ0 द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा सहित रूपी पदार्थ के स्पष्ट ज्ञान को अवधिज्ञान कहते हैं।

प्र18. मनःपर्ययज्ञान किसको कहते हैं ?

उ0 द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा सहित दूसरे के मन में स्थित रूपी विषय के स्पष्ट ज्ञान होने को मनःपर्ययज्ञान कहते हैं।

प्र19. केवलज्ञान किसे कहते हैं ?

उ0 जो तीन कालवर्ती सर्वपदार्थों को अर्थात् अनन्त धर्मात्मक सर्व द्रव्य–गुण पर्याय को प्रत्येक समय में यथास्थित, परिपूर्णरूप से स्पष्ट और एक साथ जानता है उसको केवलज्ञान कहते हैं।

प्र20. श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान और केवलज्ञान से क्या सिद्ध होता है ?

उ0 प्रत्येक द्रव्य में क्रमबद्ध क्रमनियमित पर्याय ही होती है, आगे–पीछे नहीं होती।

प्र21. सच्चा पुरूषार्थ क्या है ?

उ0 सत् अर्थात् स्वतन्त्र अस्तिपना द्रव्य का लक्षण होने से द्रव्य सत्, गुण सत् और प्रत्येक समय की पर्याय भी स्वतन्त्र सत् है और इसलिये कोई किसी का कुछ नहीं कर सकता, ऐसा निर्णय करना सो सच्चा पुरूषार्थ है।

प्र22. अनेकान्त किसको कहते हैं ?

उ0 प्रत्येक वस्तु में वस्तुपने की निपजाने वाली अस्तित्व–नास्तित्व आदि परस्पर विरूद्ध दो शक्तियों का एक साथ प्रकाशित होना अनेकान्त है। आत्मा सदा स्वरूप से है और पर रूप से नहीं है –ऐसी जो दृष्टि वही सच्ची अनेकान्त दृष्टि है।

प्र23. एक समय में एक जीव के कितने ज्ञान हो सकते हैं ?

उ0 एक समय में एक जीव के कम से कम एक और अधिक से अधिक चार ज्ञान होते हैं। खुलासा इस प्रकार है :– (1) केवलज्ञान एक ही होता है। (2) दो–मतिज्ञान और श्रुतज्ञान होते हैं। (3) तीन–मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और

अवधिज्ञान अथवा मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और मनःपर्ययज्ञान होते हैं। (4) चार–मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनःपर्यय ज्ञान होते हैं।

प्र24. सम्यक्त्व (श्रद्धा) गुण किसको कहते हैं ?

उ0 जिस गुण की निर्मल दशा प्रगट होने से शुद्धात्मा की यथार्थ प्रतीति हो। (1) सच्चे देव–गुरू–धर्म में दृढ़ प्रतीति, (2) जीवादि सात तत्वों की सच्ची प्रतीति, (3) स्व–पर का श्रद्धान, (4) आत्म श्रद्धान– इन लक्षणों के अविनाभाव सहित जो श्रद्धान होता है वह निश्चय सम्यग्दर्शन है। उस पर्याय का धारक श्रद्धा गुण है। सम्यग्दर्शन और मिथ्यादर्शन उसकी पर्यायें हैं।

प्र25. जैन किसे कहते हैं ?

उ0 निज शुद्धात्म द्रव्य के आश्रय से मिथ्यात्व राग द्वेषादि को जीतने वाली निर्मल परिणति जिसने प्रगट की है वही जैन है, मिथ्यात्व के नाश पूर्वक जितने अंश में जो रागादिक का नाश करता है उतने अंश में वह जैन है। वास्तव में जैनत्व का प्रारम्भ निश्चय सम्यगदर्शन से ही होता है, जो चतुर्थ गुणस्थान में प्रगट होता है।

प्र26. चारित्र किसे कहते हैं ?

उ0 (1) निश्चय सम्यग्दर्शन सहित स्वरूप में रमण करना। (2) अपने स्वभाव में अकषाय प्रवृत्ति करना। (3) मिथ्यात्व और अस्थिरता रहित, अत्यन्त निर्विकार ऐसा जीव का परिणाम है। ऐसी पर्यायों को धारण करने वाले गुण को चारित्र गुण कहते हैं।

प्र27. कषाय किसे कहते हैं ?

उ0 मिथ्यात्व तथा क्रोध–मान–माया–लोभ रूप आत्मा की विभाव परिणति को कषाय कहते हैं।

प्र28. चारित्र के कितने भेद हैं ?

उ0 चार भेद है : स्वरूपाचरणचारित्र, देशचारित्र, सकलचारित्र, और यथाख्यातचारित्र।

प्र29. स्वरूपाचरणचारित्र किसे कहते हैं ?

उ0 निश्चय सम्यग्दर्शन होने पर आत्मानुभव पूर्वक आत्मस्वरूप में जो स्थिरता होती है उसको स्वरूपाचरणचारित्र कहते हैं।

प्र30. देशचारित्र किसे कहते हैं ?

उ0 निश्चय सम्यग्दर्शन सहित चारित्र गुण की आंशिक शुद्धि होने से अनन्तानुबंधी–अप्रत्याख्यान कषायों के अभाव पूर्वक उत्पन्न आत्मा की शुद्धि विशेष को देशचारित्र कहते हैं। इस श्रावक दशा में व्रतादि शुभभाव होते हैं।

प्र31. सकलचारित्र किसे कहते हैं ?

उ0 निश्चय सम्यग्दर्शन सहित चारित्र गुण की शुद्धि की वृद्धि होने से अनन्तानुबंधी आदि तीन जाति की कषायों के अभाव पूर्वक उत्पन्न भावलिंगी मुनिपद के योग्य आत्मा की शुद्धि विशेष को सकलचारित्र कहते हैं और मुनिपद में 28 मूलगुण आदि के शुभभाव होते हैं उसे व्यवहार सकलचारित्र कहते हैं।

प्र32. निश्चयचारित्र और व्यवहारचारित्र के विषय में क्या याद रखना चाहिए।

उ0 निश्चयचारित्र आत्माश्रित होने से मोक्षमार्ग है, धर्म है और व्यवहारचारित्र पराश्रित होने से बन्धभाव हैं, मोक्षमार्ग नहीं हैं।

प्र33. सुख किसे कहते हैं ?

उ0 निराकुल आनन्दस्वरूप आत्मा के परिणाम विशेष को सुख कहते है।

प्र34. वीर्य किसे कहते हैं ?

उ0 आत्मा की शक्ति–सामर्थ्य को (बल को) वीर्य कहते हैं।

प्र35. क्रियावतीशक्ति क्या है ?

उ0 (1) जीव–पुद्गल में अपनी–अपनी क्रियावती शक्ति नाम का गुण नित्य है और अपनी–अपनी योग्यतानुसार कभी गति–क्षेत्रान्तर रूप पर्याय होती है। कभी स्थिर रहने रूप पर्याय होती है। (2) जीव या पुद्गल एक दूसरे को गमन या स्थिर नहीं करा सकते हैं। (3) जीव–पुद्गल दोनों द्रव्य अपनी क्रियावती शक्ति की उस समय की योग्यतानुसार स्वतः गमन करते हैं या स्थिर होते हैं।

कर्त्तव्याष्टक

आतम हित ही करने योग्य, वीतराग प्रभु भजने योग्य।
सिद्ध स्वरूप ही ध्याने योग्य, गुरू निर्ग्रन्थ ही वंदन योग्य।।1।।
साधर्मी ही संगति योग्य, ज्ञानी साधक सेवा योग्य।
जिनवाणी ही पढ़ने योग्य, सुनने योग्य समझने योग्य।।2।।
तत्त्व प्रयोजन निर्णय योग्य, भेद–ज्ञान ही चिन्तन योग्य।
सब व्यवहार हैं जानन योग्य, परमारथ प्रगटावन योग्य।।3।।
वस्तुस्वरूप विचारन योग्य, निज वैभव अवलोकन योग्य।
चित्स्वरूप ही अनुभव योग्य, निजानंद ही वेदन योग्य।।4।।
अध्यातम ही समझने योग्य, शुद्धातम ही रमने योग्य।
धर्म अहिंसा धारण योग्य, दुर्विकल्प सब तजने योग्य।।5।।
श्री जिनधर्म प्रभावन योग्य, ध्रुव आतम ही भावन योग्य।
सकल परीषह सहने योग्य, सर्व कर्म मल दहने योग्य।।6।।
भव का भ्रमण मिटाने योग्य, क्षपक श्रेणी चढ़ जाने योग्य।
तजो अयोग्य करो अब योग्य, मुक्तिदशा प्रगटाने योग्य।।7।।
आया अवसर सबविधि योग्य, निमित्त अनेक मिले हैं योग्य।
हो पुरूषार्थ तुम्हारा योग्य, सिद्धि सहज ही होवे योग्य।।8।।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.३० से ७.३० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
6. सोमवार व बृहस्पतिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय ०३.३० से ०४.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- २४ मार्च २०१३ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५५ का पारितोषिक वितरण भी २६ मई २०१३ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५६

दिनांक 14 जुलाई 2013 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र1. देव किसे कहते हैं ? कुदेव किसे कहते हैं ?

उ0 पूर्ण वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी – जो इन तीन गुणों सहित होते है वे सच्चे देव हैं। जो राग–द्वेषरूपी मैल से मलिन हैं और स्त्री, गदा आदि सहित चिह्नों से पहिचाने जाते हैं उन्हें कुदेव कहते हैं।

प्र2. शास्त्र किसे कहते हैं ? कुशास्त्र किसे कहते हैं ?

उ0 पूर्वापर विरोध रहित, वीतरागता की पोषक, सच्चे देव की वाणी को शास्त्र कहते हैं। एकान्तरूप कथन से दूषित, विषय कषायादि को पुष्ट करने वाले, कुगुरुओं द्वारा रचित सर्वप्रकार के शास्त्रों को कुशास्त्र कहते हैं।

प्र3. गुरु किसे कहते हैं ? कुगुरु किसे कहते हैं ?

उ0 जो रत्नत्रय के धारक, विषयों की इच्छा से रहित, अंतरंग–बहिरंग परिग्रह से रहित व आत्मध्यानी हों– वे गुरु हैं। जो मिथ्यात्वादि अंतरंग तथा वस्त्रादि बहिरंग परिग्रह सहित हैं, महात्मापने का भाव ग्रहण करके मिथ्यावेषों को धारण करते हैं, उन्हें कुगुरु कहते हैं।

प्र4. जैन धर्म का रहस्य जानकर स्वयं भी भगवान बनने के लिये क्या जानना आवश्यक है ?

उ0 सर्वज्ञदेव अर्थात् भगवान महावीर द्वारा कथित विश्व, द्रव्य–गुण–पर्याय, छह द्रव्य व सात तत्वों का ज्ञान आवश्यक है।

प्र5. विश्व किसे कहते हैं ?

उ0 जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं।

प्र6. जीवादि प्रत्येक द्रव्य कितने–कितने हैं ?

उ0 जीव द्रव्य अनन्त है, पुद्गल द्रव्य अनंतानंत हैं, धर्म–अधर्म आकाश एक–एक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं।

प्र7. द्रव्य किसे कहते हैं ?

उ0 गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं। गुण पर्यायवद् द्रव्यम्।

प्र8. गुण किसे कहते हैं ? गुणों के कितने भेद हैं।

उ0 जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और उसकी सम्पूण अवस्थाओं में रहते हैं उन्हें गुण कहते है। दो भेद हैं – 1. सामान्य गुण 2. विशेष गुण।

प्र9. जीवादि प्रत्येक द्रव्य में कौन–कौन से विशेष गुण हैं ?

उ0 जीवद्रव्य – ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य,श्रद्धा, चारित्र, क्रियावती शक्ति आदि।
पुद्गलद्रव्य – स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, क्रियावती शक्ति आदि।
धर्मद्रव्य – गतिहेतुत्व आदि। अधर्म द्रव्य – स्थितिहेतुत्व आदि।
आकाश द्रव्य – अवगाहनहेतुत्व आदि। कालद्रव्य – परिणमनहेतुत्व आदि।

प्र10. सामान्य गुण कितने हैं ? और कौन–कौन से हैं ?

उ0 सामान्य गुण अनंत हैं, उनमें मुख्य छह हैं – 1. अस्तित्व, 2. वस्तुत्व, 3. द्रव्यत्व, 4. प्रमेयत्व, 5. अगुरूलघुत्व, 6. प्रदेशत्व। प्रत्येक गुण की पूर्व तालिका से परिभाषा याद करिये।

प्र11. अस्तित्व–वस्तुत्व–द्रव्यत्व गुणों का क्या रहस्य है ?

उ0 अस्तित्व गुण के कारण प्रत्येक द्रव्य अनादिअनन्त कायम रहता हुआ, वस्तुत्व गुण के कारण अपनी प्रयोजनभूत क्रिया करता हुआ, द्रव्यत्व गुण के कारण वह कार्य निरन्तर बदल रहा है अर्थात् प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है, कोई किसी के आधीन नहीं है।

प्र12. पर्याय किसे कहते हैं ?

उ0 गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं।

प्र13. विश्व–द्रव्य–गुण–पर्याय का रहस्य क्या है ?

उ0 1. कायम रहते हुए स्वयं ही बदलना इस विश्व के प्रत्येक द्रव्य का स्वभाव है अर्थात् PERMANANCY WITH A CHANGE

2. जिनेन्द्र कथित विश्व व्यवस्था– इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा। (प्रवचनसार गाथा 93)

प्र14. प्रयोजनभूत तत्व कितने हैं और कौन–कौन से हैं ?

उ0 प्रयोजनभूत तत्व सात हैं – जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर निर्जरा और मोक्ष।

प्र15. जीव तत्व किसे कहते हैं ? जीव तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत तत्व है ?

उ0 जिसमें मेरा ज्ञान–दर्शन पाया जाये उसे जीव तत्व कहते हैं। जीव तत्व एक मात्र आश्रय करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र16. अजीव तत्व किसे कहते हैं ? अजीव तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत तत्व है?

उ0 जिनमें मेरा ज्ञान–दर्शन नहीं है वे अजीव तत्व हैं और अजीव तत्व जानने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र17. आस्रव तत्व किसे कहते हैं ? आस्रव तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है ?
उ० शुभाशुभ विकारी भावों का उत्पन्न होना आस्रव तत्व है और आस्रव तत्व छोड़ने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र18. बंध किसे कहते हैं ? बंध तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है ?
उ० शुभाशुभ विकारी भावों में अटकना बंध तत्व है और बन्ध तत्व छोड़ने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र19. संवर तत्व किसे कहते हैं ? संवर तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है ?
उ० शुद्धि का प्रकट होना संवर तत्व है और संवर तत्व एक देश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र020. निर्जरा तत्व किसे कहते हैं ? निर्जरा तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है ?
उ० शुद्धि में वृद्धि होना निर्जरा तत्व है और निर्जरा तत्व एकदेश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र21. मोक्ष तत्व किसे कहते हैं ? मोक्ष तत्व किस प्रकार प्रयोजनभूत है ?
उ० सम्पूर्ण शुद्धि का प्रकट होना मोक्ष तत्व है और मोक्ष तत्व पूर्ण प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्व है।

प्र22. धर्म किसे कहते हैं ?
उ० निज आत्मा की अहिंसा को धर्म कहते है।

प्र23. सात तत्वों की यथार्थ श्रद्धा में देव–गुरु–धर्म की श्रद्धा कैसे आ जाती है।
उ० (1) मोक्ष तत्त्व सर्वज्ञ–वीतराग स्वभाव है, उसके धारक श्री अरहन्त–सिद्ध हैं और वे ही निर्दोष देव हैं, इसलिये जिसको मोक्ष तत्त्व की श्रद्धा है उसको सच्चे देव की श्रद्धा है। (2) संवर–निर्जरा तत्त्व निश्चय रत्नत्रय स्वभाव सहित है। उसके धारक भावलिंगी आचार्य उपाध्याय और साधु हैं। वे ही निर्ग्रन्थ दिगम्बर गुरू हैं, इसलिए जिसको संवर–निर्जरा की सच्ची श्रद्धा है उसको सच्चे गुरू की श्रद्धा है। (3) जीवतत्त्व का स्वभाव रागादि भाव रहित शुद्ध चैतन्य प्राणमय है, उसके स्वभाव सहित अहिंसा धर्म है, इसलिये जिसको शुद्ध जीव की श्रद्धा है उसको (निज आत्मा) अहिंसा रूप धर्म की श्रद्धा है।

प्र24. श्री समयसार की छठी गाथा में मुझ आत्मा का स्वरूप क्या बताया है ?
उ० (1) मुझ ज्ञायकभाव स्वतः सिद्ध अनादिअनन्त है। (2) मुझ ज्ञायकभाव नित्य प्रकाशमान है। (3) मुझ ज्ञायकभाव स्पष्ट प्रतिभासरूप है। (4) मुझ ज्ञायकभाव संसार अवस्था में शुभाशुभभावों रूप परिणमता हुआ होने पर भी, स्वभाव दृष्टि से देखने में आवे, तो शुभाशुभभावों रूप परिणमता ही नहीं है। (5) मुझ ज्ञायकभाव समस्त परदव्यों के भावों से भिन्नरूप से उपासने में आने पर शुद्ध कहलाता है। (वीना आदि हम पांच हैं ऐसी मान्यता हटते ही ज्ञायकभाव अनुभव में आ जाता है।) (6) अन्तरंग में ज्ञेयाकार रूप से परिणमता होने पर भी ज्ञेय पदार्थों के साथ मुझ ज्ञायकभाव का वास्तव में कोई सम्बन्ध नहीं है।

मोक्षार्थी को सदा स्मरण रखने योग्य परमागम के अमूल्य ११ सिद्धान्त

1. एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को स्पर्श नहीं करता है। (श्रीसमयसार, गाथा 3)
2. प्रत्येक द्रव्य की प्रत्येक पर्याय क्रमबद्ध ही होती है। (श्रीसमयसार, गाथा 308 से 311 तक)
3. उत्पाद–उत्पाद से है व्यय या ध्रुव से नहीं है। (श्रीप्रवचनसार, गाथा 101)
4. प्रत्येक पर्याय अपने जन्मक्षण में ही होती है। (श्रीप्रवचनसार, गाथा 102)
5. उत्पाद अपने षटकारक के परिणमन से ही होता है। (श्रीपंचास्तिकाय संग्रह, गाथा 62)
6. पर्याय और ध्रुव के प्रदेश भिन्न–भिन्न हैं। (श्रीसमयसार, गाथा 181 से 183 तक)
7. भावशक्ति के कारण पर्याय होती ही है करनी पड़ती नहीं। (श्रीसमयसार, 33 वीं शक्ति)
8. निज भूतार्थस्वभाव के आश्रय से ही सम्यग्दर्शन होता है। (श्रीसमयसार, गाथा 11)
9. चारों अनुयोगों का तात्पर्य मात्र वीतरागता है। (श्रीपंचास्तिकाय संग्रह, गाथा 172)
10. स्वद्रव्य में भी द्रव्य, गुण, पर्याय का भेद विचारना वह अन्यवशपना है। (श्रीनियमसार, गाथा 145)
11. ध्रुव का आलम्बन है वेदन नहीं है और पर्याय का वेदन है परन्तु आलम्बन नहीं है।

(बहिनश्री के वचनामृत)

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ८.०० से १०.३० व सांयः ६.३० से ७.३० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
6. सोमवार व बृहस्पतिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय ०३.३० से ०४.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं मे उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- २६ मई २०१३ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-५८ का पारितोषिक वितरण भी १४ जुलाई २०१३ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६०

दिनांक 29 सितम्बर 2013 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

——प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न——

प्र1. विश्व-द्रव्य-गुण-पर्याय का रहस्य क्या है ?

उ0 1. कायम रहते हुए स्वयं ही बदलना इस विश्व के प्रत्येक द्रव्य का स्वभाव है अर्थात् PERMANANCY WITH A CHANGE

2. जिनेन्द्र कथित विश्व व्यवस्था- इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और काल लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा। (प्रवचनसार गाथा 93)

प्र2. जीवादिक द्रव्य कितने-कितने हैं और कहाँ-कहाँ पर रहते हैं ?

उ0 (1) जीवद्रव्य अनन्तानन्त हैं और सम्पूर्ण लोकाकाश में भरे हुए हैं। (2) जीवद्रव्य से अनन्तगुणें अधिक पुद्गल द्रव्य हैं और वे सम्पूर्ण लोक में भरे हुए हैं। (3) धर्म और अधर्म एक-एक हैं और सम्पूर्ण लोक में व्याप्त हैं। (4) आकाश द्रव्य एक है और लोक तथा अलोक में व्याप्त है। (5) काल द्रव्य असंख्यात हैं और वे समस्त लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर व्याप्त हैं।

प्र3. किस-किस द्रव्य के कितने प्रदेश हैं ?

उ0 (1) जीव, धर्म, अधर्म और लोकाकाश के असंख्यात प्रदेश हैं। (2) पुद्गल द्रव्य के व्यवहारनय से संख्यात, असंख्यात और अनन्त, इस तरह तीनों प्रकार के प्रदेश हैं। (3) काल द्रव्य और पुद्गल परमाणु एक प्रदेशी है। (4) आकाश द्रव्य अनन्त प्रदेशी है।

प्र4. पर्याय किसे कहते हैं ?

उ0 गुणों के विशेष कार्य को पर्याय कहते हैं।

प्र5. पर्याय के कितने भेद हैं ?

उ0 व्यंजन पर्याय और अर्थ पर्याय - यह दो भेद हैं।

प्र6. व्यंजन पर्याय किसे कहते हैं ?

उ0 द्रव्य के प्रदेशत्वगुण के विशेष कार्य को व्यंजनपर्याय कहते हैं।

प्र7. अर्थ पर्याय किसे कहते हैं ?

उ0 प्रदेशत्वगुण के अतिरिक्त शेष सम्पूर्ण गुणों के विशेष कार्य को अर्थ पर्याय कहते हैं।

प्र8. व्यंजन पर्याय के कितने भेद हैं ?

उ0 दो भेद हैं। स्वभाव व्यंजनपर्याय और विभाव व्यंजन-पर्याय।

प्र9. स्वभाव व्यंजन पर्याय किसे कहते हैं ?

उ0 पर द्रव्य के सम्बन्ध रहित द्रव्य का जो आकार हो, उसे स्वभाव व्यंजन पर्याय कहते हैं। जैसे–सिद्ध भगवान का आकार और परमाणु का आकार।

प्र10. विभाव व्यंजन पर्याय किसे कहते हैं ?

उ0 पर निमित्त के सम्बन्ध सहित द्रव्य का जो आकार हो उसे विभाव–व्यंजन –पर्याय कहते हैं। जैसे–जीव की नर–नारकादि पर्याय।

प्र11. अर्थ पर्याय के कितने भेद हैं ?

उ0 दो भेद हैं – स्वभाव अर्थपर्याय और विभाव अर्थपर्याय।

प्र12. स्वभाव अर्थ पर्याय किसे कहते हैं ?

उ0 पर निमित्त के सम्बन्ध रहित जो अर्थपर्याय होती है उसे स्वभाव अर्थ पर्याय कहते हैं। जैसे–जीव का केवलज्ञान, क्षायिक सम्यग्दर्शन आदि।

प्र13. विभाव अर्थ पर्याय किसे कहते हैं ?

उ0 पर निमित्त के सम्बन्ध सहित जो अर्थपर्याय होती है उसे विभाव अर्थपर्याय कहते हैं। जैसे–जीव में रागद्वेषादिक।

प्र14. मिथ्यादृष्टि जीवों में कौन–कौन सी पर्यायें होती हैं ?

उ0 विभाव व्यंजनपर्याय और विभाव अर्थपर्याय होती हैं।

प्र15. सिद्ध भगवान में कौन–कौनसी पर्यायें होती हैं ?

उ0 स्वभाव व्यंजनपर्याय और स्वभाव अर्थपर्याय होती हैं।

प्र16. चौथे गुणस्थान से 14वें गुणस्थान तक कौन–कौनसी पर्यायें होती हैं ?

उ0 विभाव व्यंजनपर्याय, स्वभाव अर्थपर्याय और विभाव अर्थपर्याय इस प्रकार तीन प्रकार की पर्यायें होती हैं।

प्र17. चौथे से 14वें गुणस्थान तक तीन पर्यायें एक सी होती हैं या कुछ अन्तर है ?

उ0 चौथे गुणस्थान से 14वें गुणस्थान तक जितनी शुद्धि है वह स्वभाव अर्थपर्याय है और जो अशुद्धि है वह विभाव अर्थपर्याय है। विभाव व्यंजनपर्याय में अन्तर नहीं है।

प्र18. परमाणु में कौन–कौनसी पर्यायें होती हैं ?

उ0 स्वभाव व्यंजनपर्याय और स्वभाव अर्थपर्यायें ही होती है।

प्र19. स्कंध दशा में कौन–कौनसी पर्यायें होती हैं ?

उ0 विभाव व्यंजनपर्यायें और विभाव अर्थपर्यायें ही होती हैं।

प्र21. चारो प्रकार की पर्यायें किस द्रव्य में सम्भव है ?

उ0 जीव और पुद्गल में ही सम्भव है बाकी चार द्रव्यों में नहीं।

प्र22. धर्म, अधर्म, आकाश और काल में कौन–कौनसी पर्यायें होती हैं ?

उ0 स्वभाव व्यंजनपर्याय और स्वभाव अर्थपर्यायें ही अनादि–अनन्त होती रहती हैं इनमें कभी विभावदशा होती ही नहीं है।

प्र24. प्रत्येक द्रव्य में व्यंजनपर्याय कितनी और अर्थपर्यायें कितनी होती है ?

उ0 प्रत्येक द्रव्य में व्यंजनपर्याय एक होती है और अर्थपर्यायें अनेक होती है।

प्र25. प्रत्येक द्रव्य में व्यंजनपर्याय एक क्यों हैं ?

उ0 प्रत्येक द्रव्य में प्रदेशत्व गुण एक ही है। प्रदेशत्व गुण के परिणमन को व्यंजन पर्याय कहते हैं। इसलिए प्रत्येक द्रव्य में व्यंजन पर्याय एक ही होती है।

प्र26. अर्थपर्याय अनेक क्यों हैं ?
उ0 प्रदेशत्वगुण को छोड़कर बाकी के अनन्त गुणों के परिणमन को अर्थ पर्याय कहते हैं। इसलिये अर्थपर्याय अनन्त होती हैं।

प्र27. तुम्हारी आत्मा में व्यंजनपर्याय कितनी होती हैं और अर्थपर्याय कितनी होती हैं ?
उ0 मेरी आत्मा में व्यंजनपर्याय एक और अर्थपर्यायें अनेक होती है।

प्र28. किताब में अर्थपर्याय कितनी और व्यंजनपर्याय कितनी होती है ?
उ0 किताब में जितने परमाणु हैं उतनी व्यंजनपर्यायें हैं और एक–एक परमाणु में अनेक–अनेक अर्थपर्यायें हैं।

प्र29. जीव द्रव्य में विभाव व्यंजन पर्याय कहाँ तक होती है ?
उ0 जीव में 14वें गुणस्थान तक विभाव व्यंजनपर्याय होती है।

प्र30. सादिअनन्त स्वभाव व्यंजन पर्याय किस द्रव्य में होती है।
उ0 सिद्धदशा मे सादिअनन्त स्वभाव व्यंजनपर्याय जीव में होती हैं।

प्र31. स्वभाव व्यंजनपर्याय में अन्तर और स्वभाव अर्थ पर्याय में समानता, क्या कभी ऐसा होता है ?
उ0 सिद्धदशा में किसी का सात हाथ का, किसी का 500 धनुष का आकार होने से स्वभाव व्यंजनपर्याय में अन्तर होता है और स्वभाव अर्थपर्याय में समानता होती है।

प्र32. स्वभाव व्यंजनपर्याय में समानता और स्वभाव अर्थ पर्याय में अन्तर होता हो, क्या ऐसा कभी किसी द्रव्य में होता है ?
उ0 परमाणु में सब का आकार एक प्रदेशी होने से स्वभाव व्यंजनपर्याय में समानता है और स्वभाव अर्थपर्यायों में अन्तर है।

प्र33. पहले अर्थपर्याय शुद्ध हो फिर व्यंजनपर्याय शुद्ध हो ऐसा किस द्रव्य में होता है ?
उ0 जीवद्रव्य में किसी–किसी गुण की अर्थपर्याय पहले शुद्ध होती है, परन्तु जब जीव द्रव्य के सब गुणों की अर्थपर्यायें परिपूर्ण शुद्ध हो जाए, उसी समय व्यंजनपर्याय भी शुद्ध हो जाती है।

प्र34. स्वभाव व्यंजनपर्याय और स्वभाव अर्थपर्यायें किस द्रव्य में एक साथ होती है ?
उ0 पुद्गल परमाणु में एक साथ होती है।

प्र35. पर्याय किससे होती हैं ?
उ0 द्रव्य और गुणों से पर्याय होती हैं।

प्र36. द्रव्य और गुणों से पर्याय होती हैं इस अपेक्षा पर्याय के कितने भेद है ?
उ0 दो भेद हैं, द्रव्य पर्याय और गुण पर्याय।

प्र37. द्रव्यपर्याय किसे कहते हैं ?
उ0 अनेक द्रव्यों में एकपने का ज्ञान होना, द्रव्यपर्याय है।

प्र38. द्रव्यपर्याय के कितने भेद है ?
उ0 दो भेद है – (1) समानजातीय द्रव्यपर्याय (2) असमानजातीय द्रव्यपर्याय।

प्र39. समानजातीय द्रव्य पर्याय किसे कहते हैं ?
उ0 एक जाति के अनेक द्रव्यों में एकपने का ज्ञान समानजातीय द्रव्यपर्याय हैं।

प्र40. असमानजातीय द्रव्य पर्याय किसे कहते हैं ?
उ0 दो या अनेक जाति के द्रव्यों में एकपने का ज्ञान असमानजातीय द्रव्यपर्याय हैं।

प्र41. समानजातीय द्रव्यपर्याय के कुछ नाम बताओ ?

उ0 बिस्तरा, कम्बल, रोटी, हलवा, मेज, किताब, सोने का हार, मकान, अंगूठी आदि। इन सबमें अनेक पुद्गलों मे एकपने का ज्ञान होता है। यह समानजातीय द्रव्यपर्याय के उदाहरण हैं।

प्र42. असमानजातीय द्रव्यपर्याय के कुछ नाम बताओ ?

उ0 आत्मा, द्रव्यकर्म और शरीर के सम्बन्ध को असमानजातीय द्रव्यपर्याय कहते हैं। चारों गतियों के जीव असमानजातीय द्रव्य पर्याय में आते हैं।

प्र43. समानजातीय और असमानजातीय द्रव्यपर्याय का सच्चा ज्ञान कब कहा जावेगा ?

उ0 (1) 'बिस्तरा' कहते ही अनन्त पुद्गल परमाणुओं में एक-एक परमाणु अपने-अपने गुण पर्याय सहित पृथक-पृथक कार्य कर रहा है, तब बिस्तरे को समानजातीय द्रव्य पर्याय कहा जावेगा। (2) "मनुष्य" कहते ही आत्मा पृथक, और तैजशरीर, कार्माणशरीर, औदारिकशरीर भाषा और मन मे एक-एक परमाणु स्वतन्त्ररूप से परिणमन कर रहा है तथा आत्मा का पुद्गलों से कोई सम्बन्ध नहीं है। तब मनुष्य को असमानजातीय द्रव्यपर्याय कहा जावेगा। इसका ज्ञान सम्यकदृष्टि का ही होता है, मिथ्यादृष्टि को नहीं होता है।

प्र44. (1) सम्यग्दर्शन (2) सम्यग्ज्ञान (3) सम्यकचारित्र (4) केवलज्ञान (5) पलंग (6) मीठा आम (7) तैजस शरीर (8) कार्माण शरीर (9) दिव्यध्वनि (10) रसगुल्ला (11) यथाख्यातचरित्र (1) इनमें यह क्या है, (2) इनका कर्ता कौन है, (3) इनका कर्ता कौन नहीं है, (4) पर्याय को कब माना (5) पर्याय को कब नहीं माना इत्यादि वाक्यों को समझाओ।

उ0 (1) सम्यग्दर्शन स्वभाव अर्थपर्याय है। (2) सम्यग्दर्शन का कर्ता आत्मा का श्रद्धा गुण है। (3) सम्यग्दर्शन का कर्ता दर्शनमोहनीय के उपशमादि और देव-गुरू नहीं है। (4) सम्यग्दर्शन श्रद्धा गुण में से आया, तब पर्याय को माना और (5) सम्यग्दर्शन दर्शनमोहनीय के उपशमादि से आया, तो पर्याय को नहीं माना। इसी प्रकार अन्य वाक्यों को लगाकर बताओ।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 9.00 से 10.30 व सांयः 6.30 ये 7.30 बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 10.00 से 11.00 बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय 06.30 से 07.30 बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजारसांय 06.30 से 07.30 बजे
6. सोमवार व बृहस्पतिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय 03.30 से 04.30 बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र 80 न0 का होगा। 20 अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- 14 जुलाई 2013 को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-59 का पारितोषिक वितरण भी 29 सितम्बर 2013 दिन रविवार को समास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', 31 राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६१

दिनांक 1 दिसम्बर 2013 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र1. छहढाला में अगृहीत मिथ्यादर्शन किसे कहा है ?

उ0 (1) आत्मा का स्वभाव ज्ञान-दर्शन है, इसको भूलकर शरीर को आत्मा मान लेना, शरीर आश्रित उपवास और उपदेशादि में अपनेपने की बुद्धि होना, यह अगृहीत मिथ्यादर्शन है। (2) शरीर की उत्पत्ति में अपनी उत्पत्ति और शरीर के बिछुड़ने पर अपना मरण मानना, अगृहीत मिथ्यादर्शन है। (3) शुभाशुभभाव प्रगट दुख के देनेवाले हैं, उन्हें सुखकर मानना, अगृहीत मिथ्यादर्शन है। (4) शुभाशुभभाव एक रूप ही हैं और बुरे ही हैं परन्तु आत्मा का अनुभव ना होने से, अशुभकर्मों के फल में द्वेष और शुभकर्मों के फल में राग करना, यह अगृहीत मिथ्यादर्शन है। (5) निश्चय-सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र जीव को हितकारी है, स्वरूप स्थिरता द्वारा राग का जितना अभाव, वह वैराग्य है और सुख का कारण है परन्तु निश्चयसम्यग्दर्शनादि को कष्टदायक मानना, यह अगृहीत मिथ्यादर्शन है। (6) सम्यग्ज्ञानपूर्वक इच्छाओं का अभाव ही निर्जरा है और वही आनन्दरूप है परन्तु अपनी शक्ति को भूलकर, इच्छाओं की पूर्ति में सुख मानना, अगृहीत मिथ्यादर्शन है। (7) मुक्ति में पूर्ण निराकुलतारूप सच्चा सुख है, उसके बदले भोगसम्बन्धी सुख को ही सुख मानना, यह अगृहीत मिथ्यादर्शन है।

प्र2. भावदीपिका में अगृहीत मिथ्यात्व कितने प्रकार का बताया है ?

उ0 आठ प्रकार का बताया है। (1) परद्रव्य में अहंबुद्धि यह मिथ्यात्वभाव है। (2) परगुण में अहंबुद्धि - यह मिथ्यात्वभाव है। (3) परद्रव्य में ममकारबुद्धि यह मिथ्यात्वभाव है। (4) परगुण में ममकारबुद्धि - यह मिथ्यात्वभाव है। (5) परपर्याय में ममकारबुद्धि - यह मिथ्यात्वभाव है। (6) दृष्टिगोचर पुद्गलपर्यायों में द्रव्यरूप बुद्धि - यह मिथ्यात्वभाव है। (7) अदृष्टिगोचर द्रव्य-गुण-पर्यायों में अभावरूपबुद्धि - यह मिथ्यात्वभाव है।

प्र3. परद्रव्य में अहंबुद्धिरूप मिथ्यात्व क्या है।

उ0 परद्रव्य जो शरीर पुद्गल पिण्ड, उसमें अहंबुद्धि 'यह मैं हूँ' यह परद्रव्य में अहंबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्र4. पर गुण में अहंबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव क्या है ?

उ० पुद्गल के स्पर्शादिगुणों में अहंबुद्धि होना। जैसे - मैं गरम, मैं ठण्डा, मैं कोमल, मैं कठोर, मैं हलका, मैं भारी, मैं रूखा, मैं खट्टा, मैं मीठा, मैं कडुवा, मैं चरपरा, मैं कषायला, मैं दुर्गन्धीवाला, मैं काला, मैं गोरा, मैं लाल, मैं पीला इत्यादि - यह पर गुणों में अहंबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्र5. परपर्याय में अहंबुद्धिरूप मिथ्यात्व क्या है ?

उ० मैं देव, मैं नारकी, मैं मनुष्य, मैं तिर्यञ्च, और इनके एकेन्द्रिय आदि अवान्तर भेद-प्रभेद में अहंबुद्धि होना - यह पर्यायों में अहंबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्र6. परद्रव्य में ममकारबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव क्या है ?

उ० मेरा धन, मेरा मकान, मेरे आभूषण, मेरे कपड़े, मेरा बक्सा, मेरा पलंग, मेरा बाग, मेरी घड़ी, मेरे दस हजार के नोट, मेरा पुस्तकालय, मेरा भोजन - इस प्रकार पर वस्तुओं में ममकारपना, यह परद्रव्यों में ममकारबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्र7. पर गुण में ममकारबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव क्या है ?

उ० मेरे शरीर का बल ऐसा है कि अनेक पराक्रम करूँ, यह मेरा शब्द, ये मेरी चाल, यह मेरी अंगुलियाँ, यह मेरा मुँह, ये मेरा नाम, यह मेरे कान, यह मेरे दाँत इत्यादिरूप प्रवृत्ति होना - यह पर गुणों में ममकारबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्र8. पर पर्याय में ममकारबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव क्या है ?

उ० मेरे पुत्र, मेरी स्त्री, मेरी माता, मेरे पिता, मेरे भाई, मेरी बहिन, मेरे नौकर, मेरी प्रजा, मेरे हाथी, मेरे घोड़े, मेरी गाय-भैंस, इस प्रकार ममकारबुद्धि होना, यह पर पर्यायों में ममकारबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्र9. दृष्टिगोचर पुद्गलपर्यायों में द्रव्यबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव क्या है ?

उ० दृष्टि में जितनी पुद्गल की पर्याय आती है, उनको जुदा जुदा द्रव्य मानता है। जैसे, ये घट है, यह स्वर्ण है, यह पाषाण है, ये पर्वत है, ये वृक्ष है, यह मनुष्य है, यह हाथी है, यह घोड़ा है, यह पर्वत है, ये वृक्ष है, यह मनुष्य है, यह हाथी है, यह घोड़ा है, यह चिड़िया है, यह स्यार है, यह सिंह है, यह सूर्य है, यह चन्द्रमा है, यह लड़का है, यह लड़की है, यह जयपुर नरेश है, यह राष्ट्रपति है, यह बहु है, इत्यादि समानजातीय और असमानजातीय द्रव्य-पर्यायों में द्रव्यबुद्धि को धारण करता है, उनका पृथक्-पृथक् सत्त्व मानता है, अर्थात वर्तमान क्षणिकपर्यायों को ही द्रव्य मानता है। त्रैकालिक सत्तासहित गुण-पर्यायरूप द्रव्य नहीं मानता है, यह दृष्टिगोचर पुद्गलपर्यायों में द्रव्यबुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव है।

प्र10. अदृष्टिगोचर द्रव्य-गुण-पर्यायों में अभाव बुद्धिरूप मिथ्यात्वभाव क्या है ?

उ० (1) जो दृष्टिगोचर नहीं, ऐसे जो दूर क्षेत्रवर्ती, (2) होकर नाश हो गयी, (3) अनागत में होगी, (4) इन्द्रियों से अगोचर सूक्ष्म पर्याय इत्यादि जो अपनी और पर की हैं, उनको अभावरूप मानता है। इनका सत्त्व हो चुका, होयेगा, या वर्तमान में है, ऐसा नहीं मानता है इत्यादि सब मिथ्यात्वभाव है।

प्र11. यह आठ प्रकार का मिथ्यात्वभाव कैसा है और क्यों है ?

उ० यह अगृहीतमिथ्यात्व है। बिना सिखाये अनादि से एक-एक समय करके चला आ रहा है। सदा काल, सर्व क्षेत्र में, मिथ्यादृष्टियों के प्रवर्तता है। किसी के द्वारा कदाचित् उपदेशित नहीं, इस कारण इसे अगृहीतमिथ्यात्व कहा है।

प्र12. गृहीतमिथ्यात्व क्या है ?

उ० (1) देव, (2) गुरू, (3) धर्म, (4) आप्त (हितउपदेशक), (5) आगम, (6) नौ पदार्थ - इनका उल्टा श्रद्धान, गृहीतमिथ्यात्व है।

प्र13. जीव का प्रयोजन क्या है ?

उ० दुःख का अभाव और सुख की प्राप्ति, यह ही एकमात्र जीव का प्रयोजन है।

प्र14. दुःख का अभाव और सुख की प्रप्ति के लिये कुन्दकुन्दादि आचार्यों का क्या आदेश है ?

उ० प्रथम तत्त्वज्ञान हो और पश्चात् चारित्र हो तो सम्यकचारित्र नाम पाता है। जैसे कोई किसान, बीज बोये नहीं और अन्य साधन करे तो अन्न प्राप्ति कैसे हो ? घास-फूस ही होगा, उसी प्रकार अज्ञानी तत्त्वज्ञान का तो अभ्यास करें नहीं और अन्य साधन करें तो मोक्ष की प्राप्ति कैसे हो ? देवपद आदि ही होंगे। इसलिए पात्र जीवों को प्रथम जिनवरकथित तत्त्व का यथार्थ अभ्यास करके, सम्यग्दर्शनादिक की प्राप्ति करने का आचार्यों का आदेश है।

प्र15. जिनके जानने से मोक्षमार्ग में प्रवृत्ति हो, वे अवश्य जाननेयोग्य-प्रयोजनभूत क्या-क्या हैं ?

उ० (1) हेय-उपादेय तत्त्वों की परीक्षा करना। (2) जीवादि द्रव्य, सात तत्त्व, स्व-पर को पहिचानना तथा देव-गुरू-धर्म को पहिचानना। (3) त्यागनेयोग्य मिथ्यात्व-रागादिक, तथा ग्रहण करने योग्य सम्यग्दर्शन-ज्ञानादिक का स्वरूप पहिचानना। (4) निमित्त-नैमित्तिक, निश्चय-व्यवहार, उपादान-उपादेय, छह कारक, चार अभाव, छह सामान्यगुण आदि को जैसे हैं, वैसे ही जानना, इत्यादि जिनके जानने से मोक्षमार्ग में प्रवृत्ति हो, उन्हें अवश्य जानना चाहिए, क्योंकि ये सब मोक्षमार्ग में प्रयोजनभूत हैं।

देव भक्ति

वीतरागी देव तुम्हारे जैसा जग में देव कहाँ,
मार्ग बताया है जो जग को कह न सके कोई और यहाँ
वीतरागी देव तुम्हारे जैसा जग में देव कहाँ।।टेक।।

है सब द्रव्य स्वतन्त्र जगत में कोई न किसी का काम करें,
अपने-अपने स्वचतुष्टय में सभी द्रव्य विश्राम करें।
अपनी-अपनी सहज गुफा में रहते पर से मौन यहाँ,
वीतरागी देव तुम्हारे जैसा जग में देव कहाँ।।1।।

भाव शुभाशुभ का भी कर्ता, बनता जो दीवाना है,
ज्ञायक भाव शुभाशुभ से भी भिन्न न उसने जाना है।
अपने से अनजान तुझे भगवान बताते देव यहाँ,
वीतरागी देव तुम्हारे जैसा जग में देव कहाँ।।2।।

पुण्य-पाप भी पर आश्रित है, उसमें धर्म नहीं होता,
ज्ञान भावमय निज परिणति से बन्धन कर्म नहीं होता।
निज आश्रय से ही मुक्ति है कहते श्री जिनदेव यहाँ
वीतरागी देव तुम्हारे जैसा जग में देव कहाँ।।3।।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 9.00 से 10.30 व सांयः 6.30 ये 7.30 बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 10.00 से 11.00 बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय 06.30 से 07.30 बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय 06.30 से 07.30 बजे
6. सोमवार व बृहस्पतिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय 03.30 से 04.30 बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र 80 न0 का होगा। 20 अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- 29 सितम्बर 2013 को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–60 का पारितोषिक वितरण भी 1 दिसम्बर 2013 दिन रविवार को समास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें– श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', 31 राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६२

दिनांक 26 जनवरी 2014 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र1. मुझ आत्मस्वभाव कैसा है ?

उ0 आत्मस्वभावं परभावभिन्नम्, आपूर्णमाद्यन्त विमुक्तमेकम।
विलीनसकंल्पविल्पजालम्, प्रकाशयन् शुद्धनयोम्युदेति।।

1. मुझ आत्मस्वभाव परभावभिन्नम् है 2. आपूर्णम है 3. आदिअन्तविमुक्तम् है 4. एकम् है 5. विलीनसंकल्पविकल्पजालम है।

प्र2. परभावभिन्नम का रहस्य क्या है ?

उ0 इस विश्व में मुझ आत्मा के अलावा –

1. जीव अनन्त–पुद्गल अनन्तान्त, धर्म अधर्म आकाशं एक–एक, काल द्रव्य लोक प्रमाण असँख्यात है – ये पर द्रव्य हैं
2. इन सब द्रव्यों में अनन्त सामान्य गुण व अनन्त विशेष गुण हैं।
3. प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय है उतनी क्रमबद्ध पर्यायें भी हैं।
4. पर द्रव्य के निमित्त से होने वाले अपने में विभाव भाव भी हैं – परन्तु परभावभिन्नम् निज आत्मस्वभाव में इनका प्रवेश नहीं है। ऐसा मानसिक ज्ञान में आते ही शुद्धनय का पता चल जाता है।

प्र3. शुद्धनय का पता चलते ही ज्ञानी क्या–क्या जान जाता है ?

उ0
1. सिद्धदशा क्या है ? सिद्ध भगवान क्या करते हैं ?
2. अरहन्तदशा क्या है ? अरहन्त भगवान क्या करते हैं ?
3. श्रेणीपना क्या है ? श्रेणी में मुनिराज क्या करते हैं ?
4. आचार्य, उपाध्याय, साधुपना क्या है ? आचार्य, उपाध्याय और साधु क्या करते हैं ?
5. श्रावकपना, सम्यग्दृष्टिपना क्या हैं ? श्रावक, सम्यग्दृष्टि क्या करते हैं ?
6. अनादि का मिथ्यादृष्टिपना क्या है ? अनादि के मिथ्यादृष्टि क्या करते हैं ? आदि सर्व बातों का सच्चा ज्ञान, केवली के समान हो जाता है।

प्र4. आत्मा क्या कर सकता है ?

उ0 आत्मा चैतन्य स्वरूप है। आत्मा ज्ञाता–दृष्टा के अतिरिक्त अन्य कोई भी कार्य नहीं कर सकता।

प्र5. आत्मा ज्ञाता–दृष्टा के सिवाय और कुछ नहीं कर सकता, तो फिर संसार और मोक्ष की व्यवस्था का क्या मतलब है ?

उ0 आत्मा ज्ञाता दृष्टा ही है। आत्मा ज्ञाता–दृष्टा के उपयोग को जब पर पदार्थ की ओर लक्ष्य रखकर पर भाव में यह 'मैं' ऐसा दृढ़ कर लेता है तब यही संसार कहलाता है और जब स्व की ओर लक्ष्य करके उपयोग को स्व में यह 'मैं' ऐसा दृढ़ कर लेता है तब यही मोक्ष कहलाता है। 'स्व' की तरफ लक्ष्य रखकर स्व में दृढ़ता और पर की तरफ लक्ष्य रखकर पर में दृढ़ता। इसके सिवाय अनादिकाल से और कुछ कोई भी जीव कर ही नहीं सका है और ना अनन्तकाल तक और कुछ कर ही सकेगा।

प्र6. आत्मा ज्ञाता–दृष्टा के सिवाय और कुछ नहीं कर सकता तो फिर समस्त शास्त्रों से क्या लाभ है ?

उ0 बारह अंग के सब शास्त्रों का उपदेश मात्र एक ही है कि चैतन्य का उपयोग जो पर की तरफ ढला हुआ है उसे स्व की तरफ मोड़कर स्व मे दृढ़ता करना। चारों अनुयोगों में मात्र उपयोग को मोड़ करने की बात है। इसी बात को शास्त्रों में अनेक युक्तियों से समझाया है।

प्र7. संसारी और मुक्त जीवों की क्रिया में क्या भेद है ?

उ0 चैतन्य का ज्ञान उपयोग यही आत्मा की क्रिया है। निगोद से लगाकर सिद्ध भगवान तक के सभी जीव मात्र उपयोग ही कर सकते हैं। ज्ञाता–दृष्टा के सिवाय अन्य कुछ भी नहीं कर सकते हैं। भेद मात्र इतना ही है कि मिथ्यादृष्टि जीव अपने उपयोग को पर की तरफ लगा कर पर भावों में एकाग्र रहते हैं और ज्ञानी अपने उपयोग को अपने शुद्ध–स्वभाव में ढालकर स्वभाव में एकाग्र रहते है। परन्तु कोई भी जीव ज्ञानोपयोग के सिवाय पर पदार्थों में कोई भी परिवर्तन असर–मदद नहीं कर सकते हैं। अज्ञान दशा में शुभ–अशुभ रूप अशुद्धोपयोग कर सकता है। याद रखनाः–शुभ–अशुभ दोनों में पर का लक्ष्य होने से अशुद्धोपयोग कहलाता है और स्व की और का ज्ञानोपयोग शुद्धोपयोग कहलाता है।

प्र8. बंध–मुक्ति के सम्बन्ध में क्या सिद्धान्त है ?

उ0 पर लक्ष्य से बंधन और स्वलक्ष्य से मुक्ति होती है। पर लक्ष्य होने पर शुभभाव हो वह भी अशुद्ध उपयोग ही है। संसार का कारण है। जहाँ स्व लक्ष्य है वहाँ शुद्धोपयोग है मुक्ति का कारण है।

प्र9. विश्व किसे कहते हैं ?

उ0 जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म आकाशं एक–एक और लोक

प्रमाण असंख्यात काल द्रव्य हैं, इन सबके समूह को विश्व कहते है ?

प्र10. आत्मा ज्ञाता–दृष्टा के अतिरिक्त कुछ नहीं करता तो फिर विश्व की व्यवस्था किस प्रकार है ?

उ0 प्रत्येक द्रव्य कायम रहता हुआ, अपनी–अपनी प्रयोजनभूत क्रिया करता हुआ, निरन्तर बदलते रहना। यह विश्व की व्यवस्था है।

प्र11. प्रत्येक द्रव्य कायम रहता हुआ, अपनी–अपनी प्रयोजन–भूत क्रिया करता हुआ, निरन्तर बदलता रहता है, इसे स्पष्ट समझाइये ?

उ0 जिनेन्द्र कथित विश्व व्यवस्था– इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा। (प्रवचनसार गाथा 93)

प्र12. चैतन्य का उपयोग जो पर की ओर ढला हुआ है उसे स्व की तरफ मोड़कर स्व में यह मै इस प्रकार दृढ़ करने का उपाय जिनवाणी में क्या बताया है ?

उ0 1. तराजू के एक पलड़े में मै ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्त्व हूँ और मुझ आत्मा का कार्य ज्ञाता दृष्टा है।

2. तराजू के दूसरे पलड़े में मुझ आत्मा के अलावा अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म–अधर्म आकाश एक–एक, काल द्रव्य लोक प्रमाण असँख्यात है – ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न है तथा ये सब अनादिनिधन वस्तुयें अपनी–अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नहीं है, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती हैं।

ऐसी व्यवस्थित व्यवस्था को जानकर विश्व के किसी भी परद्रव्य में या स्व–द्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा–ऐसा यथार्थ निर्णय होने पर ज्ञाता दृष्टा का उपयोग पर से विरक्त होकर निज चैतन्य–स्वरूप का ही ध्यान करेगा।

अमूल्य तत्त्व विचार

बहु पुण्य-पुंज-प्रसंग से शुभ देह मानव का मिला,
तो भी अरे! भवचक्र का फेरा न एक कभी टला।
सुख-प्राप्ति हेतु प्रयत्न करते सुक्ख जाता दूर है।
तू क्यों भयंकर भावमरण प्रवाह में चकचूर है।।1।।

लक्ष्मी बढ़ी अधिकार भी, पर बढ़ गया बोलिये।
परिवार और कुटुम्ब है क्या वृद्धि ? कुछ नहि मानिये।
संसार का बढ़ना अरे! नर देह की यह हार है।
नहीं एकक्षण तुमको अरे! इसका विवेक विचार है।।2।।
निर्दोष सुख निर्दोष आनन्द लो जहाँ भी प्राप्त हो।
यह दिव्य अन्तःतत्व जिससे बन्धनों से मुक्त हो।
परवस्तु में मूर्छित न हो इसकी रहे मुझको दया।
वह सुख सदा ही त्याज्य रे! पश्चात् जिसके दुःख भरा।।3।।
मैं कौन हूं, आया कहाँ से, और मेरा रूप क्या।
सम्बन्ध दुखमय कौन है ? स्वीकृत करूँ परिहार क्या ?
इसका विचार विवेक पूर्वक शान्त होकर कीजिये।
तो सर्व आत्मिक-ज्ञान के सिद्वान्त का रस पीजिये।।4।।
किसका वचन उस तत्व की उपलब्धि में शिवभूत है।
निर्दोष नर का वचन रे! वह स्वानुभूति प्रसूत है।
तारो अहो तारो निजात्मा शीघ्र अनुभव कीजिये।
'सर्वात्ममें समदृष्टिद्यो' यह वच हृदय लिख लीजिये।।5।।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.३० ये ७.३० बजे
2. शनिवार — स्वाध्याय मन्दिर — प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
4. मंगलवार — स्वाध्याय मन्दिर — सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
5. बुधवार — श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार — सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
6. सोमवार व बृहस्पतिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी — सांय ०३.३० से ०४.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- १ दिसम्बर २०१३ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६१ का पारितोषिक वितरण भी २६ जनवरी २०१४ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६३

दिनांक 30 मार्च 2014 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

नोटः- लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका (गुलाबी किताब) के प्रश्न १, ४, ८, ११, १३, १४, १५, १६, १७, २०, २३, २६, २९, ३२, ३५, ३६, ३७, ३८, ४०, ४१, ४२, ४३, ४५, ४६, ४८ से ६०, ६२, ६४,, ६६, ६७, ६८, ६९, ७१, ७६, ७७, से ८८, ९० से ९९, १०१ से १०४, १०६ से १२८, १३०,१३२ से १६६, १६७ से १७६, १८६ से १९२ – ये सब प्रश्न पक्के याद करके नई कापी में लिखिये।

प्र१. आत्मा के परिणामों में से मोह राग द्वेष भावों का अभाव करके भगवान बनने के लिए किसका ज्ञान आवश्यक है ?

उ० योग्यता का स्वरूप जानना आवश्यक है।

प्र०२. योग्यता किसे कहते हैं ?

उ० समर्थ उपादानशक्ति का नाम ही योग्यता है।

प्र०३. भवितव्यता, अर्थात् योग्यता का व्युत्पत्ति अर्थ क्या है ?

उ० 'भवितु योग्य भवितव्यम् तस्य भावः भवितव्यता' जो होने योग्य हो, उसे भवितव्य कहते हैं; उसका भाव, भवितव्यता कहलाती हैं। जिसे हम योग्यता कहते हैं, उसी का दूसरा नाम भवितव्यता है।

प्र०४. योग्यता को जानने से क्या-क्या लाभ हैं ?

उ० (१) प्रत्येक द्रव्य में जो-जो परिणमन होता है, वह 'उस समय पर्याय की योग्यता' के अनुसार ही हुआ है, हो रहा है, होता रहेगा; उसमें किसी दूसरे का जरा भी हस्तक्षेप नहीं है – ऐसा जानने से, पर का मैं कुछ करूँ या पर मेरा कुछ करे – ऐसा प्रश्न उपस्थित नहीं होता है; (२) क्रमबद्धपर्याय की सिद्धि होती है; (३) करूँ-करूँ की मिथ्याबुद्धि का अभाव होते ही सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर, क्रम से निर्वाण की प्राप्ति होती है।

प्र०५. योग्यता से क्या सिद्ध हुआ ?

उ० (१) बम पड़ना, (२) बहुत से मनुष्यों का एक साथ मरना, (३) एक शरीर में रहनेवाले निगोदिया जीवों का, सबका एक साथ मरण होना, (४) हवाईजहाज का टूटना, (५) राकेट ऊपर जाना, (६) नदी का प्रवाह बदलना, (७) बाँध का बनना, (८) कच्चे फल को जल्दी पकना, (९) पक्के फल को लम्बे काल तक कायम रखना, आदि सब काम अपने-अपने कार्यकाल में ही होते हैं, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य में जितने-जितने गुण हैं, उस-उस प्रत्येक गुण में तीन काल के जितने समय है, उतनी-उतनी पर्यायें हैं, वे निश्चित और क्रमबद्ध हैं, जरा भी आगे-पीछे नहीं हो सकती हैं-ऐसी बात 'योग्यता' से सिद्ध होती है।

प्र०६. द्रव्य की योग्यता क्या है ?

उ० प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने द्रव्यरूप ही रहता है, कभी दूसरे द्रव्यरूप नहीं होता; इसलिए द्रव्यरूप योग्यता, द्रव्यरूप रहती है।

प्र०७. गुण की योग्यता क्या है ?

उ० प्रत्येक गुण अपने-अपने रूप ही रहता है। जैसे-ज्ञानगुण, ज्ञानगुणरूप ही रहता है; श्रद्धा, चारित्ररूप नहीं होता है; और पुद्गल में रसगुण, रसगुणरूप ही रहता है; गन्ध-वर्ण-स्पर्शरूप नहीं होता है-यह गुणरूप योग्यता है।

प्र०८. पर्यायरूप योग्यता क्या है ?

उ० प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं। एक-एक गुण में, जिस समय, जिस पर्याय की योग्यता है, वही होगी; एक समय भी आगे-पीछे नहीं हो सकती है। किसी भी तरह से उस योग्यता को टालने के लिए देव, इन्द्र, जिनेन्द्रभगवान भी समर्थ नहीं हैं। पर्याय की योग्यता एक समयमात्र की ही होती है।

प्र०९. योग्यतारूप पर्याय के जानने से क्या-क्या लाभ हैं ?

उ० (१) सब में योग्यतारूप पर्याय जो होनी है, वही होगी; आगे-पीछे नहीं; (२) पर में करने-कराने की बुद्धि का अभाव हो जाता है; (३) दृष्टि अपने स्वभाव पर आ जाती है और जैन दर्शन के रहस्य का मर्मी बन जाता है; (४) क्रम से मोक्ष का पथिक बन जाता है।

प्र०१०. पर्यायरूप योग्यता और द्रव्यरूप योग्यता के विषय में क्या-क्या जानना चाहिये ?

उ० (१) पर्यायरूप योग्यता, ज्ञायक का ज्ञेय है, जाननेयोग्य है। (२) निज द्रव्यरूप योग्यता, आश्रय करने योग्य है, क्योंकि इसके आश्रय से ही धर्म की शुरूआत, वृद्धि और पूर्णता होती है।

प्र०११. पर्यायरूप योग्यता को विशेषरूप में समझाओ ?

उ० (१) जैसे, आम है, जब उसकी पकनेयोग्य अवस्था होती है, तभी होगी; आगे-पीछे नहीं। किसी ने पाल में देकर पहले पका दिया-ऐसा नहीं है। (२) आम खट्टा था, मीठा हो गया, जब उसकी मीठा होने योग्य अवस्था थी, तभी हुई; आगे-पीछे नहीं और किसी के कारण से भी नहीं। (३) शरीर में बालकपन, युवावस्था, वृद्धावस्था होने योग्य होवे, तभी होती है; किसी बाह्य साधन से या किसी भी प्रकार से हेर-फेर नहीं हो सकता है। (४) महावीर भगवान को तीस वर्ष की आयु में दीक्षा का भाव आया; आदिनाथ भगवान को तिरासी लाख वर्ष पूर्व आयु के बाद दीक्षा का भाव आया-यह उनकी योग्यता ही ऐसी थी। (५) महावीर भगवान को दीक्षा के बारह वर्ष बाद केवलज्ञान हुआ और आदिनाथ भगवान को दीक्षा के एक हजार वर्ष बाद केवलज्ञान हुआ; मल्लिनाथ भगवान को दीक्षा लेते ही छह दिन में केवलज्ञान हुआ-यह सब उस समय पर्याय की योग्यता की बात है; इसमें किसी का कुछ भी हस्तक्षेप नहीं है। (६) सब द्रव्यों में जो-जो पर्याय होती हैं, वे उस-उस समय की योग्यता के कारण ही होती हैं। इस बात को स्वीकार करते ही दृष्टि, अपने भगवान आत्मा पर आती है, तभी वास्तव में योग्यता को माना और जाना कहा जाता है।

प्र०१२. योग्यता की बात, जीव–पुद्गल द्रव्यों में है या सब द्रव्यों में योग्यता की बात है ?

उ० (१) जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्य हैं। इन सब द्रव्यों में प्रत्येक में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं, उतनी ही पर्यायों की योग्यता हैं। (२) वह योग्यता, क्रमबद्ध और क्रमनियमित हैं। उसे जरा भी हेर–फेर कोई नहीं कर सकता है।

प्र०१३. सब द्रव्यों की पर्यायों की योग्यता क्रमबद्ध और निश्चित है, इसे कौन जानता है ?

उ० चौथे गुणस्थान से लेकर सिद्धदशा तक के सब जीव जानते हैं। जानने में जरा भी अन्तर नहीं है; मात्र प्रत्यक्ष–परोक्ष का भेद है।

प्र०१४. योग्यता योग्यता की बातें करे और आत्मा का आश्रय न लेवे, तो क्या दोष आयेगा ?

उ० वह स्वच्छन्दता का सेवन करनेवाला, चारों गतियों में घूमकर निगोद चला जाएगा–क्योंकि योग्यता को जानने मानने का फल, अपने स्वभाव का आश्रय लेकर, सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करके, क्रम से निर्वाण की प्राप्ति है।

प्र०१५. योग्यता से क्या–क्या सिद्ध होता है ?

उ० (१) जिस समय जो पर्याय उत्पन्न होने की योग्यता हो, वही नियम से होती है; (२) पर्याय होती है, वह अपने स्वकाल से होती है; (३) प्रत्येक पर्याय अपने जन्मक्षण में ही उत्पन्न होती है; (४) जिस समय, जिस पर्याय का उत्पाद होगा, उसी समय वही होगी; (५) क्रमबद्धपर्याय की सिद्धि–आदि बातों का निर्णय योग्यता के मानने से होता है।

प्र०१६. योग्यता माननेवाले को क्या–क्या प्रश्न उपस्थित नहीं होते हैं ?

उ० (१) इससे यह हुआ; (२) यह हो, यह न हो; (३) ऐसा क्यों ? – आदि प्रश्न उपस्थित नहीं होते हैं।

प्र०१७. श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ ५२ में विश्व किसे कहते हैं और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ० इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं/ये सब अनादिनिधन वस्तुएँ भिन्न–भिन्न हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुएँ अपनी–अपनी मर्यादासहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुएँ कोई किसी के आधीन नहीं हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुएँ कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होतीं।

प्र०१८. श्री प्रवचनसार गाथा ६३ में विश्व किसे कहते हैं और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ० इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं/प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता हैं। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र०१९. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था को जानने से क्या लाभ रहा ?

उ० केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर द्रव्यों में या स्वद्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा। तो फिर क्या करना–'बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात' "केवल शुद्ध आत्मा को प्रकाशित करना"–यही प्रयोजन रहा।

प्र०२०. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा १९ में क्या बताई है ?

उ० <u>दृष्टान्त</u> – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।

<u>सिद्धान्त</u> – इसीप्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है। जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य–ज्योति स्वरूप आत्मा ही है।

प्र०२१. मुझ आत्मा का स्वरूप कैसा है।

उ० चेतन को है उपयोग रूप बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल इनतैं न्यारी है जीव चाल।।

अर्थः १. 'चेतन को है उपयोग रूप' अर्थात् मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ और मुझ आत्मा का कार्य ज्ञाता दृष्टा है।

२. 'बिन्मूरत' अर्थात आँख, नाक, कान औदारिक आदि शरीररूप मेरी मूर्ति नहीं हैं।

३. 'चिन्मूरत' अर्थात चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।

४. 'अनूप' अर्थात सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।

५. 'पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल इनतें न्यारी है जीव चाल' अर्थात् मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है–इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बंध नही है।

प्र०२२. 'योग्यता' को जानने से धर्म की प्राप्ति कैसे हो जाती है ?

उ० इस विश्व के जड़–चेतन समस्त द्रव्यों के समस्त गुणों की विकारी या निर्मल सब पर्यायें सत् हैं, अहेतुक है, निरपेक्ष है, क्रमबद्ध है, एक–एक समय की हैं, उत्पाद–व्ययरूप हैं अतः दृष्टि का विषय नहीं हैं – ऐसा जानते ही ज्ञाता दृष्टा के निर्मल स्व पर प्रकाशक उपयोग में असद्भूत पर्यायों का लक्ष्य छोड़कर केवल चैतन्यस्वरूप को उपादेय किया इसी का नाम धर्म है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.३० से ७.३० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
6. सोमवार व बृहस्पतिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय ०३.३० से ०४.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। <u>किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।</u>
- <u>२६ जनवरी २०१४ को सम्पन्न</u> वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–६२ का पारितोषिक वितरण भी ३० मार्च २०१४ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31 राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–६४

दिनांक 25 मई 2014 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

नोट:– लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका (गुलाबी किताब) के प्रश्न १, ४, ८, ११, १३, १४, १५, १। १७, २०, २३, २६, २९, ३२, ३५, ३६, ३७, ३८, ४०, ४१, ४२, ४३, ४५, ४६, ४८ से ६। ६२, ६४, ६६, ६७, ६८, ६९, ७१, ७६, ७७, से ८८, ९० से ९९, १०१ से १०४, १०६ से १२८ १३०,१३२ से १६६, १६७ से १७६, १८६ से १९२ – ये सब प्रश्न पक्के याद करके नई कार्प में लिखिये।

श्री समयसार कलश 10 का रहस्य

प्र1. मुझ आत्मस्वभाव कैसा है ?

उ0 आत्मस्वभावं परभावभिन्नम्, आपूर्णमाद्यन्त विमुक्तमेकम।
विलीनसंकल्पविकल्पजालम्, प्रकाशयन् शुद्धनयोऽभ्युदेति।। (श्री समयसार कलश 10)
1. मुझ आत्मस्वभाव परभावभिन्नम् है 2. आपूर्णम है 3. आदिअन्तविमुक्तम् है 4. एकम् है 5. विलीनसंकल्पविकल्पजालम है।

(1) परभावभिन्नम् आत्मस्वभाव

प्र2. परभावभिन्नम का रहस्य क्या है ?

उ0 इस विश्व में मुझ आत्मा के अलावा –
1. जीव अनन्त–पुद्गल अनन्तान्त, धर्म अधर्म आकाश एक–एक, काल द्रव्य लोक प्रमाण असँख्यात है – ये पर द्रव्य हैं
2. इन सब द्रव्यों में अनन्त सामान्य गुण व अनन्त विशेष गुण हैं।
3. प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय है उतनी क्रमबद्ध पर्यायें भी हैं।
4. पर द्रव्य के निमित्त से होने वाले अपने में विभाव भाव भी हैं – परन्तु परभावभिन्नम् निज आत्मस्वभाव में इनका प्रवेश नहीं है। ऐसा मानसिक ज्ञान में आते ही शुद्धनय का पता चल जाता है।

प्र3. शुद्धनय का पता चलते ही ज्ञानी क्या–क्या जान जाता है ?

उ0
1. सिद्धदशा क्या है ? सिद्ध भगवान क्या करते हैं ?
2. अरहन्तदशा क्या है ? अरहन्त भगवान क्या करते हैं ?
3. श्रेणीपना क्या है ? श्रेणी में मुनिराज क्या करते हैं ?
4. आचार्य, उपाध्याय, साधुपना क्या है ? आचार्य, उपाध्याय और साधु क्या करते हैं ?
5. श्रावकपना, सम्यग्दृष्टिपना क्या है ? श्रावक, सम्यग्दृष्टि क्या करते हैं ?
6. अनादि का मिथ्यादृष्टिपना क्या है ? अनादि के मिथ्यादृष्टि क्या करते हैं ? आदि सर्व बातों का सच्चा ज्ञान, केवली के समान हो जाता है।

(2) आपूर्णम् आत्मस्वभाव

प्र4. दशवें कलश का दूसरा बोल क्या है ?

उ0 'आपूर्णम्'–मुझ आत्मस्वभाव समस्तपने परिपूर्ण है। ज्ञान से पूर्ण, दर्शन से पूर्ण, आनन्द से पूर्ण, शांति से पूर्ण, स्वच्छता से पूर्ण, कर्ता से पूर्ण आदि अनन्त शक्तियों से आत्मस्वभाव परिपूर्ण है।

प्र5. आपूर्ण स्वभाव में कितनी अनन्त शक्तियां हैं।

उ0
1. तीन लोक में अनन्त जीव हैं, 2. जीव से अनन्तगुणे पुद्गल हैं,
3. पुद्गल से अनन्तगुणे तीन काल के समय हैं,
4. तीन काल के समयों से अनन्तगुणे आकाश के प्रदेश हैं,
5. आकाश के प्रदेशों से अनन्तगुणे मुझ आत्मा में गुण हैं। ये सब गुण पूर्ण हैं और ऐसी ऐसी अनन्त शक्तियों से परिपूर्ण मुझ आत्मद्रव्य है। (अपनी महिमा को 11 बोलों के द्वारा समझना चाहिए।)

प्र6. आपूर्ण स्वभाव का क्या रहस्य है ?

उ0
1. मतिज्ञान है, 2. श्रुतज्ञान है, 3. अवधिज्ञान है, 4. मनः पर्यय ज्ञान है,
5. केवलज्ञान है – परन्तु आपूर्ण स्वभाव में इनका प्रवेश नहीं है। ऐसा जानते मानते ही कुमति–कुश्रुत का अभाव होकर, सम्यक् मति–श्रुत की प्राप्ति हो जाती है।

प्र7. मति–श्रुति की प्राप्ति होते ही क्या–क्या होता है ?

उ0 जिसमें मति–श्रुतादि समस्त भेद दूर हुए हैं, ऐसे आत्मस्वभाव के आलम्बन से ही –
1. निजपद की प्राप्ति होती है, 2. भ्रान्ति का नाश होता है,
3. जीव तत्त्व का लाभ होता है, 4. अजीव तत्त्व का (अनात्मा का) परिहार होता है
5. द्रव्यकर्म–नोकर्म–भावकर्म बलवान नहीं होते,
6. राग–द्वेष–मोह उत्पन्न नहीं होता अर्थात् आस्रव उत्पन्न नहीं होता,
7. राग–द्वेष–मोह के बिना पुनः कर्मास्रव नहीं होता अर्थात् संवर उत्पन्न होता है
8. कर्म बन्ध नहीं होता अर्थात् बन्ध का अभाव होता है,
9. पूर्वबद्ध कर्म भुक्त होकर निर्जरा को प्राप्त हो जाते हैं,
10. फिर समस्त कर्मों का अभाव होने से साक्षात मोक्ष होता है। इसलिये आपूर्ण [cut] स्वभाव ही परमार्थ है।

(3) आदिअन्तविमुक्तम् आत्मस्वभाव

प्र8. दशवें कलश का तीसरा बोल क्या है ?

उ0 'आदिअन्त विमुक्तम्' है। 'है' की आदि क्या ? 'है' का अन्त क्या ? 'है' में आ[cut] कैसी ? 'है' में विकार कैसा ? वस्तु तो है जब नजर डालें, तभी है। आदिअन्[cut] अर्थात् अनादिअनन्त मुझ परिणामिकभाव को बताती है।

प्र9. मुझ अनादि अनन्त पारिणामिकभाव का क्या रहस्य है ?

उ0
1. औपशमिकभाव है, 2. क्षायिकभाव है, 3. क्षायोपशमिकभाव है,
4. औदयिक भाव है–परन्तु मुझ अनादिअनन्त पारिणामिकभाव में इनका प्रवेश नहीं [cut] मानसिक ज्ञान में आते ही औदयिक–भाव का भागना शुरू हो जाता है और औपश[cut] धर्म के क्षयोपशमभाव की प्राप्ति कर, क्षायिकभाव की प्राप्ति होना; –यह अन[cut] पारिणामिकभाव का रहस्य है।

(4) एकम् आत्मस्वभाव

प्र10. दशवें कलश का चौथा बोल क्या है ?

उ0 मुझ आत्मस्वभाव 'एकम्' है।

प्र11. एकम् का क्या रहस्य है ?

उ0 1. मुझ आत्मा एक है, 2. एक होने से शुद्ध है, 3. शुद्ध होने से ध्रुव है, 4. ध्रुव होने से मुझ आत्मा ही उपलब्ध करने योग्य है।

प्र12. एकम् आत्मस्वभाव को जानने–मानने से क्या लाभ होता है ?

उ0 1. शरीर, धन, सुख, दुःख, शत्रु, मित्रजन अनेक हैं, अर्थात् अनन्त परमाणुओं के ढेर हैं,
2. अनेक होने से अशुद्ध हैं,
3. अशुद्ध होने से अध्रुव हैं,
4. अध्रुव होने से उपलब्ध करने योग्य नहीं हैं। एकमात्र निज आत्मा ही एक है, वही उपलब्ध करने योग्य है। –ऐसा मानसिक ज्ञान में आते ही अनेक–अशुद्ध–अध्रुव से दृष्टि हटकर अपने एक–शुद्ध–ध्रुव स्वभाव पर दृष्टि आ जाती है और फिर क्रम से अक्षय सुख की प्राप्ति हो जाती है।

(5) विलीनसंकल्पविकल्पजालम् आत्मस्वभाव

प्र13. दशवें कलश में पांचवाँ बोल क्या है और उसका रहस्य क्या है ?

उ0 मुझ आत्मस्वभाव 'विलीनसंकल्पविकल्पजालम्' है अर्थात् जिसमें संकल्प–विकल्प का प्रवेश ही नहीं है, ऐसे मुझ अनादिअनन्त आत्म स्वभाव को प्रगट करता है।

प्र14. विलीनसंकल्पविकल्पजालम् को समझने से क्या मर्म समझना चाहिए ?

उ0 1. दर्शनमोहनीय कर्म का उदय है,
2. पर्याय में संकल्प है,
3. चारित्रमोहनीय कर्म का उदय है,
4. पर्याय में विकल्प भी है। परन्तु विलीन संकल्प विकल्प जालरूप निज आत्मस्वभाव में इनका प्रवेश ही नहीं है। –ऐसा मानसिक ज्ञान में आते ही संकल्प विकल्प जालरहित निज त्रिकाली भगवान अनुभव में आ जाता है।

प्र15. संकल्प किसे कहते हैं ?

उ0 द्रव्यकर्म, भावकर्म, और नोकर्म में अपनेपने की कल्पना को संकल्प कहते हैं। संकल्प कहो, मिथ्यात्व कहो, एक ही बात है।

प्र16. विकल्प किसे कहते हैं ?

उ0 1. वास्तव में तो ज्ञान एकरूप रहकर स्वयं को जानता है। एकपने में अनन्तपना खण्डपना तो नहीं होता, तथापि ज्ञेयों के भेद से ज्ञान में भेद मालूम पड़ना विकल्प है।
2. ज्ञेयों के भेदों से ज्ञान में भेद मालूम पड़ना – यह–अनन्तानुबन्धी विकल्प है।

प्र17. पर्याय में संकल्प विकल्पों का अभाव कब होता है ?

उ0 सम्यग्दर्शन होने पर अर्थात् पूर्ण स्वरूप का अनुभव होने पर–पर्याय में संकल्प विकल्प का नाश हो जाता है।

प्र18. संकल्प–विकल्पों का नाश होने से और संकल्प विकल्प जालों से रहित स्वभाव पर दृष्टि आने से क्या होता है ?

उ0 पंच परमेष्ठियों में उसकी गिनती होने लगती है और मोक्ष का पात्र बन जाता है।

प्र019. श्री प्रवचनसार गाथा 93 में विश्व किसे कहते हैं और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ0 इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं/प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता हैं। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र020. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था को जानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर द्रव्यों में या स्वद्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा। तो फिर क्या करना–'बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात' "केवल शुद्ध आत्मा को प्रकाशित करना"–यही प्रयोजन रहा।

प्र021. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?

उ0 <u>दृष्टान्त</u> – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।

<u>सिद्धान्त</u> – इसीप्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है। जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य–ज्योति स्वरूप आत्मा ही है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.३० से ७.३० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः १०.०० से ११.०० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.४५ से ०७.४५ बजे
6. सोमवार व बृहस्पतिवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय ०३.३० से ०४.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। <u>किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।</u>
- <u>३० मार्च २०१४ को सम्पन्न</u> वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६३ का पारितोषिक वितरण भी २५ मई २०१४ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६५

दिनांक 3 अगस्त 2014 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

—प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न—

नोट:- लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका (गुलाबी किताब) के प्रश्न १, ४, ८, ११, १३, १४, १५, १६, १७, २०, २३, २५, २६, ३२, ३५, ३६, ३७, ३८, ४०, ४१, ४२, ४३, ४५, ४६, ४८ से ६०, ६२, ६४, ६६, ६७, ६८, ६९, ७१, ७६, ७७, से ८८, ९० से ९९, १०१ से १०४, १०६ से १२८, १३०,१३२ से १६६, १६७ से १७६, १८६ से १९२ – ये सब प्रश्न पक्के याद करके नई कापी में लिखिये।

श्री समयसार गाथा 14 व पंचाध्यायी सूत्र 1001 से 1005 का रहस्य

प्र1. मैं ज्ञानदर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ, मुझ आत्मा का स्वभाव शुद्ध ज्ञान है जो विश्व का प्रकाशक है। मुझ आत्मस्वभाव अर्थात् शुद्ध ज्ञान कैसा है ?

उ0 अनबद्धस्पृष्ट अनन्य अरु जो नियत देखे आत्म को।
अविशेष अनसंयुक्त उसको, शुद्धनय तू जान जो।। (श्री समयसार गाथा 14)

अर्थ मुझ आत्मस्वभाव : 1. अबद्धस्पृष्ट अर्थात् बन्धरहित, पर के स्पर्श से रहित, 2. अनन्य, 3. नियत, 4. अविशेष, और 5. असंयुक्त है।

अबद्धस्पृष्ट आत्मस्वभाव

कमलनी के पत्रवत जो द्रव्यकर्म से बद्ध ना।
फर्सित नहीं देहादि नो कर्मों से मेरा आत्मा।।

अबद्धभाव – आत्मा ज्ञानावरणादि कर्मों से बंधा हुआ है। सो यह बंध विशेषदृष्टि से है। सामान्यदृष्टि से तो सदा निर्बंध है। अबद्ध रूप है।

अस्पृष्ट भाव– आत्मा मन–वचन–काय रूप नोकर्म वर्गणाओं से छुवा हुआ है। सो यह विशेष दृष्टि से है। सामान्यदृष्टि से तो मात्र चैतन्यरूप है। उसमें मन–वचन–काय कहाँ है ? वह तो उनसे छूता भी नहीं है। जैसे कमल का पत्ता पानी से न बंधा है न छुवा है, उस प्रकार आत्मा न द्रव्यकर्मों से बंधा है न नोकर्मों से छुवा है।

प्र2. 'अबद्धस्पृष्ट' आत्मस्वभाव का क्या रहस्य है ?

उ0 1. चार घाती कर्म हैं, 2. चार अघाती कर्म हैं,
3. आत्मा कर्मों से बन्धा है, 4. आत्मा कर्मोंसे स्पर्शा है,
5. पर्याय में राग–द्वेष भी हैं। परन्तु अबद्धस्पृष्ट स्वभाव में इनका प्रवेश नहीं है–ऐसा जानते–मानते ही निज अबद्धस्पृष्ट स्वभाव दृष्टि में आ जाता है।

प्र3. अबद्धस्पृष्ट स्वभाव अर्थात शुद्ध ज्ञान दृष्टि में आने से क्या लाभ होता है ?

उ0 समस्त जिनशासन का पता चल जाता है। (श्रीसमयसार, गाथा 15 देखें)

प्र4. जिनशासन क्या है ?

उ0 जिनशासन में जिनेन्द्रदेव ने ऐसा कहा है कि पूजा, भगवान की भक्ति, वन्दना, स्वाध्याय आदि विषय व्रतसहित अर्थात् सम्यग्दर्शन सहित हों तो पुण्य है और म क्षोभरहित आत्मा का परिणाम, वह जिनशासन है। (श्रीभावपाहुड, गाथा 73)

अनन्य आत्मस्वभाव

मनुष्यादि पर्यायों से भी होता अनेका रूप ना।
ज्यूं मिट्टि निज स्वभाव से घट आदि पर्यायोंही ना।।

अनन्य भाव – आत्मा मनुष्य तिर्यंच देव नारकी रूप नाना प्रकार की असमान जातीय द्रव्यपर्यायों क करता है सो अन्य–अन्य भाव कहलाता है जैसे मिट्टी घड़ा सकोरा इत्यादि नानारूप। सामान्य दृष्टि से आत्मा इनसे रहित अनन्य रूप है। सदा एकरूप है।

प्र5. अनन्य आत्म स्वभाव का क्या रहस्य है ?

उ0 1. अत्यन्त भिन्न पर पदार्थों का पक्ष, 2. आँख–नाक–कान आदि औदारिक शरीर
3. तैजस–कार्माण शरीर का पक्ष, 4. भाषा और मन का पक्ष,
5. शुभाशुभ विकारी भावों का पक्ष, 6. अपूर्ण–पूर्ण शुद्ध पर्याय का पक्ष,
7. भेदनय का पक्ष, 8. अभेदनय का पक्ष, 9. भेदाभेद नय का पक्ष।
– यह नौ प्रकार का पक्ष अन्य–अन्य है और निज भगवान आत्मा अनन्य है मानसिक ज्ञान में आते ही अनन्य स्वभाव पर अर्थात् शुद्ध ज्ञान पर दृष्टि है और नौ क्षायिक लब्धियों की प्राप्ति हो जाती है।

नियत आत्मस्वभाव

ज्ञान के अविभाग से भी भेद को वो प्राप्त ना।
समुद्र निज स्वभाव से लहरों में घटता–बढ़ता ना।।

नियत भाव – आत्मा ज्ञानावरणीय के निमित्त से मति आदि अनेक क्षायोपशमिक धारण करता है। इन ज्ञानों में हीनाधिकता होने से आत्मा अनियत होता है जैसे समुद्र वायु के निमित्त से घटता–बढ़ता है। सामान्य घटने–बढ़ने से रहित अनन्त ज्ञान स्वरूप है। सदा नियत एक रूप है। सब गुणों में समझ लेना।

प्र6. 15वीं गाथा का तीसरा बोल क्या है और उसका क्या रहस्य है ?

उ0 मुझ आत्मस्वभाव उत्पाद व्यय रहित होने से नियत है ; यह नाम है।
1. मुझ आत्मस्वभाव नियत है, तो एक है, 2. एक है, तो नित्य है,
3. नित्य है, तो अव्यभिचारी है। नियत स्वभाव के आश्रय से ही धर्म की शुरु और पूर्णता होती है।

प्र7. नियत आत्म स्वभाव का क्या रहस्य है ?

उ0 समयसार गाथा 50 से 55 तक वर्ण से लेकर गुणस्थान पर्यन्त 29 भाव कहे उत्पाद व्यय रूप होने से अनियत हैं।
1. अनियत हैं, तो अनेक हैं, 2. अनेक हैं तो अनित्य हैं,
3. अनित्य है, तो व्यभिचारी हैं – ऐसा मानसिक ज्ञान में आते ही नियत अर्थात् शुद्ध ज्ञान पर दृष्टि आ जाती है, सम्पूर्ण दुःख का अभाव ह

प्र8. नियत स्वभाव पर दृष्टि आने से क्या क्या लाभ होता है ?

उ0 गुणस्थान–मार्गणा–जीव समास आदि से दृष्टि हटकर सदैव नियत शुद्ध ज्ञान स्वभा रहने लगती है और क्रम से सम्पूर्ण सुख की प्राप्ति कर पर्याय में अजर–अमर ब

अविशेष आत्मस्वभाव

सोने में जैसे पीला चिकना भारी पन का भेद ना।
मम आत्मा में उस तरह गुण भेद होता प्राप्त ना।।

अविशेष भाव – जैसे अखण्ड सोने में पीला चिकना भारी इत्यादि गुण भेद की कल्पना होती है उसी प्रकार आत्मा में भेददृष्टि से ज्ञान–दर्शन–चारित्र सुख आदि अनन्त गुण भेद किये जाते हैं। सो यह भेद भाव भी विशेषदृष्टि–भेददृष्टि–व्यवहारदृष्टि से है। सामान्य दृष्टि से तो आत्मा सदा अविशेष गुणभेदरहित–अखण्ड है। इसको अविशिष्ट भी कहते हैं।

प्र9. 15वीं गाथा का चौथा बोल क्या है ?

उ0 मुझ आत्मा 'अविशेष' है। अभेद अखण्ड स्वभाव को बताता है।

प्र10. अविशेष आत्मस्वभाव का – क्या रहस्य है ?

उ0 1. ज्ञान है, 2. दर्शन है,
3. चारित्र है ऐसा भेद है, – परन्तु अविशेष अभेद आत्मा में ऐसा भेद नहीं है, भेद तो समझाने की अपेक्षा से है। ऐसा मानसिक ज्ञान में आते ही अविशेष अभेद आत्मस्वभाव पर दृष्टि आ जाती है।

प्र11. द्रव्य में गुण भेदरूप हैं या अभेदरूप हैं ?

उ0 दोनों हैं। भेदरूप भी हैं, अभेदरूप भी हैं। संज्ञा, संख्या, लक्षण, प्रयोजन की अपेक्षा भेदरूप हैं। प्रदेशों की अपेक्षा अभेदरूप हैं।

असंयुक्त आत्मस्वभाव

स्वभाव से तो जल कभी अग्नि से गर्माता नहीं।
त्यों बोध बीज स्वभाव से वो रागमय होता नहीं।।
ऐसे अपने आत्म की अनुभूति हो भूतार्थ से।
शुद्ध नय कहवाय वो रे शिष्य यूं तू जान ले।।

असंयुक्त भाव – जैसे संयोगी दृष्टि से पानी गरमी से संयुक्त है पर स्वभाव दृष्टि से पानी ठण्डा है। उसमें गरमी कहाँ है। उसी प्रकार पर्यायदृष्टि से आत्मा राग–द्वेष–मोह रूप परिणमन करता है पर सामान्य ज्ञान स्वभाव दृष्टि से राग द्वेष मोह से संयुक्त नहीं है। असंयुक्त है।

प्र12. 15वीं गाथा का पांचवा बोल क्या है ?

उ0 मुझ आत्मस्वभाव 'असंयुक्त' है।

प्र13. मुझ आत्मस्वभाव 'असंयुक्त' है इसका क्या रहस्य है ?

उ0 1. द्रव्यकर्म का उदय है,
2. पर्याय में मोह, राग–द्वेष हैं, परन्तु असंयुक्त स्वभाव में इनका प्रवेश नहीं है। ऐसा जानते मानते ही बहिरात्मपने का अभाव और अन्तरात्मपने की प्राप्ति हो जाती है।

प्र14. आत्म का वह सामान्य स्वरूप क्या है कि जिस रूप ज्ञानी अपने को अनुभव करता है।

उ0 आत्म–अनुभवी ज्ञानी अपने को सदा द्रव्यदृष्टि से एक ज्ञान का ही पात्र–स्थान–ज्ञानमय देखता है (अनुभव करता है) और अपने को 1–बद्ध (द्रव्यकर्म से बंधा हुआ) 2–स्पृष्ट (नोकर्म से छुवा हुआ) 3–अन्य अन्य (नरनारकादि रूप) 4–अनियत (ज्ञान की हानि वृद्धि सहित), 5–सविशेष (गुण भेद सहित), 6–संयुक्त (राग सहित) भावों का अस्थान जानता है क्योंकि ये भाव आत्मा का स्वरूप नहीं है। अर्थात् ये बद्धस्पृष्टादि 5 भाव हैं। ज्ञानी अपने को इनसे रहित अनुभव करता है। ज्ञानी अपने को शुद्ध ज्ञान सामान्य रूप अनुभव करता है और सामान्य का स्वरूप वही है जो सिद्ध का स्वरूप है। उस में कर्म के उदय जन्य कोई भी भाव का ग्रहण नहीं होता।

प्र019. श्री प्रवचनसार गाथा 93 में विश्व किसे कहते हैं और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ0 इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं/प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र020. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था को जानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर द्रव्यों में या स्वद्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा। तो फिर क्या करना–'बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात् "केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना"–यही प्रयोजन रहा।

प्र021. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?

उ0 दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।

सिद्धान्त – इसीप्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है। जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य–ज्योति स्वरूप आत्मा ही है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चो सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.३० से ७.३० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.४५ से ०७.४५ बजे
6. रविवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय ०६.०० से ०७.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- २५ मई २०१४ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६४ का पारितोषिक वितरण भी ३ अगस्त २०१४ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६६

दिनांक 19 अक्टूबर 2014 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र1. पंचपरमेष्ठियों द्वारा बताया मार्ग क्या है।

उ० आत्मा ने अज्ञान से चार गतियों में भ्रमण करते हुए सबसे अधिक भव एकेन्द्रियादि तिर्यंचगति के धारण किये हैं। तदुपरांत मनुष्य, नरक और स्वर्ग के भव भी अनन्तबार किये हैं। उनमें भी मनुष्य की अपेक्षा नरक के और नरक की अपेक्षा स्वर्ग के भव अनन्तगुने किये हैं। प्रमाण में असंख्य भव स्वर्ग के और नरक के करे तब एक भव मनुष्य का मिलता है। ऐसी मनुष्यभव की दुर्लभता है, और ऐसे दुर्लभ मनुष्य भव में जैन धर्म का वीतरागी उपदेश सुनने को मिलना अत्यन्त दुर्लभ है। ऐसा दुर्लभ मनुष्यभव और वीतरागी जैनधर्म का उपदेश तुझे वर्तमान में महाभाग्य से प्राप्त हुआ है, तो अब शीघ्र जाग, सावधान हो और शरीरादि परद्रव्यों की प्रीति छोड़कर आत्मा की प्रतीति द्वारा सम्यग्दर्शन प्रगट करके भवदुःखों का अन्त कर।

प्र2. वीतरागी जैन धर्म का उपदेश क्या है ?

उ० जाति अपेक्षा छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं। जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल-प्रत्येक द्रव्य अनन्त सामान्य गुणों और अनन्त विशेष गुणों का समूह हैं। प्रत्येक द्रव्य में समान रुप से पाये जाने वाले गुण-सामान्य गुण हैं जो कि अनन्त हैं, उनमें मुख्य छह है – अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्व और प्रदेशत्व। सब द्रव्यों में न रहकर अपने-अपने द्रव्य में रहने वाले गुण-विशेष गुण हैं जिनसे सब द्रव्यों की पृथकता का ज्ञान होता है। प्रत्येक द्रव्य में गुण संख्या अपेक्षा समान हैं कम या ज्यादा नहीं। सामान्य और विशेष गुणों में हर समय एक पर्याय का उत्पाद और पूर्व पर्याय का व्यय स्वयं से ही होता है अतः प्रत्येक द्रव्य-गुण में अपनी-अपनी पूर्ण सामर्थ्य है। किसी द्रव्य को अपने परिणमन में पर के सहयोग की रंचमात्र भी आवश्यकता नहीं है।

प्र03. श्री प्रवचनसार गाथा 93 में विश्व किसे कहते हैं और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ० इस विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं/प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र04. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था को जानने से क्या लाभ रहा ?

उ० केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर द्रव्यों में या स्वद्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा। तो फिर क्या करना-'बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात "केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना"-यही प्रयोजन रहा।

प्र05. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?
उ0 दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।

सिद्धान्त – इसीप्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है। जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य–ज्योति स्वरूप आत्मा ही है।

भेदज्ञान

प्र6. तुम कौन हो ?
उ0 मैं ज्ञान–दर्शन–चारित्र आदि अनन्तगुणों का अभेद पिण्ड ज्ञायक भगवान आत्मा हूँ।

प्र7. तुम कौन नहीं हो ?
उ0 अत्यंत भिन्न पर पदार्थ, आँख, नाक, कान, शरीर–मन–वाणी, आठ कर्म, शुभाशुभ विकारीभाव मैं नहीं हूँ।

प्र8. तुम कब से हो ?
उ0 मैं तो जन्म–मरण रहित, अनादिअनन्त, अनादिकाल से हूँ।

प्र9. जन्म–मरण तो होता है, क्या यह बात असत्य है ?
उ0 शरीर का संयोग–वियोग होता है, मुझ आत्मा का नहीं।

प्र10. तुम दुखी क्यों हो ?
उ0 ज्ञान–दर्शनादि अभेद, एक, निज आत्मा को भूलकर, मोहरूपी शराब पीने के कारण अनादिकाल से एक–एक समय करके, अपनी मूर्खता से ही दुःखी हो रहा हूँ।

प्र11. अपनी मूर्खता क्या है ?
उ0 निर्मल ज्ञान स्वरूप को भूलकर शरीरादि पर पदार्थों में अपनेपने की मान्यता अर्थात् मिथ्यात्व यह अपनी मूर्खता है।

प्र12. मिथ्यात्व कैसा पाप है ?
उ0 मिथ्यात्व जुआ, माँस आदि सप्त व्यसनों से भी बड़ा पाप है।

प्र13. मिथ्यात्व सप्त व्यसनों से भी बड़ा पाप है–यह कहाँ आया है ?
उ0 मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 191 में लिखा है–
जैनधर्म में तो यह आम्नाय है कि पहले बड़ा पाप छुड़ाकर फिर छोटा पाप छुड़ाया है। इसलिए इस मिथ्यात्व को सप्त व्यसनादिक से भी बड़ा पाप जानकर पहले छुड़ाया है– इसलिए जो पाप के फल से डरते हैं, अपने आत्मा को दुःख समुद्र में डुबाना नहीं चाहते। वे जीव इस मिथ्यात्व को अवश्य छोड़े। सर्वप्रकार के मिथ्यात्व भाव को छोड़कर सम्यग्दृष्टि होना योग्य है। क्योंकि संसार का मूल मिथ्यात्व है और मोक्ष का मूल सम्यक्त्व है।

प्र14. मिथ्यात्व कितने प्रकार का है ?
उ0 दो प्रकार का है। (1) अगृहीत मिथ्यादर्शन–ज्ञान–चारित्र–जो अनादिकाल से एक–एक समय करके चला आ रहा है। (2) गृहीत मिथ्यादर्शन–ज्ञान–चारित्र–जो विशेषरूप से मनुष्य जन्म पाने पर कुदेव, कुगुरु, कुधर्म से समय–समय पर नया–नया ग्रहण करता है।

प्र15. मिथ्यादर्शन–मिथ्याज्ञान–मिथ्याचारित्र किसे कहते हैं ?
उ0 (1) मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ–इस बात का पता न होने से मैं मनुष्य हूँ, मैं स्त्री हूँ–ऐसा श्रद्धान मिथ्यादर्शन है, ऐसा ज्ञान मिथ्याज्ञान है और ऐसा ही आचरण मिथ्याचारित्र है।

(2) ज्ञान मुझ आत्मा के ज्ञान गुण में से आता है और सुख मुझ आत्मा के सुख गुण में से आता है–इस बात का पता न होने से ज्ञेयों से ज्ञान होता है, इन्द्रियों से ज्ञान होता है, पांच इन्द्रियों के विषयों से सुख मिलता है–ऐसा श्रद्धान मिथ्यादर्शन है, ऐसा ज्ञान मिथ्याज्ञान है और ऐसा ही आचरण मिथ्याचारित्र है।

(3) मेरा कार्य ज्ञाता दृष्टा है इस बात का पता न होने से उठना–बैठना–चलना–बोलना–खाना–पीना–आदि शरीर की क्रियाओं में अपनेपने का श्रद्धान मिथ्यादर्शन है, ऐसा ज्ञान मिथ्याज्ञान है और ऐसा ही आचरण मिथ्याचारित्र है।

प्र16. सम्यग्दर्शन–सम्यग्ज्ञान–सम्यक्चारित्र किसे कहते हैं ?

उ0 (1) शरीरादि परद्रव्यों से सर्वथा भिन्न मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ–ऐसा जानकर निज आत्मा का अर्थात् निर्मल ज्ञान स्वरूप का श्रद्धान–सम्यग्दर्शन है, निर्मल ज्ञान का ज्ञान सम्यक्ज्ञान है और निर्मल ज्ञान में आचरण सम्यक्चारित्र है।

(2) ज्ञेयों से, इन्द्रियों से पांचों इन्द्रियों के विषयों से सर्वथा भिन्न ज्ञान मुझ आत्मा के ज्ञान गुण में से आता है और सुख मुझ आत्मा के सुख गुण में से आता है–ऐसा जानकर ज्ञानस्वरूप सुखस्वरूप निज आत्मा का श्रद्धान–सम्यग्दर्शन है, निज आत्मा का ज्ञान सम्यक्ज्ञान है और निज आत्मा में आचरण सम्यक्चारित्र है।

(3) उठने, बैठने, चलने, बोलने आदि शरीर की क्रियाओं से सर्वथा भिन्न मेरा कार्य ज्ञाता दृष्टा है–ऐसा जानकर ज्ञाता दृष्टास्वभावी निज आत्मा का श्रद्धान सम्यक्दर्शन है, निज आत्मा का ज्ञान सम्यक्ज्ञान है और निज आत्मा में ही आचरण सम्यक्चारित्र है।

प्र17. तुमने आज तक क्या किया ?

उ0 निर्मल ज्ञान में असद्भूत शरीर, धन, मकान आदि पर पदार्थों को अपना मानकर मात्र मोह–राग द्वेष किया।

प्र18. अब मैं क्या करूँ ?

उ0 ज्ञान–दर्शन–चारित्र आदि अनंतगुणों का अभेद पिण्ड जो स्वयं आत्मा है उसकी पहचानकर।

प्र19. मैं अपनी पहचान कैसे करूँ ?

उ0 मिथ्यादृष्टि के कार्यक्षेत्र की मर्यादा विकारी भावों तक है, ज्ञानियों की मर्यादा शुद्ध भावों तक है। परन्तु पर पदार्थों में ज्ञानी अज्ञानी कुछ भी नहीं कर सकता है–ऐसा जानकर अपनी आत्मा का आश्रय ले तो स्वयं की पहचान हो।

प्र20. संसार और मोक्ष क्या है ?

उ0 (1) आत्मा ज्ञाता–दृष्टा के उपयोग को जब असद्भूत शरीरादि पर पदार्थों की ओर लक्ष्य करके पर में यह "मैं" ऐसा दृढ़ कर लेता है–इसका नाम संसार है। (2) आत्मा ज्ञाता दृष्टा के उपयोग को जब स्व की ओर लक्ष्य करके स्व में यह "मैं" ऐसा दृढ़ कर लेता है–इसका नाम मोक्ष है।

प्र21. संसार का अभाव और मोक्ष की प्राप्ति के लिए क्या करें ?

उ0 ज्ञेयों से भिन्न निर्मल ज्ञान का आश्रय लिए बिना संसार का अभाव और मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती है। इसलिए अपने निज ज्ञायक स्वभाव का आश्रय लें, तो संसार का अभाव और मोक्ष की प्राप्ति हो।

प्र22. निम्न प्रश्नों के उत्तर याद कीजिए –

उ0 1. विश्व 2. विश्व की व्यवस्था 3. द्रव्य 4. गुण 5. पर्याय 6. द्रव्यों के नाम व संख्या 7. छह द्रव्यों की परिभाषा 8. छहों द्रव्यों की सत्ता 9. पुद्गल के भेद 10. परमाणु 11. स्कंध 12. स्कंध के भेद 13. पुद्गल की 27 पर्यायें 14. तीन प्रकार के बंध व परिभाषा 15. गुणों के भेद 16. सामान्य गुण नाम व संख्या 17. विशेष गुण 18. सात तत्व के नाम व परिभाषा।

प्र23. निम्नलिखित पर्यायों का कर्ता कौन है –

उ0 हल्कापन, दुर्गंध, शब्द का ज्ञान, सुरीला गाना, लड़का, मकान, सोने का हार, बोलना, चलना, आठकर्म, नारकशरीर, मनुष्यशरीर, द्रव्यमन, राग–द्वेष, खट्‌टापना।

भजन

निर्ग्रन्थों का मार्ग हमको प्राणों से भी प्यारा है...
दिगम्बर वेश न्यारा है... निर्ग्रन्थों का मार्ग ।।टेक।।
शुद्धात्मा में ही, जब लीन होने को, किसी का मन मचलता है।
तीन कषायों का, तब राग परिणति से, सहज ही टलता है।
वस्त्र का धागा.. वस्त्र का धागा नहीं फिर उसने तन पर धारा है।।
दिगम्बर वेश न्यारा है... निर्ग्रन्थों का मार्ग ।।1।।

पञ्च–इन्द्रिय का, विस्तार नहीं जिसमें, वह देह ही परिग्रह है।
तन में नहीं तन्मय, है दृष्टि में चिन्मय, शुद्धात्मा ही गृह है।।
पर्यायों से पार... पर्यायों से पार, त्रिकाली ध्रुव का सदा सहारा है।।
दिगम्बर वेश न्यारा है... निर्ग्रन्थों का मार्ग ।।2।।

मूलगुण पालन, जिनका सहज जीवन, निरन्तर स्वसंवेदन।
एक ध्रुव सामान्य, में ही सदा रमते, रत्नत्रय आभूषण।
निर्विकल्प अनुभव.. निर्विकल्प अनुभव से ही जिनने निज को श्रंगारा है।।
दिगम्बर वेश न्यारा है... निर्ग्रन्थों का मार्ग ।।3।।

आनन्द के झरने, झरते प्रदेशों में, निज ध्यान जब धरते हैं।
मोह रिपु क्षण में, तब भस्म हो जाता, श्रेणी जब चढ़ते हैं।।
अन्तर्मुहरत में.. अन्तर्मुहरत में ही जिनने अनन्त चतुष्टय धारा है।।
दिगम्बर वेश न्यारा है... निर्ग्रन्थों का मार्ग ।।4।।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.३० से ७.३० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.४५ से ०७.४५ बजे
6. रविवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय ०६.०० से ०७.०० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- ३ अगस्त २०१४ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–६५ का पारितोषिक वितरण भी १६ अक्टूबर २०१४ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

Diya Jain

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६७

दिनांक 21 दिसम्बर 2014 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

—प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न—

निरन्तर चिंतवन करने योग्य परमागम के अनमोल वचन

प्र01. मैं कौन हूं, मेरा स्वरूप क्या है और धर्म कैसे प्रगट होता है ?

उ0 मैं जीव हूं, मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, ज्ञान चमत्कारिक है क्योकि ज्ञान विश्व में जाता नही और विश्व ज्ञान में आता नही लेकिन ज्ञान सब कुछ जानता है। यह चमत्कारिक ज्ञान स्वयं को विश्व रूप अनुभव करता है यही अधर्म है, संसार है और यही चमत्कारिक ज्ञान स्वयं को केवल ज्ञान (मात्र ज्ञान) रूप अनुभव करता है, यही धर्म है, जिसके फल में श्रद्धा–चारित्र आदि अनन्त गुणों की निर्मल पर्यायें प्रगट होती है और यह जीव भगवान बन जाता है।

प्र02. विश्व किसे कहते है – प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?

उ0 इस विश्व में जीव अनन्त है, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजन पर्याय व अनन्त अर्थ पर्यायों की सत्ता है।

प्र03. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 52 में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ0 इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नही हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती।

प्र04. श्री प्रवचनसार गाथा 93 में विश्व किसे कहते है और विश्व की व्यवस्था किस प्रकार है ?

उ0 इस विश्व मे जीव अनन्त–पुद्गल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र05. श्री समयसार गाथा 3 में विश्व किसे कहते हैं और विश्व व्यवस्था किस प्रकार है ?

उ0 श्री समयसार की गाथा 3 में आता है – "लोक में सर्वत्र जो कुछ जितने पदार्थ हैं, वे सब निश्चय से एकत्व निश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को प्राप्त होते है क्योकि–

(1) वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को चुम्बन करते है–स्पर्श करते है, तथापि वे परस्पर एक–दूसरे को स्पर्श नही करते।

(2) वे सब पदार्थ अत्यन्त निकट एक क्षेत्रावगाह रूप से तिष्ठ रहे हैं, तथापि वे सदाकाल अपने स्वरूप से च्युत नही होते।

(3) वे सब पदार्थ पर–रूप परिणमन न करने से अनन्त व्यक्तिता नष्ट नही होती, इसलिये वे टंकोत्कीर्ण की भांति शाश्वत–स्थिर रहते है।

(4) वे सब पदार्थ समस्त विरूद्ध कार्य तथा अविरूद्ध कार्य दोनो की हेतूता से विश्व का सदा उपकार करते हैं अर्थात टिकाये रखते हैं।

प्र6. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्था कार्तिकेय अनुप्रेक्षा गाथा 321 से 323 तक में क्या बतायी है ?

उ0 "जं जस्स जम्मि देसे जेण विहाणेण जम्मि कालम्मि
णादं जिणेण णियदं जम्मं वा अहव मरणं वा" ।।321।।
"तं तस्स तम्मि देसे तेण विहाणेण तम्मि कालम्मि
को सक्कदि वारेदुं इंदो वा तह जिणिंदो वा" ।।322।।

(1) जिस जीव को जिस देश में, जिस काल में जिस विधि से जन्म–मरण, सुख–दुख तथा रोग तथा दारिद्रय इत्यादि जैसे सर्वज्ञ देव ने जाने हैं उसी प्रकार वे सब नियम से होगें।

(2) सर्वज्ञदेव ने जिस प्रकार जाना है उसी प्रकार उस जीव के उसी देश में, उसी काल में और उसी विधि से नियमपूर्वक सब होता है उसके निवारण करने के लिये इन्द्र जिनेन्द्र–तीर्थंकर देव कोई भी समर्थ नही हैं।

"एवं जो णिच्छयदो जाणदि दव्वाणि सव्व पज्जाये
सो सदिट्ठी सुद्दो, जो सकदि सो हु कुदिट्ठी" ।।323।।

इस प्रकार निश्चय से सर्व द्रव्यों अर्थात जीव अनन्त–पुद्गल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक, काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात को तथा इन द्रव्यों की समस्त पर्यायों को जो सर्वज्ञ के केवलज्ञान के अनुसार जानता है, श्रद्धा करता है वह शुद्ध सम्यग्दृष्टि है और जो ऐसी श्रद्धा नही करता शंका सन्देह करता है वह सर्वज्ञ के आगम के प्रतिकूल है, प्रगट रूप में मिथ्यादृष्टि है।

प्र7. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था जानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 केवलज्ञान के अनुसार, विश्व की व्यवस्थित–व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर–द्रव्यों में या स्व–द्रव्य में कुछ भी करना नही रहा। तो फिर क्या करना–बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात–केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना–यही प्रयोजन रहा।

प्र8. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?

उ0 दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहां ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।

सिद्धान्त – इसी प्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण मे जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य– ज्योति स्वरूप आत्मा ही है।

प्र9. शुद्ध चेतना का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?

उ0 चेतन को है उपयोग रूप, बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप
पुद्गल नभ–धर्म–अधर्म–काल, इनतै न्यारी है जीव चाल

(1) चेतन को है उपयोग रूप – मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूं। मेरा कार्य ज्ञाता–दृष्टा है।

(2) बिन्मूरत – आंख, नाक, कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही है।

(3) चिन्मूरत – चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।

(4) अनूप – सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।

(5) पुद्गल–नभ–धर्म–अधर्म–काल इनतै न्यारी है जीव चाल– मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है – इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है।

प्र10. जीव का स्वरूप श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 38 में क्या आया है ?

उ0 स्व – (1) अमुर्तिक प्रदेशो का पुन्ज–मुझ आत्मा का क्षेत्र है।

(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणो का धारी–मुझ आत्मा का भाव है।
(3) अनादिनिधन – मुझ आत्मा का काल है।
(4) वस्तु आप – मुझ आत्म द्रव्य है।

पर – मूर्तिक पुद्गल द्रव्यों का पिण्ड प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणो से रहित, स्पर्श–रस–गन्ध–वर्ण सहित नवीन जिनका संयोग हुआ है ऐसे शरीर, धन, मकान आदि पुद्गल पर है।

प्र11. मुझ जीव द्रव्य का स्वरूप श्री समयसार गाथा 2 में क्या बताया है।

उ0 (1) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद–व्यय–धौव्य स्वरूप है।
(2) मुझ जीव पदार्थ चैतन्य स्वरूपता से नित्य उद्योत रूप निर्मल–स्पष्ट–दर्शन ज्ञान ज्योति स्वरूप है।
(3) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्म स्वरुप द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।
(4) मुझ जीव पदार्थ का स्व–पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकार रुप एक है।
(5) मुझ जीव पदार्थ अन्य जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्य गुण स्वरुप है।
(6) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरुप को नही छोड़ता।
(7) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता– दृष्टा स्वभाव में स्थित रहे–तो स्व–समय है।
(8) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता – दृष्टा स्वभाव से छुटकर पर स्वभाव में स्थित रहे अर्थात मोह–राग–द्वेष रुप होकर परिणमें तो पर–समय है।

प्र12. छठी गाथा में मुझ ज्ञायक भाव का स्वरुप क्या बताया है ?

उ0 (1) मुझ ज्ञायक भाव स्वतः सिद्ध अनादि अनन्त है,
(2) मुझ ज्ञायक भाव नित्य प्रकाशमान है,
(3) मुझ ज्ञायक भाव स्पष्ट प्रतिभास रुप है,
(4) मुझ ज्ञायक भाव ससांर अवस्था में शुभाशुभ भावों रुप परिणमता हुआ होने पर भी स्वभाव दृष्टि से देखने में आवे तो शुभाशुभ भावों रुप परिणमता ही नही है।
(5) मुझ ज्ञायक भाव समस्त परद्रव्यों और परभावों से भिन्न रुप से उपासने पर शुद्ध कहलाता है।
(6) अंतरंग में ज्ञेयाकार रुप से परिणमता होने पर भी ज्ञेय पदार्थों के साथ मुझ ज्ञायक भाव का वास्तव में कोई सम्बन्ध नही है।

प्र13. श्री प्रवचनसार ज्ञेय अधिकार गाथा 190 से 200 का रहस्य क्या है ?

उ0 (1) शरीर, धन, सुख, दुख, शत्रु, मित्रजन– यह सब कुछ मुझ जीव के ध्रुव नही है।
(2) ध्रुव तो उपयोगात्मक आत्मा है जो (1) ज्ञानात्मक (2) दर्शनरुप (3) इन्द्रियों के बिना ही सबको जानने वाला अतीन्द्रिय महापदार्थ (4) ज्ञेय पदार्थो का ग्रहण त्याग ना करने से अचल (5) ज्ञेय पर–द्रव्यों का आलम्बन ना लेने से निरालम्ब है।
(3) इसलिये मुझ भगवान आत्मा एक है, एक होने से शुद्ध है, शुद्ध होने से ध्रुव है, ध्रुव होने से एक मात्र निज भगवान आत्मा ही उपलब्ध करने योग्य है तथा शरीर –धन–सुख–दुख–शत्रुमित्र जन ये सब अनेक है अर्थात् परमाणुओं के ढेर हैं अनेक हैं तो अशुद्ध है, अशुद्ध हैं तो अध्रुव हैं, अध्रुव हैं तो ये सब उपलब्ध करके योग्य नही है।
(4) ऐसा जानकर निज आत्मा का श्रद्धान– ज्ञान – आचरण करते ही मोह नष्ट हो जाता है, अक्षय सुख की प्राप्ति होती है। जन्म– मरण का अभाव हो जाता है।

प्र14. अमूर्तिक निज आत्मा और मूर्तिक कर्म व शरीर के बन्धान मे विरोध क्यों नही ?

उ0 (1) मुझ जीव द्रव्य तो देखने–जानने रूप चेतना गुण का धारक है।
(2) मुझ जीव द्रव्य इन्द्रिय गम्य ना होने योग्य अमूर्तिक है।
(3) मुझ जीव द्रव्य सकोंच विस्तार शक्ति सहित असंख्यात प्रदेशी एक द्रव्य है।

तथा– (1) कर्म व शरीर चेतना गुण रहित जड़ है।
(2) कर्म व शरीर मूर्तिक है।
(3) कर्म व शरीर अनन्त पुद्गल परमाणुओ का पिण्ड है इसलिये एक द्रव्य नही अनेक द्रव्य है।

मुझ जीव–कर्म व शरीर का अनादि से सम्बन्ध है तो भी :–

तथा– (1) मुझ जीव का कोई प्रदेश कर्म व शरीर रूप नही होता।
(2) कर्म व शरीर का कोई परमाणु मुझ जीव रूप नही होता।
(3) अपने–अपने लक्षण को धारण किये भिन्न–भिन्न ही रहते है।

तथा– (1) मुझ जीव, कर्म व शरीर के इस बन्धान मे कोई किसी को करता तो है नही।
(2) जब तक बधांन रहे, साथ रहे, बिछुड़े नही।
(3) कारण–कार्यपना (निमित्त–नैमित्तिकपना) इनके बना रहे ; इतना ही यहां बधांन जानना।

इसलिये अमूर्तिक निज आत्मा और मूर्तिक कर्म व शरीर के बधांन होने मे कुछ विरोध है नही।

प्र15. परमागम के अमूल्य 11 सिद्धान्त क्या है ?

उ0 (1) एक द्रव्य दुसरे द्रव्य को स्पर्श नही करता है (श्री समयसार गाथा 3)
(2) प्रत्येक द्रव्य की प्रत्येक पर्याय क्रमबद्ध ही होती है (श्री समयसार गाथा 308 से 311 तक)
(3) उत्पाद–उत्पाद से है व्यय या ध्रुव से नही है (श्री प्रवचनसार गाथा 101)
(4) प्रत्येक पर्याय अपने जन्म–क्षण मे ही होती है (श्री प्रवचनसार गाथा 102)
(5) उत्पाद अपने षट्कारक के परिणमन से ही होता है (श्री पंचास्तिकाय संग्रह गाथा 62)
(6) पर्याय और ध्रुव के प्रदेश भिन्न भिन्न है (श्री समयसार गाथा 181 से 183 तक)
(7) भाव शक्ति के कारण पर्याय होती ही है, करनी पड़ती नहीं (श्री समयसार 33वीं शक्ति)
(8) निज भूतार्थ स्वभाव के आश्रय से ही सम्यग्दर्शन होता है (श्री समयसार 11)
(9) चारो अनुयोगो का तात्पर्य मात्र वीतरागता है (पंचास्तिकायसंग्रह गाथा 172)
(10) स्व द्रव्य में भी द्रव्य–गुण–पर्यायो का भेद विचारना वह अन्यवशपणा है। (श्री नियमसार गाथा 145)
(11) ध्रुव का आलम्बन है वेदन नहीं पर्याय का वेदन है लेकिन आलम्बन नही। (बहनश्री के वचनामृत)

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें :-

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ ये ७.०० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.३० बजे
6. रविवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय ०६.३० से ०७.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- १६ अक्टूबर २०१४ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६५ का पारितोषिक वितरण भी २१ दिसम्बर २०१४ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी।
स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

Eishna Jain

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६८

दिनांक 22 फरवरी 2015 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

—प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न—

निरन्तर चिंतवन करने योग्य परमागम के अनमोल वचन

प्र01. मैं कौन हूं, मेरा स्वरूप क्या है और धर्म कैसे प्रगट होता है ?

उ0 मैं जीव हूं मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, ज्ञान चमत्कारिक है क्योंकि ज्ञान विश्व में जाता नहीं, और विश्व ज्ञान में आता नहीं लेकिन ज्ञान सब कुछ जानता है और ज्ञान अकेला है। विश्व का प्रत्येक सत् अपनी अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ – ऐसा भेदज्ञान न होने के कारण यह चमत्कारिक ज्ञान अर्थात् विश्व का ज्ञान, स्वयं को अर्थात् अकेले ज्ञान को विश्वरूप अनुभव करता है यही अधर्म है संसार है। विश्व का प्रत्येक सत् अपनी अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ – ऐसा भेदज्ञान होने पर – यह चमत्कारिक ज्ञान अर्थात् विश्व का ज्ञान, स्वयं को अर्थात् अकेले ज्ञान को ज्ञान मात्र अर्थात् अकेला ज्ञान ही अनुभव करता है यही धर्म है, जिसके फल में श्रद्धा–चारित्र आदि अनन्त गुणो की निर्मल पर्यायें प्रगट होती है और यह जीव भगवान बन जाता है।

प्र02. विश्व किसे कहते हैं – प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?

उ0 इस विश्व में जीव अनन्त है, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजन पर्याय व अनन्त अर्थ पर्यायों की सत्ता है।

प्र03. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 52 में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ0 इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नही हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती।

प्र04. श्री प्रवचनसार गाथा 93 में विश्व किसे कहते है और विश्व की व्यवस्था किस प्रकार है ?

उ0 इस विश्व मे जीव अनन्त–पुदगल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र05. श्री समयसार गाथा 3 में विश्व किसे कहते हैं और विश्व व्यवस्था किस प्रकार है ?

उ0 श्री समयसार की गाथा 3 में आता है – "लोक में सर्वत्र जो कुछ जितने पदार्थ हैं, वे सब निश्चय से एकत्व निश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को प्राप्त होते है क्योकि–

(1) वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अर्न्तमग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को चुम्बन करते है–स्पर्श करते है, तथापि वे परस्पर एक–दुसरे को स्पर्श नही करते।

(2) वे सब पदार्थ अत्यन्त निकट एक क्षेत्रावगाह रूप से तिष्ठ रहे हैं, तथापि वे सदाकाल अपने स्वरूप से च्युत नही होते।
(3) वे सब पदार्थ पर–रूप परिणमन न करने से अनन्त व्यक्तिता नष्ट नही होती, इसलिये वे टंकोत्कीर्ण की भांति शाश्वत–स्थिर रहते है।
(4) वे सब पदार्थ समस्त विरूद्ध कार्य तथा अविरूद्ध कार्य दोनो की हेतुता से विश्व का सदा उपकार करते हैं अर्थात टिकाये रखते हैं।

प्र6. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्था कार्तिकेय अनुप्रेक्षा गाथा 321 से 323 तक में क्या बताती है ?

उ0 (1) जिस जीव को जिस देश में, जिस काल में जिस विधि से जन्म–मरण, सुख–दुख तथा रोग और दारिद्रय इत्यादि जैसे सर्वज्ञ देव ने जाने हैं उसी प्रकार वे सब नियम से होगें।
(2) सर्वज्ञदेव ने जिस प्रकार जाना है उसी प्रकार उस जीव के उसी देश में, उसी काल में और उसी विधि से नियमपूर्वक सब होता है उसके निवारण करने के लिये इन्द्र जिनेन्द्र–तीर्थंकर देव कोई भी समर्थ नही हैं।
(3) इस प्रकार निश्चय से सर्व द्रव्यो अर्थात जीव अनन्त–पुद्गल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात को तथा इन द्रव्यों की समस्त पर्यायों को जो सर्वज्ञ के केवलज्ञान के अनुसार जानता है, श्रद्धा करता है वह शुद्ध सम्यग्दृष्टि है और जो ऐसी श्रद्धा नही करता शंका सन्देह करता है वह सर्वज्ञ के आगम के प्रतिकूल है, प्रगट रूप में मिथ्यादृष्टि है।

प्र7. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था जानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 केवलज्ञान के अनुसार, विश्व की व्यवस्थित–व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर–द्रव्यों में या स्व–द्रव्य में कुछ भी करना नही रहा। तो फिर क्या करना–बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात–केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना–यही प्रयोजन रहा।

प्र8. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?

उ0 दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहां ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।

सिद्धान्त – इसी प्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण मे जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य– ज्योति स्वरूप आत्मा ही है अर्थात् अकेला ज्ञान ही है।

प्र9. शुद्ध चेतना का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?

उ0
चेतन को है उपयोग रूप, बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप
पुद्गल नभ–धर्म–अधर्म–काल, इनतै न्यारी है जीव चाल

(1) चेतन को है उपयोग रूप – मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूं। मेरा कार्य ज्ञाता–दृष्टा है।
(2) बिन्मूरत – आंख, नाक, कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही है।
(3) चिन्मूरत – चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।
(4) अनूप – सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।
(5) पुद्गल–नभ–धर्म–अधर्म–काल इनतै न्यारी है जीव चाल– मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है – इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है।

प्र10. जीव का स्वरूप श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 38 में क्या बताया है ?

उ0 स्व – (1) अमूर्तिक प्रदेशो का पुन्ज–मुझ आत्मा का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी–मुझ आत्मा का भाव है।

(3) अनादिनिधन – मुझ आत्मा का काल है।
(4) चैतन्य मात्र वस्तु – मुझ आत्म द्रव्य है।

पर – (1) मूर्तिक पुद्गल द्रव्यों का पिण्ड–शरीरादि का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणो से रहित, स्पर्शादि सहित – शरीरादि का भाव है।
(3) नवीन जिनका संयोग हुआ है – शरीरादि का काल है।
(4) ऐसे शरीर, धन, मकान आदि पुद्गल पर द्रव्य हैं।

प्र11. मुझ जीव द्रव्य का स्वरूप श्री समयसार गाथा 2 में क्या बताया है।

उ0 (1) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य स्वरूप है।
(2) मुझ जीव पदार्थ चैतन्य स्वरूपता से नित्य उद्योत रूप निर्मल–स्पष्ट–दर्शन ज्ञान ज्योति स्वरूप है।
(3) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्म स्वरुप द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।
(4) मुझ जीव पदार्थ का स्व–पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकार रुप एक है।
(5) मुझ जीव पदार्थ अन्य जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्य गुण स्वरुप है।
(6) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरुप को नही छोड़ता।
(7) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता– दृष्टा स्वभाव में स्थित रहे–तो स्व–समय है।
(8) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता – दृष्टा स्वभाव से छुटकर पर स्वभाव में स्थित रहे अर्थात मोह–राग–द्वेष रुप होकर परिणमें तो पर–समय है।

प्र12. छठी गाथा में मुझ ज्ञायक भाव का स्वरुप क्या बताया है ?

उ0 (1) मुझ ज्ञायक भाव स्वतः सिद्ध अनादि अनन्त है,
(2) मुझ ज्ञायक भाव नित्य प्रकाशमान है,
(3) मुझ ज्ञायक भाव स्पष्ट प्रतिभास रुप है,
(4) मुझ ज्ञायक भाव ससांर अवस्था में शुभाशुभ भावों रुप परिणमता हुआ होने पर भी स्वभाव दृष्टि से देखने में आवे तो शुभाशुभ भावों रुप परिणमता ही नही है।
(5) मुझ ज्ञायक भाव समस्त परद्रव्यों और परभावों से भिन्न रुप से उपासने में आने पर शुद्ध कहलाता है।
(6) अंतरंग में ज्ञेयाकार रुप से परिणमता होने पर भी ज्ञेय पदार्थों के साथ मुझ ज्ञायक भाव का वास्तव में कोई सम्बन्ध नही है।

प्र13. श्री प्रवचनसार ज्ञेय अधिकार गाथा 190 से 200 का रहस्य क्या है ?

उ0 (1) शरीर, धन, सुख, दुख, शत्रु, मित्रजन– यह सब कुछ मुझ जीव के ध्रुव नही है।
(2) ध्रुव तो उपयोगात्मक आत्मा है जो (1) ज्ञानात्मक (2) दर्शनरुप (3) इन्द्रियों के बिना ही सबको जानने वाला अतीन्द्रिय महापदार्थ (4) ज्ञेय पर्यायों का ग्रहण त्याग ना करने से अचल (5) ज्ञेय पर–द्रव्यों का आलम्बन ना लेने से निरालम्ब है।
(3) इसलिये मुझ भगवान आत्मा एक है, एक होने से शुद्ध है, शुद्ध होने से ध्रुव है, ध्रुव होने से एक मात्र निज भगवान आत्मा ही उपलब्ध करने योग्य है तथा शरीर –धन–सुख–दुख–शत्रुमित्र जन ये सब अनेक है अर्थात् परमाणुओं के ढेर हैं अनेक हैं तो अशुद्ध है, अशुद्ध हैं तो अध्रुव हैं, अध्रुव हैं तो ये सब उपलब्ध करके योग्य नही है।
(4) ऐसा जानकर निज आत्मा का श्रद्धान– ज्ञान – आचरण करते ही मोह नष्ट हो जाता है, अक्षय सुख की प्राप्ति होती है। जन्म– मरण का अभाव हो जाता है।

प्र14. परमागम के अमूल्य 11 सिद्धान्त क्या है ?

उ0 (1) एक द्रव्य दुसरे द्रव्य को स्पर्श नही करता है (श्री समयसार गाथा 3)
(2) प्रत्येक द्रव्य की प्रत्येक पर्याय क्रमबद्ध ही होती है (श्री समयसार गाथा 308 से 311 तक)
(3) उत्पाद–उत्पाद से है व्यय या ध्रुव से नही है (श्री प्रवचनसार गाथा 101)

(4) प्रत्येक पर्याय अपने जन्म–क्षण मे ही होती है (श्री प्रवचनसार गाथा 102)
(5) उत्पाद अपने षट्कारक के परिणमन से ही होता है (श्री पंचास्तिकाय संग्रह गाथा 62)
(6) पर्याय और ध्रुव के प्रदेश भिन्न भिन्न है (श्री समयसार गाथा 181 से 183 तक)
(7) भाव शक्ति के कारण पर्याय होती ही है, करनी पड़ती नहीं (श्री समयसार 33वीं शक्ति)
(8) निज भूतार्थ स्वभाव के आश्रय से ही सम्यग्दर्शन होता है (श्री समयसार 11)
(9) चारो अनुयोगो का तात्पर्य मात्र वीतरागता है (पंचास्तिकायसंग्रह गाथा 172)
(10) स्व द्रव्य में भी द्रव्य–गुण–पर्यायो का भेद विचारना वह अन्यवशपणा है।
(श्री नियमसार गाथा 145)

(11) ध्रुव का आलम्बन है वेदन नही पर्याय का वेदन है लेकिन आलम्बन नही।
(बहनश्री के वचनामृत)

'ज्ञानाष्टक'

निरपेक्ष हूँ कृतकृत्य मै, बहु शक्तियों से पूर्ण हूँ। मै निरालम्बी मात्र ज्ञायक, स्वयं में परिपूर्ण हूँ।
पर से नहीं सम्बन्ध कुछ भी, स्वयं सिद्ध प्रभु सदा। निर्बाध अरू निशंक निर्भय, परम आनन्दमय सदा।।१।।
निज लक्ष से होऊँ सुखी, नहि शेष कुछ अभिलाष है। निज मे ही होवे लीनता, निज का हुआ विश्वास है।।
अमूर्तिक चिन्मूर्ति मैं, मंगलमयी गुणधाम हूँ। मेरे लिए मुझसा नहीं, सच्चिदानन्द अभिराम हूँ।।२।।
स्वाधीन शाश्वत मुक्त अक्रिय अनन्त वैभववान हूँ। प्रत्यक्ष अन्तर मे दिखे, मै ही स्वयं भगवान हूँ।।
अव्यक्त वाणी से अहो, चिन्तन न पावे पार है। स्वानुभव मे सहज भासे, भाव अपरम्पार है।।३।।
श्रद्धा स्वयं सम्यक् हुई, श्रद्धान ज्ञायक हूँ हुआ। ज्ञान मे बस ज्ञान भासे, ज्ञान भी सम्यक् हुआ।।
भग रहे दुर्भाव सम्यक्, आचरण सुखकार है। ज्ञानमय जीवन हुआ, अब खुला मुक्ति द्वार है।।४।।
जो कुछ झलकता ज्ञान मे वह ज्ञेय नहि बस ज्ञान है। नहि ज्ञेयकृत किंचित् अशुद्धि, सहज स्वच्छ सुज्ञान है।।
परभाव शून्य स्वभाव मेरा, ज्ञानमय ही ध्येय है। ज्ञान मे ज्ञायक अहो, मम ज्ञानमय ही ज्ञेय है।।५।।
ज्ञान ही साधन, सहज अरू ज्ञान ही मम साध्य है। ज्ञानमय आराधना, शुद्ध ज्ञान ही आराध्य है।।
ज्ञानमय ध्रुव रूप मेरा, ज्ञानमय सब परिणमन। ज्ञानमय ही मुक्ति मम, मै ज्ञानमय अनादिनिधन।।६।।
ज्ञान ही है सार जग मे, शेष सब निस्सार है। ज्ञान से च्युत परिणमन का नाम ही संसार है।।
ज्ञानमय निजभाव को बस भूलना अपराध है। ज्ञान का सम्मान ही, संसिद्धि सम्यक् राध है।।७।।
अज्ञान से ही बंध, सम्यग्ज्ञान से ही मुक्ति है। ज्ञानमय संसाधना, दुख नाशने की युक्ति है।।
जो विराधक ज्ञान का, सो डूबता मंझधार है। ज्ञान का आश्रय करे, सो होय भव से पार है।।८।।
यो जान महिमाज्ञान की, निजज्ञान को स्वीकार कर। ज्ञान के अतिरिक्त सब, परभाव का परिहार कर।
निजभाव से ही ज्ञानमय हो, परम–आनन्दित रहो। होय तन्मय ज्ञान मे अब शीघ्र शिव–पदवी वरो।।९।।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ८.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.०० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ८.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
6. रविवार पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी सांय ०६.३० से ०७.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- २१ दिसम्बर २०१४ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६७ का पारितोषिक वितरण भी २२ फरवरी २०१५ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६६

दिनांक 12 अप्रैल 2015 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

निरन्तर चिंतवन करने योग्य परमागम के अनमोल वचन

प्र01. मैं कौन हूं, मेरा स्वरूप क्या है और धर्म कैसे प्रगट होता है ?
उ0 मैं जीव हूं, मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, ज्ञान चमत्कारिक है क्योंकि ज्ञान विश्व में जाता नहीं, और विश्व ज्ञान में आता नहीं लेकिन ज्ञान सब कुछ जानता है और ज्ञान अकेला है। विश्व का प्रत्येक सत् अपनी-अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण हैं, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ – ऐसा भेदज्ञान न होने के कारण यह चमत्कारिक ज्ञान ,स्वयं को अर्थात् अकेले ज्ञान को विश्वरूप अनुभव करता है यही अधर्म है, संसार है। विश्व का प्रत्येक सत् अपनी अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ – ऐसा भेदज्ञान होने पर – यह चमत्कारिक ज्ञान स्वयं को अर्थात् अकेले ज्ञान को ज्ञान मात्र ही अनुभव करता है यही धर्म है, जिसके फल में श्रद्धा–चारित्र आदि अनन्त गुणो की निर्मल पर्यायें प्रगट होती है और यह जीव भगवान बन जाता है।

प्र02. ज्ञान का स्वरुप क्या है और अकेले ज्ञान के अनुभव का फल क्या है ?
उ0 पर से और विकार से भिन्न अकेला ज्ञान, अपने अनन्त गुणों और निर्मल पर्यायो में व्यापता अकेला ज्ञान, निजरस से ही अनेकाकार रुप परिणमता हुआ अकेला ज्ञान, भेदज्ञान की ज्योति जलाकर अर्थात विश्व का प्रत्येक सत् अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ– इस भेद ज्ञान के बल से स्वयं को विश्व से शून्य अकेला अनुभव करता हुआ अकेली ज्ञान विकार रहित होकर अनन्त गुणो की निर्मलता का वेदन करता हुआ अल्पकाल में सिद्ध दशा को प्राप्त होता है।

प्र03. विश्व किसे कहते हैं ?
उ0 [illegible] द्रव्यों के समूह को विश्व [illegible]। (जाति अपेक्षा छह द्रव्य और संख्या अपेक्षा अनन्त द्रव्य है।)

प्र04 [illegible] को कहते हैं ?
उ0 [illegible] समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्र05. गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है उसको गुण कहते हैं।

प्र06. पर्याय किसको कहते हैं ?
उ0 गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं।

प्र07. गुणों के कितने भेद हैं ?
उ0 दो भेद हैं। 1. सामान्य 2. विशेष

प्र08. सामान्य गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जो समस्त द्रव्यों में रहते हैं उनको सामान्य गुण कहते हैं।

प्र09. विशेष गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जो सब द्रव्यों में न रहकर अपने-अपने द्रव्य में रहते हैं उनको विशेष गुण कहते हैं।

प्र010. सामान्य गुण कितने हैं ?
उ0 अनन्त हैं, परन्तु उनमें मुख्य छह हैं। 1. अस्तित्व 2. वस्तुत्व 3. द्रव्यत्व 4. प्रमेयत्व 5. अगुरुलघुत्व 6. प्रदेशत्व।

प्र011. अस्तित्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य का कभी भी नाश न हो, किसी से उत्पन्न भी न हो उसको अस्तित्व गुण कहते हैं।

प्र012. वस्तुत्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य में अर्थक्रियाकारित्व अर्थात् प्रयोजनभूत किया हो उसको वस्तुत्व गुण कहते हैं।

प्र013. द्रव्यत्व गुण किसे कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य की अवस्थाएँ निरन्तर बदलती रहती हैं उसको द्रव्यत्व गुण कहते हैं। प्रमेयत्व गुण किसे कहते हैं? जिस शक्ति के कारण द्रव्य किसी न किसी ज्ञान का विषय अवश्य होता है।

प्र014. अगुरुलघुत्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण द्रव्य में द्रव्यपना कायम रहता है। अर्थात्
(1) एक द्रव्य दूसरे द्रव्यरुप नहीं होता है।
(2) एक गुण दूसरे रुप नहीं होता है और
(3) द्रव्य में रहने वाले अनन्त गुण बिखर कर अलग–अलग नहीं हो जाते हैं, उस शक्ति को अगुरुलघुत्व गुण कहते हैं।

प्र015. प्रदेशत्व गुण किसे कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य का कोई न कोई आकार अवश्य रहता है उसको प्रदेशत्व गुण कहते हैं।

प्र016. प्रत्येक द्रव्य में कौन–कौन से विशेष गुण हैं ?
उ0. (1) जीव द्रव्य में चैतन्य (दर्शन ज्ञान) सम्यक्त्व, चारित्र, सुख, क्रियावती इत्यादि।
(2) पुद्गल द्रव्य में स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, क्रियावती शक्ति इत्यादि।
(3) धर्म द्रव्य में गति हेतुत्व इत्यादि।
(4) अधर्म द्रव्य में स्थिति हेतुत्व इत्यादि।
(5) आकाश द्रव्य में अवगाहन हेतुत्व इत्यादि।
(6) कालद्रव्य में परिणमन हेतुत्व इत्यादि।

प्र017. क्रियावती शक्ति क्या है ?
उ0. 1. जीव–पुद्गल में अपनी–अपनी क्रियावती शक्ति नाम का गुण नित्य है और अपनी–अपनी योग्यतानुसार कभी गति–क्षेत्रान्तर रुप पर्याय होती है। कभी स्थिर रहने रुप पर्याय होती है। 2. जीव या पुद्गल एक दूसरे को गमन या स्थिर नहीं करा सकते हैं। 3. जीव–पुद्गल दोनों द्रव्य अपनी क्रियावती शक्ति की उस समय की योग्यतानुसार स्वतः गमन करते हैं या स्थिर होते हैं।

प्र018. जीव द्रव्य किसको कहते हैं ?
उ0. जिसमें ज्ञान–दर्शन रुप शक्ति है उसको जीव द्रव्य कहते हैं।

प्र019. पुद्गल द्रव्य किसको कहते हैं ?
उ0. जिसमें स्पर्श, रस, गंध और वर्ण ये गुण होते हैं उसके पुद्गल द्रव्य कहते हैं।

प्र020. पुद्गल के कितने भेद हैं ?
उ0. दो भेद हैं, एक परमाणु दूसरा स्कन्ध।

प्र021. परमाणु किसको कहते हैं ?
उ0. जिसका दूसरा विभाग नही हो सकता ऐसे सबसे छोटे पुद्गल को परमाणु कहते हैं।

प्र022. स्कंध किसको कहते हैं ?
उ0. दो या दो से अधिक परमाणुओं के बन्ध को स्कंध कहते हैं।

प्र023. बन्ध किसको कहते हैं ?
उ0. जिस सम्बन्ध विशेष से अनेक वस्तुओं में एकपने का ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशेष को बन्ध कहते हैं।

प्र024. बन्ध कितने प्रकार के हैं ?
उ0. तीन प्रकार के हैं। 1. जीव बन्ध 2. पुद्गल बन्ध 3. उभय बन्ध।

प्र025. स्कन्ध के कितने भेद हैं ?
उ0. आहार वर्गणा, तैजस वर्गणा, भाषा वर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माण वर्गणा इत्यादि 22 भेद हैं।

प्र026. आहार वर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जो पुद्गल स्कन्ध औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीर रुप से परिणमन करती है उसको आहार वर्गणा कहते हैं।

प्र027. तैजस वर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जिस वर्गणा से तैजस शरीर बनता है उसको तैजस वर्गणा कहते हैं।

प्र028. भाषावर्गणा किसे कहते हैं ?
उ0. जो पुद्गल स्कन्ध शब्द रुप से परिणत होता है उसको भाषावर्गणा कहते हैं।

प्र029. मनोवर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जिस पुद्गल स्कन्ध से अष्टदल कमल के आकार द्रव्यमन की रचना होती है उसको मनोवर्गणा कहते हैं।

प्र030. कार्माणवर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जिस पुद्गल स्कन्ध से कार्माण शरीर बनता है उसको कार्माणवर्गणा कहते हैं।

प्र031. शरीर कितने हैं ?
उ0. शरीर पाँच हैं। 1. औदारिक 2. वैक्रियक 3. आहारक 4. तैजस 5. कार्माण।

प्र032. औदारिक शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. मनुष्य और तिर्यंचों के स्थूल शरीर को औदारिक शरीर कहते हैं।

प्र033. वैक्रियक शरीर किसको कहते है ?
उ0. जो छोटे–बड़े पृथक–अपृथक आदि अनेक क्रियाओं को करे ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियक शरीर कहते हैं।

प्र034. आहारक शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. आहारक ऋद्धिधारी छठे गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्त्वों में कोई शंका होने पर अथवा जिनालयादि की वन्दना करने के लिए, मस्तक से एक हाथ प्रमाण स्वच्छ और सफेद, सप्तधातु रहित पुरुषाकार जो पुतला निकलता है उसको आहाररिक शरीर कहते हैं।

प्र035. तैजस शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीरों में कान्ति उत्पन्न करने वाले शरीर को तैजस शरीर कहते है।

प्र036. कार्माण शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. आठ कर्मों के समूह को कार्माण शरीर कहते हैं।

प्र037. एक जीव के एक साथ कितने शरीर का संयोग हो सकता है ?
उ0. एक जीव के एक साथ कम से कम दो और अधिक से अधिक चार शरीर का संयोग होता है। खुलासा इस प्रकार है।

(1) विग्रहगति में तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।

(2) मनुष्य और तिर्यंच के औदारिक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।

(3) देव और नारकियों के वैक्रियक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।

(4) आहारक ऋद्धिधारी मुनि के औदारिक, आहारक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।

प्र038. विश्व किसे कहते है – प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?
उ0 इस विश्व में जीव अनन्त है, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं और

काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजन पर्याय व अनन्त अर्थ पर्यायों की सत्ता है।

प्र039. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 52 में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?
उ0 इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नहीं हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती।

प्र040. श्री प्रवचनसार गाथा 93 में विश्व किसे कहते है और विश्व की व्यवस्था किस प्रकार है ?
उ0 इस विश्व मे जीव अनन्त–पुद्गल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र041. श्री समयसार गाथा 3 में विश्व किसे कहते हैं और विश्व व्यवस्था किस प्रकार है ?
उ0 श्री समयसार की गाथा 3 में आता है – "लोक में सर्वत्र जो कुछ जितने पदार्थ हैं, वे सब निश्चय से एकत्व निश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को प्राप्त होते हैं क्योंकि–

(1) वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को चुम्बन करते हैं–स्पर्श करते हैं, तथापि वे परस्पर एक–दूसरे को स्पर्श नही करते।
(2) वे सब पदार्थ अत्यन्त निकट एक क्षेत्रावगाह रूप से तिष्ठ रहे हैं, तथापि वे सदाकाल अपने स्वरूप से च्युत नही होते।
(3) वे सब पदार्थ पर–रूप परिणमन न करने से अनन्त व्यक्तिता नष्ट नही होती, इसलिये वे टंकोत्कीर्ण की भांति शाश्वत–स्थिर रहते हैं।
(4) वे सब पदार्थ समस्त विरूद्ध कार्य तथा अविरूद्ध कार्य दोनो की हेतूता से विश्व का सदा उपकार करते हैं अर्थात टिकाये रखते हैं।

प्र42. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्था कार्तिकेय अनुप्रेक्षा गाथा 321 से 323 तक में क्या बतायी है ?
उ0 (1) जिस जीव को जिस देश में, जिस काल में जिस विधि से जन्म–मरण, सुख–दुख तथा रोग और दारिद्रय इत्यादि जैसे सर्वज्ञ देव ने जाने हैं उसी प्रकार वे सब नियम से होगें।
(2) सर्वज्ञदेव ने जिस प्रकार जाना है उसी प्रकार उस जीव के उसी देश में, उसी काल में और उसी विधि से नियमपूर्वक सब होता है उसके निवारण करने के लिये इन्द्र जिनेन्द्र–तीर्थकर देव कोई भी समर्थ नही है।
(3) इस प्रकार निश्चय से सर्व द्रव्यों अर्थात जीव अनन्त–पुद्गल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात को तथा इन द्रव्यों की समस्त पर्यायों को जो सर्वज्ञ के केवलज्ञान के अनुसार जानता है, श्रद्धा करता है वह शुद्ध सम्यग्दृष्टि है और जो ऐसी श्रद्धा नही करता शंका सन्देह करता है वह सर्वज्ञ के आगम के प्रतिकूल है, प्रगट रूप में मिथ्यादृष्टि है।

प्र43. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था जानने से क्या लाभ रहा ?
उ0 केवलज्ञान के अनुसार, विश्व की व्यवस्थित–व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर–द्रव्यों में या स्व–द्रव्य में कुछ भी करना नही रहा। तो फिर क्या करना–बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात–केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना–यही प्रयोजन रहा।

प्र44. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?
उ0 दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहां ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो

दर्पण की निर्मलता ही है।

सिद्धान्त – इसी प्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण मे जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य– ज्योति स्वरूप आत्मा ही है अर्थात् अकेला ज्ञान ही है।

प्र45. शुद्ध चेतना का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?

उ0
चेतन को है उपयोग रूप, बिनमूरत चिन्मूरत अनूप
पुद्गल नभ–धर्म–अधर्म–काल, इनतै न्यारी है जीव चाल

(1) चेतन को है उपयोग रूप – मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूं। मेरा कार्य ज्ञाता–दृष्टा है।
(2) बिनमूरत – आंख, नाक, कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही है।
(3) चिन्मूरत – चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।
(4) अनूप – सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।
(5) पुद्गल–नभ–धर्म–अधर्म–काल इनतै न्यारी है जीव चाल– मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है – इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है।

प्र46. जीव का स्वरूप श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 38 में क्या बताया है ?

उ0 स्व – (1) अमूर्तिक प्रदेशों का पुन्ज–मुझ आत्मा का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी–मुझ आत्मा का भाव है।
(3) अनादिनिधन – मुझ आत्मा का काल है।
(4) चैतन्य मात्र वस्तु – मुझ आत्म द्रव्य है।

पर – (1) मूर्तिक पुद्गल द्रव्यों का पिण्ड–शरीरादि का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणो से रहित, स्पर्शादि सहित – शरीरादि का भाव है।
(3) नवीन जिनका संयोग हुआ है – शरीरादि का काल है।
(4) ऐसे शरीर, धन, मकान आदि पुद्गल पर द्रव्य हैं।

प्र47. मुझ जीव द्रव्य का स्वरूप श्री समयसार गाथा 2 में क्या बताया है।

उ0 (1) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य स्वरूप है।
(2) मुझ जीव पदार्थ चैतन्य स्वरूपता से नित्य उद्योत रूप निर्मल–स्पष्ट–दर्शन ज्ञान ज्योति स्वरूप है।
(3) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्म स्वरुप द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।
(4) मुझ जीव पदार्थ का स्व–पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकार रुप एक है।
(5) मुझ जीव पदार्थ अन्य जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्य गुण स्वरुप है।
(6) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरुप को नही छोड़ता।
(7) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता– दृष्टा स्वभाव में स्थित रहे–तो स्व–समय है।
(8) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता – दृष्टा स्वभाव से छुटकर पर स्वभाव में स्थित रहे अर्थात मोह–राग–द्वेष रुप होकर परिणमें तो पर–समय है।

प्र48. छठी गाथा में मुझ ज्ञायक भाव का स्वरुप क्या बताया है ?

उ0 (1) मुझ ज्ञायक भाव स्वतः सिद्ध अनादि अनन्त है,
(2) मुझ ज्ञायक भाव नित्य प्रकाशमान है,
(3) मुझ ज्ञायक भाव स्पष्ट प्रतिभास रुप है,
(4) मुझ ज्ञायक भाव संसार अवस्था में शुभाशुभ भावों रुप परिणमता हुआ होने पर भी स्वभाव दृष्टि से देखने में आवे तो शुभाशुभ भावों रुप परिणमता ही नही है।
(5) मुझ ज्ञायक भाव समस्त परद्रव्यों और परभावों से भिन्न रुप से उपासने में आने पर शुद्ध कहलाता है।

(6) अंतरंग में ज्ञेयाकार रुप से परिणमता होने पर भी ज्ञेय पदार्थों के साथ मुझ ज्ञायक भाव का वास्तव में कोई सम्बन्ध नही है।

प्र49. श्री प्रवचनसार ज्ञेय अधिकार गाथा 190 से 200 का रहस्य क्या है ?
30

(1) शरीर, धन, सुख, दुख, शत्रु, मित्रजन– यह सब कुछ मुझ जीव के ध्रुव नही है।
(2) ध्रुव तो उपयोगात्मक आत्मा है जो (1) ज्ञानात्मक (2) दर्शनरुप (3) इन्द्रियों के बिना ही सबको जानने वाला अतीन्द्रिय महापदार्थ (4) ज्ञेय पर्यायों का ग्रहण त्याग ना करने से अचल (5) ज्ञेय पर–द्रव्यों का आलम्बन ना लेने से निरालम्ब है।
(3) इसलिये मुझ भगवान आत्मा एक है, एक होने से शुद्ध है, शुद्ध होने से ध्रुव है, ध्रुव होने से एक मात्र निज भगवान आत्मा ही उपलब्ध करने योग्य है तथा शरीर–धन–सुख–दुख–शत्रुमित्र जन ये सब अनेक है अर्थात् परमाणुओं के ढेर है अनेक हैं तो अशुद्ध है, अशुद्ध हैं तो अध्रुव हैं, अध्रुव हैं तो ये सब उपलब्ध करके योग्य नही है।
(4) ऐसा जानकर निज आत्मा का श्रद्धान– ज्ञान – आचरण करते ही मोह नष्ट हो जाता है, अक्षय सुख की प्राप्ति होती है। जन्म– मरण का अभाव हो जाता है।

ज्ञानाष्टक

निरपेक्ष हूँ कृतकृत्य मैं, बहु शक्तियों से पूर्ण हूँ। मैं निरालम्बी मात्र ज्ञायक, स्वयं में परिपूर्ण हूँ।
पर से नहीं सम्बन्ध कुछ भी, स्वयं सिद्ध प्रभु सदा। निर्बाध अरु निःशंक निर्भय, परम आनन्दमय सदा।।1।।
निज लक्ष से होऊँ सुखी, नहिं शेष कुछ अभिलाष है। निज में ही होवे लीनता, निज का हुआ विश्वास है।।
अमूर्तिक चिन्मूर्ति मैं, मंगलमयी गुणधाम हूँ। मेरे लिए मुझसा नहीं, सच्चिदानन्द अभिराम हूँ।।2।।
स्वाधीन शाश्वत मुक्त अक्रिय अनन्त वैभववान हूँ। प्रत्यक्ष अन्तर में दिखे, मैं ही स्वयं भगवान हूँ।।
अव्यक्त वाणी से अहो, चिन्तन न पावे पार है। स्वानुभव में सहज भासे, भाव अपरम्पार है।।3।।
श्रद्धा स्वयं सम्यक हुई, श्रद्धान ज्ञायक है हुआ। ज्ञान में बस ज्ञान भासे, ज्ञान भी सम्यक हुआ।।
भग रहे दुर्भाव सम्यक, आचरण सुखकार है। ज्ञानमय जीवन हुआ, अब खुला मुक्ति द्वार है।।4।।
जो कुछ झलकता ज्ञान में वह ज्ञेय नहिं मम ज्ञान है। नहिं [illegible] किंचित अशुद्धि, सहज स्वच्छ सुज्ञान है।।
परभाव शून्य स्वभाव मेरा, ज्ञानमय ही ध्येय है। ज्ञान में ज्ञायक अहो, मैं ज्ञानमय ही ज्ञेय है।।5।।
ज्ञान ही साधन, सहज अरु ज्ञान ही मम साध्य है। ज्ञानमय आराधना, शुद्ध ज्ञान ही आराध्य है।।
ज्ञानमय ध्रुव रूप मेरा, ज्ञानमय सब परिणमन। ज्ञानमय ही मुक्ति मम, मैं ज्ञानमय अनादिनिधन।।6।।
ज्ञान ही है सार जग में, शेष सब निस्सार है। ज्ञान से च्युत परिणमन का नाम ही संसार है।।
ज्ञानमय निजभाव को बस भूलना अपराध है। ज्ञान का सम्मान ही, संसिद्धि सम्यक राध है।।7।।
अज्ञान से ही बंध, सम्यग्ज्ञान से ही मुक्ति है। ज्ञानमय संसाधना, दुख नाशने की युक्ति है।।
जो विराधक ज्ञान का, सो डूबता मझधार है। ज्ञान का आश्रय करे, सो होय भव से पार है।।8।।
यों जान महिमा ज्ञान की, निजज्ञान को स्वीकार कर। ज्ञान के अतिरिक्त सब, परभाव का परिहार कर।
निजभाव से ही ज्ञानमय हो, परम–आनन्दित रहो। होय तन्मय ज्ञान में, अब शीघ्र शिव–पदवी वरो।।9।।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चो सहित अवश्य पधारें -

1.	प्रतिदिन	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः 9.00 से 10.30 व सायं: 6.15 से 7.00 बजे
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः 9.30 से 10.30 बजे तक
4.	मंगलवार	स्वाध्याय मन्दिर	साय 06.15 से 07.15 बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	साय 06.15 से 07.15 बजे
6.	रविवार	पाठशाला कार्यालय, जैन कालोनी	साय 06.30 से 07.30 बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र 80 न0 का होगा। 20 अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- 22 फरवरी 2015 को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता 68 का पारितोषिक वितरण भी 12 अप्रेल 2015 दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्ष 'ध्रुव निवास', 31 राजा रोड जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-७०

दिनांक 28 जून 2015 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

—प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न—

निरन्तर चिंतवन करने योग्य परमागम के अनमोल वचन

'सांत्वनाष्टक'

शान्तचित्त हो निर्विकल्प हो, आत्मन् निज में तृप्त रहो।
व्यग्र न होओ क्षुब्ध न होओ, चिदानन्द रस सहज पिओ।।टेक।।
स्वयं स्वयं में सर्व वस्तुएँ, सदा परिणमित होती हैं।
इष्ट-अनिष्ट न कोई जग में, व्यर्थ कल्पना झूठी है।।
धीर-वीर हो मोहभाव तज, आतम-अनुभव किया करो।।१।।व्यग्र.।।
देखो प्रभु के ज्ञान माँहि, सब लोकालोक झलकता है।
फिर भी सहज मग्न अपने में, लेश नहीं आकुलता है।।
सच्चे भक्त बनो प्रभुवर के ही पथ का अनुसरण करो।।२।। व्यग्र.।।
देखो मुनिराजों पर भी, कैसे-कैसे उपसर्ग हुए।
धन्य-धन्य वे साधु साहसी, आराधन से नहीं चिगे।।
उनको निज आदर्श बनाओ, उर में समताभाव धरो।।३।। व्यग्र.।।
व्याकुल होना तो, दुख से बचने का कोई उपाय नहीं।
होगा भारी पाप बंध ही, होवे भव्य अपाय' नहीं।।
ज्ञानाभ्यास करो मन माहीं, दुर्विकल्प दुखरूप तजो।।४।। व्यग्र.।।
अपने में सर्वस्व है अपना, परद्रव्यों में लेश नहीं।
हो विमूढ़ पर में ही क्षण-क्षण, करो व्यर्थ संक्लेश नहीं।।
अरे विकल्प अकिंचित्कर ही, ज्ञाता हो ज्ञाता ही रहो।।५।। व्यग्र.।।
अन्तदृष्टि से देखो नित, परमानन्दमय आत्मा।
स्वयंसिद्ध निर्द्वन्द्व निरामय, शुद्ध बुद्ध परमात्मा।।
आकुलता का काम नहीं कुछ, ज्ञानानन्द का वेदन हो।।६।। व्यग्र.।।
सहज तत्त्व की सहज भावना, ही आनन्द प्रदाता है।
जो भावे निश्चय शिव पावे, आवागमन मिटाता है।।
सहजतत्त्व ही सहज ध्येय है, सहजरूप नित ध्यान धरो।।७।। व्यग्र.।।
उत्तम जिन वचनामृत पाया, अनुभव कर स्वीकार करो।
पुरुषार्थी हो स्वाश्रय से इन, विषयों का परिहार करो।।
ब्रह्मभावमय मंगल चर्या, हो निज में ही मग्न रहो।।८।। व्यग्र.।।

प्र01. सच्चा पुरुषार्थ क्या है ?

उ0 सत् अर्थात् स्वतन्त्र अस्तिपना द्रव्य का लक्षण होने से द्रव्य सत्, गुण सत् और प्रत्येक समय की पर्याय भी स्वतन्त्र सत् है। और इसलिये कोई किसी का कुछ नहीं कर सकता, ऐसा निर्णय करना सो सच्चा पुरुषार्थ है।

प्र02. मैं कौन हूं, मेरा स्वरूप क्या है और धर्म कैसे प्रगट होता है ?

उ0 मैं जीव हूं, मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, ज्ञान चमत्कारिक है क्योंकि ज्ञान विश्व में जाता नहीं, और विश्व ज्ञान में आता नहीं लेकिन ज्ञान सब कुछ जानता है और ज्ञान अकेला है। विश्व

का प्रत्येक सत् अपनी अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ – ऐसा भेदज्ञान न होने के कारण यह चमत्कारिक ज्ञान, स्वयं को अर्थात् अकेले ज्ञान को विश्वरूप अनुभव करता है यही अधर्म है, संसार है। विश्व का प्रत्येक सत् अपनी अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ – ऐसा भेदज्ञान होने पर – यह चमत्कारिक ज्ञान स्वयं को अर्थात् अकेले ज्ञान को ज्ञान मात्र ही अनुभव करता है यही धर्म है, जिसके फल में श्रद्धा–चारित्र आदि अनन्त गुणो की निर्मल पर्यायें प्रगट होती हैं और यह जीव भगवान बन जाता है।

प्र03. ज्ञान का स्वरुप क्या है और अकेले ज्ञान के अनुभव का फल क्या है ?

उ0 पर से और विकार से भिन्न अकेला ज्ञान, निज रस से ही अपने अनन्त गुणों और निर्मल पर्यायो में व्यापता अकेला ज्ञान, निजरस से ही अनेकाकार रुप परिणमता हुआ अकेला ज्ञान, भेदज्ञान की ज्योति जलाकर अर्थात विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ– इस भेद ज्ञान के बल से स्वयं को विश्व से शून्य अकेला अनुभव करता हुआ अकेला ज्ञान, विकार रहित होकर अनन्त गुणो की निर्मलता का वेदन करता हुआ अल्पकाल में सिद्ध दशा को प्राप्त होता है।

प्र04. विश्व किसे कहते है – प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?

उ0 इस विश्व में जीव अनन्त है, पुदगल अनन्तानन्त है, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजन पर्याय व अनन्त अर्थ पर्यायों की सत्ता है।

प्र05. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 52 में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ0 इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नही हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती।

प्र06. श्री प्रवचनसार गाथा 93 में विश्व किसे कहते है और विश्व की व्यवस्था किस प्रकार है ?

उ0 इस विश्व मे जीव अनन्त–पुदगल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र07. श्री समयसार गाथा 3 में विश्व किसे कहते हैं और विश्व व्यवस्था किस प्रकार है ?

उ0 श्री समयसार की गाथा 3 में आता है – "लोक में सर्वत्र जो कुछ जितने पदार्थ हैं, वे सब निश्चय से एकत्व निश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को प्राप्त होते है क्योकि–

(1) वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मो के चक्र को चुम्बन करते है–स्पर्श करते है, तथापि वे परस्पर एक–दूसरे को स्पर्श नही करते।

(2) वे सब पदार्थ अत्यन्त निकट एक क्षेत्रावगाह रूप से तिष्ठ रहे हैं, तथापि वे सदाकाल अपने स्वरूप से च्युत नही होते।

(3) वे सब पदार्थ पर–रूप परिणमन न करने से अनन्त व्यक्तिता नष्ट नही होती, इसलिये वे टंकोत्कीर्ण की भांति शाश्वत–स्थिर रहते है।

(4) वे सब पदार्थ समस्त विरूद्ध कार्य तथा अविरूद्ध कार्य दोनो की हेतूता से विश्व का सदा उपकार करते हैं अर्थात टिकाये रखते हैं।

प्र8. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्था कार्तिकेय अनुप्रेक्षा गाथा 321 से 323 तक में क्या बतायी है ?

उ0 (1) जिस जीव को जिस देश में, जिस काल में जिस विधि से जन्म–मरण, सुख–दुख तथा रोग और दारिद्रय इत्यादि जैसे सर्वज्ञ देव ने जाने हैं उसी प्रकार वे सब नियम से होगें।

(2) सर्वज्ञदेव ने जिस प्रकार जाना है उसी प्रकार उस जीव के उसी देश में, उसी काल में और उसी विधि से नियमपूर्वक सब होता है उसके निवारण करने के लिये इन्द्र जिनेन्द्र–तीर्थंकर देव कोई भी समर्थ नही है।

(3) इस प्रकार निश्चय से सर्व द्रव्यों अर्थात जीव अनन्त–पुद्गल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात को तथा इन द्रव्यों की समस्त पर्यायों को जो सर्वज्ञ के केवलज्ञान के अनुसार जानता है, श्रद्धा करता है वह शुद्ध सम्यग्दृष्टि है और जो ऐसी श्रद्धा नही करता शंका सन्देह करता है वह सर्वज्ञ के आगम के प्रतिकूल है, प्रगट रूप में मिथ्यादृष्टि है।

प्र9. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था जानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 केवलज्ञान के अनुसार, विश्व की व्यवस्थित–व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर–द्रव्यों में या स्व–द्रव्य में कुछ भी करना नही रहा। तो फिर क्या करना–बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात–केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना–यही प्रयोजन रहा।

प्र10. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?

उ0 दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहां ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।

सिद्धान्त – इसी प्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण मे जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य– ज्योति स्वरूप आत्मा ही है अर्थात् अकेला ज्ञान ही है।

प्र11. शुद्ध चेतना का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?

उ0 चेतन को है उपयोग रूप, बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप
पुद्गल नभ–धर्म–अधर्म–काल, इनतै न्यारी है जीव चाल

(1) चेतन को है उपयोग रूप – मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूं। मेरा कार्य ज्ञाता–दृष्टा है।
(2) बिन्मूरत – आंख, नाक, कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही है।
(3) चिन्मूरत – चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।
(4) अनूप – सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।
(5) पुद्गल–नभ–धर्म–अधर्म–काल इनतै न्यारी है जीव चाल– मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है – इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है।

प्र12. जीव का स्वरूप श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 38 में क्या बताया है ?

उ0 स्व – (1) अमूर्तिक प्रदेशो का पुन्ज–मुझ आत्मा का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी–मुझ आत्मा का भाव है।
(3) अनादिनिधन – मुझ आत्मा का काल है।
(4) चैतन्य मात्र वस्तु – मुझ आत्म द्रव्य है।

पर – (1) मूर्तिक पुद्गल द्रव्यों का पिण्ड–शरीरादि का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों से रहित, स्पर्शादि सहित – शरीरादि का भाव है।
(3) नवीन जिनका संयोग हुआ है – शरीरादि का काल है।
(4) ऐसे शरीर, धन, मकान आदि पुद्गल पर द्रव्य हैं।

प्र13. मुझ जीव द्रव्य का स्वरूप श्री समयसार गाथा 2 में क्या बताया है।

उ0 (1) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य स्वरूप है।
(2) मुझ जीव पदार्थ चैतन्य स्वरूपता से नित्य उद्योत रूप निर्मल–स्पष्ट–दर्शन ज्ञान ज्योति स्वरूप है।

(3) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्म स्वरुप द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।
(4) मुझ जीव पदार्थ का स्व–पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकार रुप एक है।
(5) मुझ जीव पदार्थ अन्य जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्य गुण स्वरुप है।
(6) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरुप को नहीं छोड़ता।
(7) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता– दृष्टा स्वभाव में स्थित रहे–तो स्व–समय है।
(8) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता – दृष्टा स्वभाव से छुटकर पर स्वभाव में स्थित रहे अर्थात मोह–राग–द्वेष रुप होकर परिणमें तो पर–समय है।

प्र14. छठी गाथा में मुझ ज्ञायक भाव का स्वरुप क्या बताया है ?

उ0 (1) मुझ ज्ञायक भाव स्वतः सिद्ध अनादि अनन्त है,
(2) मुझ ज्ञायक भाव नित्य प्रकाशमान है,
(3) मुझ ज्ञायक भाव स्पष्ट प्रतिभास रुप है,
(4) मुझ ज्ञायक भाव ससांर अवस्था में शुभाशुभ भावों रुप परिणमता हुआ होने पर भी स्वभाव दृष्टि से देखने में आवे तो शुभाशुभ भावों रुप परिणमता ही नही है।
(5) मुझ ज्ञायक भाव समस्त परद्रव्यों और परभावों से भिन्न रुप से उपासने में आने पर शुद्ध कहलाता है।
(6) अंतरंग में ज्ञेयाकार रुप से परिणमता होने पर भी ज्ञेय पदार्थो के साथ मुझ ज्ञायक भाव का वास्तव में कोई सम्बन्ध नही है।

प्र15. श्री प्रवचनसार ज्ञेय अधिकार गाथा 190 से 200 का रहस्य क्या है ?

उ0 (1) शरीर, धन, सुख, दुख, शत्रु, मित्रजन– यह सब कुछ मुझ जीव के ध्रुव नही है।
(2) ध्रुव तो उपयोगात्मक आत्मा है जो (1) ज्ञानात्मक (2) दर्शनरुप (3) इन्द्रियों के बिना ही सबको जानने वाला अतीन्द्रिय महापदार्थ (4) ज्ञेय पर्यायों का ग्रहण त्याग ना करने से अचल (5) ज्ञेय पर–द्रव्यों का आलम्बन ना लेने से निरालम्ब है।
(3) इसलिये मुझ भगवान आत्मा एक है, एक होने से शुद्ध है, शुद्ध होने से ध्रुव है, ध्रुव होने से एक मात्र निज भगवान आत्मा ही उपलब्ध करने योग्य है तथा शरीर –धन–सुख–दुख–शत्रुमित्र जन ये सब अनेक है अर्थात् परमाणुओं के ढेर हैं अनेक हैं तो अशुद्ध है, अशुद्ध हैं तो अध्रुव हैं, अध्रुव हैं तो ये सब उपलब्ध करके योग्य नही है।
(4) ऐसा जानकर निज आत्मा का श्रद्धान– ज्ञान – आचरण करते ही मोह नष्ट हो जाता है, अक्षय सुख की प्राप्ति होती है। जन्म– मरण का अभाव हो जाता है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ९.०० से १०.३० व सांयः ६.३० से ७.१५ बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ९.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.१५ से ०७.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- १२ अप्रैल २०१५ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–६६ का पारितोषिक वितरण भी २८ जून २०१५ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–७१

दिनांक 23 अगस्त 2015 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

——प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न——

निरन्तर चिंतवन करने योग्य परमागम के अनमोल वचन

प्र01. मैं कौन हूँ ?
उ0 मैं जीव हूँ।

प्र02. मेरा त्रिकाल स्वभाव क्या है ?
उ0 मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है।

प्र03. ज्ञान का स्वभाव क्या है ?
उ0 ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व पर प्रकाशक है।

प्र04. ज्ञान क्या करता है ?
उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को देखता जानता है जो कि अकेला ज्ञान है।

प्र05. सब जीव हैं सबका त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, सबके ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व–पर प्रकाशक है, सबका ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को ही देखता है, तो फिर संसार व मोक्ष की व्यवस्था क्या है ?
उ0 a) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को अकेला ज्ञान देखता है यही मोक्ष है।
b) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को विश्व रुप देखता है यही संसार है

प्र06. दृष्टि का विषय कैसे बदलें?
उ0 दृष्टि का विषय भेदज्ञान से बदलता है।

प्र07. भेदज्ञान कैसे करें ?
उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को इस भेदज्ञान सहित देखे कि 'विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ' तो ज्ञान की स्व–पर प्रकाशक पर्याय विश्व रुप भासित नहीं होगी अकेला ज्ञान ही भासित होगी।

प्र08. अकेले ज्ञान की दृष्टि का फल क्या है ?
उ0 अकेले ज्ञान की दृष्टि के फल में ज्ञान में निज रस से ही आनंद आदि अनंत गुणों की निर्मलता का वेदन होता है। और यह जीव भगवान बन जाता है।

प्र09. मैं कौन हूं, मेरा स्वरूप क्या है और धर्म कैसे प्रगट होता है ?
उ0 मैं जीव हूं, मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, ज्ञान चमत्कारिक है क्योंकि ज्ञान विश्व में जाता नहीं, और विश्व ज्ञान में आता नहीं लेकिन ज्ञान सब कुछ जानता है और ज्ञान अकेला है। विश्व का प्रत्येक सत् अपनी अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण हैं, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ – ऐसा भेदज्ञान न होने के कारण यह चमत्कारिक ज्ञान ,स्वयं को अर्थात् अकेले ज्ञान को विश्वरूप अनुभव करता है यही अधर्म है, संसार है। विश्व का प्रत्येक सत् अपनी अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ – ऐसा भेदज्ञान होने पर – यह चमत्कारिक ज्ञान स्वयं को अर्थात् अकेले ज्ञान को ज्ञान मात्र ही अनुभव करता है यही धर्म है, जिसके फल में श्रद्धा–चारित्र आदि अनन्त गुणो की निर्मल पर्यायें प्रगट होती है और यह जीव भगवान बन जाता है।

प्र010. ज्ञान का स्वरुप क्या है और अकेले ज्ञान के अनुभव का फल क्या है ?

उ0 पर से और विकार से भिन्न अकेला ज्ञान, निजरस से ही अनेकाकार रुप परिणमता हुआ अकेला ज्ञान, भेदज्ञान की ज्योति जलाकर अर्थात् विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ– इस भेद ज्ञान के बल से स्वयं को विश्व से शून्य अकेला अनुभव करता हुआ अकेला ज्ञान, विकार रहित होकर, ज्ञान में निज रस से ही आनन्द आदि अनन्त गुणों की निर्मलता का वेदन करता हुआ अल्पकाल में सिद्ध दशा को प्राप्त होता है।

प्र011. विश्व किसे कहते है – प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?

उ0 इस विश्व में जीव अनन्त है, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजन पर्याय व अनन्त अर्थ पर्यायों की सत्ता है।

प्र012. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 52 में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ0 *इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं* काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नही हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती।

प्र013. श्री प्रवचनसार गाथा 93 में विश्व किसे कहते है और विश्व की व्यवस्था किस प्रकार है ?

उ0 इस विश्व मे जीव अनन्त–पुदगल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र14. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्था कार्तिकेय अनुप्रेक्षा गाथा 321 से 323 तक में क्या बतायी है ?

उ0 (1) जिस जीव को जिस देश में, जिस काल में जिस विधि से जन्म–मरण, सुख–दुख तथा रोग और दारिद्रय इत्यादि जैसे सर्वज्ञ देव ने जाने हैं उसी प्रकार वे सब नियम से होगें।

(2) सर्वज्ञदेव ने जिस प्रकार जाना है उसी प्रकार उस जीव के उसी देश में, उसी काल में और उसी विधि से नियमपूर्वक सब होता है उसके निवारण करने के लिये इन्द्र जिनेन्द्र–तीर्थंकर देव कोई भी समर्थ नही है।

(3) इस प्रकार निश्चय से सर्व द्रव्यों अर्थात जीव अनन्त–पुद्गल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक, और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात को तथा इन द्रव्यों की समस्त पर्यायों को जो सर्वज्ञ के केवलज्ञान के अनुसार जानता है, श्रद्धा करता है वह शुद्ध सम्यग्दृष्टि है और जो ऐसी श्रद्धा नही करता शंका सन्देह करता है वह सर्वज्ञ के आगम के प्रतिकूल है, प्रगट रूप में मिथ्यादृष्टि है।

प्र15. जिनेन्द कथित विश्व की व्यवस्था जानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 केवलज्ञान के अनुसार, विश्व की व्यवस्थित–व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर–द्रव्यों में या स्व–द्रव्य में कुछ भी करना नही रहा। तो फिर क्या करना–बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात–केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना–यही प्रयोजन रहा।

प्र16. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?

उ0 दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहां ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।

सिद्धान्त – इसी प्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण मे जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य– ज्योति स्वरूप आत्मा ही है अर्थात् अकेला ज्ञान ही है।

प्र17. शुद्ध चेतना का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?

उ0 चेतन को है उपयोग रूप, बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप
पुद्गल नभ–धर्म–अधर्म–काल, इनतै न्यारी है जीव चाल

(1) चेतन को है उपयोग रूप – मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूं। मेरा कार्य ज्ञाता–दृष्टा है।
(2) बिन्मूरत – आंख, नाक, कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही है।
(3) चिन्मूरत – चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।
(4) अनूप – सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।
(5) पुद्गल–नभ–धर्म–अधर्म–काल इनतै न्यारी है जीव चाल– मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है – इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है।

प्र18. जीव का स्वरूप श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 38 में क्या बताया है ?

उ0 स्व – (1) अमुर्तिक प्रदेशो का पुन्ज–मुझ आत्मा का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी–मुझ आत्मा का भाव है।
(3) अनादिनिधन – मुझ आत्मा का काल है।
(4) चैतन्य मात्र वस्तु – मुझ आत्म द्रव्य है।

पर – (1) मुर्तिक पुद्गल द्रव्यों का पिण्ड–शरीरादि का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणो से रहित, स्पर्शादि सहित – शरीरादि का भाव है।
(3) नवीन जिनका सयोग हुआ है – शरीरादि का काल है।
(4) ऐसे शरीर, धन, मकान आदि पुद्गल पर द्रव्य हैं।

प्र19. मुझ जीव द्रव्य का स्वरूप श्री समयसार गाथा 2 में क्या बताया है।

उ0 (1) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य स्वरूप है।
(2) मुझ जीव पदार्थ चैतन्य स्वरूपता से नित्य उद्योत रूप निर्मल–स्पष्ट–दर्शन ज्ञान ज्योति स्वरूप है।
(3) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्म स्वरुप द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।
(4) मुझ जीव पदार्थ का स्व–पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकार रुप एक है।
(5) मुझ जीव पदार्थ अन्य जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्य गुण स्वरुप है।
(6) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरुप को नही छोड़ता।
(7) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता– दृष्टा स्वभाव में स्थित रहे–तो स्व–समय है।
(8) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता – दृष्टा स्वभाव से छुटकर पर स्वभाव में स्थित रहे अर्थात मोह–राग–द्वेष रुप होकर परिणमें तो पर–समय है।

प्र20. छठी गाथा में मुझ ज्ञायक भाव का स्वरुप क्या बताया है ?

उ0 (1) मुझ ज्ञायक भाव स्वतः सिद्ध अनादि अनन्त है,
(2) मुझ ज्ञायक भाव नित्य प्रकाशमान है,
(3) मुझ ज्ञायक भाव स्पष्ट प्रतिभास रुप है,
(4) मुझ ज्ञायक भाव ससांर अवस्था में शुभाशुभ भावों रुप परिणमता हुआ होने पर भी स्वभाव दृष्टि से देखने में आवे तो शुभाशुभ भावों रुप परिणमता ही नही है।
(5) मुझ ज्ञायक भाव समस्त परद्रव्यों और परभावों से भिन्न रुप से उपासने में आने पर शुद्ध कहलाता है।

(6) अंतरंग में ज्ञेयाकार रुप से परिणमता होने पर भी ज्ञेय पदार्थों के साथ मुझ ज्ञायक भाव का वास्तव में कोई सम्बन्ध नही है।

प्र21. श्री प्रवचनसार ज्ञेय अधिकार गाथा 190 से 200 का रहस्य क्या है ?

उ0 (1) शरीर, धन, सुख, दुख, शत्रु, मित्रजन– यह सब कुछ मुझ जीव के ध्रुव नही है।

(2) ध्रुव तो उपयोगात्मक आत्मा है जो (1) ज्ञानात्मक (2) दर्शनरुप (3) इन्द्रियों के बिना ही सबको जानने वाला अतीन्द्रिय महापदार्थ (4) ज्ञेय पर्यायों का ग्रहण त्याग ना करने से अचल (5) ज्ञेय पर–द्रव्यों का आलम्बन ना लेने से निरालम्ब है।

(3) इसलिये मुझ भगवान आत्मा एक है, एक होने से शुद्ध है, शुद्ध होने से ध्रुव है, ध्रुव होने से एक मात्र निज भगवान आत्मा ही उपलब्ध करने योग्य है तथा शरीर –धन–सुख–दुख–शत्रुमित्र जन ये सब अनेक है अर्थात् परमाणुओं के ढेर है अनेक है तो अशुद्ध है, अशुद्ध हैं तो अध्रुव हैं, अध्रुव हैं तो ये सब उपलब्ध करके योग्य नही है।

(4) ऐसा जानकर निज आत्मा का श्रद्धान– ज्ञान – आचरण करते ही मोह नष्ट हो जाता है, अक्षय सुख की प्राप्ति होती है। जन्म– मरण का अभाव हो जाता है।

प्र022. सच्चा पुरुषार्थ क्या है ?

उ0 सत् अर्थात् स्वतन्त्र अस्तिपना द्रव्य का लक्षण होने से द्रव्य सत्, गुण सत् और प्रत्येक समय की पर्याय भी स्वतन्त्र सत् है। और इसलिये कोई किसी का कुछ नहीं कर सकता, ऐसा निर्णय करना सो सच्चा पुरुषार्थ है।

प्र23. परमागम के अमूल्य 11 सिद्धान्त क्या है ?

उ0 (1) एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को स्पर्श नही करता है (श्री समयसार गाथा 3)

(2) प्रत्येक द्रव्य की प्रत्येक पर्याय क्रमबद्ध ही होती है (श्री समयसार गाथा 308 से 311 तक)

(3) उत्पाद–उत्पाद से है व्यय या ध्रुव से नही है (श्री प्रवचनसार गाथा 101)

(4) प्रत्येक पर्याय अपने जन्म–क्षण में ही होती है (श्री प्रवचनसार गाथा 102)

(5) उत्पाद अपने षट्कारक के परिणमन से ही होता है (श्री पंचास्तिकाय संग्रह गाथा 62)

(6) पर्याय और ध्रुव के प्रदेश भिन्न भिन्न है (श्री समयसार गाथा 181 से 183 तक)

(7) भाव शक्ति के कारण पर्याय होती ही है, करनी पडती नहीं (श्री समयसार 33वीं शक्ति)

(8) निज भूतार्थ स्वभाव के आश्रय से ही सम्यग्दर्शन होता है (श्री समयसार 11)

(9) चारो अनुयोगो का तात्पर्य मात्र वीतरागता है (पंचास्तिकायसंग्रह गाथा 172)

(10) स्व द्रव्य में भी द्रव्य–गुण–पर्यायो का भेद विचारना वह अन्यवशपणा है। (श्री नियमसार गाथा 145)

(11) ध्रुव का आलम्बन है वेदन नही पर्याय का वेदन है लेकिन आलम्बन नही। (बहनश्री के वचनामृत)

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.३० से ७.१५ बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.१५ से ०७.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- २८ जून २०१५ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–७० का पारितोषिक वितरण भी २३ अगस्त २०१५ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।

फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-७२

दिनांक 25 अक्टूबर 2015 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

—प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न—

निरन्तर चिंतवन करने योग्य परमागम के अनमोल वचन

प्र01. मैं कौन हूँ ?

उ0 मैं जीव हूँ।

प्र02. मेरा त्रिकाल स्वभाव क्या है ?

उ0 मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है।

प्र03. ज्ञान का स्वभाव क्या है ?

उ0 ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व पर प्रकाशक है।

प्र04. ज्ञान क्या करता है ?

उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को देखता जानता है जो कि अकेला ज्ञान है।

प्र05. निगोद से लेकर सिद्ध भगवान तक सब जीव हैं सबका त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, सबके ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व –पर प्रकाशक है, सबका ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को ही देखता है, तो फिर संसार व मोक्ष की व्यवस्था क्या है ?

उ0 a) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को अकेला ज्ञान देखता है यही मोक्ष है।

b) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को विश्व रुप देखता है यही संसार हैं

प्र06. दृष्टि का विषय कैसे बदलें?

उ0 दृष्टि का विषय भेदज्ञान से बदलता है।

प्र07. भेदज्ञान कैसे करें ?

उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को इस भेदज्ञान सहित देखे कि 'विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ' तो ज्ञान की स्व–पर प्रकाशक पर्याय विश्व रुप भासित नहीं होगी अकेला ज्ञान ही भासित होगी।

प्र08. अकेले ज्ञान की दृष्टि का फल क्या है ?

उ0 अकेले ज्ञान की दृष्टि के फल में ज्ञान में निज रस से ही आनंद आदि अनंत गुणों की निर्मलता का वेदन होता है। और यह जीव भगवान बन जाता है।

प्र09. मैं कौन हूं, मेरा स्वरूप क्या है और धर्म कैसे प्रगट होता है ?

उ0 मैं जीव हूं, मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, ज्ञान चमत्कारिक है क्योंकि ज्ञान विश्व में जाता नहीं, और विश्व ज्ञान में आता नहीं लेकिन ज्ञान सब कुछ जानता है और ज्ञान अकेला है। विश्व का प्रत्येक सत् अपनी अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण हैं, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ – ऐसा भेदज्ञान न होने के कारण यह चमत्कारिक ज्ञान ,स्वयं को अर्थात् अकेले ज्ञान को विश्वरूप अनुभव करता है यही अधर्म है, संसार है। विश्व का प्रत्येक सत् अपनी अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ – ऐसा भेदज्ञान होने पर – यह चमत्कारिक ज्ञान स्वयं को अर्थात् अकेले ज्ञान को ज्ञान मात्र ही अनुभव करता है यही धर्म है, जिसके फल में श्रद्धा–चारित्र आदि अनन्त गुणो की निर्मल पर्यायें प्रगट होती है और यह जीव भगवान बन जाता है।

प्र010. ज्ञान का स्वरुप क्या है और अकेले ज्ञान के अनुभव का फल क्या है ?
उ0 पर से और विकार से भिन्न अकेला ज्ञान, निजरस से ही अनेकाकार रुप परिणमता हुआ अकेला ज्ञान, भेदज्ञान की ज्योति जलाकर अर्थात विश्व का प्रत्येक सत् अपनी-अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ- इस भेद ज्ञान के बल से स्वयं को विश्व से शून्य अकेला अनुभव करता हुआ अकेला ज्ञान, विकार रहित होकर, ज्ञान में निज रस से ही आनन्द आदि अनन्त गुणों की निर्मलता का वेदन करता हुआ अल्पकाल में सिद्ध दशा को प्राप्त होता है।

प्र011. विश्व किसे कहते है – प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?
उ0 इस विश्व में जीव अनन्त है, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व-वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजन पर्याय व अनन्त अर्थ पर्यायों की सत्ता है।

प्र012. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 52 में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?
उ0 इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक हैं काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न-भिन्न हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नही हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती।

प्र013. श्री प्रवचनसार गाथा 93 में विश्व किसे कहते है और विश्व की व्यवस्था किस प्रकार है ?
उ0 इस विश्व मे जीव अनन्त-पुद्गल अनन्तानन्त-धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय है उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र14. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्था कार्तिकेय अनुप्रेक्षा गाथा 321 से 323 तक में क्या बतायी है ?
उ0 (1) जिस जीव को जिस देश में, जिस काल में जिस विधि से जन्म-मरण, सुख-दुख तथा रोग और दारिद्रय इत्यादि जैसे सर्वज्ञ देव ने जाने हैं उसी प्रकार वे सब नियम से होगें।
(2) सर्वज्ञदेव ने जिस प्रकार जाना है उसी प्रकार उस जीव के उसी देश में, उसी काल में और उसी विधि से नियमपूर्वक सब होता है उसके निवारण करने के लिये इन्द्र जिनेन्द्र-तीर्थंकर देव कोई भी समर्थ नही है।
(3) इस प्रकार निश्चय से सर्व द्रव्यो अर्थात जीव अनन्त-पुद्गल अनन्तानन्त-धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात को तथा इन द्रव्यों की समस्त पर्यायों को जो सर्वज्ञ के केवलज्ञान के अनुसार जानता है, श्रद्धा करता है वह शुद्ध सम्यग्दृष्टि है और जो ऐसी श्रद्धा नही करता शंका सन्देह करता है वह सर्वज्ञ के आगम के प्रतिकूल है, प्रगट रूप में मिथ्यादृष्टि है।

प्र15. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था जानने से क्या लाभ रहा ?
उ0 केवलज्ञान के अनुसार, विश्व की व्यवस्थित-व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर-द्रव्यों में या स्व-द्रव्य में कुछ भी करना नही रहा। तो फिर क्या करना-बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात-केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना-यही प्रयोजन रहा।

प्र16. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?
उ0 दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहां ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।

सिद्धान्त – इसी प्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण मे जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य– ज्योति स्वरूप आत्मा ही है अर्थात् अकेला ज्ञान ही है।

प्र17. शुद्ध चेतना का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?

उ0 चेतन को है उपयोग रूप, बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप
पुद्गल नभ–धर्म–अधर्म–काल, इनतै न्यारी है जीव चाल

(1) चेतन को है उपयोग रूप – मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूं। मेरा कार्य ज्ञाता–दृष्टा है।
(2) बिन्मूरत – आंख, नाक, कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही है।
(3) चिन्मूरत – चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।
(4) अनूप – सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।
(5) पुद्गल–नभ–धर्म–अधर्म–काल इनतै न्यारी है जीव चाल– मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है – इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है।

प्र18. जीव का स्वरूप श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 38 में क्या बताया है ?

उ0 स्व – (1) अमूर्तिक प्रदेशो का पुन्ज–मुझ आत्मा का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी–मुझ आत्मा का भाव है।
(3) अनादिनिधन – मुझ आत्मा का काल है।
(4) चैतन्य मात्र वस्तु – मुझ आत्म द्रव्य है।

पर – (1) मूर्तिक पुद्गल द्रव्यों का पिण्ड–शरीरादि का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणो से रहित, स्पर्शादि सहित – शरीरादि का भाव है।
(3) नवीन जिनका संयोग हुआ है – शरीरादि का काल है।
(4) ऐसे शरीर, धन, मकान आदि पुद्गल पर द्रव्य हैं।

प्र19. मुझ जीव द्रव्य का स्वरूप श्री समयसार गाथा 2 में क्या बताया है।

उ0 (1) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य स्वरूप है।
(2) मुझ जीव पदार्थ चैतन्य स्वरूपता से नित्य उद्योत रूप निर्मल–स्पष्ट–दर्शन ज्ञान ज्योति स्वरूप है।
(3) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्म स्वरुप द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।
(4) मुझ जीव पदार्थ का स्व–पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकार रुप एक है।
(5) मुझ जीव पदार्थ अन्य जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्य गुण स्वरुप है।
(6) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरुप को नही छोड़ता।
(7) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता– दृष्टा स्वभाव में स्थित रहे–तो स्व–समय है।
(8) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता – दृष्टा स्वभाव से छुटकर पर स्वभाव में स्थित रहे अर्थात मोह–राग–द्वेष रुप होकर परिणमें तो पर–समय है।

प्र20. छठी गाथा में मुझ ज्ञायक भाव का स्वरुप क्या बताया है ?

उ0 (1) मुझ ज्ञायक भाव स्वतः सिद्ध अनादि अनन्त है,
(2) मुझ ज्ञायक भाव नित्य प्रकाशमान है,
(3) मुझ ज्ञायक भाव स्पष्ट प्रतिभास रुप है,
(4) मुझ ज्ञायक भाव ससांर अवस्था में शुभाशुभ भावों रुप परिणमता हुआ होने पर भी स्वभाव दृष्टि से देखने में आवे तो शुभाशुभ भावों रुप परिणमता ही नही है।
(5) मुझ ज्ञायक भाव समस्त परद्रव्यों और परभावों से भिन्न रुप से उपासने में आने पर शुद्ध कहलाता है।

(6) अंतरंग में ज्ञेयाकार रुप से परिणमता होने पर भी ज्ञेय पदार्थों के साथ मुझ ज्ञायक भाव का वास्तव में कोई सम्बन्ध नही है।

प्र21. श्री प्रवचनसार ज्ञेय अधिकार गाथा 190 से 200 का रहस्य क्या है ?

उ0 (1) शरीर, धन, सुख, दुख, शत्रु, मित्रजन– यह सब कुछ मुझ जीव के ध्रुव नही है।

(2) ध्रुव तो उपयोगात्मक आत्मा है जो (1) ज्ञानात्मक (2) दर्शनरुप (3) इन्द्रियों के बिना ही सबको जानने वाला अतीन्द्रिय महापदार्थ (4) ज्ञेय पर्यायों का ग्रहण त्याग ना करने से अचल (5) ज्ञेय पर–द्रव्यों का आलम्बन ना लेने से निरालम्ब है।

(3) इसलिये मुझ भगवान आत्मा एक है, एक होने से शुद्ध है, शुद्ध होने से ध्रुव है, ध्रुव होने से एक मात्र निज भगवान आत्मा ही उपलब्ध करने योग्य है तथा शरीर –धन–सुख–दुख–शत्रुमित्र जन ये सब अनेक है अर्थात् परमाणुओं के ढेर हैं अनेक हैं तो अशुद्ध है, अशुद्ध हैं तो अध्रुव हैं, अध्रुव हैं तो ये सब उपलब्ध करके योग्य नही है।

(4) ऐसा जानकर निज आत्मा का श्रद्धान– ज्ञान – आचरण करते ही मोह नष्ट हो जाता है, अक्षय सुख की प्राप्ति होती है। जन्म– मरण का अभाव हो जाता है।

प्र022. सच्चा पुरुषार्थ क्या है ?

उ0 सत् अर्थात् स्वतन्त्र अस्तिपना द्रव्य का लक्षण होने से द्रव्य सत्, गुण सत् और प्रत्येक समय की पर्याय भी स्वतन्त्र सत् है। और इसलिये कोई किसी का कुछ नहीं कर सकता, ऐसा निर्णय करना सो सच्चा पुरुषार्थ है।

प्र23. परमागम के अमूल्य 11 सिद्धान्त क्या है ?

उ0 (1) एक द्रव्य दुसरे द्रव्य को स्पर्श नही करता है (श्री समयसार गाथा 3)

(2) प्रत्येक द्रव्य की प्रत्येक पर्याय क्रमबद्ध ही होती है (श्री समयसार गाथा 308 से 311 तक)

(3) उत्पाद–उत्पाद से है व्यय या ध्रुव से नही है (श्री प्रवचनसार गाथा 101)

(4) प्रत्येक पर्याय अपने जन्म–क्षण में ही होती है (श्री प्रवचनसार गाथा 102)

(5) उत्पाद अपने षट्कारक के परिणमन से ही होता है (श्री पंचास्तिकाय संग्रह गाथा 62)

(6) पर्याय और ध्रुव के प्रदेश भिन्न भिन्न है (श्री समयसार गाथा 181 से 183 तक)

(7) भाव शक्ति के कारण पर्याय होती ही है, करनी पडती नहीं (श्री समयसार 33वीं शक्ति)

(8) निज भूतार्थ स्वभाव के आश्रय से ही सम्यग्दर्शन होता है (श्री समयसार 11)

(9) चारो अनुयोगो का तात्पर्य मात्र वीतरागता है (पंचास्तिकायसंग्रह गाथा 172)

(10) स्व द्रव्य में भी द्रव्य–गुण–पर्यायो का भेद विचारना वह अन्यवशपणा है। (श्री नियमसार गाथा 145)

(11) ध्रुव का आलम्बन है वेदन नही पर्याय का वेदन है लेकिन आलम्बन नही। (बहनश्री के वचनामृत)

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.३० से ७.१५ बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.१५ से ०७.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- २३ अगस्त २०१५ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–७० का पारितोषिक वितरण भी २५ अक्टूबर २०१५ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

Vandana Jain

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-७३

दिनांक 20 दिसम्बर 2015 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

—प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न—

निरन्तर चिंतवन करने योग्य परमागम के अनमोल वचन

प्र01. कषाय किसे कहते हैं ?

उ0. कष्–संसार, आय– लाभ, जीव के जिस भाव से संसार का लाभ हो अर्थात् जिस भाव से चारों गतियों का परिभ्रमण हो उसे कषाय कहते हैं।

प्र02. अनंतानुबंधी क्रोधादि कषायों का स्वरुप क्या–क्या है ?

उ0 (1) क्रोध –अपने स्वरुप की अरुचि और परद्रव्यों पर भावों की रुचि। (2) मान–परवस्तुओं से, शुभभावों से अपने को बड़ा मानना तथा सबसे बड़ा मान यह है कि परद्रव्य की क्रिया मैं कर सकता हूँ ऐसी मान्यता। (3) माया– अपने स्वरुप की आड़ मारना। पंचमकाल है इस समय किसी को मोक्ष की प्राप्ति तो होती नहीं है। इसलिए वर्तमान में शुभभाव करो और शुभभाव करते –करते धर्म की प्राप्ति हो जायेगी– यह मायाचारी है। (4) लोभ–पुण्य की संग्रहबुद्धि व क्षयोपशम ज्ञान के उघाड़ की रुचि।

प्र03. मैं कौन हूँ ?

उ0 मैं जीव हूँ।

प्र04. मेरा त्रिकाल स्वभाव क्या है ?

उ0 मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है।

प्र05. ज्ञान का स्वभाव क्या है ?

उ0 ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व पर प्रकाशक है।

प्र06. ज्ञान क्या करता है ?

उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को देखता जानता है जो कि अकेला ज्ञान है।

प्र07. निगोद से लेकर सिद्ध भगवान तक सब जीव हैं सबका त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, सबके ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व –पर प्रकाशक है, सबका ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को ही देखता है, तो फिर संसार व मोक्ष की व्यवस्था क्या है ?

उ0 a) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को अकेला ज्ञान देखता है यही मोक्ष है।
b) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को विश्व रुप देखता है यही संसार हैं

प्र08. दृष्टि का विषय कैसे बदलें?

उ0 दृष्टि का विषय भेदज्ञान से बदलता है।

प्र09. भेदज्ञान कैसे करें ?

उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को इस भेदज्ञान सहित देखे कि विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ तो ज्ञान की स्व–पर प्रकाशक पर्याय विश्व रुप भासित नहीं होगी अकेला ज्ञान ही भासित होगी।

प्र010. अकेले ज्ञान की दृष्टि का फल क्या है ?

उ0 अकेले ज्ञान की दृष्टि के फल में ज्ञान में निज रस से ही आनंद आदि अनंत गुणों की निर्मलता का वेदन होता है। और यह जीव भगवान बन जाता है।

प्र011. मैं कौन हूं, मेरा स्वरूप क्या है और धर्म कैसे प्रगट होता है ?

उ0 मैं जीव हूं, मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, ज्ञान चमत्कारिक है क्योंकि ज्ञान विश्व में जाता नहीं, और विश्व ज्ञान में आता नहीं लेकिन ज्ञान सब कुछ जानता है और ज्ञान अकेला है। विश्व का प्रत्येक सत् अपनी अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण हैं, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ – ऐसा भेदज्ञान न होने के कारण यह चमत्कारिक ज्ञान ,स्वयं को अर्थात् अकेले ज्ञान को विश्वरूप अनुभव करता है यही अधर्म है, संसार है। विश्व का प्रत्येक सत् अपनी अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ – ऐसा भेदज्ञान होने पर – यह चमत्कारिक ज्ञान स्वयं को अर्थात् अकेले ज्ञान को ज्ञान मात्र ही अनुभव करता है यही धर्म है, जिसके फल में श्रद्धा–चारित्र आदि अनन्त गुणो की निर्मल पर्यायें प्रगट होती है और यह जीव भगवान बन जाता है।

प्र012. ज्ञान का स्वरुप क्या है और अकेले ज्ञान के अनुभव का फल क्या है ?

उ0 पर से और विकार से भिन्न अकेला ज्ञान, निजरस से ही अनेकाकार रुप परिणमता हुआ अकेला ज्ञान, भेदज्ञान की ज्योति जलाकर अर्थात् विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ– इस भेद ज्ञान के बल से स्वयं को विश्व से शून्य अकेला अनुभव करता हुआ अकेला ज्ञान, विकार रहित होकर, ज्ञान में निज रस से ही आनन्द आदि अनन्त गुणो की निर्मलता का वेदन करता हुआ अल्पकाल में सिद्ध दशा को प्राप्त होता है।

प्र013. विश्व किसे कहते है – प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?

उ0 इस विश्व में जीव अनन्त है, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजन पर्याय व अनन्त अर्थ पर्यायों की सत्ता है।

प्र014. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 52 में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ0 इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नही हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती।

प्र015. श्री प्रवचनसार गाथा 93 में विश्व किसे कहते है और विश्व की व्यवस्था किस प्रकार है ?

उ0 इस विश्व मे जीव अनन्त–पुदगल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र16. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्था कार्तिकेय अनुप्रेक्षा गाथा 321 से 323 तक में क्या बतायी है ?

उ0 (1) जिस जीव को जिस देश में, जिस काल में जिस विधि से जन्म–मरण, सुख–दुख तथा रोग और दारिद्रय इत्यादि जैसे सर्वज्ञ देव ने जाने हैं उसी प्रकार वे सब नियम से होगें।

(2) सर्वज्ञदेव ने जिस प्रकार जाना है उसी प्रकार उस जीव के उसी देश में, उसी काल में और उसी विधि से नियमपूर्वक सब होता है उसके निवारण करने के लिये इन्द्र

जिनेन्द्र–तीर्थंकर देव कोई भी समर्थ नही है।

(3) इस प्रकार निश्चय से सर्व द्रव्यों अर्थात जीव अनन्त–पुद्गल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक, और काल द्रव्य लोक प्रमाण असख्यात को तथा इन द्रव्यों की समस्त पर्यायों को जो सर्वज्ञ के केवलज्ञान के अनुसार जानता है, श्रद्धा करता है वह शुद्ध सम्यग्दृष्टि है और जो ऐसी श्रद्धा नही करता शंका सन्देह करता है वह सर्वज्ञ के आगम के प्रतिकूल है, प्रगट रूप में मिथ्यादृष्टि है।

प्र17. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था जानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 केवलज्ञान के अनुसार, विश्व की व्यवस्थित–व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर–द्रव्यों में या स्व–द्रव्य में कुछ भी करना नही रहा। तो फिर क्या करना–बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात–केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना–यही प्रयोजन रहा।

प्र18. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?

उ0 दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहां ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।

सिद्धान्त – इसी प्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण मे जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य– ज्योति स्वरूप आत्मा ही है अर्थात् अकेला ज्ञान ही है।

प्र19. शुद्ध चेतना का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?

उ0 चेतन को है उपयोग रूप, बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप
पुद्गल नभ–धर्म–अधर्म–काल, इनतै न्यारी है जीव चाल

(1) चेतन को है उपयोग रूप – मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूं। मेरा कार्य ज्ञाता–दृष्टा है।
(2) बिन्मूरत – आंख, नाक, कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही है।
(3) चिन्मूरत – चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।
(4) अनूप – सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।
(5) पुद्गल–नभ–धर्म–अधर्म–काल इनतै न्यारी है जीव चाल– मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असख्यात है – इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है।

प्र20. जीव का स्वरूप श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 38 में क्या बताया है ?

उ0 स्व – (1) अमूर्तिक प्रदेशो का पुन्ज–मुझ आत्मा का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी–मुझ आत्मा का भाव है।
(3) अनादिनिधन – मुझ आत्मा का काल है।
(4) चैतन्य मात्र वस्तु – मुझ आत्म द्रव्य है।

पर – (1) मूर्तिक पुद्गल द्रव्यों का पिण्ड–शरीरादि का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणो से रहित, स्पर्शादि सहित – शरीरादि का भाव है।
(3) नवीन जिनका संयोग हुआ है – शरीरादि का काल है।
(4) ऐसे शरीर, धन, मकान आदि पुद्गल पर द्रव्य हैं।

प्र21. मुझ जीव द्रव्य का स्वरूप श्री समयसार गाथा 2 में क्या बताया है।

उ0 (1) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य स्वरूप है।
(2) मुझ जीव पदार्थ चैतन्य स्वरूपता से नित्य उद्योत रूप निर्मल–स्पष्ट–दर्शन ज्ञान ज्योति स्वरूप है।
(3) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्म स्वरुप द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।
(4) मुझ जीव पदार्थ का स्व–पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकार रुप एक है।
(5) मुझ जीव पदार्थ अन्य जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्य गुण स्वरुप है।

(6) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरुप को नही छोड़ता।

(7) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता– दृष्टा स्वभाव में स्थित रहे–तो स्व–समय है।

(8) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता – दृष्टा स्वभाव से छूटकर पर स्वभाव में स्थित रहे अर्थात मोह–राग–द्वेष रुप होकर परिणमें तो पर–समय है।

प्र22. छठी गाथा में मुझ ज्ञायक भाव का स्वरुप क्या बताया है ?

उ0 (1) मुझ ज्ञायक भाव स्वतः सिद्व अनादि अनन्त है,

(2) मुझ ज्ञायक भाव नित्य प्रकाशमान है,

(3) मुझ ज्ञायक भाव स्पष्ट प्रतिभास रुप है,

(4) मुझ ज्ञायक भाव ससांर अवस्था में शुभाशुभ भावों रुप परिणमता हुआ होने पर भी स्वभाव दृष्टि से देखने में आवे तो शुभाशुभ भावों रुप परिणमता ही नही है।

(5) मुझ ज्ञायक भाव समस्त परद्रव्यों और परभावों से भिन्न रुप से उपासने में आने पर शुद्व कहलाता है।

(6) अंतरंग में ज्ञेयाकार रुप से परिणमता होने पर भी ज्ञेय पदार्थों के साथ मुझ ज्ञायक भाव का वास्तव में कोई सम्बन्ध नही है।

प्र23. श्री प्रवचनसार ज्ञेय अधिकार गाथा 190 से 200 का रहस्य क्या है ?

उ0 (1) शरीर, धन, सुख, दुख, शत्रु, मित्रजन– यह सब कुछ मुझ जीव के ध्रुव नही है।

(2) ध्रुव तो उपयोगात्मक आत्मा है जो (1) ज्ञानात्मक (2) दर्शनरुप (3) इन्द्रियों के बिना ही सबको जानने वाला अतीन्द्रिय महापदार्थ (4) ज्ञेय पर्यायों का ग्रहण त्याग ना करने से अचल (5) ज्ञेय पर–द्रव्यों का आलम्बन ना लेने से निरालम्ब है।

(3) इसलिये मुझ भगवान आत्मा एक है, एक होने से शुद्ध है, शुद्ध होने से ध्रुव है, ध्रुव होने से एक मात्र निज भगवान आत्मा ही उपलब्ध करने योग्य है तथा शरीर –धन–सुख–दुख–शत्रुमित्र जन ये सब अनेक है अर्थात् परमाणुओं के ढेर हैं अनेक हैं तो अशुद्ध है, अशुद्ध हैं तो अध्रुव है, अध्रुव हैं तो ये सब उपलब्ध करके योग्य नही है।

(4) ऐसा जानकर निज आत्मा का श्रद्धान– ज्ञान – आचरण करते ही मोह नष्ट हो जाता है, अक्षय सुख की प्राप्ति होती है। जन्म– मरण का अभाव हो जाता है।

प्र024. सच्चा पुरुषार्थ क्या है ?

उ0 सत् अर्थात् स्वतन्त्र अस्तिपना द्रव्य का लक्षण होने से द्रव्य सत्, गुण सत् और प्रत्येक समय की पर्याय भी स्वतन्त्र सत् है। और इसलिये कोई किसी का कुछ नहीं कर सकता, ऐसा निर्णय करना सो सच्चा पुरुषार्थ है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.३० से ७.१५ बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.१५ से ०७.३० बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- २५ अक्टूबर २०१५ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-७२ का पारितोषिक वितरण भी २० दिसम्बर २०१५ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-७४

दिनांक 21 फरवरी 2016 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

निरन्तर चिंतवन करने योग्य परमागम के अनमोल वचन

नोट- वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता 73 के सभी प्रश्नों व उत्तरों के साथ निम्न प्रश्नोत्तर याद करने हैं।

प्र01. विश्व किसे कहते हैं ?
उ0 छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते है। (जाति अपेक्षा छह द्रव्य और संख्या अपेक्षा अनन्त द्रव्य है।)

प्र02. द्रव्य किसे कहते हैं ?
उ0 गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्र03. गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहतें है उसको गुण कहते हैं।

प्र04. पर्याय किसको कहते हैं ?
उ0 गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं।

प्र05. गुणों के कितने भेद हैं ?
उ0 दो भेद हैं। 1. सामान्य 2. विशेष

प्र06. सामान्य गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जो समस्त द्रव्यों में रहते हैं उनको सामान्य गुण कहते हैं।

प्र07. विशेष गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जो सब द्रव्यों में न रहकर अपने-अपने द्रव्य में रहते हैं उनको विशेष गुण कहते हैं।

प्र08. सामान्य गुण कितने हैं ?
उ0 अनन्त हैं, परन्तु उनमें मुख्य छह हैं। 1. अस्तित्व 2. वस्तुत्व 3. द्रव्यत्व 4. प्रमेयत्व 5. अगुरुलघुत्व 6. प्रदेशत्व।

प्र09. अस्तित्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य का कभी भी नाश न हो, किसी से उत्पन्न भी न हो उसको अस्तित्व गुण कहते हैं।

प्र010. वस्तुत्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य में अर्थक्रियाकारित्व अर्थात् प्रयोजनभूत किया हो उसको वस्तुत्व गुण कहते हैं।

प्र011. द्रव्यत्व गुण किसे कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य की अवस्थाएँ निरन्तर बदलती रहती हैं उसको द्रव्यत्व गुण कहते हैं।

प्र012. अगुरुलघुत्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण द्रव्य में द्रव्यपना कायम रहता है। अर्थात्
(1) एक द्रव्य दूसरे द्रव्यरुप नहीं होता है।
(2) एक गुण दूसरे रुप नहीं होता है और
(3) द्रव्य में रहने वाले अनन्त गुण बिखर कर अलग-अलग नहीं हो जाते हैं, उस शक्ति को अगुरुलघुत्व गुण कहते हैं।

प्र013. प्रदेशत्व गुण किसे कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य का कोई न कोई आकार अवश्य रहता है उसको प्रदेशत्व गुण कहते हैं।

प्र014. प्रत्येक द्रव्य में कौन–कौन से विशेष गुण हैं ?
उ0. (1) जीव द्रव्य में चैतन्य (दर्शन ज्ञान) सम्यक्त्व, चारित्र, सुख, क्रियावती शक्ति इत्यादि।
(2) पुद्गल द्रव्य में स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, क्रियावती शक्ति इत्यादि।
(3) धर्म द्रव्य में गति हेतुत्व इत्यादि।
(4) अधर्म द्रव्य में स्थिति हेतुत्व इत्यादि।
(5) आकाश द्रव्य में अवगाहन हेतुत्व इत्यादि।
(6) कालद्रव्य में परिणमन हेतुत्व इत्यादि।

प्र015. क्रियावती शक्ति क्या है ?
उ0. 1. जीव–पुद्गल में अपनी–अपनी क्रियावती शक्ति नाम का गुण नित्य है और अपनी–अपनी योग्यतानुसार कभी गति–क्षेत्रान्तर रुप पर्याय होती है। कभी स्थिर रहने रुप पर्याय होती है। 2. जीव या पुद्गल एक दूसरे को गमन या स्थिर नहीं करा सकते हैं। 3. जीव–पुद्गल दोनों द्रव्य अपनी क्रियावती शक्ति की उस समय की योग्यतानुसार स्वतः गमन करते हैं या स्थिर होते हैं।

प्र016. जीव द्रव्य किसको कहते हैं ?
उ0. जिसमें ज्ञान–दर्शन रुप शक्ति है उसको जीव द्रव्य कहते हैं।

प्र017. पुद्गल द्रव्य किसको कहते हैं ?
उ0. जिसमें स्पर्श, रस, गंध और वर्ण ये गुण होते हैं उसके पुद्गल द्रव्य कहते हैं।

प्र018. पुद्गल के कितने भेद हैं ?
उ0. दो भेद हैं, एक परमाणु दूसरा स्कन्ध।

प्र019. परमाणु किसको कहते हैं ?
उ0. जिसको दूसरा विभाग नहीं हो सकता ऐसे सबसे छोटे पुद्गल को परमाणु कहते हैं।

प्र020. स्कंध किसको कहते हैं ?
उ0. दो या दो से अधिक परमाणुओं के बन्ध को स्कंध कहते हैं।

प्र021. बन्ध किसको कहते हैं ?
उ0. जिस सम्बन्ध विशेष से अनेक वस्तुओं में एकपने का ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशेष को बन्ध कहते हैं।

प्र022. बन्ध कितने प्रकार के हैं ?
उ0. तीन प्रकार के हैं। 1. जीव बन्ध 2. पुद्गल बन्ध 3. उभय बन्ध।

प्र023. स्कन्ध के कितने भेद हैं ?
उ0. आहार वर्गणा, तैजस वर्गणा, भाषा वर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माण वर्गणा इत्यादि 22 भेद हैं।

प्र024. आहार वर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जो पुद्गल स्कन्ध औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीर रुप से परिणमन करती है उसको आहार वर्गणा कहते हैं।

प्र025. तैजस वर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जिस वर्गणा से तैजस शरीर बनता है उसको तैजस वर्गणा कहते हैं।

प्र026. भाषावर्गणा किसे कहते हैं ?
उ0. जो पुद्गल स्कन्ध शब्द रुप से परिणत होता है उसको भाषावर्गणा कहते हैं।

प्र027. मनोवर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जिस पुद्गल स्कन्ध से अष्टदल कमल के आकार द्रव्यमन की रचना होती है उसको मनोवर्गणा कहते हैं।

प्र028. कार्माणवर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जिस पुद्गल स्कन्ध से कार्माण शरीर बनता है उसको कार्माणवर्गणा कहते हैं।

प्र029. शरीर कितने हैं ?
उ0. शरीर पाँच हैं। 1. औदारिक 2. वैक्रियक 3. आहारक 4. तैजस 5. कार्माण।

प्र030. औदारिक शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. मनुष्य और तिर्यंचों के स्थूल शरीर को औदारिक शरीर कहते हैं।

प्र031. वैक्रियक शरीर किसको कहते है ?
उ0. जो छोटे–बड़े पृथक–अपृथक आदि अनेक क्रियाओं को करे ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियक शरीर कहते हैं।

प्र032. आहारक शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. आहारक ऋद्धिधारी छठे गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्त्वों में कोई शंका होने पर अथवा जिनालयादि की वन्दना करने के लिए, मस्तक से एक हाथ प्रमाण स्वच्छ और सफेद, सप्तधातु रहित पुरुषाकार जो पुतला निकलता है उसको आहारक शरीर कहते हैं।

प्र033. तैजस शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीरों में कान्ति उत्पन्न करने वाले शरीर को तैजस शरीर कहते हैं।

प्र034. कार्माण शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. आठ कर्मों के समूह को कार्माण शरीर कहते हैं।

प्र035. एक जीव के एक साथ कितने शरीर का संयोग हो सकता है ?
उ0. एक जीव के एक साथ कम से कम दो और अधिक से अधिक चार शरीर का संयोग होता है। खुलासा इस प्रकार है।
(1) विग्रहगति में तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।
(2) मनुष्य और तिर्यंच के औदारिक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।
(3) देव और नारकियों के वैक्रियक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।
(4) आहारक ऋद्धिधारी मुनि के औदारिक, आहारक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।

प्र36. तत्त्व कितने हैं ?
उ0 तत्त्व सात हैं :– जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा और मोक्ष।
प्र037. जीव तत्त्व किसे कहते हैं ? और जीव तत्त्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है ?
उ0 जिसमें मेरा ज्ञान दर्शन हो वह जीव तत्त्व है और जीव तत्त्व एक मात्र आश्रय करने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है।

प्र038. अजीव तत्त्व किसे कहते हैं। और अजीव तत्त्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है ?
उ0 जिनमें मेरा ज्ञान ज्ञान–दर्शन नहीं है वे अजीव तत्त्व हैं और अजीव तत्त्व जानने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व हैं।

प्र39. आस्रव तत्त्व किसे कहते हैं और आस्रव तत्त्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है।
उ0 शुभाशुभ विकारी भावों का उत्पन्न होना आस्रव तत्त्व है और आस्रव तत्त्व छोड़ने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है।
प्र040. बन्धतत्त्व किसे कहते हैं और बन्ध तत्त्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है ?
उ0 शुभाशुभ विकारी भावों में अटकना बन्ध तत्त्व है और बन्धतत्त्व छोड़ने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है।

प्र041. संवर तत्त्व किसे कहते हैं और संवर तत्त्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है ?
उ0 शुद्धि का प्रगट होना संवरतत्त्व है और संवरतत्त्व एक देश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है।
प्र42. निर्जरा तत्त्व किसे कहते हैं और निर्जरा तत्त्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है ?
उ0 शुद्धि की वृद्धि होना निर्जरा तत्त्व है और निर्जरा तत्त्व एक देश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है।
प्र43. मोक्ष तत्त्व किसे कहते हैं और मोक्ष तत्त्व प्रयोजन–भूत तत्त्व किस प्रकार है ?
उ0 सम्पूर्ण शुद्धि का प्रगट होना मोक्ष तत्त्व है और मोक्ष तत्त्व पूर्ण करने योग्य प्रयोजन भूत तत्त्व है।
प्र044. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 52 में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?
उ0 इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न हैं, ये सब

अनादिनिधन वस्तुयें अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिध
न वस्तुयें कोई किसी के आधीन नहीं हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के
परिणमित कराने से परिणमित नही होतीं।

प्र45. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था जानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 केवलज्ञान के अनुसार, विश्व की व्यवस्थित–व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर–द्रव्यों
में या स्व–द्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा। तो फिर क्या करना–बस अपने स्वरूप का
ध्यान करना अर्थात–केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना–यही प्रयोजन रहा।

प्र46. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?

उ0 दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहां ऐसा ज्ञान बराबर रहता
है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो
दर्पण की निर्मलता ही है।

सिद्धान्त – इसी प्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता
है। वहां ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो
ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य– ज्योति स्वरूप आत्मा ही है अर्थात् अकेला ज्ञान ही है।

प्र047. मैं कौन हूँ ?

उ0 मैं जीव हूँ।

प्र048. मेरा त्रिकाल स्वभाव क्या है ?

उ0 मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है।

प्र049. ज्ञान का स्वभाव क्या है ?

उ0 ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व पर प्रकाशक है।

प्र050. ज्ञान क्या करता है ?

उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को देखता जानता है जो कि अकेला ज्ञान है।

प्र051. निगोद से लेकर सिद्ध भगवान तक सब जीव हैं सबका त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, सबके
ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व –पर प्रकाशक है, सबका ज्ञान अपनी स्व–पर
प्रकाशक पर्याय को ही देखता है, तो फिर संसार व मोक्ष की व्यवस्था क्या है ?

उ0 a) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को अकेला ज्ञान देखता है यही मोक्ष है।
b) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को विश्व रुप देखता है यही संसार है

प्र052 दृष्टि का विषय कैसे बदलें?

उ0 दृष्टि का विषय भेदज्ञान से बदलता है।

प्र053. भेदज्ञान कैसे करें ?

उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को इस भेदज्ञान सहित देखे कि 'विश्व का प्रत्येक
सत अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ' तो ज्ञान की स्व–पर
प्रकाशक पर्याय विश्व रुप भासित नहीं होगी अकेला ज्ञान ही भासित होगी।

प्र054. अकेले ज्ञान की दृष्टि का फल क्या है ?

उ0 अकेले ज्ञान की दृष्टि के फल में ज्ञान में निज रस से ही आनंद आदि अनंत गुणों की
निर्मलता का वेदन होता है। और यह जीव भगवान बन जाता है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.०० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- २० दिसम्बर २०१५ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-७३ का पारितोषिक वितरण भी २१ फरवरी २०१६ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-७५

दिनांक 10 अप्रैल 2016 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

—प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न—

निरन्तर चिंतवन करने योग्य परमागम के अनमोल वचन

नोट– वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता 73 व 74 के सभी प्रश्नों व उत्तरों के साथ निम्न प्रश्नोत्तर याद करने हैं।

प्र01. बन्ध किसे कहते हैं ?

उ0 जिस सम्बन्ध विशेष से अनेक वस्तुओं में एकपने का ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशेष को बन्ध कहते हैं।

प्र02. बन्ध की परिभाषा में चार बातें कौन–कौन सी जाननी चाहिए, जिनके जानने–मानने से मिथ्यात्वादि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति, वृद्धि और पूर्णता की प्राप्ति हो ?

उ0 1. सम्बन्ध विशेष होना चाहिए। 2. अनेक वस्तुये होनी चाहिये। 3. बाहरी रूप से देखने मे, कथन में एक आना चाहिये। 4. ज्ञान मे जैसा–जैसा वस्तुस्वरूप है वैसा–वैसा ही आना चाहिये।

प्र03. बन्ध कितने प्रकार के होते हैं ?

उ0 बन्ध तीन प्रकार के हैं। 1. जीव बन्ध। 2. पुद्गल बन्ध। 3. उभय बन्ध।

प्र04. जीव बन्ध किसे कहते हैं ?

उ0 जिस सम्बन्ध विशेष से ज्ञान और क्रोधादि भावों में एकपने का ज्ञान होता है, उस सम्बन्ध विशेष को जीव बंध कहते हैं। जैसे–मैं क्रोधी हूँ।

प्र05. मैं क्रोधी हूँ–यह कौन सा बन्ध है और उसमें बन्ध की चार बातें लगाकर समझाइयें।

उ0 1. मैं क्रोधी हूँ – यह जीव बन्ध है।

2. एक मुझ आत्मा और क्रोध का भाव यह अनेक वस्तुयें हुई।

3. बाहरी रूप से देखने में तथा बोलने में आता है कि मैं क्रोधी हूँ।

4. मुझ आत्मा अबन्धस्वभावी है और क्रोध का भाव बन्ध स्वभावी है–ऐसा जानकर अपनी ज्ञान की पर्याय को अबन्धस्वभावी निजआत्मा की ओर झुका दे तो बंध भाव अलग पड़ जायेगा।

प्र06. जीव बन्ध को जानने–मानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 (अ) जैसे–जैसे अबन्धस्वभावी निजआत्मा में एकाग्र होता चला जावेगा, वैसे–वैसे बन्धस्वभावी से भिन्न होता चला जावेगा।

(ब) जैसे–जैसे बन्धस्वभावी से भिन्न होता चला जायेगा वैसे–वैसे अबंधस्वभावी निजआत्मा मे एकाग्र होता हुआ क्रम से मोक्ष लक्ष्मी का नाथ बन जावेगा।

(स) जीव बन्ध के जानने–मानने से समयसारादि सम्पूर्ण अध्यात्म ग्रन्थों का मर्म उसके हाथ में आ जावेगा।

प्र07. पुद्गल बंध किसे कहते हैं ?

उ0 जिस सम्बन्ध विशेष से अनेक पुद्गलों में एकपने का ज्ञान होता है, उस सम्बन्ध विशेष को पुद्गल बंध कहते हैं। जैसे– सोने का हार, मकान, गाड़ी आदि।

प्र08. यह मेरा सोने का हार है – यह कौन सा बन्ध है और उसमें बन्ध की चार बातें समझाइयें ?

उ0 सोने का हार – यह पुद्गल बन्ध है।

1. सोने का हार–यह सम्बन्ध विशेष है।

2. सोने के हार में अनन्त पुद्गलपरमाणु – यह अनेक वस्तुयें हुई।

3. बाहरी रूप से देखने में तथा कथन में आता है यह मेरा सोने का हार है।

4. (अ) सोने का हार औदारिक शरीर है और इसका कर्त्ता आहारर्वणा ही है।

(आ) सोने के हार में अनन्त पुद्गलपरमाणु हैं।

(इ) प्रत्येक परमाणु में अस्तित्व वस्तुत्वादि अनन्त सामान्यगुण हैं और स्पर्श–रस–गंध–वर्ण आदि अनन्त विशेष गुण हैं। प्रत्येक परमाणु एक–एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्यायों सहित विराज रहा है।

(ई) जब सोने के हार में एक परमाणु का दूसरे परमाणु से किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है तो मुझ आत्मा से सोने के हार का सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? कभी भी नहीं हो सकता है ऐसा श्रद्धान–ज्ञान वर्ते तो उपचरित असद्भूत व्यवहारनय से ऐसा कहा जा सकता है कि यह मेरा सोने का हार है, परन्तु ऐसा है नहीं।

प्र09. पुद्गल बन्ध को जानने–मानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 (अ) विश्व में जितने समानजातीय स्कन्ध द्रष्टिगोचर होते हैं, उन सब में पुद्गल बन्ध के अनुसार ज्ञान–श्रद्धान वर्तेगा तो पुद्गल स्कन्धों में जो अनादिकाल से द्वयरूप बुद्धि वर्त रही है उसका अभाव होकर, क्रम से मोक्ष लक्ष्मी का नाथ बन जावेगा।

(आ) अज्ञानी अनादिकाल से पुद्गल बन्धों में अपनेपने की मान्यता से पागल हो रहा था – उसका अभाव हो जावेगा।

प्र010. उभय बंध किसे कहते है ?

उ0 जिस सम्बन्ध विशेष से आत्मा और शरीर में एकपने का ज्ञान होता है, उस सम्बन्ध विशेष को उभय बंध का ज्ञान होता है, उस सम्बन्ध विशेष को उभय बंध कहते हैं। जैसे–मैं वीना हूँ, यह मेरा लड़का हैं आदि।

प्र011. मैं वीना हूँ–यह कौन सा बन्ध है और उसमें बन्ध की चार बातें लगाकर समझाइयें ?

उ0 मैं वीना हूँ यह उभय बन्ध है।

1. मैं वीना हूँ – यह सम्बन्ध विशेष है।

2. एक मुझ आत्मा और वीना में अनंत पुद्गल परमाणु यह अनेक वस्तुयें हुई।

3. मैं वीना हूँ ऐसा बाहरी रूप से देखने में तथा बोलने में आता है।

4. (अ) मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीवतत्व हूँ। वीना सर्वथा अजीवतत्व हैं।

(आ) अनादिकाल से एक–एक समय करके वीना अजीवतत्व में अपनेपने की मान्यता से अनंतबार निगोद गया और अपरिमित दुःख सहन किये।

(इ) वर्तमान में सच्चे देव–गुरू–धर्म का संयोग मिला, उन्होंने बताया तू तो ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीवतत्व है। वीना सर्वथा अजीवतत्व हैं। वीना अजीवतत्व से तेरा किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

(ई) ऐसा सुनते जानते मानते ही आस्रव बन्ध भागने शुरू हो गये और संवर–निर्जरा की प्राप्ति कर, क्रम से मोक्षलक्ष्मी का नाथ बन जायेगा।

प्र012. उभय बन्ध को जानने मानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 (अ) विश्व में निगोद से लेकर 14 वें गुणस्थान तक के असमानजातीय उभयबंध का सच्चा ज्ञान हो जाता है।

(आ) उभय बंध को समझने से प्रयोजनभूत साततत्वों का रहस्य समझ मे आ जाता है।

प्र013. असमानजातीय उभयबंध के विषय में श्रीमोक्षमार्ग प्रकाशक तथा श्रीप्रवचनसार में क्या बताया है ?

उ0 1. श्रीमोक्षमार्ग प्रकाशक के सातवें अधिकार में लिखा है–"असमानजातीय उभयबंध का ज्ञान हो जावे तो मिथ्या दृष्टिपना न रहे।"

2. श्रीप्रवचनसार गाथा 154 की टीका व भावार्थ में आया है कि – "मनुष्य, देव इत्यादि अनेक द्रव्यात्मक असमानजातीय द्रव्य पर्यायों में भी जीव का स्वरूपअस्तित्व और प्रत्येक परमाणु का स्वरूपअस्तित्व सर्वथा भिन्न–भिन्न हैं। स्व–पर का भेदविज्ञान करने के लिए जीव के स्वरूपअस्तित्व को पद–पद पर लक्ष्य में लेना योग्य है।"

प्र014.
1. यह मेरी किताब है।
2. मैं बह हूँ।
3. मैंने हिंसा का भाव किया।
4. यह मेरी हीरों की अंगूठी है।
5. यह मेरा महल है।
6. यह मेरी कार है।
7. मैंने चोरी का भाव किया।
8. यह मेरी सोने की दुकान है।
9. मैंने टेलीविजन ले लिया है।
10. यह मेरा पति है।

उक्त वाक्यों पर बंध की चार बातें लगाकर समझाइये।

प्र15. तत्त्व कितने हैं ?
उ0 तत्त्व सात हैं :– जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा और मोक्ष।

प्र016. जीव तत्त्व किसे कहते है ? और जीव तत्त्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है ?
उ0 जिसमें मेरा ज्ञान दर्शन हो वह जीव तत्त्व है और जीव तत्त्व एक मात्र आश्रय करने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है।

प्र017. अजीव तत्त्व किसे कहते हैं। और अजीव तत्त्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है ?
उ0 जिनमें मेरा ज्ञान ज्ञान–दर्शन नहीं है वे अजीव तत्त्व हैं और अजीव तत्त्व जानने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है।

प्र18. आस्रव तत्त्व किसे कहते हैं और आस्रव तत्त्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है।
उ0 शुभाशुभ विकारी भावों का उत्पन्न होना आस्रव तत्त्व है और आस्रव तत्त्व छोड़ने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है।

प्र019. बन्धतत्त्व किसे कहते हैं और बन्ध तत्त्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है ?
उ0 शुभाशुभ विकारी भावों में अटकना बन्ध तत्त्व है और बन्धतत्त्व छोड़ने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है।

प्र020. संवर तत्त्व किसे कहते हैं और संवर तत्त्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है ?
उ0 शुद्धि का प्रगट होना संवरतत्त्व है और संवरतत्त्व एक देश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है।

प्र021. निर्जरा तत्त्व किसे कहते हैं और निर्जरा तत्त्व प्रयोजनभूत किस प्रकार है ?
उ0 शुद्धि की वृद्धि होना निर्जरा तत्त्व है और निर्जरा तत्त्व एक देश प्रगट करने योग्य प्रयोजनभूत तत्त्व है।

प्र022. मोक्ष तत्त्व किसे कहते हैं और मोक्ष तत्त्व प्रयोजन–भूत तत्त्व किस प्रकार है ?
उ0 सम्पूर्ण शुद्धि का प्रगट होना मोक्ष तत्त्व है और मोक्ष तत्त्व पूर्ण करने योग्य प्रयोजन भूत तत्त्व है।

प्र023. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 52 में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?
उ0 इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नहीं हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती।

प्र24. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था जानने से क्या लाभ रहा ?
उ0 केवलज्ञान के अनुसार, विश्व की व्यवस्थित–व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर–द्रव्यों में या स्व–द्रव्य में कुछ भी करना नही रहा। तो फिर क्या करना–बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात–केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना–यही प्रयोजन रहा।

प्र25. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?

उ0 दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहां ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।

सिद्धान्त – इसी प्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य– ज्योति स्वरूप आत्मा ही है अर्थात् अकेला ज्ञान ही है।

प्र026. मैं कौन हूँ ?

उ0 मैं जीव हूँ।

प्र027. मेरा त्रिकाल स्वभाव क्या है ?

उ0 मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है।

प्र028. ज्ञान का स्वभाव क्या है ?

उ0 ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व पर प्रकाशक है।

प्र029. ज्ञान क्या करता है ?

उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को देखता जानता है जो कि अकेला ज्ञान है।

प्र030. निगोद से लेकर सिद्ध भगवान तक सब जीव हैं सबका त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, सबके ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व –पर प्रकाशक है, सबका ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को ही देखता है, तो फिर संसार व मोक्ष की व्यवस्था क्या है ?

उ0 a) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को अकेला ज्ञान देखता है यही मोक्ष है।

b) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को विश्व रुप देखता है यही संसार है

प्र031. दृष्टि का विषय कैसे बदलें?

उ0 दृष्टि का विषय भेदज्ञान से बदलता है।

प्र032. भेदज्ञान कैसे करें ?

उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को इस भेदज्ञान सहित देखे कि 'विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ' तो ज्ञान की स्व–पर प्रकाशक पर्याय विश्व रुप भासित नहीं होगी अकेला ज्ञान ही भासित होगी।

प्र033. अकेले ज्ञान की दृष्टि का फल क्या है ?

उ0 अकेले ज्ञान की दृष्टि के फल में ज्ञान में निज रस से ही आनंद आदि अनंत गुणों की निर्मलता का वेदन होता है। और यह जीव भगवान बन जाता है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.०० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- २१ फरवरी २०१६ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-७३ का पारितोषिक वितरण भी १० अप्रैल २०१६ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-७६

दिनांक 10 जुलाई 2016 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

निरन्तर चिंतवन करने योग्य परमागम के अनमोल वचन

नोट- वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता 73, 74 व 75 के सभी प्रश्नों व उत्तरों के साथ निम्न प्रश्नोत्तर याद करने हैं।

प्र01. जीव तत्व सम्बन्धी जीव की भूल रूप मिथ्या मान्यतायें किस-किस प्रकार है?

उ0 मैं सुखी दुखी मैं रंक राव, मेरे धन गृह गोधन प्रभाव।
मेरे सुत तिय मैं सबल दीन, बेरूप सुभग मूरख प्रवीन।।4।।

मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यादर्शन के करण ऐसा मानता है कि (1) शरीर की अनुकूलता से मै सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मै दुःखी, (2) निर्धन होने से मैं दुःखी और राजा होने से मै सुखी, (3) धन-घर-गाड़ी, मोटर होने से मैं सुखी और धन-घर-गाड़ी मोटर न होने से मैं [illegible] से मैं सुखी और लड़का -स्त्री-भाई-बहन न होने से मैं दुःखी, (6) ताकतवर होने से मैं सुखी और कमजोर होने से मैं दुःखी, (7) कुरूप होने से मैं दुःखी और सुन्दर होने से मैं सुखी, (8) मूरख होने से मैं दुःखी और प्रवीन होने से मै सुखी, (9) अनशनादि करने से मैं सुखी और अनशनादि न करने से मैं दुःखी, (10) प्रवचनकार होने से मैं सुखी और प्रवचनकार न होने से मैं दुःखी, (11) सिद्धचक्र का पाठ करने से मैं सुखी और सिद्धचक्र का पाठ न करने से मैं दुःखी, (12) यात्रा करने से मैं सुखी और यात्रा न करने से मैं दुःखी, (13) व्यापारादिक चलने से मैं सुखी और व्यापारादिक न चलने से मै दुःखी, (14) लाटरी आने से मै सुखी और व्यापारादिक न चलने से मैं दुःखी। ऐसी अनेक प्रकार की मिथ्या मान्यताओं को जीव तत्व सम्बन्धी जीव की भूल बताया है।

प्र02. शरीर की अनुकूलता से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मै दुःखी-इस वाक्य पर जीव तत्व सम्बन्धी जीव की भूल-अभूल का स्पष्टीकरण करिये ?

उ0

ताको न जान	विपरित मान करि	करेदेह में निज पिछान	इसका फल
शरीर की कोई अवस्था अनुकूल-प्रतिकूल नहीं है, एक मात्र ज्ञान का ज्ञेय है, इस बात को नहीं जानता	शरीर की अनुकूलता से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मैं दुखी-ऐसा मान कर,	शरीर की अनुकूलता में सुखीपने से और शरीर की प्रतिकूलता में दुःखीपने से अपनी पहचान करता है,	चारों गतियों में घूमकर निगोद है।

इस बात को जान	अविपरित मान करि	करे आत्म में निज पिछान	इसका फल
शरीर की कोई अवस्था अनुकूल–प्रतिकूल नहीं है, एक मात्र ज्ञान का ज्ञेय है इस बात को जान	शरीर की अनुकूलता प्रतिकूलता को ज्ञान कर ज्ञेय मान कर	सुख स्वरूप निज आत्मा में प्रज्ञारूपी छैनी द्वारा अपनी पहचान करता है,	तुरन्त संवर–निर्जरा की प्राप्ति हाकर क्रम से मोक्ष है।

प्र03. अज्ञानी अपने को सुखी–दु:खी होना किससे मानता है ?

उ0 शरीर की अनुकूलता से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मै दु:खी–ऐसा मानता है।

प्र04. शरीर की अनुकूलता से मै सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मै दुखी–ऐसी मान्यता को छहढाला की प्रथम ढाल में क्या बताया हैं ?

उ0 "मोह महामद पियो अनादि, भूल आपको भरमत वादि" अर्थात वीतराग विज्ञानता रूप निज आत्मा को भूलकर शरीर की अनुकूल अवस्था से मै सुखी और शरीर की प्रतिकूल अवस्था से मैं दु:,खी–ऐसी मान्यता को छहढाला की प्रथम ढाल में मोह रूपी शराब बताया है।

प्र05. शरीर की अनुकूल अवस्था से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूल अवस्था से मैं दु:खी–ऐसी मान्यता को मोह रूपी महामदिरापान छहढाला की प्रथम ढाल में क्यों

उ0 1. तराजू के एक पलड़े में स्वयं वीतराग–विज्ञानतारूप निज ज्ञायक आत्मा अर्थात लोक प्रमाण अमर्यादित अखण्ड ज्ञान। 2. तराजु के दूसरे पलड़े में शरीर की अनुकूलता व प्रतिकूलता रूप आहारवर्गणा का कार्य है। 3. इन सबमें एकत्वबुद्धि होने से शरीर की अनुकूलता से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मैं दु:खी–ऐसी मान्यता को मोहरूपी महा मदिरापान बताया है।

प्र06. शरीर की अनुकूल अवस्था से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूल अवस्था से मैं दु:खी–ऐसी मोहरूपी महा मदिरापान का फल छहढाला की प्रथम ढाल में क्या बताया है ?

उ0 ऐसी मोहरूपी महा मदिरापान का फल चारों गतियों में घूमकर निगोद बताया है।

प्र07. शरीर की अनुकूलता से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मैं दु:खी–ऐसी मान्यता का फल चारों गतियों में घूम कर निगोद क्यों बताया है ?

उ0 (1) सुख आत्मा के सुख गुण में से आता है और दु:ख सुख सुखगुण की दशा है।
(2) जड़–शरीर आदि में सुख या दु:ख की कोई पर्याय नही है और शरीर की अनुकूलता या प्रतिकूलता व्यवहारनय से ज्ञान का ज्ञेय है।
(3) इस वस्तु स्वरूप को भूलने के कारण शरीर की अनुकूलता से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मैं दु:खी–अज्ञानी की ऐसी खोटी मान्यता का फल चारों गतियों में घूमकर निगोद जाना बताया है।

प्र08. मैं ज्ञान –दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ–इस बात को भूलकर शरीर की अनुकूलता से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मैं दुःखी–ऐसी मान्यता को छहढाला की दूसरी ढाल में क्या–क्या बताया है ?

उ0 (1) चेतन को है उपयोगरूप अर्थात मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ–इस बात को भूलकर शरीर की अनुकूलता से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से दुःखी–ऐसी खोटी मान्यता को जीव तत्व सम्बन्धी जीव की भूल बताया है।

(2) मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ–इस बात को भूलकर शरीर की अनुकूलता से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मैं दुःखी–ऐसा अनादि काल का श्रद्धान अगृहीत मिथ्यादर्शन बतलाया है।

(3) मै ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ इस बात को भूलकर शरीर की अनुकूलता से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से में दुःखी–ऐसा अनादि काल का ज्ञान अगृहीत मिथ्याज्ञान बतलाया है।

(4) मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ–इस बात को भूलकर शरीर की अनुकलता से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मैं दुःखी–ऐसा अनादि काल का आचरण अगृहीत मिथ्याचारित्र बतलाया है।

(5) मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ इस बात को भूलकर वर्तमान में विशेष रूप से मनुष्य भव व दिगम्बर धर्मी होने पर भी कुगुरू–कुदेव–कुधर्म का उपदेश मानने से शरीर की अनुकूलता से मै सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मैं दुःखी–ऐसे दृढ–श्रद्धान को गृहीत मिथ्यादर्शन बतलाया है।

(6) मै ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी [illegible] शरीर की अनुकूलता से मै सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मै दुःखी–ऐसे दृढ ज्ञान को गृहीत मिथ्याज्ञान बतलाया हैं।

(7)मै ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ–इस बात को भूलकर वर्तमान में विशेष रूप से मनुष्य भव व दिगम्बर धर्मी होने पर भी कुगुरू–कुदेव–कुधर्म का उपदेश मानने से शरीर की अनुकूलता से मै सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मैं दुःखी–ऐसे दृढ आचरण को गृहीत मिथ्याचारित्र बताया है।

प्र09. मै ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ इस बात को भूलकर शरीर की अनुकूलता से मै सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मैं दुःखी–ऐसे जीव तत्व सम्बन्धी जीव की मूलरूप अगृहीत–गृहीत मिथ्यादर्शनादि का अभाव होकर सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर पूर्ण सुखीपना कैसे प्रगट होवे–इसका उपाय छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है?

उ0 चेतन को है उपयोग रूप बिनमूरत चिन्मूरत अनूप।
पदगल नभ धर्म – अधर्म काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल।।

(1) मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ।
(2) मेरा कार्य ज्ञाता दृष्टा है।
(3) आँख–नाक–कान औदारिक आदि शरीरों रूप मेरी मूर्ति नहीं है।
(4) चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।
(5) सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ निज आत्मा ही अनुपम है।
(6) मुझ आत्मा के अलावा इस विश्व में अनन्त जीव द्रव्य है, अनन्तानन्त पुदगल द्रव्य

है, धर्म–अधर्म आकाश एक–एक द्रव्य है, लोक प्रमाण असंख्यात काल द्रव्य है। इन सब द्रव्यों से मुझ आत्मा का किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का कर्ता–भोक्ता का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। क्योंकि इन सब द्रव्यों का और मुझ आत्मा का द्रव्य –क्षेत्र –काल–भाव पृथक–पृथक है–ऐसा जान कर ज्ञान –दर्शन उपयोगमयी निज जीव तत्व का आश्रय ले, तो शरीर की अनुकूलता से मैं सुखी और शरीर की प्रतिकूलता से मैं दुःखी–ऐसी जीव तत्व सम्बन्धी जीव की भूल रुप अगृहीत–गृहीत मिथ्यादर्शनादि का अभाव होकर सम्यक्दर्शनादि की प्राप्ति कर क्रम से पूर्ण अतीन्द्रिय आनन्द की प्राप्ति होवे–यह उपाय छहढाला की दूसरी ढाल में बताया है।

प्र010. मैं कौन हूँ ?
उ0 मैं जीव हूँ।

प्र011. मेरा त्रिकाल स्वभाव क्या है ?
उ0 मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है।

प्र012. ज्ञान का स्वभाव क्या है ?
उ0 ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व पर प्रकाशक है।

प्र013. ज्ञान क्या करता है ?
उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को देखता जानता है जो कि अकेला ज्ञान है।

प्र014. निगोद से लेकर सिद्ध भगवान तक सब जीव हैं सबका त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, सबके ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व –पर प्रकाशक है, सबका ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को ही देखता है, तो फिर संसार व मोक्ष की व्यवस्था क्या है ?
उ0 a) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को अकेला ज्ञान देखता है यही मोक्ष है।
b) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को विश्व रुप देखता है यही संसार है

प्र016. दृष्टि का विषय कैसे बदलें?
उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को इस भेदज्ञान सहित देखे कि 'विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ' तो ज्ञान की स्व–पर प्रकाशक पर्याय विश्व रुप भासित नहीं होगी अकेला ज्ञान ही भासित होगी।

प्र017. अकेले ज्ञान की दृष्टि का फल क्या है ?
उ0 अकेले ज्ञान की दृष्टि के फल में ज्ञान में निज रस से ही आनंद आदि अनंत गुणों की निर्मलता का वेदन होता है। और यह जीव भगवान बन जाता है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.०० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- १० अप्रैल २०१६ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–७५ का पारितोषिक वितरण भी १० जुलाई २०१६ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-७७

दिनांक 25 सितम्बर 2016 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

निरन्तर चिंतवन करने योग्य परमागम के अनमोल वचन

प्र01. मैं कौन हूँ ?
उ0 मैं जीव हूँ।
प्र02. मेरा त्रिकाल स्वभाव क्या है ?
उ0 मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है। स्वच्छ ज्ञान
प्र03. ज्ञान का स्वभाव क्या है ?
उ0 ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व पर प्रकाशक है।
प्र04. ज्ञान क्या करता है ?
उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को देखता जानता है जो कि अकेला ज्ञान है।
प्र05. निगोद से लेकर सिद्ध भगवान तक सब जीव हैं सबका त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, सबके ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व –पर प्रकाशक है, सबका ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को ही देखता है, तो फिर संसार व मोक्ष की व्यवस्था क्या है ?
उ0 a) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को अकेला ज्ञान देखता है यही मोक्ष है।
b) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को विश्व रुप देखता है यही संसार है
प्र06. दृष्टि का विषय कैसे बदलें?
उ0 दृष्टि का विषय भेदज्ञान से बदलता है।
प्र07. भेदज्ञान कैसे करें ?
उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को इस भेदज्ञान सहित देखे कि 'विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ' तो ज्ञान की स्व–पर प्रकाशक पर्याय विश्व रुप भासित नहीं होगी अकेला ज्ञान ही भासित होगी। प्रत्येक जीव प्रत्येक परमाणु
प्र08. अकेले ज्ञान की दृष्टि का फल क्या है ?
उ0 अकेले ज्ञान की दृष्टि के फल में ज्ञान में निज रस से ही आनंद आदि अनंत गुणों की निर्मलता का वेदन होता है। और यह जीव भगवान बन जाता है।
प्र09. विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ–इस निर्णय के लिये किसका ज्ञान आवश्यक है ?
उ0 विश्व का ज्ञान आवश्यक है।
प्र010. विश्व किसे कहते हैं ?
उ0 जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल–इन छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं।
प्र011. जीवादिक द्रव्य कितने –कितने हैं और कहाँ पर रहते हैं ?
उ0 (1) इस लोक में जीव अनन्त हैं और सम्पूर्ण लोकाकाश में भरे हुये हैं। (2) पुद्गल परमाणु अनन्तानन्त हैं और सम्पूर्ण लोकाकाश में भरे हुये हैं। (3) इस लोक में एक धर्म द्रव्य है, वह सम्पूर्ण लोकाकाश में व्याप्त है। (4) इस लोक में एक अधर्म द्रव्य है, वह सम्पूर्ण लोकाकाश में व्याप्त है। (5) इस लोक में एक आकाश द्रव्य है, वह सम्पूर्ण

लोक व अलोक में व्याप्त है। (6) इस लोक में लोकप्रमाण असंख्यात काल द्रव्य हैं, एक–एक कालद्रव्य लोकाकाश के एक–एक प्रदेश पर रत्नों की भांति स्थित हैं।

विशेष–धर्म–अधर्म–आकाश–काल–ये चार द्रव्य अनादिअनन्त स्थिर हैं, शुद्ध हैं। जीव और पुद्गल परमाणु में क्रियावतीशक्ति है, जिसका कार्य चलना व ठहरना है। जीव और पुद्गल अपनी–अपनी क्रियावती शक्ति की तत्समय की योग्यता अनुसार कभी गमन करते हैं, कभी स्थिर होते हैं। जीव और पुद्गल एक दूसरे को चलाते या ठहराते नहीं हैं।

प्र012. विश्व किसे कहते है – प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?

उ0 इस विश्व में जीव अनन्त है, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजन पर्याय व अनन्त अर्थ पर्यायों की सत्ता है। इससे सिद्ध होता है कि विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ।

प्र013. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 52 में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ0 इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नही हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती। इससे सिद्ध होता है कि विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ।

प्र014. श्री प्रवचनसार गाथा 93 में विश्व किसे कहते है और विश्व की व्यवस्था किस प्रकार है ?

उ0 इस विश्व मे जीव अनन्त–पुद्गल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा। इससे सिद्ध होता है कि विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ।

प्र15. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था जानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 केवलज्ञान के अनुसार, विश्व की व्यवस्थित–व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर–द्रव्यों में या स्व–द्रव्य में कुछ भी करना नही रहा। तो फिर क्या करना–बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात–केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना–यही प्रयोजन रहा।

प्र16. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?

उ0 दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहां ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।

सिद्धान्त – इसी प्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण मे जो ज्ञात हो रहा है वह तो लोक प्रमाण अमर्यादित अखण्ड एकाकार ज्ञानस्वरुप भगवान आत्मा ही है अर्थात् अकेला ज्ञान ही है।

प्र017. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने के लिये अर्थात् आत्मानुभव के लिये भेदज्ञान का अभ्यास किस प्रकार करना पड़ेगा ?

उ0 निज ज्ञान लोक में प्रत्येक जीव और प्रत्येक परमाणु की भिन्नता का निम्न प्रकार से ज्ञान करे तो ज्ञान में पर की अर्थात बंध पर्यायों की रूचि छूटकर निज चैतन्य मात्र की रूचि होगी, आराधना होगी और जन्म मरण का अभाव हो जायेगा।

प्र018. जीव अनन्त हैं– इससे क्या सिद्ध होता है ?

उ0 एक जीव का दूसरे जीव से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है–यह सिद्ध होता है।

प्र019. एक जीव का दूसरे जीव से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है–इससे क्या सिद्ध होता है ?

उ0 तराजु के एक पलड़े में–मैं एक जीव और तराजु के दूसरे पलड़े में मुझ जीव के अलावा अनन्त जीव–जिनसे मुझ जीव के सुख का, दुःख का, धर्म का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

प्र020. पुद्गल अनन्तानन्त हैं, इससे क्या सिद्ध होता है ?

उ0 एक पुद्गल परमाणु का दूसरे परमाणु से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है–यह सिद्ध होता है ?

प्र021. एक परमाणु का दूसरे परमाणु से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है–इससे क्या सिद्ध होता है ?

उ0 तराजु के एक पलड़े में–मैं एक जीव और दूसरे पलड़े में वीना शरीर अर्थात् अनन्त परमाणु/एक परमाणु का दूसरे परमाणु से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है अर्थात् मैं वीना नहीं हूँ, वीना शरीर सहित लोक में जितनी भी पुद्गल की बंध पर्यायें हैं, वे कोई वस्तु नहीं हैं, एक–एक परमाणु पृथक–पृथक है – उनसे मुझ जीव के सुख का, दुःख का व धर्म का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

प्र022. मैं वीना हूँ–यह क्या है ?

उ0 मैं वीना हूँ–यह भ्रम है।

प्र023. मैं वीना हूँ–इस भ्रम का फल क्या है ?

उ0 मैं वीना हूँ–इस भ्रम का फल चारों गतियों में घूमकर निगोद है।

प्र024. मुझ जीव को चारों गतियों में घूमकर निगोद में नहीं जाना है, तो मैं क्या करूँ ?

उ0 मैं वीना हूँ–इस भ्रम का अभाव कर।

प्र025. मैं वीना हूँ–इस भ्रम के अभाव का उपाय क्या है ?

उ0 तराजु के एक पलड़े में मुझ जीव अर्थात् अखण्ड चैतन्य लोक और दूसरे पलड़े में वीना शरीर अर्थात् अनन्त परमाणु–प्रत्येक परमाणु अलग–अलग अपनी–अपनी एक–एक प्रदेशी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है। जब एक परमाणु का दूसरे परमाणु से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है तो मुझ जीव का वीना शरीर से सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? अर्थात् कभी नहीं हो सकता–ऐसा जानते मानते ही ज्ञान लोक में शरीर से दृष्टि हट जाती है, अकेले ज्ञान स्वभाव पर दृष्टि आ जाती है, मैं वीना हूँ–इस भ्रम का अभाव हो जाता है, आनन्द का वेदन होता है और चारों गतियों में परिभ्रमण का अभाव होकर पंचम गति मोक्ष की प्राप्ति होती है।

प्र026. सुनार ने सोने का हार बनाया–यह क्या है ?

उ0 सुनार ने सोने का हार बनाया–यह भ्रम है।

प्र027. सुनार ने सोने का हार बनाया–इस भ्रम का फल क्या है ?

उ0 सुनार ने सोने का हार बनाया–इस भ्रम का फल चारों गतियों में घूमकर निगोद है।

प्र028. मुझ जीव को चारों गतियों में घूमकर निगोद में नहीं जाना है, तो मैं क्या करूँ ?

उ0 सुनार ने सोने का हार बनाया–इस भ्रम का अभाव कर।

प्र029. सुनार ने सोने का हार बनाया–इस भ्रम के अभाव का उपाय क्या है ?

उ0 तराजु के एक पलड़े में मुझ जीव अर्थात् अखण्ड चैतन्य लोक और दूसरे पलड़े में सुनार अर्थात् एक जीव और सुनार शरीर अर्थात् अनन्त परमाणु, सोने का हार अर्थात् अनन्त परमाणु/एक परमाणु का दूसरे परमाणु से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। जब एक परमाणु का दूसरे परमाणु से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है तो मुझ जीव का अर्थात् लोक प्रमाण अमर्यादित अखण्ड चैतन्य लोक का सुनार व सोने के हार से सम्बन्ध कैसे हो सकता है, अर्थात् कभी नहीं हो सकता, लोक में शरीर, सुनार, सोने का हार कोई वस्तु ही नहीं है, लोक में अनन्त परमाणु है, एक–एक परमाणु अलग–अलग है–ऐसा जानते मानते ही शरीर से, सुनार से व सोने के हार से दृष्टि हट जाती है, अकेले ज्ञान स्वभाव पर दृष्टि आ जाती है, सुनार ने सोने का हार बनाया–इस भ्रम का अभाव हो जाता है, आनन्द का वेदन होता है और चारों गतियों में जन्म–मरण का अभाव होकर पंचम गति मोक्ष की प्राप्ति होती है।

प्र030. मैने दाल बनाई, मैने साड़ी पहनी, बढ़ई ने अलमारी बनाई, डाक्टर ने चश्मा दिया, हलवाई ने मिठाई बनाई, मेरा मकान बहुत सुन्दर है, दवाई से फोड़ा ठीक हो गया, मैंने दीवार पर फोटो टांगा, साता वेदनीय कर्म के उदय से शरीर ठीक रहता है, मैने आँख से ज्ञान किया, मैंने पलंग पर चादर बिछाई, मैने फूल सूंघकर खुशबू का ज्ञान किया–इन भ्रमजनित वाक्यों पर उपरोक्त आठ प्रश्नों व उत्तरों के अनुसार लिखकर अभ्यास करो जैसी जीव और परमाणुओं की पृथकता है वैसी भासित होने लगेगी और जन्म–मरण का अभाव हो जायेगा।

प्र031. प्रत्येक जीव पृथक पृथक है, एक–एक परमाणु पृथक–पृथक है–तो इस लोक में मुझे कौन शरणभूत है ?

उ0 अनादिकाल से विश्व की व्यवस्था का ज्ञान न होने के कारण जिन शरीर, धन, मकान, पति, बच्चे, गाड़ी आदि नश्वर, क्षणभंगुर बंध पर्यायों को शरणभूत माना है – वे सब कोई भी मुझ जीव को शरणभूत नहीं है।

प्र032. लोक में देव–गुरू–शास्त्र तो शरणभूत है ?

उ0 लोक में पंचपरमेष्ठी, चौबीस तीर्थंकर, देव गुरू शास्त्र ये भी परद्रव्य होने से शरणभूत नहीं है, इनके आश्रय से धर्म नहीं होता। पंचपरमेष्ठी एक आदर्श मात्र हैं–जिन्होंने केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्था जानकर–समस्त परद्रव्य–परभावों से भिन्न अकेले चैतन्य लोक को पहचानकर, चैतन्य लोक में एकाग्रता के पुरूषार्थ द्वारा जन्म–मरण का अभाव किया।

प्र033. पंच परमेष्ठी, पंच बालयति, चौबीस तीर्थंकर, बीस तीर्थंकर, अनन्त सिद्ध आदि जीवों ने क्या किया ?

उ0 1– अमूर्तिक प्रदेशों का पुंज, प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी, अनादिनिधन, अखण्ड चैतन्य लोक को, शरीर, धन, मकान आदि मूर्तिक पुद्गल द्रव्यों के पिण्डों से भिन्न जाना।

2– बिन्मूरत, चिन्मूरत, सर्वज्ञस्वभावी अखण्ड चैतन्य लोक को अन्य जीवों, अनन्त परमाणुओं, धर्म–अधर्म–आकाश और काल द्रव्यों से भिन्न अकेला उपयोग स्वरूप जाना।

3– स्वतः सिद्ध अनादिअनन्त, नित्य प्रकाशमान, स्पष्ट प्रतिभासरूप, रागादि से शून्य अखण्ड चैतन्य लोक की समस्त परद्रव्यों व परभावों से भिन्न उपासना की।

4– ज्ञानात्मक, दर्शनभूत, इन्द्रियों के बिना ही सबको जानने वाले अतीन्द्रिय महापदार्थ, अचल, निरालम्ब, एक, शुद्ध, ध्रुव उपयोगस्वरूप, लोकप्रमाण अखण्ड चैतन्य दर्पण को अनेक, अशुद्ध, अध्रुव शरीर, धन, सुख–दुख, शत्रु–मित्रजन आदि बंध पर्यायों से सर्वथा शून्य जाना।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.०० बजे
2. शनिवार — स्वाध्याय मन्दिर — प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार — स्वाध्याय मन्दिर — सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार — श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार — सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- १० जुलाई २०१६ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–७६ का पारितोषिक वितरण भी २५ सितम्बर २०१६ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-७८

दिनांक 4 दिसम्बर 2016 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

निरन्तर चिंतवन करने योग्य परमागम के अनमोल वचन

'चैतन्य के दर्पण में'

चैतन्य के दर्पण में, आनन्द के आलय में।
बस ज्ञान ही ज्ञान है, कोई कैसे समझाये।

निज ज्ञान में बस ज्ञान है, ज्यों सूर्य रश्मिखान,
उपयोग में उपयोग है, क्रोधादि के दरमियान।
इस भेदविज्ञान से, तुझे निर्णय करना है,
अपनी अनुभूति में, निज दर्शन हो जाये।।,
चैतन्य के दर्पण में ....

मेरे ज्ञान में परज्ञेय की दुर्गन्ध है कहाँ,
निज ज्ञान की सुगन्ध में, ज्ञानी नहा रहा।
अभिनन्दन अभिवादन, अपने द्वारा अपना,
निज ज्ञान परिणति में प्रभु दर्शन हो जाये।।
चैतन्य के दर्पण में ....

प्र01. मैं कौन हूँ ?
उ0 मैं जीव हूँ।
प्र02. मेरा त्रिकाल स्वभाव क्या है ?
उ0 मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है।
प्र03. ज्ञान का स्वभाव क्या है ?
उ0 ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व पर प्रकाशक है।
प्र04. ज्ञान क्या करता है ?
उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को देखता जानता है जो कि अकेला ज्ञान है।
प्र05. निगोद से लेकर सिद्ध भगवान तक सब जीव हैं सबका त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, सबके ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व –पर प्रकाशक है, सबका ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को ही देखता है, तो फिर संसार व मोक्ष की व्यवस्था क्या है ?
उ0 a) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को अकेला ज्ञान देखता है यही मोक्ष है।
b) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को विश्व रुप देखता है यही संसार है
प्र06. दृष्टि का विषय कैसे बदलें?
उ0 दृष्टि का विषय भेदज्ञान से बदलता है।
प्र07. भेदज्ञान कैसे करें ?
उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को इस भेदज्ञान सहित देखे कि 'विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ' तो ज्ञान की स्व–पर प्रकाशक पर्याय विश्व रुप भासित नहीं होगी अकेला ज्ञान ही भासित होगी।

प्र08. अकेले ज्ञान की दृष्टि का फल क्या है ?

उ0 अकेले ज्ञान की दृष्टि के फल में ज्ञान में निज रस से ही आनंद आदि अनंत गुणों की निर्मलता का वेदन होता है। और यह जीव भगवान बन जाता है।

प्र09. विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ–इस निर्णय के लिये किसका ज्ञान आवश्यक है ?

उ0 विश्व का ज्ञान आवश्यक है।

प्र010. विश्व किसे कहते हैं ?

उ0 जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल–इन छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं।

प्र011. जीवादिक द्रव्य कितने –कितने हैं और कहाँ पर रहते हैं ?

उ0 (1) इस लोक में जीव अनन्त हैं और सम्पूर्ण लोकाकाश में भरे हुये हैं। (2) पुद्गल परमाणु अनन्तानन्त हैं और सम्पूर्ण लोकाकाश में भरे हुये हैं। (3) इस लोक में एक धर्म द्रव्य है, वह सम्पूर्ण लोकाकाश में व्याप्त है। (4) इस लोक में एक अधर्म द्रव्य है, वह सम्पूर्ण लोकाकाश में व्याप्त है। (5) इस लोक में एक आकाश द्रव्य है, वह सम्पूर्ण लोक व अलोक में व्याप्त है। (6) इस लोक में लोकप्रमाण असंख्यात काल द्रव्य हैं, एक–एक कालद्रव्य लोकाकाश के एक–एक प्रदेश पर रत्नों की भांति स्थित हैं।

<u>विशेष</u>–धर्म–अधर्म–आकाश–काल–ये चार द्रव्य अनादिअनन्त स्थिर हैं, शुद्ध हैं। जीव और पुद्गल परमाणु में क्रियावतीशक्ति है, जिसका कार्य चलना व ठहरना है। जीव और पुद्गल अपनी–अपनी क्रियावती शक्ति की तत्समय की योग्यता अनुसार कभी गमन करते हैं, कभी स्थिर होते हैं। जीव और पुद्गल एक दूसरे को चलाते या ठहराते नहीं हैं।

प्र012. विश्व किसे कहते है – प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?

उ0 इस विश्व में जीव अनन्त है, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजन पर्याय व अनन्त अर्थ पर्यायों की सत्ता है। इससे सिद्ध होता है कि विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ।

प्र013. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 52 में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?

उ0 इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नही हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती। इससे सिद्ध होता है कि विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ।

प्र014. श्री प्रवचनसार गाथा 93 में विश्व किसे कहते है और विश्व की व्यवस्था किस प्रकार है ?

उ0 इस विश्व मे जीव अनन्त है,पुद्गल अनन्तानन्त है,धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है, और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा। इससे सिद्ध होता है कि विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है, मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ।

प्र15. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था जानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 केवलज्ञान के अनुसार, विश्व की व्यवस्थित–व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर–द्रव्यों में और स्व–द्रव्य में कुछ भी करना नही रहा। तो फिर क्या करना–बस अपने स्वरूप

का ध्यान करना अर्थात–केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना–यही प्रयोजन रहा।

प्र16. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?

उ0 दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहां ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।

सिद्धान्त – इसी प्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण मे जो ज्ञात हो रहा है वह तो लोक प्रमाण अमर्यादित अखण्ड एकाकार ज्ञानस्वरुप भगवान आत्मा ही है अर्थात् अकेला ज्ञान ही है।

प्र017. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने के लिये अर्थात् आत्मानुभव के लिये भेदज्ञान का अभ्यास किस प्रकार करना पड़ेगा ?

उ0 निज ज्ञान लोक में प्रत्येक जीव और प्रत्येक परमाणु की भिन्नता का निम्न प्रकार से ज्ञान करे तो ज्ञान में पर की अर्थात बंध पर्यायों की रूचि छूटकर निज चैतन्य मात्र की रूचि होगी, आराधना होगी और जन्म मरण का अभाव हो जायेगा।

प्र018. जीव अनन्त हैं– इससे क्या सिद्ध होता है ?

उ0 एक जीव का दूसरे जीव से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है–यह सिद्ध होता है।

प्र019. एक जीव का दूसरे जीव से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है–इससे क्या सिद्ध होता है ?

उ0 तराजु के एक पलड़े में–मैं एक जीव और तराजु के दूसरे पलड़े में मुझ जीव के अलावा अनन्त जीव–जिनसे मुझ जीव के सुख का, दुःख का, धर्म का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

प्र020. पुद्गल अनन्तानन्त हैं, इससे क्या सिद्ध होता है ?

उ0 एक पुद्गल परमाणु का दूसरे परमाणु से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है–यह सिद्ध होता है ?

प्र021. एक परमाणु का दूसरे परमाणु से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है–इससे क्या सिद्ध होता है ?

उ0 तराजु के एक पलड़े में–मैं एक जीव और दूसरे पलड़े में वीना शरीर अर्थात् अनन्त परमाणु/एक परमाणु का दूसरे परमाणु से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है अर्थात् मैं वीना नहीं हूँ, वीना शरीर सहित लोक में जितनी भी पुद्गल की बंध पर्यायें हैं, वे कोई वस्तु नहीं हैं, एक–एक परमाणु पृथक–पृथक है – उनसे मुझ जीव के सुख का, दुःख का व धर्म का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

प्र022. मैं वीना हूँ–यह क्या है ?

उ0 मैं वीना हूँ–यह भ्रम है।

प्र023. मैं वीना हूँ–इस भ्रम का फल क्या है ?

उ0 मैं वीना हूँ–इस भ्रम का फल चारों गतियों में घूमकर निगोद है।

प्र024. मुझ जीव को चारों गतियों में घूमकर निगोद में नहीं जाना है, तो मैं क्या करूँ ?

उ0 मैं वीना हूँ–इस भ्रम का अभाव कर।

प्र025. मैं वीना हूँ–इस भ्रम के अभाव का उपाय क्या है ?

उ0 तराजु के एक पलड़े में मुझ जीव अर्थात् अखण्ड चैतन्य लोक और दूसरे पलड़े में वीना शरीर अर्थात् अनन्त परमाणु–प्रत्येक परमाणु अलग–अलग अपनी–अपनी एक–एक प्रदेशी सत्ता में टकोत्कीर्ण है। जब एक परमाणु का दूसरे परमाणु से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है तो मुझ जीव का वीना शरीर से सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? अर्थात् कभी नहीं हो सकता–ऐसा जानते मानते ही ज्ञान लोक में शरीर से दृष्टि हट जाती है, अकेले ज्ञान स्वभाव पर दृष्टि आ जाती है, मैं वीना हूँ–इस भ्रम का अभाव हो जाता है, आनन्द का वेदन होता है और चारों गतियों में परिभ्रमण का अभाव होकर पंचम गति मोक्ष की प्राप्ति होती है।

प्र026. सुनार ने सोने का हार बनाया–यह क्या है ?

उ0 सुनार ने सोने का हार बनाया–यह भ्रम है।

प्र027. सुनार ने सोने का हार बनाया– इस भ्रम का फल क्या है ?

उ0 सुनार ने सोने का हार बनाया–इस भ्रम का फल चारों गतियों में घूमकर निगोद है।

प्र028. मुझ जीव को चारों गतियों में घूमकर निगोद में नहीं जाना है, तो मैं क्या करूँ ?

उ0 सुनार ने सोने का हार बनाया–इस भ्रम का अभाव कर।

प्र029. सुनार ने सोने का हार बनाया–इस भ्रम के अभाव का उपाय क्या है ?

उ0 तराजू के एक पलड़े में मुझ जीव अर्थात् अखण्ड चैतन्य लोक और दूसरे पलड़े में सुनार अर्थात् एक जीव और सुनार शरीर अर्थात् अनन्त परमाणु, सोने का हार अर्थात् अनन्त परमाणु/एक परमाणु का दूसरे परमाणु से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। जब एक परमाणु का दूसरे परमाणु से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है तो मुझ जीव का अर्थात् लोक प्रमाण अमर्यादित अखण्ड चैतन्य लोक का सुनार व सोने के हार से सम्बन्ध कैसे हो सकता है, अर्थात् कभी नहीं हो सकता, लोक में शरीर, सुनार, सोने का हार कोई वस्तु ही नही है, लोक में अनन्त परमाणु हैं, एक–एक परमाणु अलग–अलग है–ऐसा जानते मानते ही शरीर से, सुनार से व सोने के हार से दृष्टि हट जाती है, अकेले ज्ञान स्वभाव पर दृष्टि आ जाती है, सुनार ने सोने का हार बनाया–इस भ्रम का अभाव हो जाता है, आनन्द का वेदन होता है और चारों गतियों में जन्म–मरण का अभाव होकर पंचम गति मोक्ष की प्राप्ति होती है।

प्र030. मैने दाल बनाई, मैने साड़ी पहनी, बढ़ई ने अलमारी बनाई, डाक्टर ने चश्मा दिया, हलवाई ने मिठाई बनाई, मेरा मकान बहुत सुन्दर है, दवाई से फोड़ा ठीक हो गया, मैंने दीवार पर फोटो टांगा, साता वेदनीय कर्म के उदय से शरीर ठीक रहता है, मैने आँख से ज्ञान किया, मैंने पलंग पर चादर बिछाई, मैने फूल सूंघकर खुशबू का ज्ञान किया–इन भ्रमजनित वाक्यों पर उपरोक्त आठ प्रश्नों व उत्तरों के अनुसार लिखकर अभ्यास करो जैसी जीव और परमाणुओं की पृथकता है वैसी भासित होने लगेगी और जन्म–मरण का अभाव हो जायेगा।

प्र031. प्रत्येक जीव पृथक पृथक है, एक–एक परमाणु पृथक–पृथक है–तो इस लोक में मुझे कौन शरणभूत है ?

उ0 अनादिकाल से विश्व की व्यवस्था का ज्ञान न होने के कारण जिन शरीर, धन, मकान, पति, बच्चे, गाड़ी आदि नश्वर, क्षणभंगुर बंध पर्यायों को शरणभूत माना है – वे सब कोई भी मुझ जीव को शरणभूत नहीं है।

प्र032. लोक में देव–गुरू–शास्त्र तो शरणभूत है ?

उ0 लोक में पंचपरमेष्ठी, चौबीस तीर्थकर, देव गुरू शास्त्र ये भी परद्रव्य होने से शरणभूत नहीं है, इनके आश्रय से धर्म नहीं होता। पंचपरमेष्ठी एक आदर्श मात्र है–जिन्होंने केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्था जानकर–समस्त परद्रव्य–परभावों से भिन्न अकेले चैतन्य लोक को पहचानकर, चैतन्य लोक में एकाग्रता के पुरूषार्थ द्वारा जन्म–मरण का अभाव किया।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.०० बजे
2. शनिवार — स्वाध्याय मन्दिर — प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार — स्वाध्याय मन्दिर — सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार — श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार — सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- २५ सितम्बर २०१६ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-७७ का पारितोषिक वितरण भी ४ दिसम्बर्र २०१६ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-७६

दिनांक 5 फरवरी 2017 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र01. विश्व किसे कहते हैं ?
उ0 छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं। (जाति अपेक्षा छह द्रव्य और संख्या अपेक्षा अनन्त द्रव्य हैं।)

प्र02. द्रव्य किसे कहते हैं ?
उ0 गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्र03. गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है उसको गुण कहते हैं।

प्र04. पर्याय किसको कहते हैं ?
उ0 गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं।

प्र05. गुणों के कितने भेद हैं ?
उ0 दो भेद हैं। 1. सामान्य 2. विशेष

प्र06. सामान्य गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जो समस्त द्रव्यों में रहते हैं उनको सामान्य गुण कहते हैं।

प्र07. विशेष गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जो सब द्रव्यों में न रहकर अपने-अपने द्रव्य में रहते हैं उनको विशेष गुण कहते हैं।

प्र08. सामान्य गुण कितने हैं ?
उ0 अनन्त हैं, परन्तु उनमें मुख्य छह हैं। 1. अस्तित्व 2. वस्तुत्व 3. द्रव्यत्व 4. प्रमेयत्व 5. अगुरुलघुत्व 6. प्रदेशत्व।

प्र09. अस्तित्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य का कभी भी नाश न हो, किसी से उत्पन्न भी न हो उसको अस्तित्व गुण कहते हैं।

प्र010. वस्तुत्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य में अर्थक्रियाकारित्व अर्थात् प्रयोजनभूत किया हो उसको वस्तुत्व गुण कहते हैं।

प्र011. द्रव्यत्व गुण किसे कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य की अवस्थाएँ निरन्तर बदलती रहती हैं उसको द्रव्यत्व गुण कहते हैं।

प्र012. अगुरुलघुत्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण द्रव्य में द्रव्यपना कायम रहता है। अर्थात्
(1) एक द्रव्य दूसरे द्रव्यरुप नहीं होता है।
(2) एक गुण दूसरे रुप नहीं होता है और
(3) द्रव्य में रहने वाले अनन्त गुण बिखर कर अलग-अलग नहीं हो जाते हैं, उस शक्ति को अगुरुलघुत्व गुण कहते हैं।

प्र013. प्रदेशत्व गुण किसे कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य का कोई न कोई आकार अवश्य रहता है उसको प्रदेश गुण कहते हैं।

प्र014. प्रत्येक द्रव्य में कौन–कौन से विशेष गुण हैं ?
उ0. (1) जीव द्रव्य में चैतन्य (दर्शन ज्ञान) सम्यक्त्व, चारित्र, सुख, क्रियावती इत्यादि।
(2) पुद्गल द्रव्य में स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, क्रियावती शक्ति इत्यादि।
(3) धर्म द्रव्य में गति हेतुत्व इत्यादि।
(4) अधर्म द्रव्य में स्थिति हेतुत्व इत्यादि।
(5) आकाश द्रव्य में अवगाहन हेतुत्व इत्यादि।
(6) कालद्रव्य में परिणमन हेतुत्व इत्यादि।

प्र015. क्रियावती शक्ति क्या है ?
उ0. 1. जीव–पुद्गल में अपनी–अपनी क्रियावती शक्ति नाम का गुण नित्य है और अपनी–अप योग्यतानुसार कभी गति–क्षेत्रान्तर रुप पर्याय होती है। कभी स्थिर रहने रुप पर्या होती है। 2. जीव या पुद्गल एक दूसरे को गमन या स्थिर नहीं करा सकते है 3. जीव–पुद्गल दोनों द्रव्य अपनी क्रियावती शक्ति की उस समय की योग्यतानुसार स्व गमन करते हैं या स्थिर होते हैं।

प्र016. जीव द्रव्य किसकी कहते हैं ?
उ0. जिसमें ज्ञान–दर्शन रुप शक्ति है उसको जीव द्रव्य कहते हैं।

प्र017. पुद्गल द्रव्य किसको कहते हैं ?
उ0. जिसमें स्पर्श, रस, गंध और वर्ण ये गुण होते हैं उसके पुद्गल द्रव्य कहते हैं।

प्र018. पुद्गल के कितने भेद हैं ?
उ0. दो भेद है, एक परमाणु दूसरा स्कन्ध।

प्र019. परमाणु किसको कहते हैं ?
उ0. जिसका दूसरा विभाग नही हो सकता ऐसे सबसे छोटे पुद्गल को परमाणु कहते हैं

प्र020. स्कंध किसको कहते हैं ?
उ0. दो या दो से अधिक परमाणुओं के बन्ध को स्कंध कहते हैं।

प्र021. बन्ध किसको कहते हैं ?
उ0. जिस सम्बन्ध विशेष से अनेक वस्तुओं में एकपने का ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशे को बन्ध कहते हैं।

प्र022. बन्ध कितने प्रकार के हैं ?
उ0. तीन प्रकार के हैं। 1. जीव बन्ध 2. पुद्गल बन्ध 3. उभय बन्ध।

प्र023. स्कन्ध के कितने भेद हैं ?
उ0. आहार वर्गणा, तैजस वर्गणा, भाषा वर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माण वर्गणा इत्यादि 22 भेद हैं।

प्र024. आहार वर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जो पुद्गल स्कन्ध औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीर रुप से परिणमन करता है उसको आहार वर्गणा कहते हैं।

प्र025. तैजस वर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जिस वर्गणा से तैजस शरीर बनता है उसको तैजस वर्गणा कहते हैं।

प्र026. भाषावर्गणा किसे कहते हैं ?
उ0. जो पुद्गल स्कन्ध शब्द रुप से परिणत होता है उसको भाषावर्गणा कहते हैं।

प्र027. मनोवर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जिस पुद्गल स्कन्ध से अष्टदल कमल के आकार द्रव्यमन की रचना होती है उसको मनोवर्गणा कहते हैं।

प्र028. कार्माणवर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जिस पुद्गल स्कन्ध से कार्माण शरीर बनता है उसको कार्माणवर्गणा कहते हैं।

प्र029. शरीर कितने हैं ?
उ0. शरीर पाँच हैं। 1. औदारिक 2. वैक्रियक 3. आहारक 4. तैजस 5. कार्माण।

प्र030. औदारिक शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. मनुष्य और तिर्यचों के स्थूल शरीर को औदारिक शरीर कहते हैं।

प्र031. वैक्रियक शरीर किसको कहते है ?
उ0. जो छोटे–बड़े पृथक–अपृथक आदि अनेक क्रियाओं को करे ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियक शरीर कहते हैं।

प्र032. आहारक शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. आहारक ऋद्धिधारी छठे गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्त्वों में कोई शंका होने पर अथवा जिनालयादि की वन्दना करने के लिए, मस्तक से एक हाथ प्रमाण स्वच्छ और सफेद, सप्तधातु रहित पुरुषाकार जो पुतला निकलता है उसको आहाररिक शरीर कहते हैं।

प्र033. तैजस शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीरों में कान्ति उत्पन्न करने वाले शरीर को तैजस शरीर कहते है।

प्र034. कार्माण शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. आठ कर्मों के समूह को कार्माण शरीर कहते हैं।

प्र035. एक जीव के एक साथ कितने शरीर का संयोग हो सकता है ?
उ0. एक जीव के एक साथ कम से कम दो और अधिक से अधिक चार शरीर का संयोग होता है। खुलासा इस प्रकार है।

(1) विग्रहगति में तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।
(2) मनुष्य और तिर्यच के औदारिक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।
(3) देव और नारकियों के वैक्रियक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।
(4) आहारक ऋद्धिधारी मुनि के औदारिक, आहारक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।

प्र036. विश्व किसे कहते है – प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?
उ0 इस विश्व में जीव अनन्त है, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजन पर्याय व अनन्त अर्थ पर्यायों की सत्ता है।

प्र037. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 52 में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?
उ0 इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नही हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती।

प्र038. श्री प्रवचनसार गाथा 93 में विश्व किसे कहते है और विश्व की व्यवस्था किस प्रकार है ?
उ0 इस विश्व मे जीव अनन्त–पुद्गल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र039. श्री समयसार गाथा 3 में विश्व किसे कहते हैं और विश्व व्यवस्था किस प्रकार है ?
उ0 श्री समयसार की गाथा 3 में आता है – "लोक में सर्वत्र जो कुछ जितने पदार्थ हैं, वे सब निश्चय से एकत्व निश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को प्राप्त होते हैं क्योंकि–

(1) वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को चुम्बन करते है–स्पर्श करते है, तथापि वे परस्पर एक–दूसरे को स्पर्श नही करते।
(2) वे सब पदार्थ अत्यन्त निकट एक क्षेत्रावगाह रूप से तिष्ठ रहे हैं, तथापि वे सदाकाल अपने स्वरूप से च्युत नही होते।
(3) वे सब पदार्थ पर–रूप परिणमन न करने से अनन्त व्यक्तिता नष्ट नही होती, इसलिये वे टंकोत्कीर्ण की भांति शाश्वत–स्थिर रहते है।
(4) वे सब पदार्थ समस्त विरूद्ध कार्य तथा अविरूद्ध कार्य दोनो की हेतूता से विश्व का सदा उपकार करते हैं अर्थात टिकाये रखते हैं।

प्र40. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्था कार्तिकेय अनुप्रेक्षा गाथा 321 से 323 तक में क्या बतायी है ?
उ0 (1) जिस जीव को जिस देश में, जिस काल में जिस विधि से जन्म–मरण, सुख–दुख तथा रोग और दारिद्रय इत्यादि जैसे सर्वज्ञ देव ने जाने हैं उसी प्रकार वे सब नियम से होगें।
(2) सर्वज्ञदेव ने जिस प्रकार जाना है उसी प्रकार उस जीव के उसी देश में, उसी काल में और उसी विधि से नियमपूर्वक सब होता है उसके निवारण करने के लिये इन्द्र जिनेन्द्र–तीर्थंकर देव कोई भी समर्थ नही है।
(3) इस प्रकार निश्चय से सर्व द्रव्यों अर्थात जीव अनन्त–पुद्गल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात को तथा इन द्रव्यों की समस्त पर्यायों को जो सर्वज्ञ के केवलज्ञान के अनुसार जानता है, श्रद्धा करता है वह शुद्ध सम्यग्दृष्टि है और जो ऐसी श्रद्धा नही करता शंका सन्देह करता है वह सर्वज्ञ के आगम के प्रतिकूल है, प्रगट रूप में मिथ्यादृष्टि है।

प्र41. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था जानने से क्या लाभ रहा ?
उ0 केवलज्ञान के अनुसार, विश्व की व्यवस्थित–व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर–द्रव्यों में या स्व–द्रव्य में कुछ भी करना नही रहा। तो फिर क्या करना–बस अपने स्वरूप का [illegible] करना अर्थात–केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना–यही प्रयोजन रहा।

[illegible] 19 में क्या बताई है ?
[illegible] बराबर रहता
[illegible]
है कि ज्वाला तो [illegible]
दर्पण की निर्मलता ही है।
सिद्धान्त – इसी प्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। जहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण मे जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य– ज्योति स्वरूप आत्मा ही है अर्थात् अकेला ज्ञान ही है।

प्र43. शुद्ध चेतना का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?
उ0 *चेतन को है उपयोग रूप, बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप*
पुद्गल नभ–धर्म–अधर्म–काल, इनतै न्यारी है जीव चाल

(1) चेतन को है उपयोग रूप – मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूं। मेरा कार्य ज्ञाता–दृष्टा है।
(2) बिन्मूरत – आंख, नाक, कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही है।
(3) चिन्मूरत – चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।
(4) अनूप – सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।
(5) पुद्गल–नभ–धर्म–अधर्म–काल इनतै न्यारी है जीव चाल– मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है – इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है।

044. मैं कौन हूँ ?
उ0 मैं जीव हूँ।
045. मेरा त्रिकाल स्वभाव क्या है ?
उ0 मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है।
1046. ज्ञान का स्वभाव क्या है ?
उ0 ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व पर प्रकाशक है।
1047. ज्ञान क्या करता है ?
उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को देखता जानता है जो कि अकेला ज्ञान है।
1048. निगोद से लेकर सिद्ध भगवान तक सब जीव हैं सबका त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, सबके ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व –पर प्रकाशक है, सबका ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को ही देखता है, तो फिर संसार व मोक्ष की व्यवस्था क्या है ?
उ0 a) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को अकेला ज्ञान देखता है यही मोक्ष है।
b) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को विश्व रूप देखता है यही संसार हैं
प्र1049. दृष्टि का विषय कैसे बदलें?
उ0 दृष्टि का विषय भेदज्ञान से बदलता है।
प्र1050. भेदज्ञान कैसे करें ?
उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को इस भेदज्ञान सहित देखे कि 'विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ' तो ज्ञान की स्व–पर प्रकाशक पर्याय विश्व रुप भासित नहीं होगी अकेला ज्ञान ही भासित होगी।
प्र1051. अकेले ज्ञान की दृष्टि का फल क्या है ?
उ0 अकेले ज्ञान की दृष्टि के फल में ज्ञान में निज रस से ही आनंद आदि अनंत गुणों की निर्मलता का वेदन होता है। और यह जीव भगवान बन जाता है।
प्र52. जीव का स्वरूप श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 38 में क्या बताया है ?
उ0 स्व – (1) अमूर्तिक प्रदेशो का पुन्ज–मुझ आत्मा का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी–मुझ आत्मा का भाव है।
(3) अनादिनिधन – मुझ आत्मा का काल है।
(4) चैतन्य मात्र वस्तु – मुझ आत्म द्रव्य है।
पर – (1) मूर्तिक पुद्गल द्रव्यों का पिण्ड–शरीरादि का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणो से रहित, स्पर्शादि सहित – शरीरादि का भाव है।
(3) नवीन जिनका संयोग हुआ है – शरीरादि का काल है।
(4) ऐसे शरीर, धन, मकान आदि पुद्गल पर द्रव्य हैं।

प्र53. मुझ जीव द्रव्य का स्वरूप श्री समयसार गाथा 2 में क्या बताया है।
उ0 (1) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य स्वरूप है।
(2) मुझ जीव पदार्थ चैतन्य स्वरूपता से नित्य उद्योत रूप निर्मल–स्पष्ट–दर्शन ज्ञान ज्योति स्वरूप है।

(3) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्म स्वरुप द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।
(4) मुझ जीव पदार्थ का स्व–पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकार रुप एक है।
(5) मुझ जीव पदार्थ अन्य जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्य गुण स्वरुप है।
(6) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरुप को नहीं छोड़ता।
(7) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता– दृष्टा स्वभाव में स्थित रहे–तो स्व–समय है।
(8) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता – दृष्टा स्वभाव से छुटकर पर स्वभाव में स्थित रहे अर्थात मोह–राग–द्वेष रुप होकर परिणमें तो पर–समय है।

प्र54. छठी गाथा में मुझ ज्ञायक भाव का स्वरुप क्या बताया है ?

उ0 (1) मुझ ज्ञायक भाव स्वतः सिद्व अनादि अनन्त है,
(2) मुझ ज्ञायक भाव नित्य प्रकाशमान है,
(3) मुझ ज्ञायक भाव स्पष्ट प्रतिभास रुप है,
(4) मुझ ज्ञायक भाव संसार अवस्था में शुभाशुभ भावों रुप परिणमता हुआ होने पर भी स्वभाव दृष्टि से देखने में आवे तो शुभाशुभ भावों रुप परिणमता ही नही है।
(5) मुझ ज्ञायक भाव समस्त परद्रव्यों और परभावों से भिन्न रुप से उपासने में आने पर शुद्व कहलाता है।
(6) अंतरंग में ज्ञेयाकार रुप से परिणमता होने पर भी ज्ञेय पदार्थों के साथ मुझ ज्ञायक भाव का वास्तव में कोई सम्बन्ध नही है।

प्र55. श्री प्रवचनसार ज्ञेय अधिकार गाथा 190 से 200 का रहस्य क्या है ?

उ0 (1) शरीर, धन, सुख, दुख, शत्रु, मित्रजन– यह सब कुछ मुझ जीव के ध्रुव नही है।
(2) ध्रुव तो उपयोगात्मक आत्मा है जो (1) ज्ञानात्मक (2) दर्शनरुप (3) इन्द्रियों के बिना ही सबको जानने वाला अतीन्द्रिय महापदार्थ (4) ज्ञेय पर्यायों का ग्रहण त्याग ना करने से अचल (5) ज्ञेय पर–द्रव्यों का आलम्बन ना लेने से निरालम्ब है।
(3) इसलिये मुझ भगवान आत्मा एक है, एक होने से शुद्ध है, शुद्ध होने से ध्रुव है, ध्रुव होने से एक मात्र निज भगवान आत्मा ही उपलब्ध करने योग्य है तथा शरीर –धन–सुख–दुख–शत्रुमित्र जन ये सब अनेक है अर्थात् परमाणुओं के ढेर हैं अनेक हैं तो अशुद्ध है, अशुद्ध हैं तो अध्रुव हैं, अध्रुव हैं तो ये सब उपलब्ध करके योग्य नही है।
(4) ऐसा जानकर निज आत्मा का श्रद्धान– ज्ञान – आचरण करते ही मोह नष्ट हो जाता है, अक्षय सुख की प्राप्ति होती है। जन्म– मरण का अभाव हो जाता है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.०० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- ४ दिसम्बर २०१६ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-७८ का पारितोषिक वितरण भी ५ फरवरी २०१४ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-८०

दिनांक 16 अप्रैल 2017 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र01. विश्व किसे कहते हैं ?
उ0 छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं। (जाति अपेक्षा छह द्रव्य और संख्या अपेक्षा अनन्त द्रव्य है।)

प्र02. द्रव्य किसे कहते हैं ?
उ0 गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्र03. गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है उसको गुण कहते हैं।

प्र04. पर्याय किसको कहते हैं ?
उ0 गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं।

प्र05. गुणों के कितने भेद हैं ?
उ0 दो भेद हैं। 1. सामान्य 2. विशेष

प्र06. सामान्य गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जो समस्त द्रव्यों में रहते हैं उनको सामान्य गुण कहते हैं।

प्र07. विशेष गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जो सब द्रव्यों में न रहकर अपने-अपने द्रव्य में रहते हैं उनको विशेष गुण कहते हैं।

प्र08. सामान्य गुण कितने हैं ?
उ0 अनन्त हैं, परन्तु उनमें मुख्य छह हैं। 1. अस्तित्व 2. वस्तुत्व 3. द्रव्यत्व 4. प्रमेयत्व 5. अगुरुलघुत्व 6. प्रदेशत्व।

प्र09. अस्तित्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य का कभी भी नाश न हो, किसी से उत्पन्न भी न हो उसको अस्तित्व गुण कहते हैं।

प्र010. वस्तुत्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य में अर्थक्रियाकारित्व अर्थात् प्रयोजनभूत किया हो उसको वस्तुत्व गुण कहते हैं।

प्र011. द्रव्यत्व गुण किसे कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य की अवस्थाएँ निरन्तर बदलती रहती हैं उसको द्रव्यत्व गुण कहते हैं।

प्र012. प्रमेयत्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य किसी न किसी ज्ञान का विषय हो उसको प्रमेयत्व गुण कहते हैं।

प्र013. अगुरुलघुत्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण द्रव्य में द्रव्यपना कायम रहता है। अर्थात्
(1) एक द्रव्य दूसरे द्रव्यरुप नहीं होता है।

(2) एक गुण दूसरे गुण रुप नहीं होता है और
(3) द्रव्य में रहने वाले अनन्त गुण बिखर कर अलग–अलग नहीं हो जाते हैं, उस शक्ति को अगुरुलघुत्व गुण कहते हैं।

प्र014. प्रदेशत्व गुण किसे कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य का कोई न कोई आकार अवश्य रहता है उसको प्रदेशत्व गुण कहते हैं।

प्र015. प्रत्येक द्रव्य में कौन–कौन से विशेष गुण हैं ?
उ0. (1) जीव द्रव्य में चैतन्य (दर्शन ज्ञान) सम्यक्त्व, चारित्र, सुख, क्रियावती शक्ति इत्यादि।
(2) पुद्गल द्रव्य में स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, क्रियावती शक्ति इत्यादि।
(3) धर्म द्रव्य में गति हेतुत्व इत्यादि।
(4) अधर्म द्रव्य में स्थिति हेतुत्व इत्यादि।
(5) आकाश द्रव्य में अवगाहन हेतुत्व इत्यादि।
(6) कालद्रव्य में परिणमन हेतुत्व इत्यादि।

प्र016. क्रियावती शक्ति क्या है ?
उ0. 1. जीव–पुद्गल में अपनी–अपनी क्रियावती शक्ति नाम का गुण नित्य है और अपनी–अपनी योग्यतानुसार कभी गति–क्षेत्रान्तर रुप पर्याय होती है। कभी स्थिर रहने रुप पर्याय होती है। 2. जीव या पुद्गल एक दूसरे को गमन या स्थिर नहीं करा सकते हैं।
3. जीव–पुद्गल दोनों द्रव्य अपनी क्रियावती शक्ति की उस समय की योग्यतानुसार स्वतः गमन करते हैं या स्थिर होते हैं।

प्र017. जीव द्रव्य किसकी कहते हैं ?
उ0. जिसमें चेतना अर्थात ज्ञान–दर्शन रुप शक्ति है उसको जीव द्रव्य कहते हैं।

प्र018. पुद्गल द्रव्य किसको कहते हैं ?
उ0. जिसमें स्पर्श, रस, गंध और वर्ण ये गुण होते हैं उसके पुद्गल द्रव्य कहते हैं।

उ0. दो या दो से अधिक परमाणुओं के बन्ध को स्कंध कहते हैं।

प्र022. बन्ध किसको कहते हैं ?
उ0. जिस सम्बन्ध विशेष से अनेक वस्तुओं में एकपने का ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशेष को बन्ध कहते हैं।

प्र023. बन्ध कितने प्रकार के हैं ?
उ0. तीन प्रकार के हैं। 1. जीव बन्ध 2. पुद्गल बन्ध 3. उभय बन्ध।

प्र024. स्कन्ध के कितने भेद हैं ?
उ0. आहार वर्गणा, तैजस वर्गणा, भाषा वर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माण वर्गणा इत्यादि 22 भेद हैं।

प्र025. आहार वर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जो पुद्गल स्कन्ध औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीर रुप से परिणमन करता है उसको आहार वर्गणा कहते हैं।

प्र026. तैजस वर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जिस वर्गणा से तैजस शरीर बनता है उसको तैजस वर्गणा कहते हैं।

प्र027. भाषावर्गणा किसे कहते हैं ?
उ0. जो पुद्गल स्कन्ध शब्द रुप से परिणत होता है उसको भाषावर्गणा कहते हैं।

प्र028. मनोवर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जिस पुद्गल स्कन्ध से अष्टदल कमल के आकार द्रव्यमन की रचना होती है उसको मनोवर्गणा कहते हैं।

प्र029. कार्माणवर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जिस पुद्गल स्कन्ध से कार्माण शरीर बनता है उसको कार्माणवर्गणा कहते हैं।

प्र030. शरीर कितने हैं ?
उ0. शरीर पाँच हैं। 1. औदारिक 2. वैक्रियक 3. आहारक 4. तैजस 5. कार्माण।

प्र031. औदारिक शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. मनुष्य और तिर्यंचों के स्थूल शरीर को औदारिक शरीर कहते हैं।

प्र032. वैक्रियक शरीर किसको कहते है ?
उ0. जो छोटे–बड़े पृथक–अपृथक आदि अनेक क्रियाओं को करे ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियक शरीर कहते हैं।

प्र033. आहारक शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. आहारक ऋद्धिधारी छठे गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्वों में कोई शंका होने पर अथवा जिनालयादि की वन्दना करने के लिए, मस्तक से एक हाथ प्रमाण स्वच्छ और सफेद, सप्तधातु रहित पुरुषाकार जो पुतला निकलता है उसको आहाररिक शरीर कहते हैं।

प्र034. तैजस शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीरों में कान्ति उत्पन्न करने वाले शरीर को तैजस शरीर कहते है।

प्र035. कार्माण शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. आठ कर्मों के समूह को कार्माण शरीर कहते हैं।

प्र036. एक जीव के एक साथ कितने शरीर का संयोग हो सकता है ?
उ0. एक जीव के एक साथ कम से कम दो और अधिक से अधिक चार शरीर का संयोग होता है। खुलासा इस प्रकार है।

(1) विग्रहगति में तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।
(2) मनुष्य और तिर्यंच के औदारिक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।
(3) देव और नारकियों के वैक्रियक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।
(4) आहारक ऋद्धिधारी मुनि के औदारिक, आहारक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।

प्र037. विश्व किसे कहते है – प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?
उ0 इस विश्व में जीव अनन्त है, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजन पर्याय व अनन्त अर्थ पर्यायों की सत्ता है।

प्र038. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 52 में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?
उ0 इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नही हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती।

प्र039. श्री प्रवचनसार गाथा 93 में विश्व किसे कहते है और विश्व की व्यवस्था किस प्रकार है ?
उ0 इस विश्व मे जीव अनन्त–पुद्गल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र040. श्री समयसार गाथा 3 में विश्व किसे कहते हैं और विश्व व्यवस्था किस प्रकार है ?
उ0 श्री समयसार की गाथा 3 में आता है – "लोक में सर्वत्र जो कुछ जितने पदार्थ हैं, वे सब निश्चय से एकत्व निश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को प्राप्त होते है क्योंकि–
(1) वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को चुम्बन करते है–स्पर्श करते है, तथापि वे परस्पर एक–दूसरे को स्पर्श नही करते।
(2) वे सब पदार्थ अत्यन्त निकट एक क्षेत्रावगाह रूप से तिष्ठ रहे हैं, तथापि वे सदाकाल अपने स्वरूप से च्युत नही होते।
(3) वे सब पदार्थ पर–रूप परिणमन न करने से अनन्त व्यक्तिता नष्ट नही होती, इसलिये वे टंकोत्कीर्ण की भांति शाश्वत–स्थिर रहते हैं।
(4) वे सब पदार्थ समस्त विरूद्ध कार्य तथा अविरूद्ध कार्य दोनो की हेतुता से विश्व का सदा उपकार करते हैं अर्थात टिकाये रखते हैं।

प्र41. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्था कार्तिकेय अनुप्रेक्षा गाथा 321 से 323 तक में क्या बतायी है ?
उ0 (1) जिस जीव को जिस देश में, जिस काल में जिस विधि से जन्म–मरण, सुख–दुख तथा रोग और दारिद्रय इत्यादि जैसे सर्वज्ञ देव ने जाने हैं उसी प्रकार वे सब नियम से होगें।
(2) सर्वज्ञदेव ने जिस प्रकार जाना है उसी प्रकार उस जीव के उसी देश में, उसी काल में और उसी विधि से नियमपूर्वक सब होता है उसके निवारण करने के लिये इन्द्र जिनेन्द्र–तीर्थंकर देव कोई भी समर्थ नही है।
(3) इस प्रकार निश्चय से सर्व द्रव्यो अर्थात जीव अनन्त–पुद्गल अनन्तानन्त–धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात को तथा इन द्रव्यों की समस्त पर्यायों को जो सर्वज्ञ के केवलज्ञान के अनुसार जानता है, श्रद्धा करता है वह शुद्ध सम्यग्दृष्टि है और जो ऐसी श्रद्धा नही करता शंका सन्देह करता है वह सर्वज्ञ के आगम के प्रतिकूल है, प्रगट रूप में मिथ्यादृष्टि है।

प्र42. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था जानने से क्या लाभ रहा ?
उ0 केवलज्ञान के अनुसार, विश्व की व्यवस्थित–व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर–द्रव्यों में या स्व–द्रव्य में कुछ भी करना नही रहा। तो फिर क्या करना–बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात–केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना–यही प्रयोजन रहा।

प्र43. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है
उ0 दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहां ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।
सिद्धान्त – इसी प्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण मे जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य– ज्योति स्वरूप आत्मा ही है अर्थात् अकेला ज्ञान ही है।

प्र044. मैं कौन हूँ ?
उ0 मैं जीव हूँ।
प्र045. मेरा त्रिकाल स्वभाव क्या है ?
उ0 मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है।

प्र046. ज्ञान का स्वभाव क्या है ?
उ0 ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व पर प्रकाशक है।

प्र047. ज्ञान क्या करता है ?
उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को देखता जानता है जो कि अकेला ज्ञान है।

प्र048. *निगोद से लेकर सिद्ध भगवान तक सब जीव हैं सबका त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है,* सबके ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व –पर प्रकाशक है, सबका ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को ही देखता है, तो फिर संसार व मोक्ष की व्यवस्था क्या है ?
उ0 a) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को अकेला ज्ञान देखता है यही मोक्ष है।
b) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को विश्व रुप देखता है यही संसार हैं

प्र049. दृष्टि का विषय कैसे बदलें?
उ0 दृष्टि का विषय भेदज्ञान से बदलता है।

प्र050. भेदज्ञान कैसे करें ?
उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को इस भेदज्ञान सहित देखे कि <u>विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ तो ज्ञान की स्व–पर प्रकाशक पर्याय विश्व रुप भासित नहीं होगी अकेला ज्ञान ही भासित होगी।</u>

प्र051. अकेले ज्ञान की दृष्टि का फल क्या है ?
उ0 अकेले ज्ञान की दृष्टि के फल में ज्ञान में निज रस से ही आनंद आदि अनंत गुणों की निर्मलता का वेदन होता है। और यह जीव भगवान बन जाता है।

प्र52. शुद्ध चेतना का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?
उ0 चेतन को है उपयोग रूप, बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप
पुद्गल नभ–धर्म–अधर्म–काल, इनतै न्यारी है जीव चाल

(1) चेतन को है उपयोग रूप – मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूं। मेरा कार्य ज्ञाता–दृष्टा है।
(2) बिन्मूरत – आंख, नाक, कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही है।
(3) चिन्मूरत – चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।
(4) अनूप – सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।
(5) पुद्गल–नभ–धर्म–अधर्म–काल इनतै न्यारी है जीव चाल– मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है – इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है।

प्र53. जीव का स्वरूप श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 38 में क्या बताया है ?
उ0 स्व – (1) अमूर्तिक प्रदेशो का पुन्ज–मुझ आत्मा का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी–मुझ आत्मा का भाव है।
(3) अनादिनिधन – मुझ आत्मा का काल है।
(4) चैतन्य मात्र वस्तु – मुझ आत्म द्रव्य है।
पर – (1) मूर्तिक पुद्गल द्रव्यों का पिण्ड–शरीरादि का क्षेत्र है।
(2) प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणो से रहित, स्पर्शादि सहित – शरीरादि का भाव है।
(3) नवीन जिनका संयोग हुआ है – शरीरादि का काल है।
(4) ऐसे शरीर, धन, मकान आदि पुद्गल पर द्रव्य हैं।

प्र54. मुझ जीव द्रव्य का स्वरूप श्री समयसार गाथा 2 में क्या बताया है।
उ0 (1) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य स्वरूप है।
(2) मुझ जीव पदार्थ चैतन्य स्वरूपता से नित्य उद्योत रूप निर्मल–स्पष्ट–दर्शन ज्ञान ज्योति स्वरूप है।
(3) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्म स्वरुप द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।

(4) मुझ जीव पदार्थ का स्व–पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकार रुप एक है।
(5) मुझ जीव पदार्थ अन्य जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्य गुण स्वरुप है।
(6) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरुप को नही छोड़ता।
(7) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता– दृष्टा स्वभाव में स्थित रहे–तो स्व–समय है।
(8) मुझ जीव पदार्थ भेद–ज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता – दृष्टा स्वभाव से छुटकर पर स्वभाव में स्थित रहे अर्थात मोह–राग–द्वेष रुप होकर परिणमें तो पर–समय है।

प्र55. छठी गाथा में मुझ ज्ञायक भाव का स्वरुप क्या बताया है ?

उ0 (1) मुझ ज्ञायक भाव स्वतः सिद्व अनादि अनन्त है,
(2) मुझ ज्ञायक भाव नित्य प्रकाशमान है,
(3) मुझ ज्ञायक भाव स्पष्ट प्रतिभास रुप है,
(4) मुझ ज्ञायक भाव संसार अवस्था में शुभाशुभ भावों रुप परिणमता हुआ होने पर भी स्वभाव दृष्टि से देखने में आवे तो शुभाशुभ भावों रुप परिणमता ही नही है।
(5) मुझ ज्ञायक भाव समस्त परद्रव्यों और परभावों से भिन्न रुप से उपासने में आने पर शुद्ध कहलाता है।
(6) अंतरंग में ज्ञेयाकार रुप से परिणमता होने पर भी ज्ञेय पदार्थो के साथ मुझ ज्ञायक भाव का वास्तव में कोई सम्बन्ध नही है।

प्र56. श्री प्रवचनसार ज्ञेय अधिकार गाथा 190 से 200 का रहस्य क्या है ?

उ0 (1) शरीर, धन, सुख, दुख, शत्रु, मित्रजन– यह सब कुछ मुझ जीव के ध्रुव नही है।
(2) ध्रुव तो उपयोगात्मक आत्मा है जो (1) ज्ञानात्मक (2) दर्शनरुप (3) इन्द्रियों के बिना ही सबको जानने वाला अतीन्द्रिय महापदार्थ (4) ज्ञेय पर्यायों का ग्रहण त्याग ना करने से अचल (5) ज्ञेय पर–द्रव्यों का आलम्बन ना लेने से निरालम्ब है।
(3) इसलिये मुझ भगवान आत्मा एक है, एक होने से शुद्ध है, शुद्ध होने से ध्रुव है, ध्रुव होने से एक मात्र निज भगवान आत्मा ही उपलब्ध करने योग्य है तथा शरीर –धन–सुख–दुख–शत्रुमित्र जन ये सब अनेक है अर्थात् परमाणुओं के ढेर हैं अनेक हैं तो अशुद्ध है, अशुद्ध हैं तो अध्रुव हैं, अध्रुव हैं तो ये सब उपलब्ध करके योग्य नही है।
(4) ऐसा जानकर निज आत्मा का श्रद्धान– ज्ञान – आचरण करते ही मोह नष्ट हो जाता है, अक्षय सुख की प्राप्ति होती है। जन्म– मरण का अभाव हो जाता है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.०० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- ५ फरवरी २०१७ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-७६ का पारितोषिक वितरण भी १६ अप्रैल २०१७ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-८१

दिनांक 9 जुलाई 2017 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

नोट– वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता – 80 के समस्त प्रश्न–उत्तर याद करने हैं।

प्र01. बन्ध किसे कहते हैं ?

उ0 जिस सम्बन्ध विशेष से अनेक वस्तुओं मे एकपने का ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशेष को बन्ध कहते हैं।

प्र02. बन्ध की परिभाषा में चार बातें कौन–कौन सी जाननी चाहिए, जिनके जानने–मानने से मिथ्यात्वादि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति, वृद्धि और पूर्णता की प्राप्ति हो ?

उ0 1. सम्बन्ध विशेष होना चाहिए। 2. अनेक वस्तुये होनी चाहिये। 3. बाहरी रूप से देखने में, कथन में एक आना चाहिये। 4. ज्ञान में जैसा–जैसा वस्तु स्वरूप है वैसा–वैसा ही आना चाहिये।

प्र03. बन्ध कितने प्रकार के होते हैं ?

उ0 बन्ध तीन प्रकार के हैं। 1. जीव बन्ध, 2. पुद्गल बन्ध, 3. उभय बन्ध।

प्र04. जीव बंध किसे कहते हैं ?

उ0 जिस सम्बन्ध विशेष से आत्मा और क्रोध आदि भावों में एकपने का ज्ञान होता है, उस सम्बन्ध विशेष को जीव बंध कहते हैं। जैसे–मैं क्रोधी हूँ, मैं रागी हूँ आदि।

प्र05. पुद्गल बंध किसे कहते हैं ?

उ0 जिस सम्बन्ध विशेष से अनेक पुद्गलों में एकपने का ज्ञान होता है, उस सम्बन्ध विशेष को पुद्गल बंध कहते हैं। जैसे–सोने का हार, मकान, गाड़ी आदि।

प्र06. उभय बंध किसे कहते हैं ?

उ0 जिस सम्बन्ध विशेष से आत्मा और शरीर में एकपने का ज्ञान होता है, उस सम्बन्ध विशेष को उभय बंध कहते हैं। जैसे– मैं वीना हूँ, यह मेरा लड़का है आदि।

प्र07. मैं क्रोधी हूँ– यह कौन से बन्ध है और उसमें बन्ध की चार बातें लगाकर समझाइयें ?

उ0 मैं क्रोधी हूँ– यह जीव बन्ध है।

(1) मैं क्रोधी हूँ– यह सम्बन्ध विशेष है।
(2) एक मुझ आत्मा और क्रोध का भाव यह अनेक वस्तुयें हुई।
(3) बाहरी रूप से देखने में तथा बोलने में आता है कि मैं क्रोधी हूँ।
(4) ज्ञान में कैसा आना चाहिये ? जैसा वस्तुस्वरूप है, वैसा ही ज्ञान में आना चाहिये–कि मुझ आत्मा अबन्धस्वभावी है और क्रोध का भाव बन्ध स्वभावी है– ऐसा जानकर अपनी ज्ञान की पर्याय को अबन्धस्वभावी निजआत्मा की ओर झुका दे तो बंध भाव अलग पड़ जायेगा।

प्र08. जीव बन्ध को जानने–मानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 (अ) जैसे–जैसे अबन्धस्वभावी निजआत्मा में एकाग्र होता चला जावेगा, वैसे–वैसे बन्ध स्वभावी से भिन्न होता चला जावेगा।

(ब) जैसे-जैसे बन्धस्वभावी से भिन्न होता चला जायेगा वैसे-वैसे अबंधस्वभावी निजआत्मा में एकाग्र होता हुआ क्रम से मोक्ष लक्ष्मी का नाथ बन जावेगा।
(आ)जीव बन्ध के जानने-मानने से समयसारादि सम्पूर्ण अध्यात्म ग्रन्थों का मर्म उसके हाथ में आ जावेगा।

प्र09. यह मेरा सोने का हार है- यह कौन सा बन्ध है और उसमें बन्ध की चार बातें समझाइयें ?
उ0 (1) सोने का हार- यह सम्बन्ध विशेष है।
(2) सोने के घर में अन्नत पुद्गल परमाणु यह अनेक वस्तुयें हुई।
(3) बाहरी रूप से देखने में तथा बोलने में आता है कि यह मेरा सोने का हार है।
4(अ) ज्ञान में कैसा आना चाहिये ? जैसा वस्तुस्वरूप है, वैसा ही ज्ञान में आना चाहिये- कि सोने का हार औदारिक शरीर है और इसका कर्त्ता आहारवर्गणा ही है।
(आ) सोने के हार में अनन्त पुद्गलपरमाणु हैं।
(इ) प्रत्येक परमाणु में अस्तित्व वस्तुत्वादि अनन्त सामान्य गुण हैं और स्पर्श-रस-गंध-वर्ण आदि अनन्त विशेषगुण हैं। प्रत्येक परमाणु एक-एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अनन्त अर्थपर्यायों सहित विराज रहा है।
(ई) जब सोने के हार में एक परमाणु का दूसरे परमाणु से किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है तो मुझ आत्मा से सोने के हार का सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? कभी भी नहीं हो सकता है ऐसा अनुभव ज्ञान वर्ते तो उपचरित असद्भूत व्यवहारनय से ऐसा कहा जा सकता है कि यह मेरा सोने का हार है, परन्तु ऐसा है नहीं।

प्र010. पुद्गल बन्ध को जानने-मानने से क्या लाभ रहा ?
उ0 (अ) विश्व में जितने समानजातीय स्कन्ध दृष्टिगोचर होते हैं, उन सब में पुद्गल बन्ध के अनुसार ज्ञान-श्रद्धान वर्तेगा तो पुद्गल स्कन्धों में जो अनादिकाल से द्रव्यरूप बुद्धि वर्त रही है उसका अभाव होकर, क्रम से मोक्ष लक्ष्मी का नाथ बन जावेगा।
(आ) अज्ञानी अनादिकाल से पुद्गल बन्धों में अपनेपने की मान्यता से पागल हो रहा था – उसका अभाव हो जावेगा।

प्र011. मैं वीना हूँ – यह कौन सा बन्ध है और उसमें बन्ध की चार बातें लगाकर समझाइयें ?
उ0 मैं वीना हूँ- यह उभय बन्ध है।
(1) मैं वीना हूँ- यह सम्बन्ध विशेष है।
(2) एक मुझ आत्मा और वीना शरीर में अनंत पुद्गल परमाणु यह अनेक वस्तुये हुई।
(3) मैं वीना हूँ ऐसा बाहरी रूप से देखने में तथा बोलने में आता है।
4(अ) ज्ञान में कैसा आना चाहिये ? जैसा वस्तुस्वरूप है, वैसा ही ज्ञान में आना चाहिये- कि मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व हूँ। वीना सर्वथा अजीवतत्त्व हैं।
(आ) अनादिकाल से एक एक समय करके वीना अजीवतत्त्व में अपनेपने की मान्यता से अनंतबार निगोद गया और अपरिमित दुःख सहन किये।
(इ) वर्तमान में सच्चे देव-गुरू-धर्म का संयोग मिला, उन्होंने बताया तु तो ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व है। वीना अजीवतत्त्व से तेरा किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।
(ई) ऐसा सुनते जानते मानते ही आस्रव बन्ध भागने शुरू हो गये और संवर-निर्जरा की प्राप्ति कर, क्रम से मोक्षलक्ष्मी का नाथ बन जायेगा।

प्र012. उभय बन्ध को जानने मानने से क्या लाभ रहा ?
उ0 (अ) विश्व में निगोद से लेकर 14 वे गुणस्थान तक के असमानजातीय उभयबंध का सच्चा ज्ञान हो जाता है।
(आ) उभय बंध को समझने से प्रयोजनभूत साततत्वों का रहस्य समझ में आ जाता है।

प्र013. असमानजातीय उभयबंध के विषय में श्रीमोक्षमार्ग प्रकाशक तथा श्रीप्रवचनसार में क्या बताया है ?
उ0 (1) श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक के सातवें अधिकार में लिखा है- "असमानजातीय उभयबंध का ज्ञान हो जावे तो मिथ्यादृष्टिपना न रहे।"
(2) श्री प्रवचनसार गाथा 154 की टीका व भावार्थ में आया है कि – "मनुष्य, देव इत्यादि अनेक द्रव्यात्मक असमानजातीय द्रव्य पर्यायों में भी जीव का स्वरूपअस्तित्व और प्रत्येक परमाणु का स्वरूपअस्तित्व सर्वथा भिन्न-भिन्न है। स्व-पर का भेदविज्ञान करने के लिए जीव के स्वरूपअस्तित्व को पद-पद पर लक्ष्य में लेना योग्य है।"

प्र014.

1. यह मेरी किताब है।	2. मैं बहू हूँ।
3. मैंने हिंसा का भाव किया।	4. यह मेरी हीरो की अंगूठी है।
5. मैं शीतल प्रसाद हूँ।	6. मैंने ब्रह्मचर्य का भाव किया।
7. यह मेरा महल है।	8. मैं राजेन्द्र कुमार एडवोकेट हूँ।
9. यह मेरी कार है।	10. मैं वन्दना जैन हूँ।
11. मैंने चोरी का भाव किया।	12. यह मेरी सोने की दुकान है।
13. मैं डाक्टर हूँ।	14. मैंने एक्सरे की मशीन लगाई हैं।
15. मैं राष्ट्रपति हूँ।	16. मैंने टेलीविजन ले लिया है।
17. यह मेरा पति है।	18. मैंने चीन से यह जूता मंगाया है।

उक्त 18 वाक्यों पर बन्ध की चार बातें लगाकर समझाइये ?
उ0 प्रश्न 1 से 13 तक के अनुसार उत्तर दो।

प्र015. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 52 में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?
उ0 इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक है काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न-भिन्न है, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नही हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती।

प्र16. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था जानने से क्या लाभ रहा ?
उ0 केवलज्ञान के अनुसार, विश्व की व्यवस्थित-व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर-द्रव्यों में या स्व-द्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा। तो फिर क्या करना-बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात-केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना-यही प्रयोजन रहा।

प्र17. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?
उ0 दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहां ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।
सिद्धान्त – इसी प्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य- ज्योति स्वरूप आत्मा ही है अर्थात् अकेला ज्ञान ही है।

प्र018. मैं कौन हूँ ?
उ0 मैं जीव हूँ।
प्र019. मेरा त्रिकाल स्वभाव क्या है ?
उ0 मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है।
प्र020. ज्ञान का स्वभाव क्या है ?
उ0 ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व पर प्रकाशक है।

प्र021. ज्ञान क्या करता है ?
उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को देखता जानता है जो कि अकेला ज्ञान है।

प्र022. निगोद से लेकर सिद्ध भगवान तक सब जीव हैं सबका त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, सबके ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व –पर प्रकाशक है, सबका ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को ही देखता है, तो फिर संसार व मोक्ष की व्यवस्था क्या है ?
उ0 a) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को अकेला ज्ञान देखता है यही मोक्ष है।
b) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को विश्व रुप देखता है यही संसार हैं

प्र023. दृष्टि का विषय कैसे बदलें ?
उ0 दृष्टि का विषय भेदज्ञान से बदलता है।

प्र024. भेदज्ञान कैसे करें ?
उ0 ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को इस भेदज्ञान सहित देखे कि 'शरीर, धन, मकान, गाड़ी, सोना–चांदी तो कोई वस्तु ही नहीं है क्योंकि विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टंकोत्कीर्ण है मैं तो अकेला ज्ञान ही हूं' तो ज्ञान की स्व–पर प्रकाशक पर्याय विश्व रुप भासित नहीं होगी अकेला ज्ञान ही भासित होगी।

प्र025. अकेले ज्ञान की दृष्टि का फल क्या है ?
उ0 अकेले ज्ञान की दृष्टि के फल में ज्ञान में निज रस से ही आनंद आदि अनंत गुणों की निर्मलता का वेदन होता है। और यह जीव भगवान बन जाता है।

प्र26. शुद्ध चेतना का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?
उ0 चेतन को है उपयोग रूप, बिनमूरत चिन्मूरत अनूप
पुद्गल नभ–धर्म–अधर्म–काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल

(1) चेतन को है उपयोग रूप – मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हुँ। मेरा कार्य ज्ञाता–दृष्टा है।
(2) बिनमूरत – आंख, नाक, कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नहीं है।
(3) चिन्मूरत – चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।
(4) अनूप – सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।
(5) पुद्गल–नभ–धर्म–अधर्म–काल इनतैं न्यारी है जीव चाल– मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है – इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.०० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- १६ अप्रैल २०१७ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–८० का पारितोषिक वितरण भी ९ जुलाई २०१७ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन न0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-८२

दिनांक 17 सितम्बर 2017 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र01. विश्व किसे कहते हैं ?
उ0 छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते है। (जाति अपेक्षा छह द्रव्य और संख्या अपेक्षा अनन्त द्रव्य है।)

प्र02. द्रव्य किसे कहते हैं ?
उ0 गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्र03. गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागों में और सम्पूर्ण अवस्थाओं में रहता है उसको गुण कहते हैं।

प्र04. पर्याय किसको कहते हैं ?
उ0 गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं।

प्र05. गुणों के कितने भेद हैं ?
उ0 दो भेद हैं। 1. सामान्य 2. विशेष

प्र06. सामान्य गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जो समस्त द्रव्यों में रहते हैं उनको सामान्य गुण कहते हैं।

प्र07. विशेष गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जो सब द्रव्यों में न रहकर अपने-अपने द्रव्य में रहते हैं उनको विशेष गुण कहते हैं।

प्र08. सामान्य गुण कितने हैं ?
उ0 अनन्त हैं, परन्तु उनमें मुख्य छह हैं। 1. अस्तित्व 2. वस्तुत्व 3. द्रव्यत्व 4. प्रमेयत्व 5. अगुरुलघुत्व 6. प्रदेशत्व।

प्र09. अस्तित्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य का कभी भी नाश न हो, किसी से उत्पन्न भी न हो उसको अस्तित्व गुण कहते हैं।

प्र010. वस्तुत्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य में अर्थक्रियाकारित्व अर्थात् प्रयोजनभूत किया हो उसको वस्तुत्व गुण कहते हैं।

प्र011. द्रव्यत्व गुण किसे कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य की अवस्थाएँ निरन्तर बदलती रहती हैं उसको द्रव्यत्व गुण कहते हैं।

प्र012. प्रमेयत्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य किसी न किसी ज्ञान का विषय हो उसको प्रमेयत्व गुण कहते हैं।

प्र013. अगुरुलघुत्व गुण किसको कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण द्रव्य में द्रव्यपना कायम रहता है। अर्थात्
(1) एक द्रव्य दूसरे द्रव्यरुप नहीं होता है।
(2) एक गुण दूसरे गुण रुप नहीं होता है और
(3) द्रव्य में रहने वाले अनन्त गुण बिखर कर अलग-अलग नहीं हो जाते हैं, उस शक्ति को अगुरुलघुत्व गुण कहते हैं।

प्र014. प्रदेशत्व गुण किसे कहते हैं ?
उ0 जिस शक्ति के कारण से द्रव्य का कोई न कोई आकार अवश्य रहता है उसको प्रदेशत्व गुण कहते है।

प्र015. प्रत्येक द्रव्य में कौन–कौन से विशेष गुण हैं ?
उ0. (1) जीव द्रव्य में चैतन्य अर्थात्–ज्ञान–दर्शन, सम्यक्त्व, चारित्र, सुख, क्रियावती शक्ति इत्यादि।
(2) पुद्गल द्रव्य में स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, क्रियावती शक्ति इत्यादि।
(3) धर्म द्रव्य में गति हेतुत्व इत्यादि।
(4) अधर्म द्रव्य में स्थिति हेतुत्व इत्यादि।
(5) आकाश द्रव्य में अवगाहन हेतुत्व इत्यादि।
(6) कालद्रव्य में परिणमन हेतुत्व इत्यादि।

प्र016. क्रियावती शक्ति क्या है ?
उ0. 1. जीव–पुद्गल में अपनी–अपनी क्रियावती शक्ति नाम का गुण नित्य है और अपनी–अपनी योग्यतानुसार कभी गति–क्षेत्रान्तर रुप पर्याय होती है। कभी स्थिर रहने रुप पर्याय होती है। 2. जीव या पुद्गल एक दूसरे को गमन या स्थिर नहीं करा सकते हैं। 3. जीव–पुद्गल दोनों द्रव्य अपनी क्रियावती शक्ति की उस समय की योग्यतानुसार स्वतः गमन करते हैं या स्थिर होते हैं।

प्र017. जीव द्रव्य किसकी कहते हैं ?
उ0. जिसमें चेतना अर्थात ज्ञान–दर्शन रुप शक्ति है उसको जीव द्रव्य कहते हैं।

प्र018. पुद्गल द्रव्य किसको कहते हैं ?
उ0. जिसमें स्पर्श, रस, गंध और वर्ण ये गुण होते हैं उसके पुद्गल द्रव्य कहते हैं।

प्र019. पुद्गल के कितने भेद हैं ?
उ0. दो भेद है, एक परमाणु दूसरा स्कन्ध।

प्र020. परमाणु किसको कहते हैं ?
उ0. जिसका दूसरा विभाग नही हो सकता ऐसे सबसे छोटे पुद्गल को परमाणु कहते हैं।

प्र021. स्कंध किसको कहते हैं ?
उ0. दो या दो से अधिक परमाणुओं के बन्ध को स्कंध कहते हैं।

प्र022. स्कन्ध के कितने भेद हैं ?
उ0. आहार वर्गणा, तैजस वर्गणा, भाषा वर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माण वर्गणा इत्यादि 22 भेद हैं।

प्र023. आहार वर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जो पुद्गल स्कन्ध औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीर रुप से परिणमन करता है उसको आहार वर्गणा कहते हैं।

प्र024. तैजस वर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जिस वर्गणा से तैजस शरीर बनता है उसको तैजस वर्गणा कहते हैं।

प्र025. भाषावर्गणा किसे कहते हैं ?
उ0. जो पुद्गल स्कन्ध शब्द रुप से परिणत होता है उसको भाषावर्गणा कहते हैं।

प्र026. मनोवर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जिस पुद्गल स्कन्ध से अष्टदल कमल के आकार द्रव्यमन की रचना होती है उसको मनोवर्गणा कहते हैं।

प्र027. कार्माणवर्गणा किसको कहते हैं ?
उ0. जिस पुद्गल स्कन्ध से कार्माण शरीर बनता है उसको कार्माणवर्गणा कहते हैं।

प्र028. शरीर कितने हैं ?
उ0. शरीर पाँच हैं। 1. औदारिक 2. वैक्रियक 3. आहारक 4. तैजस 5. कार्माण।

प्र029. औदारिक शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. मनुष्य और तिर्यंचों के स्थूल शरीर को औदारिक शरीर कहते हैं।

प्र030. वैक्रियक शरीर किसको कहते है ?
उ0. जो छोटे–बड़े पृथक–अपृथक आदि अनेक क्रियाओं को करे ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियक शरीर कहते हैं।

प्र031. आहारक शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. आहारक ऋद्धिधारी छठे गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्त्वों में कोई शंका होने पर अथवा जिनालयादि की वन्दना करने के लिए, मस्तक से एक हाथ प्रमाण स्वच्छ और सफेद, सप्तधातु रहित पुरुषाकार जो पुतला निकलता है उसको आहाररिक शरीर कहते हैं।

प्र032. तैजस शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीरों में कान्ति उत्पन्न करने वाले शरीर को तैजस शरीर कहते है।

प्र033. कार्माण शरीर किसको कहते हैं ?
उ0. आठ कर्मों के समूह को कार्माण शरीर कहते हैं।

प्र034. एक जीव के एक साथ कितने शरीर का संयोग हो सकता है ?
उ0. एक जीव के एक साथ कम से कम दो और अधिक से अधिक चार शरीर का संयोग होता है। खुलासा इस प्रकार है।
(1) विग्रहगति में तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।
(2) मनुष्य और तिर्यंच के औदारिक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।
(3) देव और नारकियों के वैक्रियक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।
(4) आहारक ऋद्धिधारी मुनि के औदारिक, आहारक, तैजस और कार्माण शरीर का संयोग होता है।

प्र035. विश्व किसे कहते है – प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?
उ0 इस विश्व में जीव अनन्त है, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजन पर्याय व अनन्त अर्थ पर्यायों की सत्ता है।

प्र036. श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ 52 में विश्व किसे कहते है और विश्व व्यवस्था किस प्रकार की है ?
उ0 इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न है, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें अपनी अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नही हैं, ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नही होती।

प्र037. श्री प्रवचनसार गाथा 93 में विश्व किसे कहते है और विश्व की व्यवस्था किस प्रकार है ?
उ0 इस विश्व मे जीव अनन्त है, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र38. जिनेन्द्र कथित विश्व की व्यवस्था जानने से क्या लाभ रहा ?
उ0 केवलज्ञान के अनुसार, विश्व की व्यवस्थित–व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर–द्रव्यों में या स्व–द्रव्य में कुछ भी करना नही रहा। तो फिर क्या करना–बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात–केवल शुद्ध ज्ञान को प्रकाशित करना–यही प्रयोजन रहा।

प्र39. केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करने की कला श्री समयसार गाथा 19 में क्या बताई है ?
उ॰ दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहां ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है।
सिद्धान्त – इसी प्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य– ज्योति स्वरूप आत्मा ही है अर्थात् अकेला ज्ञान ही है।

प्र040. मैं कौन हूँ ?
उ॰ मैं जीव हूँ।
प्र041. मेरा त्रिकाल स्वभाव क्या है ?
उ॰ मेरा त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है।
प्र042. ज्ञान का स्वभाव क्या है ?
उ॰ ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व पर प्रकाशक है।
प्र043. ज्ञान क्या करता है ?
उ॰ ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को देखता जानता है जो कि अकेला ज्ञान है।
प्र044. निगोद से लेकर सिद्ध भगवान तक सब जीव हैं सबका त्रिकाल स्वभाव ज्ञान है, सबके ज्ञान का स्वभाव निजरस से ही स्व –पर प्रकाशक है, सबका ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को ही देखता है, तो फिर संसार व मोक्ष की व्यवस्था क्या है ?
उ॰ a) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को अकेला ज्ञान देखता है यही मोक्ष है।
b) ज्ञान अपनी स्व – पर प्रकाशक पर्याय को विश्व रुप देखता है यही संसार है
प्र045. दृष्टि का विषय कैसे बदलें?
उ॰ दृष्टि का विषय भेदज्ञान से बदलता है।
प्र046. भेदज्ञान कैसे करें ?
उ॰ ज्ञान अपनी स्व–पर प्रकाशक पर्याय को इस भेदज्ञान सहित देखे कि 'शरीर, धन, मकान, गाड़ी, सोना–चांदी तो कोई वस्तु ही नहीं है क्योंकि विश्व का प्रत्येक सत् अपनी–अपनी सत्ता में टकोत्कीर्ण है मैं तो अकेला ज्ञान ही हूँ' तो ज्ञान की स्व–पर प्रकाशक पर्याय विश्व रुप भासित नहीं होगी अकेला ज्ञान ही भासित होगी।
प्र047. अकेले ज्ञान की दृष्टि का फल क्या है ?
उ॰ अकेले ज्ञान की दृष्टि के फल में ज्ञान में निज रस से ही आनंद आदि अनंत गुणों की निर्मलता का वेदन होता है। और यह जीव भगवान बन जाता है।
प्र48. शरीरादि समस्त परद्रव्यों से सर्वथा भिन्न, ज्ञान दर्शन आदि अनन्त गुणों से अभिन्न निज शुद्ध चैतन्य पिण्ड का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?
उ॰

चेतन को है उपयोग रूप, बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप
पुद्गल नभ–धर्म–अधर्म–काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल

(1) चेतन को है उपयोग रूप – मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ। मेरा कार्य ज्ञाता–दृष्टा है।
(2) बिन्मूरत – आंख, नाक, कान औदारिक आदि शरीरो रूप मेरी मूर्ति नही है।
(3) चिन्मूरत – चैतन्य अरूपी असख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है।
(4) अनूप – सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है।
(5) पुद्गल–नभ–धर्म–अधर्म–काल इनतै न्यारी है जीव चाल– मुझ आत्मा के अलावा विश्व में जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है – इनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नही है।

प्र049. बन्ध किसे कहते हैं ?
उ॰ जिस सम्बन्ध विशेष से अनेक वस्तुओं मे एकपने का ज्ञान होता है उस सम्बन्ध विशेष को बन्ध कहते है।
प्र050. बन्ध की परिभाषा में चार बातें कौन–कौन सी जाननी चाहिए, जिनके जानने–मानने से मिथ्यात्वादि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति, वृद्धि और पूर्णता की प्राप्ति हो ?
उ॰ 1. सम्बन्ध विशेष होना चाहिए। 2. अनेक वस्तुये होनी चाहिये। 3. बाहरी रूप से देखने में कथन में एक आना चाहिये। 4. ज्ञान में जैसा वस्तु स्वरूप है वैसा ही देखना–जानना चाहिये।

1. बन्ध कितने प्रकार के होते हैं ?
बन्ध तीन प्रकार के हैं। 1. जीव बन्ध, 2. पुद्गल बन्ध, 3. उभय बन्ध।
52. जीव बंध किसे कहते हैं ?
जिस सम्बन्ध विशेष से आत्मा और क्रोध आदि भावों में एकपने का ज्ञान होता है, उस सम्बन्ध विशेष को जीव बंध कहते हैं। जैसे–मैं क्रोधी हूँ, मैं रागी हूँ आदि।
53. पुद्गल बंध किसे कहते हैं ?
जिस सम्बन्ध विशेष से अनेक पुद्गलों में एकपने का ज्ञान होता है, उस सम्बन्ध विशेष को पुद्गल बंध कहते हैं। जैसे–सोने का हार, मकान, गाढी आदि।
54. उभय बंध किसे कहते हैं ?
जिस सम्बन्ध विशेष से आत्मा और शरीर में एकपने का ज्ञान होता है, उस सम्बन्ध विशेष को उभय बंध कहते हैं। जैसे– मैं वीना हूँ, यह मेरा लड़का है आदि।
55. मैं क्रोधी हूँ– यह कौन से बन्ध है और उसमें बन्ध की चार बातें लगाकर समझाइयें ?
मैं क्रोधी हूँ– यह जीव बन्ध है।
(1) मैं क्रोधी हूँ– यह सम्बन्ध विशेष है।
(2) एक मुझ आत्मा और क्रोध का भाव यह अनेक वस्तुयें हुई।
(3) बाहरी रूप से देखने में तथा बोलने में आता है कि मैं क्रोधी हूँ।
(4) ज्ञान में कैसा देखना जानना चाहिये ? जैसा वस्तुस्वरूप है, वैसा ही ज्ञान में देखना जानना चाहिये–कि मुझ आत्मा अबन्धस्वभावी है और क्रोध का भाव बन्ध स्वभावी है– ऐसा जानकर अपनी ज्ञान की पर्याय को अबन्धस्वभावी निजआत्मा की ओर झुका दें तो बंध भाव अलग पड़ जायेगा।
056. जीव बन्ध को जानने–मानने से क्या लाभ रहा ?
(अ) जैसे–जैसे अबन्धस्वभावी निजआत्मा में एकाग्र होता चला जावेगा, वैसे–वैसे बन्ध स्वभावी से भिन्न होता चला जावेगा।
(ब) जैसे–जैसे बन्धस्वभावी से भिन्न होता चला जायेगा वैसे–वैसे अबंधस्वभावी निजआत्मा मे एकाग्र होता हुआ क्रम से मोक्ष लक्ष्मी का नाथ बन जावेगा।
(आ) जीव बन्ध के जानने–मानने से समयसारादि सम्पूर्ण अध्यात्म ग्रन्थों का मर्म उसके हाथ मे आ जावेगा।
057. यह मेरा सोने का हार है– यह कौन सा बन्ध है और उसमें बन्ध की चार बातें समझाइयें ?
उ॰ (1) सोने का हार– यह सम्बन्ध विशेष है।
(2) सोने के हार में अनन्त पुद्गल परमाणु यह अनेक वस्तुयें हुई।
(3) बाहरी रूप से देखने में तथा बोलने मे आता है कि यह मेरा सोने का हार है।
4(अ) ज्ञान मे हार को कैसा देखना जानना चाहिये ? जैसा हार का स्वरूप है, वैसा ही ज्ञान मे हार को देखना चाहिये– कि सोने का हार औदारिक शरीर है और इसका कर्ता आहारवर्गणा ही है।
(आ) सोने के हार में अनन्त पुद्गलपरमाणु हैं।
(इ) प्रत्येक परमाणु में अस्तित्व वस्तुत्वादि अनन्त सामान्य गुण है और स्पर्श–रस–गंध–वर्ण आदि अनन्त विशेषगुण हैं। प्रत्येक परमाणु एक–एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अनन्त अर्थपर्यायों सहित विराज रहा है।
(ई) जब सोने के हार में एक परमाणु का दूसरे परमाणु से किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है तो मुझ आत्मा से सोने के हार का सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? कभी भी नहीं हो सकता है ऐसा अनुभव ज्ञान वर्ते तो ज्ञान में हार का तिरोभाव हो जायेगा और शुद्ध ज्ञान सामान्य की दृष्टि हो जायेगी।
प्र058. पुद्गल बन्ध को जानने–मानने से क्या लाभ रहा ?
उ॰ (अ) विश्व में जितने समानजातीय स्कन्ध द्रष्टिगोचर होते हैं, उन सब में पुद्गल बन्ध के अनुसार ज्ञान–श्रद्धान वर्तेगा तो पुद्गल स्कन्धों में जो अनादिकाल से द्रव्यरूपी बुद्धि वर्त रही है उसका अभाव होकर, क्रम से मोक्ष लक्ष्मी का नाथ बन जावेगा।
(आ) अज्ञानी अनादिकाल से पुद्गल बन्धों में अपनेपने की मान्यता से पागल हो रहा था – उसका अभाव हो जावेगा।

प्र059. मैं वीना हूँ – यह कौन सा बन्ध है और उसमें बन्ध की चार बातें लगाकर समझाइयें ?

उ0 मैं वीना हूँ– यह उभय बन्ध है।

(1) मैं वीना हूँ– यह सम्बन्ध विशेष है।

(2) एक मुझ आत्मा और वीना शरीर में अनंत पुद्गल परमाणु यह अनेक वस्तुये हुई।

(3) मैं वीना हूँ ऐसा बाहरी रूप से देखने में तथा बोलने में आता है।

4(अ) ज्ञान में कैसा देखना जानना चाहिये ? जैसा वस्तुस्वरूप है, वैसा ही ज्ञान में देखना जानना चाहिये– कि मैं ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व हूँ। वीना सर्वथा अजीवतत्त्व है।

(आ) अनादिकाल से एक एक समय करके वीना अजीवतत्त्व में अपनेपने की मान्यता से अनंतबार निगोद गया और अपरिमित दुःख सहन किये।

(इ) वर्तमान में सच्चे देव–गुरू–धर्म का संयोग मिला, उन्होंने बताया तू तो ज्ञान दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व है। वीना अजीवतत्त्व से तेरा किसी भी अपेक्षा किसी भी प्रकार का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

(ई) ऐसा सुनते जानते मानते ही आस्रव बन्ध भागने शुरू हो गये और संवर–निर्जरा की प्राप्ति कर, क्रम से मोक्षलक्ष्मी का नाथ बन जायेगा।

प्र060. उभय बन्ध को जानने मानने से क्या लाभ रहा ?

उ0 (अ) विश्व में निगोद से लेकर 14 वे गुणस्थान तक के असमानजातीय उभयबंध का सच्चा ज्ञान हो जाता है।

(आ) उभय बंध को समझने से प्रयोजनभूत साततत्वों का रहस्य समझ में आ जाता है।

प्र061. असमानजातीय उभयबंध के विषय में श्रीमोक्षमार्ग प्रकाशक तथा श्रीप्रवचनसार में क्या बताया है ?

उ0 (1) श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक के सातवें अधिकार में लिखा है– "असमानजातीय उभयबंध का ज्ञान हो जावे तो मिथ्यादृष्टिपना न रहे।"

(2) श्री प्रवचनसार गाथा 154 की टीका व भावार्थ में आया है कि – "मनुष्य, देव इत्यादि अनेक द्रव्यात्मक असमानजातीय द्रव्य पर्यायों में भी जीव का स्वरूपअस्तित्व और प्रत्येक परमाणु का स्वरूपअस्तित्व सर्वथा भिन्न–भिन्न हैं। स्व–पर का भेदविज्ञान करने के लिए जीव के स्वरूपअस्तित्व को पद–पद पर लक्ष्य में लेना योग्य है।"

प्र062. 1. यह मेरी किताब है। 2. मैंने हिंसा का भाव किया।
3. यह मेरा महल है। 4. यह मेरी कार है।
5. मैंने दान देने का भाव किया। 6. मैं डाक्टर हूँ।
7. यह मेरी माता है।

उक्त वाक्यों पर बन्ध की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उ0 प्रश्न 51 से 62 तक के अनुसार उत्तर दो।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ९.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.०० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ९.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- ९ जुलाई २०१७ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–८१ का पारितोषिक वितरण भी १७ सितम्बर २०१७ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-८३

दिनांक 26 नवम्बर, 2017 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र०१. लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका (गुलाबी किताब) के प्रश्न १, ४, ८, ११, १३, १४, १५, १६, १७, २०, २३, २६, २९, ३२, ३५, ३६, ३७, ३८, ४०, ४१, ४२, ४३, ४५, ४६, ४८ से ६०, ६२, ६४,, ६६, ६७, ६८, ६९, ७१, ७६, ७७, से ८८, ९० से ९९, १०१ से १०४, १०६ से १२८, १३०, १८६ से १९२ – ये सब प्रश्न पक्के याद करके नई कापी में लिखिये।

प्र०२. तीर्थंकर भगवान ने मोक्ष का मार्ग क्या बताया है ?
उ० अपने आत्मा को पहचानकर सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र को प्रगट करना–यही मोक्ष का मार्ग है, उसी को जैनधर्म कहते हैं। ऐसा करने से हम भी एक दिन भगवान बनेंगे।

प्र०३. जैन धर्म का सार क्या है ?
उ० आत्मा के परिणामों में मोह–राग–द्वेष आदि का उत्पन्न नहीं होना ही अहिंसा है, धर्म है तथा आत्मा के परिणामों में मोह–राग–द्वेष आदि की उत्पत्ति हो जाना ही हिंसा है। यदि मुझ आत्मा मोह राग द्वेष का अभाव कर दे तो बना बनाया भगवान ही है।

प्र०४. मोह–राग–द्वेष भावों की उत्पत्ति का कारण क्या है ?
उ० जीव और अजीव के भेद का ज्ञान न होने के कारण, अपने ज्ञान में अजीव का जो भी परिणमन दिखता है, अज्ञानी उसे भी अपना मानता है, – इसी का नाम मोह है – जिसका फल रागादि रूप संसार है।

प्र०५. आत्मा के परिणामों में से मोह राग द्वेष भावों का अभाव करके भगवान बनने के लिये क्या निर्णय करना पड़ेगा ?
उ० (१) मैं कौन हूँ (२) मैं कौन नहीं हूँ ? = यह निर्णय करना पड़ेगा।

प्र०६. तुम कौन हो ?
उ० मैं ज्ञान–दर्शन श्रद्धा चारित्र आदि अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड भगवान आत्मा हूँ अर्थात् चैतन्य मूर्ति हूँ।

प्र०७. तुम कौन नहीं हो ?
उ० धन, मकान, परिवार आदि अत्यन्त भिन्न पर पदार्थ, आँख–नाक–कान रूप औदारिक शरीर, मन, वाणी, आठ कर्म और शुभाशुभ विकारी भाव मैं नहीं हूँ।

प्र०८. तुम कब से हो ?
उ० मैं तो जन्म मरण रहित अनादिअनन्त अनादिकाल से हूँ।

प्र०९. जन्म मरण तो होता है क्या यह बात असत्य है ?
उ० शरीर का संयोग–वियोग होता है, मुझ आत्मा का नहीं।

प्र०१०. फिर तुम दुःखी क्यों हो ?
उ० ज्ञान–दर्शन–श्रद्धा–चारित्र आदि अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड निज आत्मा का पता न होने से, धन–मकान–शरीर आदि जो मैं नहीं हूँ उन पदार्थों को अपना मानने रूप अपनी मूर्खता से दुःखी हूँ।

प्र०११. तुमने आज तक क्या किया ?
उ० जिनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, ऐसे शरीर–धन आदि पर पदार्थों को अपना मानकर आत्मा के परिणामों में मात्र मोह–राग–द्वेष किया।

प्र०६. जीव द्रव्य किसे कहते हैं ?

उ० जिसमें चेतना अर्थात् ज्ञान दर्शन रूप शक्ति है उसे जीव द्रव्य कहते हैं।

प्र०१०. चेतना अर्थात् ज्ञानदर्शन किसे कहते हैं ?

उ० जिसमें पदार्थों का प्रतिभास होता है उसे चेतना कहते हैं।

प्र०११. जिसमें पदार्थों का प्रतिभास होता है ऐसी शुद्ध चेतना का स्वरूप श्री समयसार गाथा १६ में क्या बताया है ?

उ० दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है। अर्थात् निर्मल दर्पण ही है।

सिद्धान्त – इसीप्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है। जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य–ज्योति स्वरूप भगवान आत्मा ही है।

प्र०१२. जीव–अजीव की एकत्वबुद्धि रूप मोह का अभाव कैसे हो ?

उ० मोह के अभाव के दो उपाय है – १. जिसमें पदार्थों का प्रतिभास होता है – ऐसी शुद्ध चेतना स्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप अरहंत भगवान के समान समझना। २. जिन पदार्थों का प्रतिभास होता है उन विश्व के समस्त पदार्थों का स्वरूप अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार समझना। (श्री प्रवचनसार गाथा ८० व ८७)

—: मोह के अभाव का प्रथम उपाय :—

प्र०१३. अरहंत भगवान के समान शुद्ध चेतनास्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?

उ० चेतन को है उपयोग रूप, बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल, नभ, धर्म, अधर्म, काल, इनतें न्यारी है जीवचाल।।

चेतन को है उपयोग रूप अर्थात (१) मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ और (२) मुझ आत्मा का स्वभाव ज्ञाता–दृष्टा है। (३) बिन्मूरत अर्थात आंख–नाक–कान औदारिक आदि शरीरों रूप मेरी मूर्ति नहीं है। (४) चिन्मूरत अर्थात चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है। (५) अनूप अर्थात सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है। (६) पुद्गल, नभ, धर्म, अधर्म, काल, इनतें न्यारी है जीवचाल अर्थात मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्त जीव द्रव्य हैं, अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एकेक द्रव्य है, लोक प्रमाण असंख्यात काल द्रव्य हैं– इनकी सत्ता मुझ जीव से भिन्न ही है। ऐसा निज जीवतत्व का स्वरूप जानते–मानते ही विश्व का राग उत्पन्न नहीं होता और त्रिकाली स्वभाव अर्थात् अनादिअनन्त ज्ञाता दृष्टा स्वभाव का आश्रय हो जाता है।

प्र०१४. अरहंत भगवान के समान शुद्ध चेतनास्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप श्री समयसार गाथा २ में क्या बताया है ?

उ० (१) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य युक्त सत्ता सहित है।
(२) मुझ जीव पदार्थ दर्शनज्ञानमयी चेतनास्वरूप है।
(३) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्मस्वरूप द्रव्य है, द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।
(४) मुझ जीव पदार्थ का स्व–पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकाररूप एक है।
(५) मुझ जीव पदार्थ–अन्य जीव, पुद्गल, धर्म–अधर्म–आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्यगुण स्वरूप है।
(६) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरूप को नहीं छोड़ता।
(७) मुझ जीव पदार्थ भेदज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव में स्थित रहे तो स्व समय है।
(८) मुझ जीव पदार्थ भेदज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव से छूटकर परस्वभाव में स्थित रहे अर्थात् मोह राग द्वेष रूप होकर रहे तब पर समय है।

प्र०१५. अरहंत भगवान के समान शुद्ध चेतनास्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप श्री समयसार गाथा ६ में क्या बताया है ?

उ० १. मुझ ज्ञायकभाव स्वतः सिद्ध अनादिअनन्त है।
२. मुझ ज्ञायकभाव नित्य प्रकाशमान है।
३. मुझ ज्ञायकभाव स्पष्ट प्रतिभास रूप है।
४. मुझ ज्ञायकभाव संसार अवस्था में शुभाशुभ भावों रूप परिणमता हुआ होने पर भी, स्वभाव दृष्टि से देखने में आवे, तो शुभाशुभभावोंरूप परिणमता ही नहीं है।
५. मुझ ज्ञायकभाव समस्त परद्रव्यों के भावों से भिन्नरूप से उपासने में आने पर शुद्ध कहलाता है। (वीना आदि हम सात हैं ऐसी मान्यता हटते ही ज्ञायकभाव अनुभव में आ जाता है।)
६. अन्तरंग में ज्ञेयाकार रूप से परिणमता होने पर भी ज्ञेय पदार्थों के साथ मुझ ज्ञायकभाव का वास्तव में कोई सम्बन्ध नहीं है। ऐसा जानते ही शरीरादि बाह्य पदार्थों का राग उत्पन्न नहीं होता और केवल ज्ञाता दृष्टा स्वभाव का आश्रय हो जाता है।

—: मोह के अभाव का दूसरा उपाय :—

प्र०१६. जिन पदार्थों का प्रतिभास होता है, विश्व के उन समस्त पदार्थों का स्वरूप अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार क्या है ?

उ० १. इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त है, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है; और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजनपर्याय व अनन्त अर्थपर्यायों की सत्ता है। इसप्रकार भगवान के केवलज्ञान में प्रत्येक द्रव्य की सत्ता पृथक–पृथक प्रकाशित हो रही है।

२. इस विश्व के जीवादि समस्त द्रव्यों में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक गुण में हर समय एक क्रमबद्ध पर्याय उत्पन्न होती है, पूर्व पर्याय का व्यय होता है और द्रव्य–गुण ध्रौव्य रहते हैं। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा। इस प्रकार भगवान के केवलज्ञान में इस विश्व की सभी अनादिनिधन वस्तुयें अपनी–अपनी मर्यादा सहित सहज परिणमित होती हुई प्रकाशित हो रही हैं।

३. इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य अपने गुण–पर्यायों का मात्र स्पर्श करता है। किसी भी द्रव्य को अपनी सत्ता में और पर की सत्ता में कुछ करने का तो अधिकार ही नहीं है।

४. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर द्रव्यों में या स्वद्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा। तो फिर क्या करना–'बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात् "केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करना"–यही प्रयोजन रहा।

प्र०१७. विश्व के समस्त पदार्थों का स्वरूप श्री समयसार गाथा ३ में क्या बताया है ?

उ० श्री समयसार गाथा ३ में आता है– "लोक में सर्वत्र जो कुछ जितने पदार्थ हैं, वे सब निश्चय से एकत्वनिश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को प्राप्त होते हैं, क्योंकि–
(१) वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को चुम्बन करते हैं–स्पर्श करते हैं, तथापि वे परस्पर एक दूसरे को स्पर्श नहीं करते।
(२) वे सब पदार्थ अत्यंत निकट एक क्षेत्रावगाहरूप से तिष्ठ रहे हैं, तथापि वे सदाकाल अपने स्वरूप से च्युत नहीं होते।
(३) वे सब पदार्थ पररूप परिणमन न करने से अनन्तव्यक्तिता नष्ट नहीं होती, इसलिए वे टंकोत्कीर्ण की भाँति शाश्वत स्थिर रहते हैं।
(४) वे सब पदार्थ समस्त विरुद्धकार्य तथा अविरुद्धकार्य दोनों की हेतुता से वे विश्व का सदा उपकार करते हैं अर्थात् टिकाये रखते हैं।

प्र०१८. केवलज्ञानरूप परिणमित अरहंत भगवान के समान निज जीव तत्व का एवं विश्व के समस्त पदार्थों का स्वरूप क्यों समझना ?

उ० क्योंकि अरहंत भगवान सर्वज्ञ हैं लेकिन पूर्ण वीतरागी है अर्थात् अरहंत भगवान के केवलज्ञान रूप दर्पण में विश्व के समस्त पदार्थ त्रिकालवर्ती पर्यायों सहित दिखते हैं लेकिन मोह राग द्वेष का एक अंश भी नहीं हैं।

श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार के प्रथम श्लोक में कहा है – "जिनके केवलज्ञान रूप दर्पण में अलोकाकाश सहित छह द्रव्यों के समूहरूप लोक, अपनी भूत–भविष्य–वर्तमान की समस्त अनतानंत पर्यायों सहित प्रतिबिम्बित हो रहा है और जिनका आत्मा सर्व कषायमल से रहित हो गया है, ऐसे श्री वर्द्धमान भगवान अन्तिम तीर्थंकर को, मैं अपने कषायादि मल रहित–सम्यग्ज्ञान प्रकाश के प्रगट होने के लिये नमस्कार करता हूँ।"

प्र०१९. अरहंत भगवान के केवलज्ञान होने पर भी मोह राग द्वेष का अंश भी क्यों नहीं है; और हम भी क्या जाने कि मुझ आत्मा में भी मोह राग द्वेष उत्पन्न न हो ?

उ० १. प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव अलग–अलग है।

२. प्रत्येक द्रव्य का कायम रहकर बदलना सहज स्वभाव है।

३. एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का सर्वथा स्पर्श नहीं करता है – इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य का स्वतंत्र स्वरूप जानने के कारण अरहंत भगवान अपने केवलज्ञान में प्रतिबिम्बित समस्त पदार्थों का केवलज्ञान में अभाव देखते हैं इसलिये जिनके केवलज्ञानरूप दर्पण में विश्व के समस्त पदार्थ त्रिकालवर्ती पर्यायों सहित प्रतिबिम्बित हो रहे हैं, वे केवली भगवान केवल शुद्ध आत्मा का ही ध्यान करते हैं, विश्व का नहीं, इसलिये उनके मोह राग द्वेष उत्पन्न नहीं होते – जिन धर्म के इस रहस्यको माने तो मुझ आत्मा मे भी मोह राग द्वेष उत्पन्न नहीं होंगे।

प्र०२०. अरहंत भगवान के समान मोह–राग द्वेष का सर्वथा अभाव करके पूर्ण वीतराग दशा प्रगट करने के लिये मुझे क्या करना रहा ?

उ० (१) मैं जीव हूँ मेरा कार्य मात्र जानना देखना है। धर्म करने के लिये मुझे केवलज्ञान के अनुसार सही–सही जानने देखने की कला सीखनी है।

(२) ज्ञान की हर पर्याय में पुदगल बन्ध अर्थात् शरीर, धन–मकान आदि का; उभय बन्ध अर्थात् कुटुम्ब–परिवार व देव गुरू आदि का ज्ञान होता है। यह शुद्ध चेतना की गाँठ है अर्थात् शुद्ध चैतन्य दर्पण ही है।

(३) लोक में जो पुदगल बन्ध, उभय बन्ध भरे पड़े हैं वे कोई वस्तु ही नहीं हैं। ये तो लोक के अनन्त जीव व अनन्तानन्त पुदगल परमाणु ही हैं। प्रत्येक जीव अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व अगुरूलघुत्व, प्रदेशत्व आदि अनन्त सामान्य गुण तथा ज्ञान, दर्शन, श्रद्धा, चारित्र, सुख क्रियावती शक्ति आदि अनन्त विशेष गुण एक व्यंजन पर्याय, अनन्त अर्थ पर्याय सहित अपनी–२ सत्ता में विराजमान है। प्रत्येक परमाणु अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरूलघुत्व, प्रदेशत्व आदि अनन्त सामान्य गुण व स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण, क्रियावती शक्ति आदि अनन्त विशेष गुण– एक व्यंजन पर्याय व अनन्त अर्थ पर्याय सहित प्रत्येक परमाणु अपनी–२ सत्ता में विराजमान है।

जब एक जीव का दूसरे जीव से तथा एक परमाणु का दूसरे परमाणु से कोई सम्बन्ध ही नहीं है तो मुझ चैतन्य दर्पण में इनका प्रवेश कैसे हो सकता है अर्थात् कभी नहीं हो सकता ऐसा जानते मानते ही ज्ञान में शरीर, धन, मकान आदि का मोह उत्पन्न नहीं होता और शुद्ध चैतन्य दर्पण की दृष्टि हो जाती है– यही धर्म है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ९.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.०० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ९.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- १७ सितम्बर २०१७ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–८२ का पारितोषिक वितरण भी २६ नवम्बर २०१७ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–८४

दिनांक 28 जनवरी, 2018 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

प्र०१. लघु जैन सिद्वान्त प्रवेशिका (गुलाबी किताब) के प्रश्न १, ४, ८, ११, १३, १४, १५, १६, १७, २०, २३, २६, २९, ३२, ३५, ३६, ३७, ३८, ४०, ४१, ४२, ४३, ४५, ४६, ४८ से ६०, ६२, ६४., ६६, ६७, ६८, ६९, ७१, ७६, ७७, से ८८, ९० से ९९, १०१ से १०४, १०६ से १२८, १३०, १८२ से १९२ – ये सब प्रश्न पक्के याद करके नई कापी मे लिखिये।

प्र०२. तीर्थंकर भगवान् ने मोक्ष का मार्ग क्या बताया है ?
उ० अपने आत्मा को पहचानकर सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र को प्रगट करना–यही मोक्ष का मार्ग है, उसी को जैनधर्म कहते है। ऐसा करने से हम भी एक दिन भगवान बनेंगे।

प्र०३. जैन धर्म का सार क्या है ?
उ० आत्मा के परिणामों मे मोह–राग–द्वेष आदि का उत्पन्न नहीं होना ही अहिंसा है, धर्म है तथा आत्मा के परिणामों मे मोह–राग–द्वेष आदि की उत्पत्ति हो जाना ही हिंसा है। यदि मुझ आत्मा मोह राग द्वेष का अभाव कर दे, तो बना बनाया भगवान ही है।

प्र०४. मोह–राग–द्वेष भावों की उत्पत्ति का कारण क्या है ?
उ० जीव और अजीव के भेद का ज्ञान न होने के कारण, अपने ज्ञान मे अजीव का जो भी परिणमन दिखता है, अज्ञानी उसे भी अपना मानता है, – इसी का नाम मोह है – जिसका फल रागादि रूप संसार है।

प्र०५. आत्मा के परिणामों मे से मोह राग द्वेष भावों का अभाव करके भगवान बनने के लिये क्या निर्णय करना पड़ेगा ?
उ० (१) मैं कौन हूँ, (२) मैं कौन नहीं हूँ ? – यह निर्णय करना पड़ेगा।

प्र०६. तुम कौन हो ?
उ० मैं ज्ञान–दर्शन श्रद्धा चारित्र आदि अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड भगवान आत्मा हूँ अर्थात् चैतन्य मूर्ति हूँ।

प्र०७. तुम कौन नहीं हो ?
उ० धन, मकान, परिवार आदि अत्यन्त भिन्न पर पदार्थ, आँख–नाक–कान रूप औदारिक शरीर, मन, वाणी, आठ कर्म और शुभाशुभ विकारी भाव मैं नहीं हूँ।

प्र०८. तुम कब से हो ?
उ० मैं तो जन्म मरण रहित अनादिअनन्त अनादिकाल से हूँ।

प्र०९. जन्म मरण तो होता है क्या यह बात असत्य है ?
उ० शरीर का संयोग–वियोग होता है, मुझ आत्मा का नहीं।

प्र०१०. फिर तुम दुःखी क्यों हो ?
उ० ज्ञान–दर्शन–श्रद्धा–चारित्र आदि अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड निज आत्मा का पता न होने से, धन–मकान–शरीर आदि जो मैं नहीं हूँ उन पदार्थो को अपना मानने रूप अपनी मूर्खता से दुःखी हूँ।

प्र०११. तुमने आज तक क्या किया ?
उ० जिनसे मुझ आत्मा का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, ऐसे शरीर–धन आदि पर पदार्थों को अपना मानकर आत्मा के परिणामों मे मात्र मोह–राग–द्वेष किया।

प्र०१२. जीव द्रव्य किसे कहते हैं ?

उ० जिसमें चेतना अर्थात् ज्ञान दर्शन रूप शक्ति है उसे जीव द्रव्य कहते हैं।

प्र०१३. चेतना अर्थात् ज्ञानदर्शन किसे कहते हैं ?

उ० जिसमें पदार्थों का प्रतिभास होता है उसे चेतना कहते हैं।

प्र०१४. जिसमें पदार्थों का प्रतिभास होता है ऐसी शुद्ध चेतना का स्वरूप श्री समयसार गाथा १९ में क्या बताया है ?

उ० दृष्टान्त – जैसे दर्पण में अग्नि की ज्वाला दिखती है तो वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहता है कि ज्वाला तो अग्नि में ही है, दर्पण में जो जलती हुई अग्नि दिख रही है वह तो दर्पण की निर्मलता ही है। अर्थात् निर्मल दर्पण ही है।

सिद्धान्त – इसीप्रकार शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है। जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो अखण्ड चैतन्य–ज्योति स्वरूप भगवान आत्मा ही है।

प्र०१५. जीव–अजीव की एकत्वबुद्धि रूप मोह का अभाव कैसे हो ?

उ० मोह के अभाव के दो उपाय है – १. जिसमें पदार्थों का प्रतिभास होता है – ऐसी शुद्ध चेतना स्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप अरहंत भगवान के समान समझना। २. जिन पदार्थों का प्रतिभास होता है उन विश्व के समस्त पदार्थों का स्वरूप अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार समझना। (श्री प्रवचनसार गाथा ८० व ८७)

–: मोह के अभाव का प्रथम उपाय :–

प्र०१६. अरहंत भगवान के समान शुद्ध चेतनास्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?

उ०
चेतन को है उपयोग रूप, बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल, नभ, धर्म, अधर्म, काल, इनतैं न्यारी है जीवचाल।।

चेतन को है उपयोग रूप अर्थात (१) मैं ज्ञान–दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूँ और (२) मुझ आत्मा का स्वभाव ज्ञाता–दृष्टा है। (३) बिन्मूरत अर्थात आख–नाक–कान औदारिक आदि शरीरों रूप मेरी मूर्ति नहीं है। (४) चिन्मूरत अर्थात चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है। (५) अनूप अर्थात सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है। (६) पुद्गल, नभ, धर्म, अधर्म, काल, इनतैं न्यारी है जीवचाल अर्थात मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्त जीव द्रव्य हैं, अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एकेक द्रव्य हैं, लोक प्रमाण असंख्यात काल द्रव्य हैं– इनकी सत्ता मुझ जीव से भिन्न ही है। ऐसा निज जीवतत्व का स्वरूप जानते–मानते ही विश्व का राग उत्पन्न नहीं होता और त्रिकाली स्वभाव अर्थात् अनादिअनन्त ज्ञाता दृष्टा स्वभाव का आश्रय हो जाता है।

प्र०१७. अरहंत भगवान के समान शुद्ध चेतनास्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप श्री समयसार गाथा २ में क्या बताया है ?

उ० (१) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य युक्त सत्ता सहित है।
(२) मुझ जीव पदार्थ दर्शनज्ञानमयी चेतनास्वरूप है।
(३) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्मस्वरूप द्रव्य है, द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।
(४) मुझ जीव पदार्थ का स्व–पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकाररूप एक है।
(५) मुझ जीव पदार्थ–अन्य जीव, पुदगल, धर्म–अधर्म–आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्यगुण स्वरूप है।
(६) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरूप को नहीं छोड़ता।
(७) मुझ जीव पदार्थ भेदज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव में स्थित रहे तो स्व समय है।
(८) मुझ जीव पदार्थ भेदज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता–दृष्टा स्वभाव से छुटकर परस्वभाव में स्थित रहे अर्थात् मोह राग द्वेष रूप होकर रहे तब पर समय है।

प्र०१८. अरहंत भगवान के समान शुद्ध चेतनास्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप श्री समयसार गाथा ६ में क्या बताया है ?

उ० १. मुझ ज्ञायकभाव स्वतः सिद्ध अनादिअनन्त है।
२. मुझ ज्ञायकभाव नित्य प्रकाशमान है।
३. मुझ ज्ञायकभाव स्पष्ट प्रतिभास रूप है।
४. मुझ ज्ञायकभाव संसार अवस्था में शुभाशुभ भावों रूप परिणमता हुआ होने पर भी, स्वभाव दृष्टि से देखने में आवे, तो शुभाशुभभावोंरूप परिणमता ही नहीं है।
५. मुझ ज्ञायकभाव समस्त परद्रव्यों के भावों से भिन्नरूप से उपासने में आने पर शुद्ध कहलाता है। (वीना आदि हम सात हैं ऐसी मान्यता हटते ही ज्ञायकभाव अनुभव में आ जाता है।)
६. अन्तरंग में ज्ञेयाकार रूप से परिणमता होने पर भी ज्ञेय पदार्थों के साथ मुझ ज्ञायकभाव का वास्तव में कोई सम्बन्ध नहीं है। ऐसा जानते ही शरीरादि बाह्य पदार्थों का राग उत्पन्न नहीं होता और केवल ज्ञाता दृष्टा स्वभाव का आश्रय हो जाता है।

–: मोह के अभाव का दूसरा उपाय :–

प्र०१९. जिन पदार्थों का प्रतिभास होता है, विश्व के उन समस्त पदार्थों का स्वरूप अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार क्या है ?

उ० १. इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त है, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है; और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजनपर्याय व अनन्त अर्थपर्यायों की सत्ता है। इसप्रकार भगवान के केवलज्ञान प्रत्येक द्रव्य की सत्ता पृथक–पृथक प्रकाशित हो रही है।

२. इस विश्व के जीवादि समस्त द्रव्यों में अनन्त–अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक गुण में हर समय एक क्रमबद्ध पर्याय उत्पन्न होती है, पूर्व पर्याय का व्यय होता है और द्रव्य–गुण ध्रौव्य रहते हैं। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा। इस प्रकार भगवान के केवलज्ञान में इस विश्व की सभी अनादिनिधन वस्तुयें अपनी–अपनी मर्यादा सहित सहज परिणमित होती हुई प्रकाशित हो रही हैं।

३. इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य अपने गुण–पर्यायों का मात्र स्पर्श करता है। किसी भी द्रव्य को अपनी सत्ता में और पर की सत्ता में कुछ करने का तो अधिकार ही नहीं है।

४. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त पर द्रव्यों में या स्वद्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा। तो फिर क्या करना–'बस अपने स्वरूप का ध्यान करना अर्थात' "केवल शुद्ध चैतन्य को प्रकाशित करना"–यही प्रयोजन रहा।

प्र०२०. विश्व के समस्त पदार्थों का स्वरूप श्री समयसार गाथा ३ में क्या बताया है ?

उ० श्री समयसार गाथा ३ में आता है– "लोक में सर्वत्र जो कुछ जितने पदार्थ है, वे सब निश्चय से एकत्वनिश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को प्राप्त होते हैं, क्योंकि–
(१) वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को चुम्बन करते हैं–स्पर्श करते है, तथापि वे परस्पर एक दूसरे को स्पर्श नहीं करते।
(२) वे सब पदार्थ अत्यंत निकट एक क्षेत्रावगाहरूप से तिष्ठ रहे हैं, तथापि वे सदाकाल अपने स्वरूप से च्युत नहीं होते।
(३) वे सब पदार्थ पररूप परिणमन न करने से अनन्तव्यक्तिता नष्ट नहीं होती, इसलिए वे टंकोत्कीर्ण की भाँति शाश्वत स्थिर रहते हैं।
(४) वे सब पदार्थ समस्त विरुद्धकार्य तथा अविरुद्धकार्य दोनों की हेतुता से वे विश्व का सदा उपकार करते हैं अर्थात् टिकाये रखते हैं।

प्र०२१. केवलज्ञानरूप परिणमित अरहंत भगवान के समान निज जीव तत्व का एवं विश्व के समस्त पदार्थों का स्वरूप क्यों समझना ?

उ० क्योंकि अरहंत भगवान सर्वज्ञ हैं लेकिन पूर्ण वीतरागी है अर्थात् अरहंत भगवान के केवलज्ञान रूप दर्पण में विश्व के समस्त पदार्थ त्रिकालवर्ती पर्यायों सहित दिखते हैं लेकिन मोह राग द्वेष का एक अंश भी नहीं है।

श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार के प्रथम श्लोक में कहा है – "जिनके केवलज्ञान रूप दर्पण में अलोकाकाश सहित छह द्रव्यों के समूहरूप लोक, अपनी भूत–भविष्य–वर्तमान की समस्त अनंतानंत पर्यायों सहित प्रतिबिम्बित हो रहा है और जिनका आत्मा सर्व कषायमल से रहित हो गया है, ऐसे श्री वर्धमान भगवान अन्तिम तीर्थंकर को, मैं अपने कषायादि मल रहित–सम्यग्ज्ञान प्रकाश के प्रगट होने के लिये नमस्कार करता हूँ।"

प्र०२२. अरहंत भगवान के केवलज्ञान होने पर भी मोह राग द्वेष का अंश भी क्यों नहीं है; और हम भी क्या जाने कि मुझ आत्मा में भी मोह राग द्वेष उत्पन्न न हो ?

उ० १. प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव अलग–अलग है।

२. प्रत्येक द्रव्य का कायम रहकर बदलना सहज स्वभाव है।

३. एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का सर्वथा स्पर्श नहीं करता है – इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य का स्वतंत्र स्वरूप जानने के कारण अरहंत भगवान अपने केवलज्ञान में प्रतिबिम्बित समस्त पदार्थों का केवलज्ञान में अभाव देखते हैं इसलिये जिनके केवलज्ञानरूप दर्पण में विश्व के समस्त पदार्थ त्रिकालवर्ती पर्यायों सहित प्रतिबिम्बित हो रहे हैं, वे केवली भगवान केवल शुद्ध आत्मा का ही ध्यान करते हैं, विश्व का नहीं, इसलिये उनके मोह राग द्वेष उत्पन्न नहीं होते – जिन धर्म के इस रहस्यको माने तो मुझ आत्मा मे भी मोह राग द्वेष उत्पन्न नहीं होंगे।

प्र०२३. अरहंत भगवान के समान मोह–राग द्वेष का सर्वथा अभाव करके पूर्ण वीतराग दशा प्रगट करने के लिये मुझे क्या करना रहा ?

उ० (१) मैं जीव हूँ मेरा कार्य मात्र जानना देखना है। धर्म करने के लिये मुझे केवलज्ञान के अनुसार सही–सही जानने देखने की कला सीखनी है।

(२) ज्ञान की हर पर्याय में पुदगल बन्ध अर्थात् शरीर, धन–मकान आदि का; उभय बन्ध अर्थात् कुटुम्ब–परिवार व देव गुरू आदि का ज्ञान होता है। यह शुद्ध चेतना की गाँठ है अर्थात् शुद्ध चैतन्य दर्पण ही है।

(३) लोक में जो पुदगल बन्ध, उभय बन्ध भरे पड़े हैं वे कोई वस्तु ही नहीं है। ये तो लोक के अनन्त जीव व अनन्तानन्त पुदगल परमाणु ही हैं। प्रत्येक जीव अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व अगुरूलघुत्व, प्रदेशत्व आदि अनन्त सामान्य गुण तथा ज्ञान, दर्शन, श्रद्धा, चारित्र, सुख क्रियावती शक्ति आदि अनन्त विशेष गुण एक व्यंजन पर्याय, अनन्त अर्थ पर्याय सहित अपनी–२ सत्ता में विराजमान है। प्रत्येक परमाणु अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरूलघुत्व, प्रदेशत्व आदि अनन्त सामान्य गुण व स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण, क्रियावती शक्ति आदि अनन्त विशेष गुण– एक व्यंजन पर्याय व अनन्त अर्थ पर्याय सहित प्रत्येक परमाणु अपनी–२ सत्ता में विराजमान है।

जब एक जीव का दूसरे जीव से तथा एक परमाणु का दूसरे परमाणु से कोई सम्बन्ध ही नहीं है तो मुझ चैतन्य दर्पण में इनका प्रवेश कैसे हो सकता है अर्थात् कभी नहीं हो सकता ऐसा जानते मानते ही ज्ञान में शरीर, धन, मकान आदि का मोह उत्पन्न नहीं होता और शुद्ध चैतन्य दर्पण की दृष्टि हो जाती है– यही धर्म है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ९.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.०० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ९.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० न० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- २६ नवम्बर २०१७ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-८३ का पारितोषिक वितरण भी २८ जनवरी २०१८ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-८५

दिनांक 8 अप्रैल, 2018 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

मैं एक जीव द्रव्य हूँ। जिसमें चेतना अर्थात् ज्ञान दर्शन रूप शक्ति है उसे जीव द्रव्य कहते हैं और जिसमें पदार्थों का प्रतिभास होता है उसे चेतना कहते हैं। शुद्ध चेतना निर्मल चैतन्य दर्पण है। जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो शुद्ध चैतन्यमूर्ति स्वरूप निज भगवान आत्मा ही है। जीव-अजीव की एकत्वबुद्धि रूप मोह का अभाव करने के लिये जिसमें पदार्थों का प्रतिभास होता है। ऐसी शुद्ध चेतन्यमूर्ति स्वरूप निज भगवान आत्मा का और जिन पदार्थों का प्रतिभास होता है उन विश्व के समस्त पदार्थों का स्वरूप अरहंत भगवान के केवल ज्ञान के अनुसार समझना पड़ेगा, क्योंकि अरहंत भगवान जिनके केवल ज्ञानरूप दर्पण में विश्व के समस्त पदार्थ त्रिकालवर्ती पर्यायों सहित प्रतिबिम्बित हो रहे हैं, वे केवली भगवान केवल शुद्ध आत्मा का ही ध्यान करते हैं, विश्व का नहीं, इसेलिये उनके मोह राग द्वेष उत्पन्न नहीं होते, क्योंकि अरहंत भगवान अपने केवलज्ञान में प्रतिबिम्बित समस्त पदार्थों का केवलज्ञान में अभाव देखते हैं।

प्र०१. अरहंत भगवान के समान मोह-राग द्वेष का सर्वथा अभाव करके पूर्ण वीतराग दशा प्रगट करने के लिये मुझे क्या करना रहा ?

उ० (१) मैं जीव हूँ मेरा कार्य मात्र जानना देखना है। धर्म करने के लिये मुझे केवलज्ञान के अनुसार सही-सही जानने देखने की कला सीखनी है।

प्र०२. केवलज्ञान के अनुसार सही-सही जानने देखने की कला सीखने के लिये किसका ज्ञान आवश्यक है ?

उ० चार अभाव का ज्ञान आवश्यक है।

प्र०३. अभाव किसे कहते हैं ?

उ० एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ में अस्तित्व न होने को अभाव कहते हैं अर्थात् इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र पदार्थ है। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त गुणों की त्रिकालवर्ती पर्यायें सब स्वतंत्र पदार्थ हैं। इस प्रकार भगवान के केवलज्ञान में इस विश्व की सभी अनादिनिधन वस्तुयें अपनी-अपनी मर्यादा सहित सहज परिणमित होती हुई प्रकाशित हो रही हैं।

प्र०४. अभाव के कितने भेद हैं ?

उ० चार भेद हैं। अत्यन्ताभाव, अन्योन्याभाव, प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव।

प्र०५. अत्यन्ताभाव किसे कहते हैं ?

उ० एक द्रव्य में दूसरे द्रव्य के अभाव को अत्यन्ताभाव कहते हैं। अत्यन्ताभाव को न माना जाय तो कोई भी द्रव्य स्वतन्त्र और भिन्न न रहे।

प्र०६. अत्यन्ताभाव समझने से धर्म सम्बन्धी लाभ हैं ?

उ० अत्यन्ताभाव से ऐसा समझना कि प्रत्येक द्रव्य में दूसरे द्रव्य का अभाव होने से कोई द्रव्य अन्य द्रव्य की पर्यायों को कुछ भी नहीं कर सकता अर्थात सहायता, असर, मदद,प्रेरणा इत्यादि कुछ नहीं कर सकता।

प्र०७. अन्योन्याभाव किसे कहते हैं ?

उ० एक पुद्गल द्रव्य की वर्तमान पर्याय का दूसरे पुद्गल की वर्तमान पर्याय में अभाव होने को अन्योन्याभाव कहते हैं। अन्योन्याभाव को न माना जाय तो एक पुद्गल द्रव्य की पर्याय अन्य पुद्गल द्रव्य की वर्तमान पर्याय से स्वतंत्र और भिन्न नहीं रहेगी।

प्र०८. अन्योन्याभाव समझने से धर्म सम्बन्धी क्या लाभ हैं ?

उ० अन्योन्याभाव से ऐसा समझना कि एक पुद्गल द्रव्य की पर्याय दूसरे पुद्गल द्रव्य की पर्यायों में कुछ भी नहीं कर सकती है अर्थात् एक दूसरे की मदद, सहायता, असर, प्रेरणादि कुछ नहीं कर सकते।

प्र०९. प्रागभाव किसे कहते है ।

उ० एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का उसी द्रव्य की पूर्व पर्याय में होने वाले अभाव को प्रागभाव कहते हैं। प्रागभाव को न माना जाये तो कार्य अनादि ठहरे।

प्र०१०. प्रागभाव समझने से धर्म सम्बन्धी क्या लाभ हैं ?

उ० प्रागभाव से ऐसा समझना कि अनादि काल से अज्ञान मिथ्यात्वादि दोष किये, धर्म कभी नहीं किया, तो भी धर्म वर्तमान में नये पुरूषार्थ से हो सकता है, क्योंकि वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय में अभाव है।

प्र०११. प्रध्वंसाभाव किसे कहते हैं ?

उ० एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का उसी द्रव्य की आगे होने वाली पर्याय में अभाव होने को प्रध्वंसाभाव कहते हैं। प्रध्वंसाभाव को न माना जाये तो वही कार्य अनन्तकाल रहे।

प्र०१२. प्रध्वंसाभाव समझने से धर्म सम्बन्धी क्या लाभ हैं ?

उ० प्रध्वंसाभाव से ऐसा समझना कि वर्तमान अवस्था में धर्म न किया हो तो भी उस अधर्म दशा का तुरन्त व्यय करके पुरूषार्थ से धर्म कर सकता है।

प्र०१३. आप कहते हो एक द्रव्य में दूसरा द्रव्य कुछ नहीं कर सकता परन्तु शास्त्रों में तो ऐसे कथन भरे पड़े हैं।

उ० शास्त्रों में जो कुछ अन्य का करने–कराने आदि का कथन है वह घी के घड़े के समान व्यवहार का कथन मात्र है, सत्यार्थ नहीं है ऐसा समझना ।

प्र०१४. मै उठा–इस वाक्य पर अत्यन्ताभाव को कब माना और कब नहीं माना ?

उ० निज चैतन्य अरूपी ज्ञायक भगवान आत्मा का शरीर के उठने रूप पुद्गलों से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है–ऐसी मान्यता वाले ने अत्यन्ताभाव को माना और शरीर के उठने रूप पुद्गलों में मैं उठा–ऐसी मान्यता वालों ने अत्यन्ताभाव को नहीं माना।

प्र०१५. मैं उठा–इस वाक्य पर अन्योन्याभाव को कब माना और कब नहीं माना ?

उ० शरीर का उठना आत्मा से तो नहीं हुआ परन्तु द्रव्यकर्म के कारण तो शरीर उठा ? ऐसा नहीं है क्योंकि द्रव्यकर्म के स्कन्धों की वर्तमान पर्याय का, शरीर के उठने रूप स्कन्धों की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है। जब एक जाति के पुद्गलों के कार्यो में आपस में सम्बन्ध नहीं है, तो मुझ आत्मा का शरीर के उठने के साथ सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? कभी भी नहीं हो सकता है– ऐसी मान्यता वाले ने अन्योन्याभाव को माना और शरीर के उठने रूप क्रिया का आत्मा के साथ तो सम्बन्ध नहीं है परन्तु द्रव्यकर्म के कारण शरीर उठा–ऐसी मान्यता वालों ने अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्र०१६. मैं उठा–इस वाक्य में प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव को कब माना और कब नहीं माना ?

उ० शरीर के उठने रूप वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय में प्रागभाव है और शरीर के उठने रूप वर्तमान पर्याय का भविष्य की पर्याय में प्रध्वंसाभाव है, ऐसी मान्यता वालो ने प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव को माना और शरीर के उठने रूप वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय से सम्बन्ध है और शरीर के उठने रूप कार्य का भविष्य की पर्याय से भी कुछ सम्बन्ध है– ऐसी मान्यता वाले ने प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव को नहीं माना ।

प्र०१७. मैं उठा– इस वाक्य में चारों अभाव के समझने से वीतरागता कैसे निकलती है स्पष्टता से समझाइए।

उ० (१) उठने रूप पुद्गलों का मुझ चेतन आत्मा में अत्यन्ताभाव है।
(२) द्रव्यकर्म और शरीर के उठने रूप वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है।
(३) शरीर के उठने रूप वर्तमान पर्याय का भूत की पर्याय में प्रागभाव है।
(४) शरीर के उठने रूप वर्तमान पर्याय का भविष्य की पर्याय में प्रध्वंसाभाव है। अब जैसे शरीर का उठना उस समय पर्याय की योग्यता से ही हुआ है, वैसे ही विश्व में जितने भी कार्य हैं, वे सब उस समय की पर्याय की योग्यता से हो चुके हैं, हो रहे हैं और भविष्य में भी होते रहेंगे। ऐसा समझने से पर में कर्ता–भोक्ता की खोटी मान्यता का अभाव होकर तत्काल वीतरागता की प्राप्ति हो जाती है और फिर क्रम से मोक्ष रूपी लक्ष्मी का नाथ बन जाता है।

प्र०१८. निम्न वाक्यो पर चार अभावों को समझाइए ?

उ० (१) मैने रोटी बनाई (२) मैने अग्नि से पानी को गरम किया। (३) मैने किताब बनाई। (४) मैने बिस्तर बिछाया। (५) मैं खड़ा हुआ। (६) यह मेरी दुकान है। (७) यह मेरा सोने का हार है। (८) मैने हाथ से ताली बजाई। (९) मैने डिब्बे मे दवाई रखी। (१०) मैने गले में माला पहनी। (११) मैं दीना हूँ। (१२) यह मेरा मकान है।

प्र०१९. चार अभाव को समझने से हमारा कल्याण कैसे हो सीधे सादे शब्दों में बताओ ?

उ० (१) मैं आत्मा अनन्त गुणों का पिण्ड ज्ञायक स्वभावी चैतन्य मूर्ति हूँ। मुझ चैतन्य मूर्ति का विश्व के अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, एकेक और लोक प्रमाण असंख्यात कालद्रव्यों से किसी भी प्रकार का संबंध नहीं है, तो हटाओ दृष्टि अत्यन्त भिन्न पर पदार्थों से और शरीर, मन, वाणी से।

(२) जब एक पुद्‌गल की वर्तमान पर्याय का दूसरे पुद्‌गलों की वर्तमान पर्याय कुछ नहीं कर सकती है तो आठ कर्म मुझे दुःख देंगें या सुख देंगें, ऐसी बुद्धि का अभाव हो जाना चाहिए तो हटाओ दृष्टि आठ कर्मों से।

(३) अब विचारों पर से व द्रव्यकर्म से तो संबंध नहीं रहा, अपनी आत्मा की ओर देखो तुम्हारी जो वर्तमान पर्याय हैं, उसका भूत की पर्याय से कोई संबंध नहीं है, जब वे हैं ही नहीं तो उठाओ दृष्टि पिछली पर्यायों से।

(४) भविष्य की पर्याय आई ही नहीं तो अब तुम अपनी वर्तमान पर्याय को कहाँ ले जाओगे ?

पर द्रव्य, द्रव्यकर्म तथा भूत भविष्य की पर्यायों से तो संबंध रहा नहीं तो एक मात्र जो स्वभाव है उस पर दृष्टि देवे तो सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष की प्राप्ति होती है।

– उपसंहार –

(१) मैं जीव हूँ मेरा कार्य मात्र जानना देखना है। धर्म करने के लिये मुझे केवलज्ञान के अनुसार सही–सही जानने देखने की कला सीखनी है।

(२) ज्ञान की हर पर्याय में पुद्‌गल बन्ध अर्थात् शरीर, धन–मकान आदि का, उभय बन्ध अर्थात् कुटुम्ब–परिवार व देव गुरू आदि का ज्ञान होता है। यह शुद्ध चेतना की गाँठ है अर्थात् शुद्ध चैतन्य दर्पण ही है।

(३) लोक में जो पुद्‌गल बन्ध, उभय बन्ध भरे पड़े हैं वे कोई वस्तु ही नहीं हैं। ये तो लोक के अनन्त जीव व अनन्तानन्त पुद्‌गल परमाणु ही हैं। प्रत्येक जीव अपनी–२ सत्ता में विराजमान है। प्रत्येक परमाणु अपनी–२ सत्ता में विराजमान है।

जब एक जीव का दूसरे जीव से तथा एक परमाणु का दूसरे परमाणु से कोई सम्बन्ध ही नहीं है तो मुझे चैतन्य दर्पण में इनका प्रवेश कैसे हो सकता है अर्थात् कभी नहीं हो सकता ऐसा जानते मानते ही ज्ञान में शरीर, धन, मकान आदि का मोह उत्पन्न नहीं होता और शुद्ध चैतन्य दर्पण की दृष्टि हो जाती है– यही धर्म है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1.	प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.०० बजे		
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4.	मंगलवार	स्वाध्याय मन्दिर	सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- २८ जनवरी २०१८ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–८४ का पारितोषिक वितरण भी ६ अप्रैल २०१८ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–८६

दिनांक 8 जुलाई, 2018 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

– जैन धर्म का रहस्य –

(१) मैं जीव हूँ मेरा कार्य मात्र जानना देखना है। इसलिये धर्म करने के लिये मुझे केवलज्ञान के अनुसार सही–सही जानने देखने की कला सीखनी है।

(२) ज्ञान की हर पर्याय में पुद्‌गल बन्ध अर्थात् शरीर, धन–मकान आदि का, उभय बन्ध अर्थात् कुटुम्ब–परिवार व देव गुरू आदि का ज्ञान होता है। यह शुद्ध चेतना की गाँठ है अर्थात् शुद्ध चैतन्य दर्पण ही है।

(३) लोक में जो पुद्‌गल बन्ध, उभय बन्ध भरे पड़े हैं वे कोई वस्तु ही नहीं हैं। ये तो लोक के अनन्त जीव व अनन्तानन्त पुद्‌गल परमाणु ही हैं। प्रत्येक जीव अपनी–२ सत्ता में विराजमान है। प्रत्येक परमाणु अपनी–२ सत्ता में विराजमान है।

जब एक जीव का दूसरे जीव से तथा एक परमाणु का दूसरे परमाणु से कोई सम्बन्ध ही नहीं है तो मुझ चैतन्य दर्पण में इनका प्रवेश कैसे हो सकता है अर्थात् कभी नहीं हो सकता ऐसा जानते मानते ही ज्ञान में शरीर, धन, मकान आदि का मोह उत्पन्न नहीं होता और शुद्ध चैतन्य दर्पण की दृष्टि हो जाती है– यही धर्म है।

प्रत्येक जीव निर्मल चैतन्य दर्पण है। जिसमें विश्व का प्रतिभास/ज्ञान होता है। वहाँ ऐसा ज्ञान बराबर रहना चाहिये कि विश्व तो ज्ञान से बाहर ही है। ज्ञान दर्पण में जो ज्ञात हो रहा है वह तो शुद्ध चैतन्यमूर्ति स्वरूप निज भगवान आत्मा ही है। ऐसा निज वस्तु का स्वरूप जानने के कारण ही अरहंत भगवान जिनके केवलज्ञानरूप दर्पण में विश्व के समस्त पदार्थ त्रिकालवर्ती पर्यायों सहित प्रतिबिम्बित हो रहे हैं, वे केवली भगवान केवल शुद्ध आत्मा का ही ध्यान करते हैं, विश्व का नहीं, इसलिये उनके मोह राग द्वेष उत्पन्न नहीं होते, क्योंकि अरहंत भगवान अपने केवलज्ञान में प्रतिबिम्बित समस्त पदार्थों का केवलज्ञान में अभाव देखते हैं।

प्र०१. केवलज्ञान के अनुसार सही–सही जानने देखने की कला सीखने के लिये किसका ज्ञान आवश्यक है ?

उ० निश्चय व्यवहार का ज्ञान आवश्यक है।

प्र०२. इस विश्व में कितने पदार्थ हैं ?

उ० इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्‌गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, प्रत्येक

गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र पदार्थ है। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त गुणों की त्रिकालवर्ती पर्यायें सब स्वतंत्र पदार्थ हैं। इस प्रकार भगवान के केवलज्ञान में इस विश्व का प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र सत्, प्रत्येक गुण स्वतंत्र सत्, प्रत्येक द्रव्य–गुण की त्रिकालवर्ती पर्यायें स्वतंत्र सत् रूप से प्रकाशित हो रही हैं।

प्र०३. निश्चय का और व्यवहार का अर्थ क्या है ?

उ० यथार्थ का नाम निश्चय है। उपचार का नाम व्यवहार है।

प्र०४. व्यवहारनय को स्पष्ट समझाइये ?

उ० जो दो द्रव्यों को, दो गुणों को, दो पर्यायों को मिलाकर निरूपण करता है उसे व्यवहारनय कहते हैं। जैसे– मिट्टी के घड़े को पानी के संयोग से पानी का घड़ा कहना।

प्र०५. निश्चयनय को स्पष्ट समझाइये ?

उ० जो दो द्रव्यों को, दो गुणों को, दो पर्यायों को मिलाकर निरूपण नहीं करता, जैसा है वैसा ही पदार्थ का यथार्थ स्वरूप बतलाता है उसे निश्चयनय कहते हैं। जैसे–मिट्टी के घड़े को मिट्टी का घड़ा कहना।

प्र०६. जिनवाणी में निश्चय और व्यवहार के कथन भरे पड़े हैं–भगवान की वाणी का रहस्य समझने के लिये हमें क्या सावधानी रखनी पड़ेगी ?

उ० (१) निश्चयनय से जो निरूपण किया हो उसे तो सत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान अंगीकार करना। (२) व्यवहारनय से जो निरूपण किया हो उसे असत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान छोड़ना। अर्थात् (१) जिसमें मेरा ज्ञान दर्शन पाया जाये–वह जीव तत्व ही मैं हूँ, वीना नहीं, ऐसा निश्चयनय से जो निरूपण किया हो, उसे तो सत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान अंगीकार करना और (२) मैं वीना हूँ–ऐसा व्यवहारनय से जो निरूपण किया हो, उसे असत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान छोड़ना।

प्र०७. मैं वीना हूँ–ऐसे व्यवहार के बिना मैं जीव हूँ–ऐसे निश्चय का उपदेश कैसे नहीं होता ?

उ० <u>श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ २५२ से :–</u>

(१) निश्चय से मुझ आत्मा वीना शरीरादि परद्रव्यों से सर्वथा, भिन्न, ज्ञान–दर्शनादि स्वभावों से अभिन्न स्वयं सिद्ध वस्तु हैं।

(२) उसे जो नहीं पहचानते उनसे इसी प्रकार कहते रहें कि मुझ आत्मा वीना शरीरादि परद्रव्यों से सर्वथा भिन्न, ज्ञान–दर्शनादि स्वभावों से अभिन्न स्वयं सिद्ध वस्तु है–तो वे कुछ समझ नहीं पाये।

(३) तब उनको व्यवहारनय से वीना शरीरादि परद्रव्यों की सापेक्षता द्वारा वीना, नर, नारक, पृथ्वीकायादि रूप जीव के विशेष किये।

(४) तब वीना जीव है, मनुष्य जीव है, नारकी जीव है, एकेन्द्रिय जीव इत्यादि प्रकार सहित उन्हें जीव की पहचान हुई।

प्र०८. मैं वीना हूँ, ऐसे व्यवहारनय को कैसे अंगीकार नहीं करना ?

उ० <u>श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ २५२ से :–</u>

(१) यहाँ व्यवहार से वीना, नर–नारक आदि पर्यायों को जीव कहा।

(२) सो वीना आदि असमानजातीय द्रव्य पर्यायों अर्थात् उभयबंधों को ही जीव नहीं मान लेना।

(३) ये पर्याय तो जीव पुद्गल के संयोग रूप है।

(४) वहां निश्चय से जानने देखने वाला जीव द्रव्य भिन्न है उस ही को जीव मानना।

(५) जीव के संयोग से, जिनमें जानने देखने की शक्ति नहीं है, ऐसे जड़ पुद्गल वीना शरीरादिक को भी उपचार से जीव कहा सो कथन मात्र ही है।

(४) परमार्थ से वीना शरीरादि जीव होते नहीं, ऐसा ही श्रद्धान करना। इस प्रकार वीना जीव है, एकेन्द्रिय आदि जीव हैं–ऐसे व्यवहारनय को अंगीकार नहीं करना चाहिये।

प्र०६. मोक्षपाहुड़ गाथा ३१ में निश्चय–व्यवहार के विषय में आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने क्या बताया है ?

उ०(अ) जो व्यवहार में सोता है वह योगी अपने कार्य में जागता है, अर्थात् जो मैं वीना हूँ ऐसे व्यवहार की श्रद्धा छोड़कर, जिसमें <u>मेरा ज्ञान दर्शन पाया जाये–वह जीव तत्व ही मैं हूँ, वीना नहीं,</u> ऐसे निश्चय की श्रद्धा करता है, वह उसी समय ज्ञानी बन जाता है और अपने आत्मकार्य में जागता है।

(आ) तथा जो व्यवहार में जागता है, वह अपने कार्य में सोता है, अर्थात जो मैं वीना ही हूँ ऐसे व्यवहार की श्रद्धा करता है, वह कभी भी अपना आत्मकार्य नहीं कर सकता, संसार में रूलता है।

(इ) इसलिए मैं वीना हूँ ऐसे व्यवहार का श्रद्धान छोड़कर–जिसमें मेरा ज्ञान–दर्शन पाया जाये–वह जीव तत्व ही मैं हूँ, वीना नहीं, ऐसा निश्चयनय का श्रद्धान करना योग्य है।

प्र०१०. निश्चय–व्यवहार का स्वरूप समझने की आवश्यकता क्यों है ?

उ०(१) जैसे मिट्टी का घड़ा–घड़ा कहने में आता है वास्तव में मिट्टी ही है, उसी प्रकार आकाश के एक क्षेत्र में इकट्ठे हुए कुछ परमाणुओं को व्यवहार से हार कहकर–इस निश्चय का ज्ञान कराना है कि ये जो हार है, वह हार नहीं है अनन्त परमाणु हैं, मुझ जीव से कोई सम्बन्ध ही नहीं है।

(२) मैं जीव हूँ चैतन्यस्वरूप हूँ जो निज रस से हार के ज्ञान रूप परिणमित हुआ है। अखंड चैतन्य मूर्ति को व्यवहार से हार के ज्ञान रूप परिणमित कहकर–इस निश्चय का ज्ञान कराना है कि ये जो हार का ज्ञान है, वह हार का ज्ञान नहीं है अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड भगवान आत्मा है, ये जो हार का ज्ञान है ये ही अमूर्तिक प्रदेशों का पुंज भगवान आत्मा है,

प्र०११. मैं वीना हूँ–इस व्यवहार के कथन के समय ज्ञान में कैसा सम्यक निर्णय रहना चाहिये ?

उ० मैं वीना नहीं हूँ–वीना शरीर तो लोक के अनन्त परमाणु हैं। मैं तो ज्ञान दर्शन आदि अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड रूप शुद्ध चैतन्य मूर्ति हूँ, निज रस से शरीर, धन आदि के ज्ञान रूप परिणमित, शरीर–धनादि अनन्त परमाणुओं से सर्वथा शून्य अशरीरी चैतन्य मूर्ति हूँ–ऐसा जानकर शरीर–धन आदि का लक्ष्य छोड़कर अकेले ज्ञान स्वभाव की दृष्टि करें तो निश्चय–व्यवहार का ज्ञान सच्चा कहलायेगा।

प्र०१२. निश्चय का निश्चयरूप और व्यवहार का व्यवहाररूप श्रद्धान क्या है ?

उ०(१) मैं अनादिअनन्त चैतन्यस्वरूप ही हूँ–यह निश्चय का निश्चयरूप श्रद्धान है।

(२) मैं वीना नहीं हूँ–यह व्यवहार का व्यवहाररूप श्रद्धान है।

<u>नोट – व्यवहार के निम्न कथनों पर प्रश्न ११ व १२ के अनुसार अभ्यास करिये –</u>

(१) मैने रोटी बनाई (२) मैं खड़ा हुआ। (३) मैने बिस्तर बिछाया। (४) यह मेरी दुकान

है। (५) यह मेरा सोने का हार है। (६) मैंने किताब बनाई। (७) मैंने डिब्बे मे दवाई रखी। (८) मैंने गले में माला पहनी। (९) यह मेरा लड़का है। (१०) यह मेरी साड़ी है। (११) मैं मनुष्य हूँ आदि।

प्र०१३. मैंने कान से शब्द सुना–ऐसा व्यवहार से कथन हो, परन्तु ज्ञान में क्या निर्णय रहना चाहिये ?

उ०(१) कान और शब्द तो अनन्त पुदगल परमाणु है, एक–एक परमाणु अपनी–अपनी सत्ता में टकोत्कीर्ण हैं। इसलिए शब्द और कान मुझ आत्मा का कार्य नहीं है।

(२) मैं तो अनन्त गुणों के अभेद पिण्ड रूप शुद्ध चैतन्यमूर्ति हूँ, निज रस से शब्द के ज्ञान रूप परिणमित शुद्ध चैतन्य मूर्ति मैं, स्वयं को शब्द से सर्वथा शून्य ज्ञान मात्र अनुभव करूँ–यही धर्म है, यही निश्चय का निश्चयरूप और व्यवहार का व्यवहार रूप श्रद्धान है।

<u>नोट – व्यवहार के निम्न कथनों पर प्रश्न १३ के अनुसार अभ्यास करिये –</u>

(१) मैंने आँख से नृत्य देखा। (२) मैंने नाक से फूल सूंघा। (३) मैंने जीभ से रसगुल्ले का स्वाद लिया। (४) मैंने हाथ से छूकर ठंडे–गर्म को जाना।

– उपसंहार –

(१) मैं वीना हूँ, मैं उठती बैठती हूँ यह मेरा मकान है, यह मेरा कुटुम्ब परिवार है, ये मेरे वस्त्र–आभूषण हैं, ये मेरे मित्र हैं, ये मेरे शत्रु हैं–ये सब कथन घी का घड़ा, पानी का लोटा, चीनी का डिब्बा, खाने की मेज आदि के समान असत्य कथन है। इन सब व्यवहार के असत्य कथनों के समय ज्ञान में केवलज्ञान के अनुसार उपरोक्त सम्यक निर्णय रहना चाहिये।

(२) बस इतना विचार करना है कि जिस प्रकार पानी के घड़े में मिट्टी भरी है, पानी नहीं, चीनी के डिब्बे में स्टील भरी है, चीनी नहीं, इसी प्रकार शरीर के उठने, बैठने, खाने–पीने रूप हर अवस्था में परमाणु ही परमाणु है, जीव नहीं, और मुझ ज्ञान दर्शन स्वरूप चैतन्य मूर्ति की शरीर–धन आदि के ज्ञान रूप अवस्था में ज्ञान ही ज्ञान भरा है, शरीर–धन आदि रूप अनन्त परमाणु नहीं। अतः हे भव्यों उठाओ दृष्टि शरीर–धन–मकान–गाड़ी आदि स्कन्धों से और ध्यान करो केवल एक शुद्ध आत्मा का – बस यही धर्म है, समस्त दुःखों से छुटने का एकमत्र उपाय है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.०० बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ६.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे

- प्रत्येक लिखित प्रश्नपत्र ८० नं० का होगा। २० अंक कक्षाओं में उपस्थिति व कापी के आधार पर दिये जायेंगे। किसी भी समय की कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य है।
- ८ अप्रैल २०१८ को सम्पन्न वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–८६ का पारितोषिक वितरण भी ८ जुलाई २०१८ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।
- प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक जिनेन्द्र पूजन होगी, स्थान :- सरनीमल जैन मन्दिर, समय :- प्रात : 7:00 बजे

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–८७

दिनांक 9 सितम्बर्र, 2018 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

– जैन धर्म का रहस्य –

(१) मैं जीव हूँ मेरा कार्य मात्र जानना देखना है। इसलिये धर्म करने के लिये मुझे केवलज्ञान के अनुसार सही–सही जानने देखने की कला सीखनी है।

(२) ज्ञान की हर पर्याय में पुदगल बन्ध अर्थात् शरीर, धन–मकान् आदि का, उभय बन्ध अर्थात् कुटुम्ब–परिवार व देव गुरू आदि का ज्ञान होता है। यह शुद्ध चेतना की गाँठ है अर्थात् शुद्ध चैतन्य दर्पण ही है।

(३) लोक में जो पुदगल बन्ध, उभय बन्ध भरे पड़े हैं वे कोई वस्तु ही नहीं हैं। ये तो लोक के अनन्त जीव व अनन्तानन्त पुदगल परमाणु ही हैं। प्रत्येक जीव अपनी–२ सत्ता में विराजमान है। प्रत्येक परमाणु अपनी–२ सत्ता में विराजमान है।

ऐसा वस्तु का स्वरूप जानने के कारण ही अरहंत भगवान जिनके केवलज्ञानरूप दर्पण में विश्व के समस्त पदार्थ त्रिकालवर्ती पर्यायों सहित प्रतिबिम्बित हो रहे हैं, वे केवली भगवान केवल शुद्ध आत्मा का ही ध्यान करते हैं, विश्व का नहीं, इसलिये उनके मोह राग द्वेष उत्पन्न नहीं होते, क्योंकि अरहंत् भगवान अपने केवलज्ञान में प्रतिबिम्बित समस्त पदार्थों का केवलज्ञान में अभाव देखते हैं।

प्र०१. केवलज्ञान के अनुसार सही–सही जानने देखने की कला सीखने के लिये किसका ज्ञान आवश्यक है ?

उ० विश्व की व्यवस्था का व निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध का ज्ञान आवश्यक है।

प्र०२. श्री प्रवचनसार गाथा ९३ में विश्व किसे कहते है और विश्व की व्यवस्था किस प्रकार है ?

उ० इस विश्व मे जीव अनन्त हैं, पुदगल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुकी है, हो रहा है और होती रहेगा।

प्र०३. जीव द्रव्य किसको कहते हैं ?

उ०. जिसमें चेतना अर्थात ज्ञान–दर्शन रुप शक्ति है उसको जीव द्रव्य कहते हैं।

प्र०४. पुदगल द्रव्य किसको कहते हैं ?

उ०. जिसमें स्पर्श, रस, गंध और वर्ण ये गुण होते हैं उसको पुदगल द्रव्य कहते हैं।

प्र०५. पुदगल के कितने भेद हैं ?

उ०. दो भेद है, एक परमाणु दूसरा स्कन्ध।

प्र०६. परमाणु किसको कहते हैं ?

उ०. जिसका दूसरा विभाग नहीं हो सकता ऐसे सबसे छोटे पुदगल को परमाणु कहते हैं।

प्र०७. स्कंध किसको कहते हैं ?

उ०. दो या दो से अधिक परमाणुओं के बन्ध को स्कंध कहते हैं।

प्र०८. स्कन्ध के कितने भेद है ?
उ०. आहार वर्गणा, तैजस वर्गणा, भाषा वर्गणा, मनोवर्गणा, कार्मण वर्गणा इत्यादि २२ भेद है।

प्र०९. आहार वर्गणा किसको कहते है ?
उ०. जो पुद्गल स्कन्ध औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीर रुप से परिणमन करतो है उसको आहार वर्गणा कहते हैं।

प्र०१०. तैजस वर्गणा किसको कहते हैं ?
उ०. जिस वर्गणा से तैजस शरीर बनता है उसको तैजस वर्गणा कहते हैं।

प्र०११. भाषावर्गणा किसे कहते हैं ?
उ०. जो पुद्गल स्कन्ध शब्द रुप से परिणत होता है उसको भाषावर्गणा कहते हैं।

प्र०१२. मनोवर्गणा किसको कहते हैं ?
उ०. जिस पुद्गल स्कन्ध से अष्टदल कमल के आकार द्रव्यमन की रचना होती है उसको मनोवर्गणा कहते हैं।

प्र०१३. कार्माणवर्गणा किसको कहते हैं ?
उ०. जिस पुद्गल स्कन्ध से कार्माण शरीर बनता है उसको कार्माणवर्गणा कहते हैं।

प्र०१४. शरीर कितने हैं ?
उ०. शरीर पाँच हैं। १. औदारिक २. वैक्रियक ३. आहारक ४. तैजस ५. कार्माण।

प्र०१५. औदारिक शरीर किसको कहते हैं ?
उ०. मनुष्य और तिर्यंचों के स्थूल शरीर को औदारिक शरीर कहते हैं।

प्र०१६. वैक्रियक शरीर किसको कहते है ?
उ०. जो छोटे-बड़े पृथक-अपृथक आदि अनेक क्रियाओं को करे ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियक शरीर कहते हैं।

प्र०१७. आहारक शरीर किसको कहते हैं ?
उ०. आहारक ऋद्धिधारी छठे गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्त्वों में कोई शंका होने पर अथवा जिनालयादि की वन्दना करने के लिए, मस्तक से एक हाथ प्रमाण स्वच्छ और सफेद, सप्तधातु रहित पुरुषाकार जो पुतला निकलता है उसको आहारक शरीर कहते हैं।

प्र०१८. तैजस शरीर किसको कहते हैं ?
उ०. औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीरों में कान्ति उत्पन्न करने वाले शरीर को तैजस शरीर कहते है।

प्र०१९. कार्माण शरीर किसको कहते हैं ?
उ०. आठ कर्मो के समूह को कार्माण शरीर कहते हैं।

प्र०२०. पुदगल स्कंधों का ज्ञान क्यों कराया ?
उ० जीव के परिणाम के व पुद्गल के स्कंधरूप रूप पर्यायों में निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध बनते रहते हैं और सम्बन्ध कोई नहीं है-इसलिये ज्ञान कराया।

प्र०२१. निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध किसे कहते हैं ?
उ० उपादान स्वयं स्वतः कार्यरूप परिणमित होता है उस समय भावरूप या अभावरूप किस उचित निमित्त कारण का उस कार्य के साथ सम्बन्ध है यह बताने के लिए उस कार्य को नैमित्तिक कहते हैं। इस प्रकार भिन्न-भिन्न पदार्थों के स्वतंत्र सम्बन्ध को निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध कहते हैं।

प्र०२२. कुम्हार ने घड़ा बनाया-इस वाक्य पर निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध की परिभाषा लगाकर बताइये ?
उ० उपादान अर्थात् मिट्टी स्वयं स्वतः कार्यरूप अर्थात् घड़ेरूप परिणमित होती है उस समय भावरूप या अभावरूप किस उचित निमित्त कारण का अर्थात् ज्ञान, राग, हाथ, चाक आदि का उस कार्य के अर्थात् घड़ा बनने के साथ सम्बन्ध है-यह बताने के लिये उस कार्य को अर्थात् घड़ा बनने को नैमित्तिक कहते हैं। इस प्रकार भिन्न भिन्न पदार्थों के अर्थात् ज्ञान, राग, हाथ, चाक आदि के और घड़ा बनने के स्वतंत्र सम्बन्ध को निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध कहते हैं।

इससे क्या सिद्ध हुआ ?
जिस समय मिट्टी में घड़े रूप कार्य हुआ, उसी समय जीव के ज्ञानगुण में ज्ञानकार्य हुआ, जीव के चारित्रगुण में रागपरिणाम हुआ, हाथ रूप आहारवर्गणा में हाथ के हलन चलन रूप परिणाम हुआ, चाक आदि रूप आहारवर्गणा में चाक के हलन चलन रूप परिणाम हुआ। सबका द्रव्य क्षेत्र काल भाव अलग अलग है अतः एक का दूसरे से कोई सम्बन्ध नहीं है परन्तु सब कार्यों का समय एक है-इसे ही निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध कहते हैं।

प्र०२३. निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध और व्याप्य व्यापक सम्बन्ध में क्या अन्तर है ?
उ० १. निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध एक समय की दो स्वतंत्र पर्यायों के बीच होता है।
२. व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध एक द्रव्य का उसकी पर्यायों के साथ होता है।

प्र०२४. निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध और व्याप्य व्यापक सम्बन्ध को कुछ उदाहरण देकर समझाइये ?
उ० १. मिट्टी और घड़े में व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध है। कुम्हार का ज्ञान, राग, हाथ चाक आदि और घड़े में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है।
२. सोना और आभुषण में व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध है। सुनार, औजार व आभूषण में निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है।
३. आटा और रोटी में व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध है। बाई, हाथ, तवा, चकला आदि और रोटी में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है।
४. गाली सुनकर क्रोध आया-इसमें आत्मा के चारित्रगुण और क्रोधपरिणाम में व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध है। अन्यजीव, गाली के शब्द, कान व क्रोध परिणाम में निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है।
५. मैंने मुँह से शब्द बोला-इसमें भाषावर्गणा और शब्द कार्य में व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध है। आत्मा, शरीर, मुँह व शब्द कार्य में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है।

प्र०२५. एक ही समय में आत्मा और शरीरादि परद्रव्यों का कार्य भिन्न-भिन्न किस प्रकार हो रहा है ?
उ० एक ही समय में आत्मा और शरीरादि परद्रव्यों का कार्य भिन्न-भिन्न किस प्रकार होते है इसके लिये मैंने मुँह से शब्द बोला का चार्ट ध्यान से देखो

त्रिकाली उपादान कारण	ज्ञान गुण	चारित्र गुण	मुंहरूप आहारवर्गणा स्कंध	भाषावर्गणा
	व्यापक – सम्बन्ध १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	व्यापक – सम्बन्ध १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	व्यापक – सम्बन्ध १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	व्यापक – सम्बन्ध १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८
अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय क्षणिक उपादान कारण	व्याप्य ९	व्याप्य ९	व्याप्य ९	व्याप्य ९
उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण	१०	१०	१०	१०
(कार्य) उपादेय नैमित्तिक	ज्ञान हुआ	राग हुआ	मुँह हिला	शब्द हुआ

निमित्त – नैमित्तिक – सम्बन्ध

प्र०२६. उपरोक्त चार्ट से क्या रहस्य समझना चाहिये ?

उ० मैंने मुँह से शब्द बोला–ऐसा कहने में आता है। परन्तु ज्ञान में सम्यक निर्णय रहना चाहिये कि ज्ञान, राग, मुँह हिलना व शब्द का होना–ये चार कार्य एक ही समय में पृथक–पृथक सत्ता में हुये हैं –

१. ये जो शब्द हुआ है–ये शब्द नहीं है–लोक के भाषावर्गणा के अनन्त परमाणु हैं, मुझ चैतन्यमूर्ति से बाहर हैं।
२. ये जो मुँह अर्थात् शरीर है, ये शरीर नहीं है, लोक के आहार वर्गणा के अनन्त परमाणु हैं। मुझ चैतन्यमूर्ति से बाहर हैं।
३. ये जो राग है, ये राग जीव है क्योंकि जीव की ही सत्ता में है लेकिन जीव नहीं है क्योंकि राग में चेतनपना नहीं है। राग तो जीव के चारित्रगुण की सत् परिणति है, संसार का दुःख का कारण है।
४. ये जो शब्द का ज्ञान है, ये शब्द का ज्ञान नहीं है–ये ही अखण्ड चैतन्य ज्योतिस्वरूप निज भगवान आत्मा है क्योंकि इस शब्द के ज्ञान में ज्ञान ही ज्ञान भरा है। शब्द के एक भी परमाणु को मुझ ज्ञानस्वरूप में प्रवेश नहीं है।
५. आत्मा में धर्म कैसे हो ? सावधान! शब्द के ज्ञान रूप परिणमित निज अखण्ड चैतन्यमूर्ति को शब्द से भिन्न देखना ही नियम से सम्यक दर्शन है।
६. आत्मा में शब्द से भिन्न बुद्धि होते ही मैंने मुँह से शब्द बोला ऐसी मिथ्या बुद्धि निकल जाती है, और जीव को मोक्ष का मार्ग मिल जाता है।

नोट – निम्न वाक्यों पर उपरोक्त प्रश्न न. २५ व २६ के उत्तर के अनुसार अभ्यास करिये। (१) मैंने रोटी बनाई। (२) मैंने बिस्तर बिछाया। (३) यह मेरी दुकान है। (४) यह मेरा सोने का हार है। (५) मैंने किताब बनाई। (६) मैंने दवाई खाई। (७) यह मेरा लड़का है। (६) यह मेरी साड़ी है। (७) मैंने आँख से नृत्य देखा। (८) मैंने कान से शब्द सुना। (९) मैंने जीभ से रसगुल्ले का स्वाद लिया। (१०) मैं कपड़े धोता हूँ।

– उपसंहार –

मै वीना हूँ, मै उठती बैठती हूँ, यह मेरा मकान है, यह मेरा कुटुम्ब परिवार है, ये मेरे वस्त्र–आभूषण हैं, ये मेरे मित्र हैं, ये मेरे शत्रु हैं–ये सब कथन घी का घड़ा, पानी का लोटा, चीनी का डिब्बा, आदि के समान असत्य कथन है क्योंकि शरीर के उठने, बैठने, खाने–पीने रूप हर अवस्था में परमाणु ही परमाणु है, जीव नहीं, और मुझ ज्ञान दर्शन स्वरूप चैतन्य मूर्ति की शरीर–धन आदि के ज्ञान रूप अवस्था में ज्ञान ही ज्ञान भरा है, शरीर–धन आदि रूप अनन्त परमाणु नहीं। अतः हे भव्यां उठाओ दृष्टि शरीर–धन–मकान–गाड़ी आदि स्कन्धों से और ध्यान करो केवल एक शुद्ध आत्मा का – बस यही धर्म है, समस्त दुःखों से छुटने का एकमात्र उपाय है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः ९.०० से १०.३० व सांयः ६.१५ से ७.०० बजे
2. शनिवार — स्वाध्याय मन्दिर — प्रातः ९.३० से १०.३० बजे तक
4. मंगलवार — स्वाध्याय मन्दिर — सांय ०६.१५ से ०७.१५ बजे
5. बुधवार — श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार — सांय ०६.३० से ०७.१५ बजे

- वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–८६ का पारितोषिक वितरण भी ९ सितम्बर २०१८ दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें– श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', ३१ राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–८८

दिनांक 25 नवम्बर, 2018 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

<u>विशेष नोट –</u> आगामी परीक्षा में जैन धर्म के गौरव, छहढाला जैसी अमर कृति के रचनाकार, अध्यात्म प्रेमी, कविवर पं० श्री दौलतराम जी के जीवन परिचय से आपको उनके आत्मज्ञान से निकले ग्रन्थों में व भजनों में गुंथित तत्वज्ञान द्वारा परिचय कराया जायेगा।

– जैन धर्म का रहस्य –

(१) मैं जीव हूँ मेरा कार्य मात्र जानना देखना है। इसलिये धर्म करने के लिये मुझे केवलज्ञान के अनुसार सही–सही जानने देखने की कला सीखनी है।

(२) ज्ञान की हर पर्याय में पुद्गल बन्ध अर्थात् शरीर, धन–मकान् आदि का, उभय बन्ध अर्थात् कुटुम्ब–परिवार व देव गुरू आदि का ज्ञान होता है। यह शुद्ध चेतना की गाँठ है अर्थात् शुद्ध चैतन्य दर्पण ही है।

(३) लोक में जो पुद्गल बन्ध, उभय बन्ध भरे पड़े हैं वे कोई वस्तु ही नहीं हैं। ये तो लोक के अनन्त जीव व अनन्तानन्त पुद्गल परमाणु ही हैं। प्रत्येक जीव अपनी–२ सत्ता में विराजमान है। प्रत्येक परमाणु अपनी–२ सत्ता में विराजमान है।

ऐसा वस्तु का स्वरूप जानने के कारण ही अरहंत भगवान जिनके केवलज्ञानरूप दर्पण में विश्व के समस्त पदार्थ त्रिकालवर्ती पर्यायों सहित प्रतिबिम्बित हो रहे हैं, वे केवली भगवान केवल शुद्ध आत्मा का ही ध्यान करते हैं, विश्व का नहीं, इसलिये उनके मोह राग द्वेष उत्पन्न नहीं होते, क्योंकि अरहंत भगवान अपने केवलज्ञान में प्रतिबिम्बित समस्त पदार्थों का केवलज्ञान में अभाव देखते हैं।

ज्ञान दर्पण

धर्म धर्म सब ही करते हैं, ज्ञान धर्म है न जानें।
ज्ञान स्वभाव को पहचाने तो ही निज वैभव प्रगटावें।
दर्पण में दिखती ज्वाला, ये ज्वाला नहीं है दर्पण है।
ज्वाला तो है उष्णस्वरूपी, दर्पण एकदम शीतल है।
यों चेतन दर्पण निज रस से विश्व प्रकाशित करता है।
लोकाकाश में विश्व व्यवस्थित चेतन लोक तो न्यारा है।
यों भेदज्ञान के बल से चेतन निज में निज को पधरावें।
अनुकूल दिखे संयोग बहुल, चेतन न जड़ में हर्षावें।
चेतन की भगवती प्रज्ञा ही मुकति प्रसव की जननी है।
चर्तुगति में परिभ्रमणवश अनन्त दुःखों की हरनी है।

प्र०१. केवलज्ञान के अनुसार सही–सही जानने देखने की कला सीखने के लिये किसका ज्ञान आवश्यक है ?

उ० विश्व की व्यवस्था का व निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध का ज्ञान आवश्यक है।

प्र०२. श्री प्रवचनसार गाथा ९३ में विश्व किसे कहते है और विश्व की व्यवस्था किस प्रकार है ?

उ० इस विश्व मे जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है

और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्र०३. जीव द्रव्य किसको कहते हैं ?
उ०. जिसमें चेतना अर्थात ज्ञान–दर्शन रुप शक्ति है उसको जीव द्रव्य कहते हैं।

प्र०४. पुद्गल द्रव्य किसको कहते हैं ?
उ०. जिसमें स्पर्श, रस, गंध और वर्ण ये गुण होते हैं उसको पुद्गल द्रव्य कहते हैं।

प्र०५. पुद्गल के कितने भेद हैं ?
उ०. दो भेद है, एक परमाणु दूसरा स्कन्ध।

प्र०६. परमाणु किसको कहते हैं ?
उ०. जिसका दूसरा विभाग नही हो सकता ऐसे सबसे छोटे पुद्गल को परमाणु कहते हैं।

प्र०७. स्कंध किसको कहते हैं ?
उ०. दो या दो से अधिक परमाणुओं के बन्ध को स्कंध कहते हैं।

प्र०८. स्कन्ध के कितने भेद हैं ?
उ०. आहार वर्गणा, तैजस वर्गणा, भाषा वर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माण वर्गणा इत्यादि २२ भेद है।

प्र०९. आहार वर्गणा किसको कहते हैं ?
उ०. जो पुद्गल स्कन्ध औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीर रुप से परिणमन करता है उसको आहार वर्गणा कहते हैं।

प्र०१०. तैजस वर्गणा किसको कहते हैं ?
उ०. जिस वर्गणा से तैजस शरीर बनता है उसको तैजस वर्गणा कहते हैं।

प्र०११. भाषावर्गणा किसे कहते हैं ?
उ०. जो पुद्गल स्कन्ध शब्द रुप से परिणत होता है उसको भाषावर्गणा कहते हैं।

प्र०१२. मनोवर्गणा किसको कहते हैं ?
उ०. जिस पुद्गल स्कन्ध से अष्टदल कमल के आकार द्रव्यमन की रचना होती है उसको मनोवर्गणा कहते हैं।

प्र०१३. कार्माणवर्गणा किसको कहते हैं ?
उ०. जिस पुद्गल स्कन्ध से कार्माण शरीर बनता है उसको कार्माणवर्गणा कहते हैं।

प्र०१४. शरीर कितने हैं ?
उ०. शरीर पाँच हैं। १. औदारिक २. वैक्रियक ३. आहारक ४. तैजस ५. कार्माण।

प्र०१५. औदारिक शरीर किसको कहते हैं ?
उ०. मनुष्य और तिर्यंचों के स्थूल शरीर को औदारिक शरीर कहते हैं।

प्र०१६. वैक्रियक शरीर किसको कहते है ?
उ०. जो छोटे–बड़े पृथक–अपृथक आदि अनेक क्रियाओं को करे ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियक शरीर कहते हैं।

प्र०१७. आहारक शरीर किसको कहते हैं ?
उ०. आहारक ऋद्धिधारी छठे गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्वों में कोई शंका होने पर अथवा जिनालयादि की वन्दना करने के लिए, मस्तक से एक हाथ प्रमाण स्वच्छ और सफेद, सप्तधातु रहित पुरुषाकार जो पुतला निकलता है उसको आहारक शरीर कहते हैं।

प्र०१८. तैजस शरीर किसको कहते हैं ?
उ०. औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीरों में कान्ति उत्पन्न करने वाले शरीर को तैजस शरीर कहते है।

प्र०१९. कार्माण शरीर किसको कहते हैं ?
उ०. आठ कर्मों के समूह को कार्माण शरीर कहते हैं।

प्र०२०. पुदगल स्कंधों का ज्ञान क्यों कराया ?
उ० जीव के परिणाम के व पुदगल के स्कंधरूप रूप पर्यायों में निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध बनते रहते हैं और सम्बन्ध कोई नहीं है–इसलिये ज्ञान कराया।

प्र०२१. निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध और व्याप्य व्यापक सम्बन्ध में क्या अन्तर है ?
उ० १. निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध एक समय की दो स्वतंत्र पर्यायों के बीच होता है।
२. व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध एक द्रव्य का उसकी पर्यायों के साथ होता है।

प्र०२२. निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध और व्याप्य व्यापक सम्बन्ध को कुछ उदाहरण देकर समझाइये ?
उ० १. मिट्टी और घड़े में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। कुम्हार का ज्ञान, राग, हाथ चाक आदि और घड़े में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है।
२. सोना और आभूषण में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। सुनार, औजार व आभूषण में निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध है।
३. आटा और रोटी में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। बाई, हाथ, तवा, चकला आदि और रोटी में निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है।
४. गाली सुनकर क्रोध आया–इसमें आत्मा के चारित्रगुण और क्रोधपरिणाम में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। अन्यजीव, गाली के शब्द, कान व क्रोध परिणाम में निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध है।
५. मैंने मुँह से शब्द बोला–इसमें भाषावर्गणा और शब्द कार्य में व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध है। आत्मा, शरीर, मुँह व शब्द कार्य में निमित नैमित्तिक सम्बन्ध है।

प्र०२३. एक ही समय में आत्मा और शरीरादि परद्रव्यों का कार्य भिन्न–भिन्न किस प्रकार हो रहा है ?
उ० एक ही समय में आत्मा और शरीरादि परद्रव्यों का कार्य भिन्न–भिन्न किस प्रकार होते हैं इसके लिये मैंने मुँह से शब्द बोला का चार्ट ध्यान से देखो

त्रिकाली उपादान कारण	ज्ञान गुण	चारित्र गुण	मुंहरूप आहारवर्गणा स्कंध	भाषावर्गणा
	व्यापक – सम्बन्ध १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	व्यापक – सम्बन्ध १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	व्यापक – सम्बन्ध १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	व्यापक – सम्बन्ध १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८
अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय क्षणिक उपादान कारण	व्याप्य ६	व्याप्य ६	व्याप्य ६	व्याप्य ६
उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण	१०	१०	१०	१०
(कार्य) उपादेय नैमित्तिक	ज्ञान हुआ	राग हुआ	मुँह हिला	शब्द हुआ

निमित्त – नैमित्तिक – सम्बन्ध

प्र०२४. उपरोक्त चार्ट से क्या रहस्य समझना चाहिये ?

उ० मैंने मुँह से शब्द बोला–ऐसा कहने में आता है। परन्तु ज्ञान मे सम्यक निर्णय रहना चाहिये कि ज्ञान, राग, मुँह हिलना व शब्द का होना–ये चार कार्य एक ही समय में पृथक–पृथक सत्ता में हुये हैं –

१. ये जो शब्द हुआ है–ये शब्द नहीं है–लोक के भाषावर्गणा के अनन्त परमाणु हैं, मुझ चैतन्यमूर्ति से बाहर हैं।
२. ये जो मुँह अर्थात् शरीर है, ये शरीर नहीं है, लोक के आहार वर्गणा के अनन्त परमाणु हैं। मुझ चैतन्यमूर्ति से बाहर हैं।
३. ये जो राग है, ये राग जीव है क्योंकि जीव की ही सत्ता में है लेकिन जीव नहीं है क्योंकि राग में चेतनपना नहीं है। राग तो जीव के चारित्रगुण की सत् परिणति है, संसार का दुःख का कारण है।
४. ये जो शब्द का ज्ञान है, ये शब्द का ज्ञान नहीं है–ये ही अखण्ड चैतन्य ज्योतिस्वरूप निज भगवान आत्मा है क्योंकि इस शब्द के ज्ञान में ज्ञान ही ज्ञान भरा है। शब्द के एक भी परमाणु को मुझ ज्ञानस्वरूप में प्रवेश नहीं है।
५. आत्मा में धर्म कैसे हो ? सावधान! शब्द के ज्ञान रूप परिणमित निज अखण्ड चैतन्यमूर्ति को शब्द से भिन्न देखना ही नियम से सम्यक दर्शन है।
६. आत्मा में शब्द से भिन्न बुद्धि होते ही मैंने मुँह से शब्द बोला ऐसी मिथ्या बुद्धि निकल जाती है, और जीव को मोक्ष का मार्ग मिल जाता है।

नोट – निम्न वाक्यों पर उपरोक्त प्रश्न न. २५ व २६ के उत्तर के अनुसार अभ्यास करिये। (१) मैंने रोटी बनाई। (२) मैंने बिस्तर बिछाया। (३) यह मेरी दुकान है। (४) यह मेरा सोने का हार है। (५) मैंने किताब बनाई। (६) मैंने दवाई खाई। (७) यह मेरा लड़का है। (६) यह मेरी साड़ी है। (७) मैंने आँख से नृत्य देखा। (८) मैंने कान से शब्द सुना। (९) मैंने जीभ से रसगुल्ले का स्वाद लिया। (१०) मैं कपड़े धोता हूँ।

– उपसंहार –

मै वीना हूँ, मै उठती बैठती हूँ, यह मेरा मकान है, यह मेरा कुटुम्ब परिवार है, ये मेरे वस्त्र–आभूषण है, ये मेरे मित्र हैं ये मेरे शत्रु है–ये सब कथन घी का घड़ा, पानी का लोटा, चीनी का डिब्बा, आदि के समान असत्य कथन है क्योंकि शरीर के उठने, बैठने, खाने–पीने रूप हर अवस्था में परमाणु ही परमाणु है, जीव नहीं, और मुझ ज्ञान दर्शन स्वरूप चैतन्य मूर्ति की शरीर–धन आदि के ज्ञान रूप अवस्था में ज्ञान ही ज्ञान भरा है, शरीर–धन आदि रूप अनन्त परमाणु नहीं। अतः हे भव्य! उठाओ दृष्टि शरीर–धन–मकान–गाड़ी आदि स्कन्धों से और ध्यान करो केवल एक शुद्ध आत्मा का – बस यही धर्म है, समस्त दुःखों से छुटने का एकमात्र उपाय है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 9.00 से 10.30 व सांयः 6.15 से 7.00 बजे
2. शनिवार — स्वाध्याय मन्दिर — प्रातः 9.30 से 10.30 बजे तक
4. मंगलवार — स्वाध्याय मन्दिर — सांय 06.15 से 07.15 बजे
5. बुधवार — श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार — सांय 06.30 से 07.15 बजे

- वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-87 का पारितोषिक वितरण भी 25 नवम्बर 2018 दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', 31 राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं. श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-८८

दिनांक 27 जनवरी, 2019 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

विशेष नोट – आगामी परीक्षा मे जैन धर्म के गौरव, श्री समयसार प्रवचनसार आदि परमागमों की अद्भुत टीकाकार आचार्य सम्राट श्री अमृतचन्द्राचार्य के जीवन परिचय से, उनके आत्मज्ञान से निकले पुरूषार्थ सिद्धिउपाय आदि ग्रन्थों से व श्री समयसार के कलशों में गुंथित तत्वज्ञान द्वारा आपको परिचय कराया जायेगा।

– जैन धर्म का रहस्य –

(१) मैं जीव हूँ मेरा कार्य मात्र जानना देखना है। इसलिये धर्म करने के लिये अर्थात् मैं वीना हूँ इस मोह का नाश करने के लिये मुझे केवलज्ञान के अनुसार शरीर धन आदि को सही–सही जानने देखने की कला सीखनी है।

(२) मैं जीव हूँ, मेरा कार्य मात्र जानना देखना है, लेकिन अनादिकाल से मैं जीव हूँ और मेरा कार्य मात्र जानना देखना है– ऐसा पता न होने के कारण, मै वीना हूँ, उठना बैठना, खाना पीना, व्यापार करना, घर गृहस्थी के काम–सब मेरा कार्य है–यह भ्रम चला आ रहा है। इस भ्रम से अज्ञानी जीव दुःखी है।

(३) जीव तो अनादिअनन्त ज्ञान स्वरूप ही है, जानने के अतिरिक्त मुझ आत्मा कुछ नहीं कर सकता। अतः मै वीना हूँ, उठना–बैठना, खाना पीना आदि मेरे कार्य हैं–इस भ्रमजनित दुःखों का नाश करने के लिये अर्थात् धर्म करने के लिये मुझे शरीर, धन, मकान आदि स्कन्धों को केवलज्ञान के अनुसार सही सही देखने जानने की कला सीखनी पड़ेगी।

'केवलज्ञान के अनुसार भेदज्ञान'

१. तराजु के एक पलड़े में मुझ जीव और दूसरे पलड़े में वीना शरीर।
२. मुझ जीव का अनादिअनन्त एक आकार है। मुझ आत्मा के एक आकार मे अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुण, ज्ञान–दर्शन–श्रद्धा, चारित्र आदि अनन्त विशेष गुण, एक व्यंजन पर्याय और अनन्त अर्थपर्यायें–ये मुझ आत्मा के एक आकार की अनादिअनन्त सत्ता है।
३. वीना शरीर का एक आकार नहीं है क्योंकि जितने परमाणु हैं उतने एक एक पृथक आकार है। प्रत्येक परमाणु के एक प्रदेशी आकार में अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुण, स्पर्श रस गंध वर्ण आदि अनन्त विशेष गुण, एक व्यंजन पर्याय और अनन्त अर्थपर्यायें–ये प्रत्येक परमाणु के आकार की अनादिअनन्त सत्ता है।
४. इस प्रकार केवलज्ञान के अनुसार निज आत्मा की और वीना शरीर अर्थात् अनन्त परमाणुओं की पृथक पृथक सत्ता केवलज्ञान के अनुसार जानते ही मै वीना हूँ–इस मोह का नाश होकर धर्म की प्राप्ति हो जाती है अर्थात् जिन मन्दिर मे विराजमान अरहंत परमात्मा के समान अर्न्तदृष्टि हो जाती है।

प्र०१. यह मेरा मकान है–इस मोह के नाश के लिये भेदज्ञान किस प्रकार करना चाहिये ?

उ० (१) तराजु के एक पलड़े में मुझ आत्मा और तराजू के दूसरे पलड़े मे मकान।

(२) मुझ आत्मा का अनादिअनन्त एक आकार है। मकान का एक आकार नहीं है क्योंकि जितने परमाणु है उतने एक एक प्रदेशी आकार है। मुझ आत्मा के एक आकार मे देखने जानने की शक्ति है। अनन्त परमाणु आकाश के एक क्षेत्र मे मकान के आकार मे इकट्ठे है–ये इन परमाणुओं की पुद् शक्ति है और मकान गिर गया–ये इन परमाणुओं की गल शक्ति है।

(३) मुझ आत्मा का एक आकार और एक परमाणु का एक आकार– ये अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न–भिन्न हैं। मुझ आत्मा और प्रत्येक परमाणु–ये अनादिनिधन वस्तुयें अपनी अपनी मर्यादासहित परिणमित होती है। मुझ आत्मा और प्रत्येक परमाणु–ये अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती।

(४) इस प्रकार निज आत्मा और प्रत्येक परमाणु का पृथक पृथक स्वरूप केवलज्ञान के अनुसार जानते ही निर्णय हो जाता है कि इस लोक मे जानने देखने के स्वभाव वाला मुझ आत्मा है, लोक में अनन्त परमाणु हैं, परन्तु मकान तो कोई वस्तु ही नहीं है– अर्थात् यह मेरा मकान है–इस भ्रम का नाश होकर धर्म की प्राप्ति हो जाती है अर्थात् जिनमन्दिर मे विराजमान अरहंत परमात्मा के समान अर्न्तदृष्टि हो जाती है।

प्र०२. क्या मुझ आत्मा शरीर, धन, मकान, रोटी आदि की व्यवस्था नहीं करता ?

उ०. बिल्कुल नहीं करता। क्योंकि अरहंत परमात्मा ने अपने केवलज्ञान मे इस विश्व की व्यवस्था निम्न प्रकार देखी है –

(१) इस विश्व मे जीव अनन्त है, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण है, प्रत्येक गुण मे जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण मे एक ही समय मे एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

(२) इस प्रकार केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त परद्रव्यो में और स्वद्रव्य मे कुछ भी करना नहीं रहा।

(३) तो फिर क्या करना ? करने का नहीं–मात्र जानने देखने के स्वभाव वाले मुझ जीव को शरीर, धन, मकान, रोटी, साड़ी, हार, गाड़ी आदि पुद्गल स्कन्धों का केवलज्ञान के अनुसार सही सही स्वरूप जानना पड़ेगा अर्थात् शरीर आदि से भिन्न शुद्ध चैतन्य का ध्यान करना–तो शरीरादि परद्रव्यों की कर्त्ता बुद्धि नष्ट हो जाती है।

प्र०३. ज्ञाता धारा कैसे प्रगट हो, कर्त्ता बुद्धि कैसे छुटे ?

उ०. – शब्द के ज्ञानरूप परिणमित मुझ चैतन्यमूर्ति शब्द से सर्वथा भिन्न अशब्द स्वभावी ज्ञानमात्र है–ऐसा जानते ही ज्ञाता धारा प्रगट हो जाती है।

– वर्ण के ज्ञानरूप परिणमित मुझ चैतन्यमूर्ति पांच प्रकार के रंग व भिन्न भिन्न आकारों से सर्वथा शून्य अवर्णस्वभावी ज्ञानमात्र है–ऐसा जानते ही ज्ञाता धारा प्रगट हो जाती है।

– गंध के ज्ञान रूप परिणमित मुझ चैतन्यमूर्ति सुगन्ध दुर्गन्ध से शून्य अगंधस्वभावी ज्ञानमात्र है। –ऐसा जानते ही ज्ञाता धारा प्रगट हो जाती है।

– खट्टे मीठे रस के ज्ञानरूप परिणमित मुझ चैतन्यमूर्ति खट्टे मीठे आदि पांच प्रकार के रस से रहित अरसस्वभावी ज्ञानमात्र है। –ऐसा जानते ही ज्ञाता धारा प्रगट हो जाती है।

– हल्का भारी आदि आठ प्रकार के स्पर्श के ज्ञानरूप परिणमित मुझ चैतन्यमूर्ति आठ प्रकार के स्पर्श से रहित अस्पर्श स्वभावी ज्ञानमात्र है। –ऐसा जानते ही ज्ञाता धारा प्रगट हो जाती है।

– अनेक प्रकार के रागादि विकारो के ज्ञानरूप परिणमित मुझ चैतन्यमूर्ति रागादि विकारों से रहित निर्विकारी चेतना मात्र है। ऐसा जानते ही ज्ञाता धारा प्रगट हो जाती है।

प्र०४. एक ही समय मे आत्मा और शरीरादि परद्रव्यो का कार्य भिन्न–भिन्न किस प्रकार हो रहा है ?

उ० एक ही समय में आत्मा और शरीरादि परद्रव्यों का कार्य भिन्न–भिन्न किस प्रकार होते हैं इसके लिये मैने मुँह से शब्द बोला का चार्ट ध्यान से देखो

त्रिकाली उपादान कारण	ज्ञान गुण	चारित्र गुण	मुंहरूप आहारवर्गणा स्कंध	भाषावर्गणा
	सामान्य – व्यापक १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	सामान्य – व्यापक १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	सामान्य – व्यापक १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	सामान्य – व्यापक १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८
अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय क्षणिक उपादान कारण	व्याप्य ६	व्याप्य ६	व्याप्य ६	व्याप्य ६
उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण	१०	१०	१०	१०
(कार्य) उपादेय नैमित्तिक	ज्ञान हुआ	राग हुआ	मुँह हिला	शब्द हुआ

निमित्त – नैमित्तिक – सम्बन्ध

प्र०५. उपरोक्त चार्ट से क्या रहस्य समझना चाहिये ?

उ० मैने मुँह से शब्द बोला–ऐसा कहने में आता है। परन्तु ज्ञान मे सम्यक निर्णय रहना चाहिये कि ज्ञान, राग, मुँह हिलना व शब्द का होना–ये चार कार्य एक ही समय मे पृथक–पृथक सत्ता में हुये हैं –

१. ये जो शब्द हुआ है–ये शब्द नहीं है–लोक के भाषावर्गणा के अनन्त परमाणु हैं, मुझ चैतन्यमूर्ति से बाहर हैं।

२. ये जो मुँह अर्थात् शरीर है, ये शरीर नहीं है, लोक के आहारवर्गणा के अनन्त परमाणु हैं। मुझ चैतन्यमूर्ति से बाहर हैं।

३. ये जो राग है, ये राग जीव है क्योंकि जीव की ही सत्ता मे है लेकिन जीव नहीं है क्योंकि राग में चेतनपना नहीं है। राग तो जीव के चारित्रगुण की सत् परिणति है, संसार का दुःख का कारण है। चैतन्यमूर्ति से बाहर हैं।

४. ये जो शब्द का ज्ञान है, ये शब्द का ज्ञान नहीं है–ये ही अखण्ड चैतन्य ज्योतिस्वरूप निज भगवान आत्मा है क्योंकि इस शब्द के ज्ञान मे ज्ञान ही ज्ञान भरा है। शब्द के एक भी परमाणु का मुझ ज्ञानस्वरूप में प्रवेश नहीं है।

५. आत्मा में धर्म कैसे हो ? सावधान! शब्द के ज्ञान रूप परिणमित निज अखण्ड चैतन्यमूर्ति को शब्द से भिन्न देखना ही नियम से सम्यकदर्शन है।

६. आत्मा मे शब्द से भिन्न बुद्धि होते ही मैने मुँह से शब्द बोला ऐसी मिथ्या बुद्धि निकल जाती है, और जीव को मोक्ष का मार्ग मिल जाता है।

नोट – निम्न वाक्यों पर उपरोक्त प्रश्न न. २५ व २६ के उत्तर के अनुसार अभ्यास करिये। (१) मैने रोटी बनाई। (२) मैने बिस्तर बिछाया। (३) यह मेरी दुकान है। (४) यह मेरा सोने का हार है। (५) मैंने किताब बनाई। (६) मैंने दवाई खाई। (७) यह मेरा लड़का है। (६) यह मेरी साडी है। (७) मैने आँख से नृत्य देखा। (८) मैंने कान से शब्द सुना। (९) मैने जीभ से रसगुल्ले का स्वाद लिया। (१०) मैं कपड़े धोता हूँ।

– उपसंहार –

मै वीना हूँ मैं उठती बैठती हूँ, यह मेरा मकान है, यह मेरा कुटुम्ब परिवार है, ये मेरे वस्त्र–आभूषण हैं, ये मेरे मित्र हैं, ये मेरे शत्रु है–ये सब मुझ आत्मा में भ्रम है क्योंकि शरीर के उठने, बैठने, खाने–पीने रूप हर अवस्था में परमाणु ही परमाणु है, मुझ ज्ञान दर्शन स्वरूप चैतन्य मूर्ति नहीं। अतः हे चैतन्यमूर्ति! उठाओं दृष्टि शरीर–धन–मकान–गाड़ी आदि स्कन्धों से और ध्यान करो केवल एक शुद्ध आत्मा का – बस यही धर्म है, समस्त भ्रमजनित दुःखों से छुटने का एकमात्र उपाय है।

'ज्ञान दर्पण'

ओ जाननहारे, जान जगत है असार,
तीन लोक अरू तीन काल में शुद्धातम इक सार।।

पुद् अरू गल स्वभाव से ही ये परमाणु परिणमते,
बंधते बिखरते क्षण क्षण में और दिखते एकाकार।।
ओ जाननहारे जान जगत है असार।।१।।

मनोहर अर अमनोहर वस्तु, विध विध रूप बदलते,
हर्ष विषाद करे जीव मिथ्या, अज्ञानता अपार।
ओ जाननहारे जान जगत है असार।।२।।

चेतन दर्पण निज रस से ही, तन धन प्रकाशित करता,
भेदज्ञान बिन निज को भूला, महिमा जड की अपार।
ओ जाननहारे जान जगत है असार।।३।।

मैं इक चेतन सदा अरूपी, परमाणु सब न्यारे,
इम जानि जड महिमा तज, ध्या निज चेतन शिवकार।
ओ जाननहारे जान जगत है असार।।४।।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 9.00 से 10.30 व सांयः 6.00 से 7.00 बजे
2. शनिवार — स्वाध्याय मन्दिर — प्रातः 9.30 से 10.30 बजे तक
4. मंगलवार — स्वाध्याय मन्दिर — सांय 06.00 से 07.00 बजे
5. बुधवार — श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार — सांय 06.00 से 07.00 बजे
6. प्रतिदिन — जैन धर्मशाला मन्दिर — प्रातः 07.30 से 08.00 बजे
7. सोमवार से शनिवार — जैन कालोनी — सांय 07.00 से 08.00 बजे तक
8. रविवार — स्वाध्याय मन्दिर — प्रातः 09.00 से 10.00 बजे तक
9. माह का प्रथम सोमवार 52 मालवीय रोड, श्रीमती आशु जैन — प्रातः 11.15 से 12.15 तक

- वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-88 का पारितोषिक वितरण भी 27 जनवरी 2019 दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', 31 राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–६०

दिनांक 7 अप्रैल, 2019 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

विशेष नोट – आगामी परीक्षा में जैन धर्म के गौरव, गुरूवर्य पं० गोपाल दास बरैया जी के जीवन परिचय से, उनके आत्मज्ञान से निकले अद्भुत तत्वज्ञान द्वारा आपको परिचय कराया जायेगा।

– जैन धर्म का रहस्य –

(१) मैं जीव हूँ मेरा कार्य मात्र जानना देखना है। इसलिये धर्म करने के लिये अर्थात् मैं वीना हूँ इस मोह का नाश करने के लिये मुझे केवलज्ञान के अनुसार शरीर धन आदि को सही–सही जानने देखने की कला सीखनी है।

(२) मैं जीव हूँ, मेरा कार्य मात्र जानना देखना है, लेकिन अनादिकाल से मैं जीव हूँ और मेरा कार्य मात्र जानना देखना है– ऐसा पता न होने के कारण, मैं वीना हूँ, उठना बैठना, खाना पीना, व्यापार करना, घर गृहस्थी के काम–सब मेरा कार्य है–यह भ्रम चला आ रहा है। इस भ्रम से अज्ञानी जीव दुःखी है।

(३) जीव तो अनादिअनन्त ज्ञान स्वरूप ही है, जानने के अतिरिक्त मुझ आत्मा कुछ नहीं कर सकता। अतः मैं वीना हूँ, उठना–बैठना, खाना पीना आदि मेरे कार्य है–इस भ्रमजनित दुःखों का नाश करने के लिये अर्थात् धर्म करने के लिये मुझे शरीर, धन, मकान आदि स्कन्धों को केवलज्ञान के अनुसार सही सही देखने जानने की कला सीखनी पड़ेगी।

'केवलज्ञान के अनुसार भेदज्ञान'

१. तराजू के एक पलड़े में मुझ जीव और दूसरे पलड़े मे वीना शरीर। मुझ जीव का अनादिअनन्त एक आकार है। वीना शरीर का एक आकार नहीं है क्योंकि जितने परमाणु हैं उतने एक एक पृथक आकार है।

२. इस प्रकार केवलज्ञान के अनुसार निज आत्मा की और वीना शरीर अर्थात् अनन्त परमाणुओं की पृथक पृथक सत्ता केवलज्ञान के अनुसार जानते ही मैं वीना हूँ–ऐसा मोह का नाश होकर धर्म की प्राप्ति हो जाती है अर्थात् जिन मन्दिर में विराजमान अरहंत परमात्मा के समान अन्तर्दृष्टि हो जाती है।

प्र०१. द्रव्य किसे कहते है ?
उ० गुणों के समूह को द्रव्य कहते है।

प्र०२. गुण किसे कहते हैं ? गुण के कितने भेद हैं ?
उ०. जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागों और उसकी सर्व अवस्थाओं में रहते है, उन्हें गुण कहते है। गुण के दो भेद है – सामान्य और विशेष।

प्र०३. सामान्य गुण किसे कहते हैं? विशेषगुण किसे कहते हैं ?
उ० जो सब द्रव्यों में समानरूप से रहते हैं, उन्हें सामान्यगुण कहते हैं। जो सब द्रव्यों में न रहकर अपने–अपने द्रव्य में रहते हैं, उन्हें विशेषगुण कहते हैं।

प्र०४. सामान्यगुण कितने हैं ?
उ० सामान्यगुण अनेक हैं, लेकिन उनमें छह मुख्य हैं।

प्र०५. अस्तित्वगुण किसे कहते हैं ?
उ०. जिस शक्ति के कारण द्रव्य का कभी नाश नहीं होता है, उसे अस्तित्वगुण कहते हैं।

प्र०६. वस्तुत्व किसे कहते हैं ?
उ०. जिस शक्ति के कारण द्रव्य में अर्थक्रिया होती है, उसे वस्तुत्वगुण कहते हैं।

प्र०७. द्रव्यत्वगुण किसे कहेते हैं?
उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य सर्वदा एक सा नहीं रहता और जिसकी पर्यायें (दशाऐं) हमेशा बदलती रहती हैं, उसे द्रव्यत्वगुण कहते हैं।

प्र०८. प्रमेयत्वगुण किसे कहते हैं ?
उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य किसी न किसी के ज्ञान का विषय होता है, उसे प्रमेयत्वगुण कहते हैं।

प्र०९. अगुरूलघुत्वगुण किसे कहते हैं ?
उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य में द्रव्यपना कायम रहता है अर्थात् एक द्रव्य दूसरे द्रव्यरूप नहीं परिणमता और एक गुण दूसरे गुणरूप नहीं परिणमता और द्रव्य में रहनेवाले अनन्त गुण बिखर कर अलग-अलग नहीं होते हैं, उसे अगुरूलघुत्वगुन कहते हैं।

प्र०१०. प्रदेशत्वगुण किसे कहते हैं ?
उ०. जिस शक्ति के कारण द्रव्य का कोई न कोई आकार अवश्य होता है, उसे प्रदेशत्वगुण कहते हैं। प्रदेशत्वगुण के कार्य को व्यंजन पर्याय कहते हैं।

प्र०११. द्रव्यों के कितने भेद हैं ?
उ०, द्रव्यों के छह भेद हैं – जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और कालद्रव्य।

प्र०१२. जीवद्रव्य किसे कहेते हैं?
उ० जिनमें चेतना आदि गुण पाये जाते हैं, उन्हें जीवद्रव्य कहते हैं।

प्र०१३. पुद्गलद्रव्य किसे कहते हैं ?
उ० जिनमें स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण आदि गुण पाये जाते हैं, उन्हें पुद्गलद्रव्य कहते हैं।

प्र०१४. पुद्गल के कितने भेद हैं ?
उ० पुद्गल के दो भेद हैं-परमाणु और स्कन्ध।

प्र०१५. परमाणु किसे कहते हैं ? स्कन्ध किसे कहते हैं ?
उ०. जिसका दूसरा विभाग नहीं हो सकता-ऐसे सबसे सूक्ष्म पुद्गल को परमाणु कहते हैं, यही वास्तव में पुद्गलद्रव्य है। अनेक परमाणुओं के बन्ध को स्कन्ध कहते हैं।

प्र०१६. बन्ध किसे कहेते हैं?
उ० अनेक वस्तुओं में एकपने का ज्ञान कराने वाले सम्बन्ध विशेष को बन्ध कहते हैं।

प्र०१७. स्कन्ध के कितने भेद हैं ?
उ० स्कन्ध के आहारवर्गणा, तैजसवर्गणा, भाषावर्गणा, मनो-वर्गणा, कार्मणवर्गणा आदि २३ भेद हैं।

प्र०१८. आहारवर्गणा किसे कहते हैं ?
उ० जो पुद्गलस्कन्ध या वर्गणा, औदारिक, वैक्रियिक और आहारक-इन तीन शरीररूप तथा श्वासोच्छ्वासरूप परिणमित होते हैं, उन्हें आहारवर्गणा कहते हैं।

प्र०१९. औदारिक किसे कहते हैं ?
उ०. मनुष्य और तिर्यंच के स्थूल शरीर को औदारिक शरीर कहते हैं।

प्र०२०. वैक्रियिक शरीर किसे कहते हैं ?
उ०. जो छोटे-बड़े, एक-अनेक, पृथक-अपृथक आदि विचित्र क्रियाओं को कर सकता है-ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियिक शरीर कहते हैं।

प्र०२१. आहारक शरीर किसे कहते हैं?
उ० छठवें गुणस्थानवर्ती मुनि को जिनालय आदि की वन्दना करने हेतु अथवा तत्वों के सम्बन्ध में कोई शंका होने पर केवली या श्रुतकेवली के पास जाने के लिए मस्तक में से जो एक हस्त का स्वच्छ, सफेद, सप्तधातुरहित, पुरुषाकार पुतला निकलता है, उसे आहारक शरीर कहते हैं।

प्र०२२. तैजसवर्गणा किसे कहते हैं ?
उ० जो पुद्गलस्कन्ध, तैजस शरीररूप परिणमित होते हैं, उन्हे तैजसवर्गणा कहते हैं।

प्र०२३. भाषावर्गणा किसे कहते हैं ?
उ० जो पुद्गलस्कन्ध, शब्दरूप परिणमित होते हैं, उन्हें भाषावर्गणा कहते हैं।

प्र०२४. मनोवर्गणा किसे कहते हैं ?
उ०. जो पुद्गलस्कन्ध, द्रव्य-मनरूप परिणमित होते हैं, उन्हें मनोवर्गणा कहते हैं।

प्र०२५. कार्मणवर्गणा किसे कहते हैं ?
उ०. जो पुद्गलस्कन्ध, कार्मण शरीररूप परिणमते हैं, उन्हें कार्मणवर्गणा कहते हैं।

प्र०२६. कार्मण शरीर किसे कहते हैं?
उ० ज्ञानावरणादि अष्ट कर्मों के समूह को कार्मण शरीर कहते हैं।

प्र०२७. तैजस और कार्माण शरीर किसके होते हैं ?
उ० तैजस और कार्मण शरीर सभी संसारी जीवों को होते हैं।

प्र०२८. धर्मद्रव्य किसे कहते हैं ?
उ० जो स्वयं गतिरूप से परिणमित जीवों और पुद्गलों को गमन करने (चलने) में सहकारी हो अथवा निमित्त हो, उसे धर्मद्रव्य कहते हैं। जैसे-मछली के गमन में जल।

प्र०२९. अधर्मद्रव्य किसे कहते हैं ?
उ०. जो गतिपूर्वक स्वयं स्थितिरूप से परिणमित जीव और पुद्गलों को रुकने (ठहरने) में सहकारी अथवा निमित हो, उसे अधर्मद्रव्य कहते हैं। जैसे-पथिक को रुकने में वृक्ष की छाया।

प्र०३०. आकाशद्रव्य किसे कहते हैं ?
उ०. जो जीवादि पाँच द्रव्यों को रहने के लिए स्थान देता है, उसे आकाशद्रव्य कहते हैं। जैसे-मनुष्यों को रहने के लिए घर, मकान आदि।

प्र०३१. कालद्रव्य किसे कहते हैं?
उ० जो जीवादि समस्त द्रव्यों के परिणमन में सहकारी अथवा निमित्त होता है, उसे कालद्रव्य कहते हैं। जैसे-कुम्हार के चाक को घूमने में लोहे की कीली।

प्र०३२. पर्याय किसे कहते हैं ? पर्याय के कितने भेद हैं ?
उ० गुणों के विकार (परिणमन या कार्य) को पर्याय कहते हैं। पर्याय के दो भेद हैं-व्यञ्जनपर्याय और अर्थपर्याय।

प्र०३३. व्यञ्जनपर्याय किसे कहते हैं ? व्यञ्जनपर्याय के कितने भेद हैं ?
उ०. प्रदेशत्वगुण के विकार (परिणमन या कार्य) को व्यञ्जनपर्याय कहते हैं। व्यञ्जनपर्याय के दो भेद हैं – स्वभाव-व्यञ्जनपर्याय और विभाव-व्यञ्जनपर्याय।

प्र०३४. स्वभाव-व्यञ्जनपर्याय किसे कहते हैं?
उ० अन्य के निमित्त बिना जो व्यञ्जनपर्याय होती है, उसे स्वभाव-व्यञ्जनपर्याय कहते हैं। जैसे – जीव की सिद्ध पर्याय।

प्र०३५. विभाव-व्यञ्जनपर्याय किसे कहते हैं?
उ० अन्य के निमित्तसहित जो व्यञ्जनपर्याय होती है, उसे विभाव-व्यञ्जनपर्याय कहते हैं। जैसे – जीव की नर-नारकादि पर्याय।

प्र०३६. अर्थपर्याय किसे कहते हैं ? अर्थपर्याय के कितने भेद हैं ?
उ० प्रदेशत्वगुण के अलावा अन्य समस्त गुणों के विकार (परिणमन या कार्य) को अर्थपर्याय कहते हैं। अर्थपर्याय के दो भेद हैं-स्वभाव-अर्थपर्याय और विभाव-अर्थपर्याय।

प्र०३७. स्वभाव-अर्थपर्याय किसे कहते हैं ?
उ०. अन्य के निमित्त बिना जो अर्थपर्याय होती है, उसे स्वभाव-अर्थपर्याय कहते हैं। जैसे-जीव का केवलज्ञान।

प्र०३८. विभाव-अर्थपर्याय किसे कहते हैं?
उ० अन्य के निमित्तसहित जो अर्थपर्याय होती है, उसे विभाव-अर्थपर्याय कहते हैं। जैसे-जीव के राग-द्वेष आदि।

प्र०३९. उत्पाद किसे कहते हैं ? व्यय किसे कहते हैं ? ध्रौव्य किसे कहते हैं ?
उ० द्रव्य में नवीन पर्याय की प्राप्ति को उत्पाद कहते हैं। द्रव्य में पूर्व पर्याय के त्याग को व्यय कहते हैं। प्रत्यभिज्ञान की कारणभूत द्रव्य की किसी अवस्था की नित्यता को ध्रौव्य कहते हैं।

प्र०४०. प्रत्येक द्रव्य के विशेषगुण कौन-कौन से हैं ?
उ०. जीवद्रव्य में चेतना, सम्यक्त्व, चारित्र, सुख, क्रियावतीशक्ति इत्यादि। पुद्गलद्रव्य में स्पर्श, रस, गन्ध वर्ण क्रियावतीशक्ति आदि। धर्मद्रव्य में गतिहेतुत्व आदि। अधर्मद्रव्य में स्थितिहेतुत्व आदि। आकाशद्रव्य में अवगाहनहेतुत्व आदि और काल द्रव्य में परिणमनहेतुत्व आदि विशेषगुण हैं।

प्र०४१. आकाश के कितने भेद हैं?
उ० आकाश एक अखण्ड द्रव्य है। आकाश सर्वव्यापी है।

प्र०४२. लोकाकाश किसे कहते हैं ?
उ० आकाश में जहाँ तक जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और काल-ये पाँच द्रव्य रहते हैं, उसे लोकाकाश कहते हैं।

प्र०४३. अलोकाकाश किसे कहेते हैं?
उ० लोक से बाहर के आकाश को अलोकाकाश कहते हैं।

प्र०४४. जीवादिक द्रव्य कितने–कितने हैं और कहाँ–कहाँ पर रहते हैं ?
उ० (१)जीवद्रव्य अनन्तानन्त हैं और सम्पूर्ण लोकाकाश में भरे हुए है। (२)जीवद्रव्य से अनन्तगुने अधिक पुद्गल द्रव्य हैं और वे सम्पूर्ण लोक में भरे हुए हैं। (३)धर्म और अधर्म द्रव्य एक–एक है और सम्पूर्ण लोक मे व्याप्त हैं। (४)आकाश द्रव्य एक है और लोक तथा अलोक मे व्याप्त है। (५)काल द्रव्य असंख्यात है और वे समस्त लोकाकाश के एक–एक प्रदेश पर व्याप्त है।

प्र०४५. प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?
उ० अस्तित्व–वस्तुत्वादि अनंत सामान्य गुण, अनंत सामान्य गुण, अनंत विशेष गुण, एक व्यंजन पर्याय और अनंत अर्थ पर्याय सहित–यह प्रत्येक द्रव्य की सत्ता है। अतः प्रत्येक जीव और प्रत्येक परमाणु अपनी–अपनी पृथक सत्ता में विराज रहा है। कभी भी मिलकर एक नहीं होवे। ऐसा जानते ही मैं वीना हूँ–यह भ्रम निकल जाता है।

–उपसंहार–'

मैं वीना हूँ, मैं उठती बैठती हूँ, यह मेरा मकान है, यह मेरा कुटुम्ब परिवार है, ये मेरे वस्त्र–आभूषण हैं, ये मेरे मित्र हैं, ये मेरे शत्रु हैं–ये सब मुझ आत्मा में भ्रम है क्योंकि शरीर के उठने, बैठने, खाने–पीने रूप हर अवस्था में परमाणु ही परमाणु है, मुझ ज्ञान दर्शन स्वरूप चैतन्य मूर्ति नहीं। अतः हे चैतन्यमूर्ति! उठाओ दृष्टि शरीर–धन–मकान–गाड़ी आदि स्कन्धों से और ध्यान करो केवल एक शुद्ध आत्मा की – बस यही धर्म है, समस्त भ्रमजनित दुःखों से छुटने का एकमात्र उपाय है।

'ज्ञान दर्पण'

संसार पीड़ित जीवो मंगल देशना आई है
सिद्धो की नगरी से मुक्ति वरने आई है।।
चार गति में घूमा, मैं चेतन हूँ ये नहीं जाना,
नये–नये तूने वेष बनाये, आतम भाव न पहचाना।
महाभाग्य जिनदेव मिले, अब निज निधि पाई है। – सिद्धो....
अनन्तकाल के दुखियारे का दुख ये कैसे मिटे,
ज्ञायक ज्ञायक की रटना से परद्रव्यन की रूचि छूटे।
चेतन दृष्टि ने नश्वरता जग की दिखाई है। – सिद्धो ....
सादि अनन्त समाधि सुख हो, गर ये भावना जागी,
कुटुम्ब कबीला दुनियादारी से हो जा वैरागी।
वस्तु स्वरूप के चिंतन ने निज दृष्टि कराई है। सिद्धों ....

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1.	प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 9.00 से 10.30 व सांयः 6.00 से 7.00 बजे		
2.	शनिवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः 9.30 से 10.30 बजे तक
4.	मंगलवार	स्वाध्याय मन्दिर	सांय 06.00 से 07.00 बजे
5.	बुधवार	श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार	सांय 06.00 से 07.00 बजे
6.	प्रतिदिन	जैन धर्मशाला मन्दिर	प्रातः 07.30 से 08.00 बजे
7.	सोमवार से शनिवार	जैन कालोनी	सांय 07.00 से 07.45 बजे तक
8.	रविवार	स्वाध्याय मन्दिर	प्रातः 09.00 से 10.00 बजे तक
9.	माह का प्रथम सोमवार 52 मालवीय रोड, श्रीमती आशु जैन		प्रातः 11.15 से 12.15 तक

- वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-89 का पारितोषिक वितरण भी 7 अप्रैल 2019 दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', 31 राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं0 (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–६१

दिनांक 23 जून, 2019 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान – श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

विशेष नोट – आगामी परीक्षा में जैन गौरव स्मृति वर्ष के अर्न्तगत, जैन मिलन महिला "एकता" देहरादून के तत्वाधान में जैन धर्म के गौरव, श्री समन्तभद्र आचार्य जी के जीवन परिचय से, उनके आत्मज्ञान से निकले अद्भुत तत्वज्ञान द्वारा आपको परिचय कराया जायेगा।

– जैन धर्म का रहस्य –

(१) मैं जीव हूँ क्योंकि मुझमें जानने देखने की शक्ति है इसलिए मेरा कार्य मात्र जानना देखना है।
(२) मैं वीना शरीर नहीं हूँ क्योंकि वीना शरीर में मेरी जानने देखने की शक्ति नहीं है।
(३) वीना शरीर तो लोक के अनन्त परमाणु हैं, इसलिए उठना, बैठना, खाना पीना, रोटी, कपड़ा, मकान, धन दौलत, रिश्ते नाते – ये सब मैं नहीं हूँ, मेरा कार्य नहीं है।
(४) आत्मार्थी भव्य जीव विचार करता है कि – हाँ वास्तव में यहाँ से जाने वाली कोई वस्तु है तो, जानने–देखने की शक्ति वाली वस्तु तो है, जिसके जाने के बाद ज्ञान नहीं होता, सुख दुख का अनुभव नहीं होता। और मुझे तो ये वर्तमान में जानना–देखना, सुख दुख का अनुभव हो रहा है ? अरे गुरु सही समझाते हैं – मैं ही तो ये ज्ञान की, आनन्द की मूर्ति हूँ, ये आंख नाक कान वाला, यहीं जलने वाला मूर्तिक स्थूल शरीर मैं नहीं हूँ।
(५) मैं ही जीव हूँ, क्योंकि मुझमें ज्ञान है, मैं ज्ञान से ही जानता हूँ। मैं शरीर नहीं हूँ क्योंकि शरीर में ज्ञान नहीं है इसलिये शरीर कुछ नहीं जानता।

प्र०१. लेकिन, अब आत्मार्थी जीव तीव्र जिज्ञासापूर्वक गुरु से प्रश्न पूछता है कि हे भगवन् यदि ये शरीर, उठना बैठना, खाना, पीना, रोटी कपड़ा मकान आदि मैं नहीं हूँ और सब मेरे कार्य नहीं हैं तो फिर ये शरीर धन आदि कौन है और किसके कार्य हैं ?
उ० गुरु उत्तर देते हैं – इस प्रश्न के समाधान के लिये जिनेन्द्र भगवान के केवलज्ञान के अनुसार विश्व के सब द्रव्यों का स्वरूप समझना पड़ेगा।

प्र०२. विश्व किसे कहते हैं ?
उ०. छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं।

प्र०३. छह द्रव्य कौन–कौन से हैं ?
उ० जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल। इस विश्व में आकाश एक अखण्ड सर्वव्यापी द्रव्य है, इसके लोकाकाश और अलोकाकाश दो भेद कहने में आते हैं।

प्र०४. लोकाकाश किसे कहते हैं ?
उ० आकाश में जहाँ तक जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और काल–ये पाँच द्रव्य रहते हैं, उसे लोकाकाश कहते हैं।

प्र०५. अलोकाकाश किसे कहते हैं?
उ० लोक से बाहर के आकाश को अलोकाकाश कहते हैं।

प्र०६. जीवादिक द्रव्य कितने-कितने हैं और कहाँ-कहाँ पर रहते हैं ?

उ० (१)इस लोक में जीवद्रव्य अनन्तानन्त है और सम्पूर्ण लोकाकाश में ठसाठस भरे हुए हैं। (२)इस लोक में पुद्गल अनंतानंत है और वे सम्पूर्ण लोक में ठसाठस भरे हुए हैं। (३) इस लोक में धर्म और अधर्म द्रव्य एक-एक है और सम्पूर्ण लोक में व्याप्त है। (४) इस लोक में आकाश द्रव्य एक है और लोक तथा अलोक में व्याप्त है। (५) इस लोक में काल द्रव्य असंख्यात है और वे समस्त लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर स्थित है।

प्र०७. द्रव्य किसे कहते है ?

उ० गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।

प्र०८. प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है ?

उ० अस्तित्व-वस्तुत्वादि अनंत सामान्य गुण, अनंत सामान्य गुण, अनंत विशेष गुण, एक व्यंजन पर्याय और अनंत अर्थ पर्याय सहित-यह प्रत्येक द्रव्य की सत्ता है। अतः प्रत्येक जीव और प्रत्येक परमाणु अपनी-अपनी पृथक सत्ता में विराज रहा है। कभी भी मिलकर एक नहीं होते। ऐसा जानते ही मैं वीना हूँ-यह भ्रम निकल जाता है।

प्र०९. गुण किसे कहते है ? गुण के कितने भेद हैं ?

उ०. (१) अनन्त गुण द्रव्य के सम्पूर्ण भागों (क्षेत्र) में इकट्ठे व्याप्त रहते है। (२) गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन के समय है उतनी क्रमबद्ध पर्यायें है। (३) प्रत्येक गुण अलग-अलग, अपनी-अपनी त्रिकालवर्ती पर्यायों में व्याप्त रहता है। (४) इससे यह सिद्ध होता है कि द्रव्य-गुण-पर्याय अभेद हैं। (५) गुणों के दो भेद है- सामान्य और विशेष।

प्र०१०. सामान्य गुण किसे कहते हैं? विशेषगुण किसे कहते है ?

उ० जो सब द्रव्यों में समानरूप से रहते हैं, उन्हें सामान्यगुण कहते हैं। जो सब द्रव्यों में न रहकर अपने-अपने द्रव्य में रहते हैं, उन्हें विशेषगुण कहते हैं।

प्र०११. सामान्यगुण कितने है ?

उ० सामान्यगुण अनेक हैं, लेकिन उनमें छह मुख्य है।

प्र०१२. अस्तित्वगुण किसे कहते हैं ?

उ०. जिस शक्ति के कारण द्रव्य का कभी नाश नहीं होता है, उसे अस्तित्वगुण कहते हैं।

प्र०१३. वस्तुत्व किसे कहते है ?

उ०. जिस शक्ति के कारण द्रव्य में अर्थक्रिया होती है, उसे वस्तुत्वगुण कहते हैं।

प्र०१४. द्रव्यत्वगुण किसे कहेते हैं?

उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य सर्वदा एक सा नहीं रहता और जिसकी पर्यायें (दशाएँ) हमेशा बदलती रहती हैं, उसे द्रव्यत्वगुण कहते हैं।

प्र०१५. प्रमेयत्वगुण किसे कहते है ?

उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य किसी न किसी के ज्ञान का विषय होता है, उसे प्रमेयत्वगुण कहते हैं।

प्र०१६. अगुरूलघुत्वगुण किसे कहते हैं ?

उ० जिस शक्ति के कारण द्रव्य में द्रव्यपना कायम रहता है अर्थात् एक द्रव्य दूसरे द्रव्यरूप नहीं परिणमता और एक गुण दूसरे गुणरूप नहीं परिणमता और द्रव्य में रहनेवाले अनन्त गुण बिखर कर अलग-अलग नहीं होते हैं, उसे अगुरूलघुत्वगुण कहते हैं।

प्र०१७. प्रदेशत्वगुण किसे कहते हैं ?

उ०. जिस शक्ति के कारण द्रव्य का कोई न कोई आकार अवश्य होता है, उसे प्रदेशत्वगुण कहते हैं। प्रदेशत्वगुण के कार्य को व्यंजन पर्याय कहते हैं।

प्र०१८. प्रत्येक द्रव्य के विशेषगुण कौन-कौन से हैं ?

उ०. जीवद्रव्य में चेतना, सम्यक्त्व, चारित्र, सुख, क्रियावतीशक्ति इत्यादि। पुद्गलद्रव्य में स्पर्श, रस, गन्ध वर्ण क्रियावतीशक्ति आदि। धर्मद्रव्य में गतिहेतुत्व आदि। अधर्मद्रव्य में स्थितिहेतुत्व आदि। आकाशद्रव्य में अवगाहनहेतुत्व आदि और काल द्रव्य में परिणमनहेतुत्व आदि विशेषगुण है।

प्र०१९. जीवद्रव्य किसको कहते हैं ?

उ० जिसमें ज्ञान-दर्शन रूप शक्ति हैं उसको जीव द्रव्य कहते हैं।

प्र०२०. पुद्गल द्रव्य किसको कहते हैं ?

उ०. जिसमें स्पर्श, रस, गंध और वर्ण ये गुण होते है उसको पुद्गल द्रव्य कहते हैं।
स्पर्श गुण की – हल्का-भारी-ठंडा-गरम-रूखा-चिकना-कड़ा-नरम-ये आठ पर्याय होती हैं।
रस गुण की – खट्टा-मीठा-कड़वा-चरपरा-कषायता-ये पांच पर्यायें होती हैं।
गंध गुण की – सुगन्ध और दुर्गन्ध – ये दो पर्यायें होती हैं।
वर्ण गुण की – काला-पीला-नीला-लाल-सफेद-ये पांच पर्यायें होती हैं।

प्र०२१. पुद्गल के कितने भेद हैं ?

उ०. दो भेद हैं – एक परमाणु, दूसरा स्कन्ध।

प्र०२२. परमाणु किसको कहते है ?

उ० जिसका दूसरा विभाग नहीं हो सकता ऐसे सबसे छोटे पुद्गल को परमाणु कहते हैं।

प्र०२३. स्कंध किसको कहते है ?

उ० दो या दो से अधिक परमाणुओं के बन्ध को स्कंध कहते हैं।

प्र०२४. स्कन्ध के कितने भेद हैं ?

उ० आहार वर्गणा, तैजस वर्गणा, भाषा वर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माण वर्गणा इत्यादि २२ भेद हैं।

प्र०२५. आहार वर्गणा किसको कहते है ?

उ०. जो पुद्गल स्कन्ध औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीर रूप से परिणमन करता है उसको आहार वर्गणा कहते हैं।

प्र०२६. तैजस वर्गणा किसको कहते है ?

उ०. जिस वर्गणा से तैजस शरीर बनता है उसको तैजस वर्गणा कहते हैं।

प्र०२७. भाषावर्गणा किसे कहेते हैं?

उ० जो पुद्गल स्कन्ध शब्द रूप से परिणत होता है उसको भाषावर्गणा कहते हैं।

प्र०२८. मनोवर्गणा किसको कहते हैं ?

उ० जिस पुद्गल स्कन्ध से अष्टदल कमल के आकार द्रव्यमन की रचना होती है उसको मनोवर्गणा कहते हैं।

प्र०२९. कार्माणवर्गणा किसको कहते हैं ?

उ० जिस पुद्गल स्कन्ध से कार्माण शरीर बनता है उसको कार्माणवर्गणा कहते हैं।

प्र०३०. शरीर कितने हैं ?

उ०. शरीर पाँच हैं – (१) औदारिक, (२) वैक्रियक, (३) आहारक, (४) तैजस, (५) कार्माण।

प्र०३१. औदारिक शरीर किसको कहते हैं ?

उ०. मनुष्य और तिर्यचों के स्थूल शरीर को औदारिक शरीर कहते है।

प्र०३२. वैक्रियक शरीर किसको कहते हैं?

उ० जो छोटे-बड़े पृथक-अपृथक आदि अनेक क्रियाओं को करे ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियक शरीर कहते है।

प्र०३३. आहारक शरीर किसको कहते हैं ?

उ० आहारक ऋद्धिधारी छठे गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्वों में कोई शंका होने पर अथवा जिनालयादि की वन्दना करने के लिए, मस्तक से एक हाथ प्रमाण स्वच्छ और सफेद, सप्तधातु रहित पुरूषाकार जो पुतला निकलता है उसको आहारक शरीर कहते हैं।

प्र०३४. तैजस शरीर किसको कहते हैं ?

उ० औदारिक, वैक्रियक और आहारक इन तीन शरीरों में कान्ति उत्पन्न करने वाले शरीर को तैजस शरीर कहते हैं।

प्र०३५. कार्माण शरीर किसको कहते हैं ?
उ०. आठ कर्मों के समूह को कार्माण शरीर कहते हैं।

प्र०३६. केवलज्ञान के अनुसार जीव और पुद्गल का स्वरूप जानने से क्या लाभ है ?
उ०. तराजू के एक पलड़े में मुझ जीव और दूसरे पलड़े में वीना शरीर। मुझ जीव का अनादिअनन्त एक आकार है। वीना शरीर का एक आकार नहीं है क्योंकि जितने परमाणु हैं उतने एक एक पृथक आकार है। इस प्रकार केवलज्ञान के अनुसार निज आत्मा की और वीना शरीर अर्थात् अनन्त परमाणुओं की पृथक पृथक सत्ता केवलज्ञान के अनुसार जानते ही मैं वीना हूँ–इस मोह का नाश होकर धर्म की प्राप्ति हो जाती है अर्थात् जिन मन्दिर में विराजमान अरहंत परमात्मा के समान अर्न्तदृष्टि हो जाती है।

प्र०३७. क्या मुझ आत्मा शरीर, धन, मकान, रोटी आदि की व्यवस्था नहीं करता ?
उ०. बिल्कुल नहीं करता। क्योंकि अरहंत परमात्मा ने अपने केवलज्ञान में इस विश्व की व्यवस्था निम्न प्रकार देखी है –

(१) इस विश्व मे जीव अनन्त है, पुद्गल अनन्तानन्त है, धर्म–अधर्म–आकाश एक–एक है और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त–अनन्त गुण है, प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है। इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

(२) इस प्रकार केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त परद्रव्यों में और स्वद्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा।

(३) तो फिर क्या करना ? करने के नहीं–मात्र जानने देखने के स्वभाव वाले मुझ जीव को शरीर, धन, मकान, रोटी, साड़ी, हार, गाड़ी आदि पुद्गल स्कन्धों का केवलज्ञान के अनुसार सही सही स्वरूप जानना पड़ेगा अर्थात् शरीर आदि से भिन्न शुद्ध चैतन्य का ध्यान करना–तो शरीरादि परद्रव्यों की कर्त्ता बुद्धि नष्ट हो जाती है।

–उपसंहार–'

मैं वीना हूँ, मैं उठती बैठती हूँ, यह मेरा मकान है, यह मेरा कुटुम्ब परिवार है, ये मेरे वस्त्र–आभूषण है ये मेरे मित्र हैं, ये मेरे शत्रु है–ये सब मुझ आत्मा में भ्रम है क्योंकि शरीर के उठने, बैठने, खाने–पीने रूप हर अवस्था में परमाणु ही परमाणु है, मुझ ज्ञान दर्शन स्वरूप चैतन्य मूर्ति नहीं। अतः हे चैतन्यमूर्ति! उठाओं दृष्टि शरीर–धन–मकान–गाड़ी आदि स्कन्धों से और ध्यान करो केवल एक शुद्ध आत्मा का – बस यही धर्म है, समस्त भ्रमजनित दुःखों से छुटने का एकमात्र उपाय है।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 9.00 से 10.30 व सांय 6.00 से 7.00 बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 9.30 से 10.30 बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय 06.00 से 07.00 बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय 06.00 से 07.00 बजे
6. प्रतिदिन जैन धर्मशाला मन्दिर प्रातः 07.30 से 08.00 बजे
7. सोमवार से शनिवार जैन कालोनी (बच्चों की) सांय 07.00 से 07.45 बजे तक
8. रविवार स्वाध्याय मन्दिर (बच्चों की) प्रातः 09.00 से 10.00 बजे तक
9. माह का 1st व 3rd सोमवार 52 मलकीय रोड, श्रीमती अंजु जैन प्रातः 11.15 से 12.15 तक

- वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-90 का पारितोषिक वितरण भी 23 जून 2019 दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्ष 'ध्रुव निवास', 31 राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता–६२

दिनांक 1 सितम्बर, 2019 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

विशेष नोट – आगामी परीक्षा में जैन मिलन महिला "एकता" देहरादून के तत्वाधान में जैन धर्म के गौरव, पं० श्री बनारसी दास जी के जीवन परिचय से, उनके आत्मज्ञान से निकले अद्भुत तत्वज्ञान द्वारा आपको परिचय कराया जायेगा।

– जैन धर्म का रहस्य –

(१) मैं जीव हूँ क्योंकि मुझमें जानने देखने की शक्ति है इसलिए मेरा कार्य मात्र जानना देखना है। मैं वीना नहीं हूँ क्योंकि वीना में मेरी जानने देखने की शक्ति नहीं है। वीना शरीर तो लोक के अनन्त परमाणु हैं इसलिये उठना–बैठना, खाना–पीना, रोटी–कपड़ा–मकान, धन–दौलत, रिश्ते–नाते ये सब मैं नहीं, मेरे कार्य नहीं।

(२) ऐसा जानकर अब आत्मार्थी भव्य जीव विचार करता है कि हाँ वास्तव में यहाँ से जाने वाली कोई वस्तु है तो, जानने देखने की शक्ति वाली वस्तु तो है जिसके जाने के बाद जानना देखना नहीं होता सुख दुख का अनुभव नहीं होता लेकिन मुझे तो वर्तमान में जानना–देखना, सुख–दुख का अनुभव हो रहा है। अरे! गुरू सही समझाते हैं–मैं ही तो ज्ञान की आनन्द की मूर्ति हूँ। ये आँख–नाक–कान वाला, यहीं जलने वाला, मूर्तिक, स्थूल शरीर, मैं नहीं हूँ।

(३) मैं ही जीव हूँ, क्योंकि मुझमें ज्ञान है, मैं ज्ञान से ही जानता हूँ। मैं शरीर नहीं हूँ क्योंकि शरीर में ज्ञान नहीं है इसलिये शरीर कुछ जानता नहीं है। भव्य जीव बारम्बार ऐसा विचार करता है।

प्र०१. लेकिन आत्मार्थी जीव तीव्र जिज्ञासापूर्वक, गुरू से प्रश्न पूछता है कि हे भगवन्! यदि ये शरीर, उठना–बैठना, खाना–पीना, रोटी, कपड़ा, मकान आदि मैं नहीं हूँ और ये सब मेरे कार्य नहीं हैं तो फिर ये शरीर धनादि कौन है और किसके कार्य है ?
उ० गुरू उत्तर देते हैं कि इस प्रश्न के समाधान के लिये जिनेन्द्र भगवान के केवलज्ञान के अनुसार विश्व के सब द्रव्यों का स्वरूप समझना पड़ेगा।

प्र०२. अब शिष्य प्रश्न पूछता है कि ये शरीर–धनादि मैं क्यों नहीं है ? ये शरीर–धनादि मेरे कार्य क्यों नहीं है– इस प्रश्न के समाधान के लिये केवलज्ञान के अनुसार विश्व के सब द्रव्यों का स्वरूप क्यों जानना पड़ेगा ?

उ०. जिनेन्द्र भगवान ने हमें बताया है कि मैं जीव हूँ, क्योंकि मुझमें जानने देखने की शक्ति है, लेकिन मुझ जानने देखने की शक्ति में, शरीर–धन आदि वे वस्तुयें दिखती हैं, जो मेरी हैं नहीं, और कभी मेरी होंगी नहीं। और मुझ जानने देखने की शक्ति में जैसी अनादिनिधन वस्तुयें हैं, वैसी तो मुझे दिखती नहीं और वे ही अनादिनिधन वस्तुयें जिस शरीर धन आदि रूप में दिखती हैं वैसी वस्तुयें हैं नहीं, इसलिये जैसा शरीर–धनादि का स्वरूप है वैसा जाने तो शरीर से भिन्न आत्मा का ध्यान हो।

प्र०३. हे भगवन! हमें शीघ्र बताओं कि विश्व का स्वरूप क्या है ? विश्व कहते किसे हैं ?

उ० जिनेन्द्र भगवान ने बताया कि छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं। इस विश्व में जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल ये छह द्रव्य हैं। इन छह द्रव्यों में से आकाश द्रव्य एक है, अखण्ड है, सर्वव्यापी द्रव्य है, जिसके लोकाकाश तथा अलोकाकाश दो भेद कहने में आते हैं।

प्र०४. हे भगवन् आपने बताया कि जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल ये छह द्रव्य हैं आकाश एक अखण्ड द्रव्य है, लोकाकाश तथा अलोकाकाश दो भेद कहने में आते हैं लेकिन हमें यह प्रश्न खड़ा होता है कि यदि आकाश एक अखण्ड द्रव्य है तो उसके लोकाकाश तथा अलोकाकाश दो भेद कहने में क्यों आते हैं ?

उ० गुरू बताते हैं कि हे भव्य! आकाश में जहाँ तक जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और काल ये पांच द्रव्य रहते हैं उसे लोकाकाश कहते हैं तथा लोकाकाश के बाहर अनन्त आकाश को अलोकाकाश कहते हैं।

प्र०५. हे भगवन्, आपने बताया कि आकाश में जहाँ तक जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और काल ये पांच द्रव्य रहते हैं उसे लोकाकाश कहते हैं तो अब हमें यह प्रश्न उठता है कि लोकाकाश में ये पांच ही द्रव्य हैं या कितने हैं ? और ये किस प्रकार से रहते हैं ?

उ० गुरू बताते हैं कि इस लोक में जीव द्रव्य अनन्त हैं और सम्पूर्ण लोकाकाश में ठसाठस भरे हुए हैं। इस लोक में पुद्गल द्रव्य अनन्तान्त हैं और सम्पूर्ण लोक में ठसाठस भरे हुए हैं। इस लोक में धर्म–अधर्म द्रव्य एक–एक है और सम्पूर्ण लोक में व्याप्त है। इस लोक में आकाश द्रव्य एक है और लोक तथा अलोक में व्याप्त है। इस लोक में काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं और वे सम्पूर्ण लोकाकाश के एक–एक प्रदेश पर रत्नों की भांति स्थित हैं।

प्र०६. आत्मार्थी जीव फिर गुरू से प्रश्न करता है कि हे भगवन्! आपने बताया कि इस लोक में जीव द्रव्य और पुद्गल द्रव्य अनन्तान्त हैं तथा ठसाठस भरे हैं, धर्म–अधर्म एक–एक पूरे लोकाकाश में व्याप्त है, काल द्रव्य असंख्यात हैं एक–एक प्रदेश पर स्थित हैं तो हे भगवन! हमें यह जिज्ञासा हो रही है कि लोकाकाश के एक प्रदेश पर छहों द्रव्य हैं, तो क्या ये सब द्रव्य आपस में मिल गये हैं ? एक हो गये हैं ?

उ० गुरू समझाते हैं कि नहीं, बिल्कुल नहीं, एक क्षेत्र में रहने पर भी प्रत्येक द्रव्य अलग–अलग ही रहता है क्योंकि प्रत्येक द्रव्य गुणों का समूह है, प्रत्येक द्रव्य की सत्ता अलग–अलग है।

प्र०७. हे भगवन! आपने बताया कि आकाश के एक क्षेत्र में रहने पर भी छहों द्रव्य मिलकर एक नहीं होते क्योंकि प्रत्येक द्रव्य की सत्ता अलग–अलग है तो हमें ये जिज्ञासा हो रही है कि प्रत्येक द्रव्य की सत्ता क्या है तथा प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में क्या भरा है ?

उ० गुरू दयालु होकर बताते हैं कि अस्तित्व–वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुण, अनन्त विशेष गुण, एक व्यंजन पर्याय तथा अनन्त अर्थ पर्याय सहित – यह प्रत्येक द्रव्य की सत्ता है। अतः प्रत्येक जीव और प्रत्येक परमाणु अपनी–अपनी पृथक सत्ता में विराज रहा है, कभी भी मिलकर एक नहीं होते, ऐसा जानते ही मैं वीना हूँ यह भ्रम निकल जाता है।

प्र०८. हे प्रभु आपने बताया कि जीव–पुद्गलादि प्रत्येक द्रव्य की सत्ता अलग–अलग है–ऐसा जानते ही मैं वीना हूँ यह भ्रम निकल जाता है। लेकिन हमारी समझ में यह नहीं आया कि प्रत्येक द्रव्य की सत्ता अलग–अलग जानते ही मैं वीना हूँ – यह भ्रम कैसे निकल जाता है ?

उ०. गुरू बताते हैं कि केवलज्ञान के अनुसार जीव और पुद्गल की सत्ता भिन्न जानते ही ऐसा दिखेगा कि तराजू के एक पलड़े में मुझ जीव और दूसरे पलड़े में वीना शरीर। मुझ जीव का अनादिअनन्त एक आकार है, वीना शरीर का एक आकार नहीं है, क्योंकि जितने परमाणु हैं, उतने एक–एक पृथक–पृथक आकार हैं। इस प्रकार केवलज्ञान के अनुसार निज आत्मा की तथा वीना शरीर अर्थात् अनन्त परमाणुओं की पृथक–पृथक सत्ता जानते ही मैं वीना हूँ इस मोह का नाश होकर धर्म की प्राप्ति हो जाती है अर्थात् जिनमन्दिर में विराजमान अरहंत परमात्मा के समान अन्तर्दृष्टि हो जाती है।

प्र०९. अब यहाँ यह प्रश्न उठता है कि यदि शरीर का एक आकार नहीं है जितने परमाणु हैं उतने आकार हैं, प्रत्येक परमाणु अपनी अलग–अलग सत्ता में विराज रहा है तो क्या ये रोटी, मकान, धन, गाड़ी, बंगला आदि भी सब पृथक–पृथक परमाणुओं के जत्थे हैं ? तो क्या मुझ आत्मा शरीर, धन, मकान, रोटी आदि की व्यवस्था नहीं करता ?

उ० जी हाँ, बिल्कुल नहीं करता, क्योंकि अरहंत परमात्मा ने अपने केवलज्ञान में इस विश्व की व्यवस्था इसी प्रकार देखी है कि– इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तान्त हैं, धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक हैं तथा काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त अनन्त गुण हैं, प्रत्येक गुण में, जितने तीन काल के समय हैं, उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में, एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा इसलिये मुझ आत्मा शरीर, धन, मकान, रोटी आदि की व्यवस्था नहीं करता।

प्र०१०. केवलज्ञान के अनुसार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानकर विश्व के समस्त परद्रव्यों में और स्वद्रव्य में कुछ भी करना नहीं रहा तो फिर हम धर्म के लिये क्या करें ?

उ० करने के नहीं– मात्र जानने देखने के स्वभाव वाले मुझ जीव को शरीर, धन, मकान, रोटी, साड़ी, हार, गाड़ी आदि पुद्गल स्कन्धों का केवलज्ञान के अनुसार सही सही स्वरूप जानना पड़ेगा अर्थात् शरीर आदि से भिन्न शुद्ध चैतन्य का ध्यान करना–तो शरीरादि परद्रव्यों की कर्ता बुद्धि नष्ट हो जाती है।

–उपसंहार–

मैं वीना हूँ, मैं उठती–बैठती खाती–पीती हूँ, यह मेरा कुटुम्ब परिवार है, ये मेरे वस्त्र–आभूषण हैं, ये मेरे मित्र हैं, ये मेरे शत्रु हैं–ये सब मुझ आत्मा में भ्रम है क्योंकि शरीर के उठने, बैठने, खाने–पीने रूप हर अवस्था में परमाणु ही परमाणु है, मुझ ज्ञान दर्शन स्वरूप चैतन्य मूर्ति नहीं। अतः हे चैतन्यमूर्ति! उठाओ दृष्टि शरीर–धन–मकान आदि स्कन्धों से और ध्यान करो केवल एक शुद्ध आत्मा का – बस यही धर्म है, समस्त भ्रमजनित दुःखों से छूटने का एकमात्र उपाय है।

<u>परमागम समयसार के अमूल्य सिद्धान्त</u>

१. एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को स्पर्श नहीं करता है। २. प्रत्येक द्रव्य की प्रत्येक पर्याय क्रमबद्ध ही होती है। ३. उत्पाद, उत्पाद से है व्यय या ध्रुव से नहीं है। ४. प्रत्येक पर्याय अपने–अपने जन्मक्षण में ही होती है। ५. उत्पाद अपने षट्कारक के परिणमन से ही होता है। ६. निज भूतार्थ स्वभाव के आश्रय से ही सम्यग्दर्शन होता है। ७. स्व में बस (२) पर से खस (३) आयेगा आत्मा में अतीन्द्रिय रस (४) यही है अध्यात्म का कस (५) इतना करो तो बस।

<u>'संसार की नश्वरता'</u>

ओ मोही प्राणी, कोई नहीं यहाँ तेरा।
जग में जिसको निज माना अरे, वे ही दुःख का डेरा।।

जिस तन से उत्पन्न हुआ वे, मात पिता है नश्वर।
जिनके संग में मग्न हुआ ये, पति पुत्र, सब दुखकर।
है अविनश्वर चेतन प्रभु यहाँ, क्षण भर का है डेरा।
ओ मोही प्राणी, कोई नहीं यहाँ तेरा।।

महाभाग्य से जिनकुल अर जिनवाणी का संग पाया,
हे पुरुषार्थी! पाप उदय लख, चित्त क्यूं तेरा घबराया,
पुण्य पाप सब परमाणु, ये संकट नहीं है तेरा।
ओ मोही प्राणी, कोई नहीं यहाँ तेरा।।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चो सहित अवश्य पधारें –

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 9.00 से 10.30 व सांयः 6.00 से 7.00 बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 9.30 से 10.30 बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय 06.00 से 07.00 बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय 06.00 से 07.00 बजे
6. प्रतिदिन जैन धर्मशाला मन्दिर प्रातः 07.30 से 08.00 बजे
7. सोमवार से शनिवार जैन कालोनी (बच्चों की) सांय 07.00 से 07.45 बजे तक
8. रविवार स्वाध्याय मन्दिर (बच्चों की) प्रातः 09.00 से 10.00 बजे तक
9. माह का 1st व 3rd सोमवार 52 मालवीय रोड़, श्रीमती अन्नु जैन प्रातः 11.15 से 12.15 तक

- वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-91 का पारितोषिक वितरण भी 1 सितम्बर 2019 दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', 31 राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31, राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६३

दिनांक 24 नवम्बर, 2019 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

<u>विशेष नोट</u> – आगामी परीक्षा में जैन मिलन महिला "एकता" देहरादून के तत्वाधान में जैन धर्म के गौरव, मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी के जीवन परिचय से, उनके आत्मज्ञान से निकले अद्भुत तत्वज्ञान द्वारा आपको परिचय कराया जायेगा।

– जैन धर्म का रहस्य –

(१) मैं जीव हूँ क्योंकि मुझमें जानने देखने की शक्ति है इसलिए मेरा कार्य मात्र जानना देखना है। मैं वीना नहीं हूँ क्योंकि वीना में मेरी जानने देखने की शक्ति नहीं है। वीना शरीर तो लोक के अनन्त परमाणु हैं इसलिये उठना–बैठना, खाना–पीना, रोटी–कपड़ा–मकान, धन–दौलत, रिश्ते–नाते ये सब मैं नहीं, मेरे कार्य नहीं।

(२) ऐसा जानकर अब आत्मार्थी भव्य जीव विचार करता है कि हाँ वास्तव में यहाँ से जाने वाली कोई वस्तु है तो, जानने देखने की शक्ति वाली वस्तु तो है जिसके जाने के बाद जानना देखना नहीं होता सुख दुख का अनुभव नहीं होता लेकिन मुझे तो वर्तमान में जानना–देखना, सुख–दुख का अनुभव हो रहा है। अरे! गुरू सही समझाते हैं–मैं ही तो ज्ञान की आनन्द की मूर्ति हूँ। ये आँख–नाक–कान वाला, यहीं जलने वाला, मूर्तिक, स्थूल शरीर, मैं नहीं हूँ।

(३) मैं ही जीव हूँ क्योंकि मुझमे ज्ञान है मैं ज्ञान से ही जानता हूँ। मै शरीर नही हूँ क्योंकि शरीर में ज्ञान नहीं है इसलिये शरीर कुछ जानता नही है। भव्य जीव बारम्बार ऐसा विचार करता है।

प्र०१. हे भगवन्! यदि ये शरीर, उठना–बैठना, खाना–पीना, रोटी, कपड़ा, मकान आदि मैं नहीं हूँ और ये सब मेरे कार्य नहीं हैं तो फिर ये शरीर धनादि कौन है और किसके कार्य है ?

उ० इस प्रश्न के समाधान के लिये हमें जिनेन्द्र भगवान के केवलज्ञान के अनुसार विश्व के सब द्रव्यों का स्वरूप समझना पड़ेगा। क्योंकि मै जीव हूँ क्योंकि मुझमे जानने देखने की शक्ति है, लेकिन मुझ जानने देखने की शक्ति में, शरीर–धन आदि वे वस्तुयें दिखती हैं, जो मेरी है नहीं, और कभी मेरी होंगी नही। और मुझ जानने देखने की शक्ति में जैसी अनादिनिधन वस्तुये है वैसी तो मुझे दिखती नहीं और वे ही अनादिनिधन वस्तुयें जिस शरीर धन आदि रूप में दिखती है वैसी है नहीं, इसलिये जैसा शरीर–धनादि का स्वरूप केवली भगवान ने देखा है– वैसा जाने तो शरीर से भिन्न आत्मा का ध्यान हो। और ये शरीर, धन, मकान आदि मैं हूँ मेरे कार्य है इस भ्रम का अभाव हो जाये।

प्र०२. ये शरीर धन मकान, कुटुम्ब आदि मैं हूँ और ये मेरे कार्य है इस मोह का अभाव कैसे हो ?

उ०. मोह के अभाव के दो उपाय हैं – १. जिसमें शरीर धन आदि का प्रतिभास होता है– ऐसे निज चैतन्यरुप आत्मा का स्वरूप अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार समझना। २. जिन शरीर धन आदि का प्रतिभास होता है उन विश्व के समस्त पदार्थों का स्वरूप अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार समझना।

(श्री प्रवचनसार गाथा ८० व ८७)

-: मोह के अभाव का प्रथम उपाय :-

प्र०३. केवलज्ञान के अनुसार निज चैतन्यस्वरुप आत्मा का स्वरूप छहढाला की दूसरी ढाल में क्या बताया है ?

उ० चेतन को है उपयोग रूप, बिन्मूरत चिन्मूरत अनूप।
पुद्गल, नभ, धर्म, अधर्म, काल, इनतैं न्यारी है जीवचाल।।

चेतन को है उपयोग रूप अर्थात (१) मैं ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीव तत्व हूं और (२) मुझ आत्मा का स्वभाव ज्ञाता-दृष्टा है। (३) बिन्मूरत अर्थात आंख-नाक-कान औदारिक आदि शरीरों रूप मेरी मूर्ति नहीं है। (४) चिन्मूरत अर्थात चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी मेरा एक आकार है। (५) अनूप अर्थात सर्वज्ञ स्वभावी ज्ञान पदार्थ होने से मुझ आत्मा ही अनुपम है। (६) पुद्गल, नभ, धर्म, अधर्म, काल, इनतैं न्यारी है जीवचाल अर्थात मुझ निज आत्मा के अलावा विश्व में अनन्त जीव द्रव्य है, अनन्तानन्त पुद्गल द्रव्य हैं, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक द्रव्य हैं, लोक प्रमाण असंख्यात काल द्रव्य है- इनकी सत्ता मुझ जीव से भिन्न ही है। ऐसा निज जीवतत्व का स्वरूप जानते-मानते ही विश्व का राग उत्पन्न नहीं होता और त्रिकाली स्वभाव अर्थात् अनादिअनन्त ज्ञाता दृष्टा स्वभाव का आश्रय हो जाता है।

प्र०४. अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार शुद्ध चेतनास्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप श्री समयसार गाथा २ में क्या बताया है ?

उ० (१) मुझ जीव पदार्थ उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य युक्त सत्ता सहित है।
(२) मुझ जीव पदार्थ दर्शनज्ञानमयी चेतनास्वरूप है।
(३) मुझ जीव पदार्थ अनन्त धर्मस्वरूप द्रव्य है, द्रव्य होने से गुण पर्यायवान वस्तु है।
(४) मुझ जीव पदार्थ का स्व-पर प्रकाशक ज्ञान अनेकाकाररूप एक है।
(५) मुझ जीव पदार्थ-अन्य जीव, पुद्गल, धर्म-अधर्म-आकाश, काल से भिन्न असाधारण चैतन्यगुण स्वरूप है।
(६) मुझ जीव पदार्थ अन्य द्रव्यों के साथ एक क्षेत्र में रहने पर भी अपने स्वरूप को नहीं छोड़ता।
(७) मुझ जीव पदार्थ भेदज्ञान ज्योति का उदय होने पर अपने ज्ञाता-दृष्टा स्वभाव मे स्थित रहे तो स्वसमय है।
(८) मुझ जीव पदार्थ भेदज्ञान के अभाव में अपने ज्ञाता-दृष्टा, स्वभाव से छुटकर परस्वभाव मे स्थित रहे अर्थात् मोह राग द्वेष रूप होकर रहे तब परसमय है।

प्र०५. अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार शुद्ध चेतनास्वरूप निज जीवतत्व का स्वरूप श्री समयसार गाथा ६ में क्या बताया है ?

उ० (१) मुझ ज्ञायकभाव स्वतः सिद्ध अनादिअनन्त है।
(२) मुझ ज्ञायकभाव नित्य प्रकाशमान है।
(३) मुझ ज्ञायकभाव स्पष्ट प्रतिभास रूप है।
(४) मुझ ज्ञायकभाव संसार अवस्था मे शुभाशुभ भावों रूप परिणमता हुआ होने पर भी, स्वभाव दृष्टि से देखने में आवे, तो शुभाशुभभावोंरूप परिणमता ही नहीं है।
(५) मुझ ज्ञायकभाव समस्त परद्रव्यों के भावों से भिन्नरूप से उपासने मे आने पर शुद्ध कहलाता है। (वीना आदि हम सात है ऐसी मान्यता हटते ही ज्ञायकभाव अनुभव मे आ जाता है।)
(६) अन्तरंग मे ज्ञेयाकार रूप से परिणमता होने पर भी ज्ञेय पदार्थो के साथ मुझ ज्ञायकभाव का वास्तव में कोई सम्बन्ध नहीं है। ऐसा जानते ही शरीरादि बाह्य पदार्थों का राग उत्पन्न नहीं होता और केवल ज्ञाता दृष्टा स्वभाव का आश्रय हो जाता है।

-: मोह के अभाव का दूसरा उपाय :-

प्र०६. जिन शरीर, धन, मकान आदि पदार्थों का प्रतिभास होता है, विश्व के उन समस्त पदार्थों का स्वरूप अरहंत भगवान के केवलज्ञान के अनुसार क्या है ?

उ० इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त है, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक है, और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। लेकिन शरीर, धन, मकान, गाड़ी, कपड़ा, जेवर आदि कोई वस्तु ही नहीं है, नश्वर स्कन्ध रूप पर्याय है क्योंकि प्रत्येक जीव और प्रत्येक एक-एक प्रदेशी परमाणु की सत्ता भिन्न है। प्रत्येक द्रव्य की सत्ता में अस्तित्व-वस्तुत्व आदि अनन्त सामान्य गुणों की व अनन्त विशेष गुणों की, एक व्यंजनपर्याय व अनन्त अर्थपर्यायों की सत्ता है। इस प्रकार भगवान के केवलज्ञान में प्रत्येक द्रव्य की सत्ता पृथक-पृथक प्रकाशित हो रही है। ऐसा जानते ही शरीर धन आदि का राग उत्पन्न नहीं होता और जिनेन्द्र भगवान के समान अन्तर चैतन्यस्वरुप की दृष्टि हो जाती है।

प्र०७. विश्व के शरीर, धन, मकान आदि समस्त पदार्थों का स्वरूप श्री समयसार गाथा ३ में क्या बताया है ?

उ० श्री समयसार गाथा ३ में आता है- "लोक में सर्वत्र जो कुछ जितने पदार्थ हैं, वे सब निश्चय से एकत्वनिश्चय को प्राप्त होने से ही सुन्दरता को प्राप्त होते हैं, क्योंकि-
(१) वे सब पदार्थ अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहने वाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को चुम्बन करते हैं-स्पर्श करते है, तथापि वे परस्पर एक दूसरे को स्पर्श नहीं करते।
(२) वे सब पदार्थ अत्यंत निकट एक क्षेत्रावगाहरूप से तिष्ठ रहे हैं, तथापि वे सदाकाल अपने स्वरूप से च्युत नहीं होते।
(३) वे सब पदार्थ पररूप परिणमन न करने से अनन्तव्यक्तिता नष्ट नहीं होती, इसलिए वे टंकोत्कीर्ण की भाँति शाश्वत स्थिर रहते हैं।
(४) वे सब पदार्थ समस्त विरूद्धकार्य तथा अविरूद्धकार्य दोनों की हेतुता से वे विश्व का सदा उपकार करते हैं अर्थात् टिकाये रखते है।

इस प्रकार प्रत्येक जीव और प्रत्येक परमाणु का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव भिन्न-भिन्न जानते ही शरीर, धन का राग उत्पन्न नहीं होता और जिनेन्द्र भगवान के समान अन्तर चैतन्यस्वरुप की दृष्टि हो जाती है।

प्र०८. विश्व के समस्त पदार्थों का स्वरूप श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ५२ में क्या बताया है।

उ० इस विश्व में जीव अनन्त है, पुद्गल परमाणु अनन्तान्त है, धर्म, अधर्म, आकाश एक-एक हैं और काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात है। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें भिन्न-भिन्न हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें अपनी-अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती हैं। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के आधीन नहीं है। ये सब अनादिनिधन वस्तुयें कोई किसी के परिणमित कराने से परिणामित नहीं होती। पर को परिणमित कराने का भाव ही मिथ्यादर्शन है।

प्र०९. विश्व के पदार्थों का स्वरूप श्री प्रवचनसार गाथा ९३ में क्या बताया है।

उ० इस विश्व में जीव अनन्त है, पुद्गल अनन्तान्त है, धर्म, अधर्म, आकाश एक-एक हैं तथा काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त अनन्त गुण है, प्रत्येक गुण में, जितने तीन काल के समय हैं, उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं। प्रत्येक द्रव्य के गुण में, एक ही समय में एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय और गुण ध्रौव्य रहता है-इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के गुण में हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा इसलिये मुझ आत्मा शरीर, धन, मकान, रोटी आदि की व्यवस्था नहीं करता। फिर भी जो मनुष्य शरीर आदि स्कंध रुप पर्यायों में लीन हैं वे पर्यायमूढ मिथ्या दृष्टि है।

-उपसंहार-

मै वीना हूं मै उठती-बैठती खाती-पीती हूं यह मेरा कुटुम्ब परिवार है, ये मेरे वस्त्र-आभूषण है ये मेरे मित्र है ये मेरे शत्रु है-ये सब मुझ आत्मा मे भ्रम है क्योंकि शरीर के उठने, बैठने, खाने-पीने रूप हर अवस्था मे परमाणु ही परमाणु है मुझ ज्ञान दर्शन स्वरूप चैतन्य मूर्ति नहीं। अतः हे चैतन्यमूर्ति उठाओ दृष्टि शरीर-धन-मकान आदि स्कन्धो से और ध्यान करो केवल एक शुद्ध आत्मा का - बस यही धर्म है समस्त भ्रमजनित दुखो से छूटने का एकमात्र उपाय है।

परमागम समयसार के अमूल्य सिद्धान्त

१. एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को स्पर्श नहीं करता है। २. प्रत्येक द्रव्य की प्रत्येक पर्याय क्रमबद्ध ही होती है। ३. उत्पाद, उत्पाद से है व्यय या ध्रुव से नहीं है। ४. प्रत्येक पर्याय अपने-अपने जन्मक्षण में ही होती है। ५. उत्पाद अपने षट्कारक के परिणमन से ही होता है। ६. निज भूतार्थ स्वभाव के आश्रय से ही सम्यग्दर्शन होता है। ७. स्व में बस (२) पर से खस (३) आयेगा आत्मा में अतीन्द्रिय रस (४) यही है अध्यात्म का कस (५) इतना करो तो बस।

'आध्यात्मिक कव्वाली'

आत्मा के ज्ञान की कीमत समझ हे भव्यजन।
आत्म अनुभव के बिना मिटता नहीं है जन्म मरण।

ये इन्द्रियाँ जड़ द्रव्य हैं, इनसे न मेरा ज्ञान है,
पल-पल पलटते दृश्य में, निज ज्ञान का ही भान है।
सकल ज्ञेय, ज्ञायक प्रभु निज आत्मा में हो मगन,
आत्मा के ज्ञान की कीमत समझ हे भव्यजन।

जड़ इन्द्रियों को मान निज की घूमता संसार में,
विषय सुख, ये भ्रमजनित, क्यों नजर पसरी असार में।
चिदानन्द ज्ञायक प्रभु, निज आनन्द में रहो मगन।
आत्मा के ज्ञान की कीमत समझ हे भव्यजन।

अणु-अणु की सत्ता स्वतंत्र है निज ज्ञायक ही है एक शरण
इस भेदज्ञान के बल से ही मिट जाती विषयों की तड़पन
इन्द्रिय विषय ओझल होते, चेतन ज्योति में रहो मगन
आत्मा के ज्ञान की कीमत समझ हे भव्यजन।

निज ज्ञान का सेवन नहीं और फँसे जग द्वंद फंद में
अब जान अतीन्द्रिय आत्मा, हूँ सदा ही निर्बंध मैं
है भावना यदि मोक्ष की कर जिनवचन में ही रमन।
आत्मा के ज्ञान की कीमत समझ हे भव्यजन।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 9.00 से 10.30 व सांयः 6.00 से 7.00 बजे
2. शनिवार — स्वाध्याय मन्दिर — प्रातः 9.30 से 10.30 बजे तक
4. मंगलवार — स्वाध्याय मन्दिर — सांय 06.00 से 07.00 बजे
5. बुधवार — श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार — सांय 06.00 से 07.00 बजे
6. प्रतिदिन — जैन धर्मशाला मन्दिर — प्रातः 07.30 से 08.00 बजे
7. सोमवार से शनिवार — जैन कालोनी (बच्चों की) — सांय 07.00 से 07.45 बजे तक
8. रविवार — स्वाध्याय मन्दिर (बच्चों की) — प्रातः 09.00 से 10.00 बजे तक
9. माह का 1st व 3rd सोमवार 52 म्हलीय रोड, श्रीमती अंजु जैन — प्रातः 11.15 से 12.15 तक

- वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-92 का पारितोषिक वितरण भी 24 नवम्बर 2019 दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', 31 राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-६४

दिनांक 9 फरवरी, 2020 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे

(स्थान - श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

विशेष नोट – आगामी परीक्षा में जैन "मिलन महिला एकता" देहरादून के तत्वाधान में जैन धर्म के गौरव, "राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के आध्यात्मिक गुरु श्रीमद्राजचन्द्र जी" के जीवन परिचय से, उनके आत्मज्ञान से निकले अद्भुत तत्वज्ञान द्वारा आपको परिचय कराया जायेगा।

अमर मानकर इस जीवन को परभव हाय भुलाया,
चांदी सोने के टुकड़ों में, फूला नहीं समाया।
देख मूढ़ता यह मानव की, उधर काल मुस्काया,
अगले पल ले चला यहाँ से, नाम निशान न पाया।।

प्र०१. मुझ जीव की अनादिकालीन मिथ्यादर्शन की प्रवृति क्या है ?

उ० (१) मुझ आत्मा का दर्शन ज्ञान स्वभाव है, ज्ञान दर्शन की पर्याय को अर्थात् शब्द के ज्ञान को निमित्त मात्र शरीर के अंगरूप कर्ण द्रव्येन्द्रिय है, शब्द के ज्ञान रूप परिणमित मुझ जीव-दर्शन ज्ञान स्वभाव को, कर्णेन्द्रिय अर्थात् अनन्त परमाणुओं को, शब्द अर्थात् अनन्त परमाणुओं को, एक मानकर ऐसा मानता है कि मैंने कानों से सुना, यह मिथ्यादर्शन की प्रवृति है।

(२) मुझ आत्मा का दर्शन ज्ञान स्वभाव है, ज्ञान दर्शन की पर्याय को अर्थात् वर्ण के ज्ञान को, निमित्त मात्र शरीर के अंगरूप चक्षु द्रव्येन्द्रिय है-वर्ण के ज्ञानरूप परिणमित मुझ जीव उन्हें अर्थात् दर्शन ज्ञान स्वभाव को, चक्षु इन्द्रिय अर्थात् अनन्त परमाणुओं को तथा काले पीले रंग अर्थात् अनन्त परमाणुओं को एक मानकर ऐसा मानता है कि मैंने आँखों से देखा-यह मिथ्यादर्शन की प्रवृति है।

(३) मुझ आत्मा का दर्शन ज्ञान स्वभाव है, ज्ञान दर्शन की पर्याय को अर्थात् गंध के ज्ञान को निमित्त मात्र शरीर के अंगरूप घ्राणेन्द्रिय है-गंध के ज्ञानरूप परिणमित मुझ जीव उन्हें-दर्शन ज्ञान स्वभाव को, घ्राणेन्द्रिय अर्थात् अनन्त परमाणुओं को तथा सुगंध-दुर्गंध रूप गंध अर्थात् अनन्त परमाणुओं को एक मानकर ऐसा मानता है कि मैंने नाक से सूंघा-यह मिथ्यादर्शन की प्रवृति है।

(४) मुझ आत्मा का दर्शन-ज्ञान स्वभाव है, ज्ञान दर्शन की पर्याय को अर्थात् रस के ज्ञान को निमित्त मात्र शरीर के अंगरूप रसना द्रव्येन्द्रिय है-रस के ज्ञानरूप परिणमित मुझ जीव उन्हें अर्थात् दर्शन ज्ञान स्वभाव को, रसनेन्द्रिय अर्थात् अनन्त परमाणुओं को तथा खट्टे मीठे रस अर्थात् अनन्त परमाणुओं को, एक मानकर ऐसा

मानता है कि मैंने जीभ से स्वाद लिया, यह मिथ्यादर्शन की प्रवृति है।

(५) मुझ आत्मा का दर्शन ज्ञान स्वभाव है, ज्ञान दर्शन की पर्याय को अर्थात् गर्मी–ठंडी के ज्ञान को निमित्त मात्र शरीर के अंगरूप स्पर्शनद्रव्येन्द्रिय है, गर्मी ठंडी के ज्ञान रूप परिणमित मुझ जीव उन्हें–दर्शन ज्ञान स्वभाव को, स्पर्शनेन्द्रिय अर्थात् अनन्त परमाणुओं को तथा ठंडी गर्मी अर्थात् अनन्त परमाणुओं को एक मानकर ऐसा मानता है कि मैंने हाथादि से स्पर्श किया–यह मिथ्या दर्शन की प्रवृति है।

प्र०२. मैंने कानों से सुना, जीभ से स्वाद लिया, आंखों से देखा, नाक से सूंघा, तथा हाथादि से स्पर्श किया आदि मिथ्यादर्शन की प्रवृति का मूल कारण क्या है ?

उ०. यह वीना नाम रूप पर्याय एक तो स्वयं आत्मा तथा अनन्त पुद्‌गल परमाणुमय शरीर उनसे एक पिण्ड बन्धान रूप है अर्थात् मुझ आत्मा अलग है तथा एक–एक परमाणु अलग–अलग है–ऐसा केवलज्ञान के अनुसार नही जानता–यह मिथ्यादर्शन की प्रवृति का मूल कारण है। तो फलस्वरूप चैतन्य मूर्ति को शरीर का ज्ञान देखा तथा अनन्त परमाणुओं को शरीर देखा, फलस्वरूप शरीर के ज्ञान में एकाकार हो गया और मैंने कानो से सुना, जीभ से स्वाद लिया आदि मिथ्यादर्शन की प्रवृति उत्पन्न हो गयी।

प्र०३. मैंने कानों से सुना, आंखों से देखा, नाक से सूंघा, जीभ से स्वाद लिया, हाथादि से स्पर्श किया–इस मिथ्यादर्शन की प्रवृति के अभाव का क्या उपाय है ?

उ० वीना असमानजातीय द्रव्य पर्याय अर्थात् एक तो स्वयं मुझ आत्मा तथा अनन्त पुद्‌गल परमाणुमय शरीर इनसे एक पिण्ड बन्धान रूप है अर्थात् मुझ शुद्ध चैतन्यमय एक परम पवित्र ज्योति अलग है तथा एक–एक परमाणु अलग–अलग है–ऐसा जानना–क्योंकि ऐसा जानते ही मैंने कानों से सुना, मैं वीना हूँ, यह मेरा कुटुम्ब परिवार है आदि अनादिकालीन मिथ्यादर्शन की प्रवृति का अभाव हो जायेगा।

प्र०४. मैंने कानो से सुना, आंख से देखा, नाक से सूंघा, जीभ से स्वाद लिया, मैं वीना हूँ यह मेरा कुटुम्ब, परिवार, वस्त्र, आभूषण, धन, मकान, नाते, रिश्तेदार, शत्रु तथा मित्र हैं–ऐसी अनादिकालीन मिथ्या दर्शन की प्रवृति के अभाव का उपाय जरा स्पष्ट करके समझाइये ?

उ० वीना असमानजातीय द्रव्य पर्याय अर्थात् एक तो स्वयं मुझ आत्मा तथा एक–एक परमाणु–ये अनादिनिधन वस्तुऐं हैं। मुझ आत्मा तथा एक–एक परमाणु ये सब अनादिनिधन वस्तुऐं भिन्न–भिन्न है। मुझ आत्मा तथा एक–एक परमाणु ये सब अनादिनिधन वस्तुऐं अपनी–अपनी मर्यादा सहित परिणमित होती है। मुझ आत्मा तथा एक–एक परमाणु ये सब अनादिनिधन वस्तुऐं कोई किसी के आधीन नहीं है। मुझ आत्मा तथा एक–एक परमाणु ये सब अनादिनिधन वस्तुऐं कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती।

प्र०५. मुझ आत्मा तथा एक–एक परमाणु कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित क्यो नही होती ?

उ० मुझ आत्मा तथा एक–एक परमाणु में अनन्त–अनन्त गुण है, मुझ आत्मा तथा एक–एक परमाणु के प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय उतनी क्रमबद्ध पर्यायें है, मुझ आत्मा तथा एक–एक परमाणु के प्रत्येक गुण में हर समय एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद तथा पूर्व पर्याय का व्यय और मुझ आत्मा तथा एक–एक परमाणु ध्रौव्य रहता है, ऐसा मुझ आत्मा तथा एक–एक परमाणु में अनादिकाल से हो चुका है, वर्तमान में हो रहा है तथा भविष्य में ऐसा ही होता रहेगा। मुझ जानने देखने की शक्ति से परिपूर्ण जीव को हर समय ऐसा ही जानना पड़ेगा।

प्र०६. ऐसा भेद ज्ञानपूर्वक जानने का फल क्या है ?

उ० जानने देखने की शक्ति से परिपूर्ण मुझ जीव के भेद ज्ञानपूर्वक यथार्थ जानने के फलस्वरूप–विश्व मे शरीर, धन, मकान, पति, बच्चे, कुटुम्ब–परिवार, धन, मकान आदि बन्धान दृष्टिगोचर नही होते। अर्थात देह अनादि नश्वर क्षणभंगुर भासित होगें। निमित्त–नैमैत्तिक सम्बन्ध ओझल हो जाएगे। मुझ शुद्ध चैतन्यमय एक परम पवित्र ज्योति न्यारी दिखेगी, एक–एक परमाणु न्यारा दिखेगा, क्रोधादि विभाव उत्पन्न नहीं होंगे, मै वीना हूं यह मेरा धन–मकान है ये मेरे वस्त्र आभूषण है ये मेरे नाते–रिश्तेदार है ये मेरे शत्रु है ये मेरे मित्र है–ऐसी मिथ्या दर्शन की प्रवृति मिट जाएगी–सर्व ओर एक ज्ञानघन आत्मा ही दृष्टिगोचर होगा।

–उपसंहार–'

मै वीना हूं मै उठती–बैठती खाती–पीती हूं यह मेरा कुटुम्ब परिवार है ये मेरे वस्त्र–आभूषण है ये मेरे मित्र है ये मेरे शत्रु है–ये सब मुझ आत्मा मे भ्रम है क्योंकि शरीर के उठने, बैठने, खाने–पीने रूप हर अवस्था मे परमाणु ही परमाणु है मुझ ज्ञान दर्शन स्वरूप चैतन्य मूर्ति नही। अत: हे चैतन्यमूर्ति उठाओ दृष्टि शरीर–धन–मकान आदि स्कन्धो से और ध्यान करो केवल एक शुद्ध आत्मा का – बस यही धर्म है, समस्त भ्रमजनित दुखो से छूटने का एकमात्र उपाय है।

– जैन धर्म का रहस्य –

(१) मै जीव हूँ क्योंकि मुझमें जाननें देखने की शक्ति है इसलिए मेरा कार्य मात्र जानना देखना है। मै वीना नहीं हूँ क्योंकि वीना में मेरी जानने देखने की शक्ति नहीं है। वीना शरीर तो लोक के अनन्त परमाणु हैं इसलिये उठना–बैठना, खाना–पीना, रोटी–कपड़ा–मकान, धन–दौलत, रिश्ते–नाते ये सब मैं नहीं, मेरे कार्य नहीं।

(२) ऐसा जानकर अब आत्मार्थी भव्य जीव विचार करता है कि हाँ वास्तव में यहाँ से जाने वाली कोई वस्तु है तो, जानने देखने की शक्ति वाली वस्तु तो है जिसके जाने के बाद जानना देखना नहीं होता सुख दुख का अनुभव नहीं होता लेकिन मुझे तो वर्तमान मे जानना–देखना, सुख–दुख का अनुभव हो रहा है। अरे! गुरु सही समझाते हैं–मैं ही तो ज्ञान की आनन्द की मूर्ति हूँ। ये आँख–नाक–कान वाला, यहीं जलने वाला, मूर्तिक, स्थूल शरीर, मैं नहीं हूँ।

(३) मै ही जीव हूं क्योंकि मुझमे ज्ञान है, मै ज्ञान से ही जानता हूं। मै शरीर नहीं हूं क्योंकि शरीर मे ज्ञान नही है इसलिये शरीर कुछ जानता नही है। भव्य जीव बारम्बार ऐसा विचार करता हुआ जिन मन्दिर में विराजमान जिन प्रतिमा का दर्शन निम्न प्रकार करता है–

निज आतम का स्मरण नमन करूँ अरहंत।
निज आतम के रमण से आवे भव का अन्त।।

हे भव्यां सुनो भगवान दो तरह के होते जगतीतल में।
पहले रहते जिनमन्दिर में दूजे रहते तनमन्दिर में।।
पहले पर हैं, दूजे हैं निज, पहले पर्यायरूप भगवन।
दूजे द्रव्यरूप जिनको कहते हैं कारणपरमातम।।

अरे आज तक मुक्ति गये जो वे हैं सभी सिद्ध भगवान।
उनकी ही अरहंत दशा की जिन प्रतिमाओं का निर्माण।।
और प्रतिष्ठित होकर वे सब बनती हैं जिनदेव महान।
जिनमन्दिर में राजित होकर वे ही बनती हैं भगवान।।

अरे सातिशय पुण्य बंधे जिनप्रतिमाओं के अर्चन से।
अर सब सुविधायें मिलें हमें जिनदर्शन से जिनपूजन से।।
भले सातिशय पुण्य बंधे पर उससे कर्म नहीं कटते।
स्वर्गसंपदा भले मिले पर हम भगवान नहीं बनते।।

यदि भगवान तुम्हें बनना निज को देखो निज को जानो।
निज में ही जमकर रम जावो अर नित ही निज को तुम ध्यावो।
अपने में ही अपनेपन से अपने में जमने-रमने से।
कर्मों से मुक्ति मिलती है निज में अपनापन करने से।।

तुम्हारा आतम है भगवान करो उस आतम का श्रद्धान।
करो तुम उस आतम का ज्ञान करो तुम उस आतम का ध्यान।।
अरे इतना करने से आप बनेंगे पर्याय में भगवान।
यही है एकमात्र कर्त्तव्य यही है अद्‌भुत कार्य महान।।

निज आतम भगवान की महिमा अपरंपार।
निज आतम के ध्यान से हो आनन्द अपार।।
यह ही निश्चय ध्यान है सम्यग्दर्शन ज्ञान।
निश्चय रत्नत्रय यही यह ही धर्म महान।।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 9.00 से 10.30 व सांयः 6.00 से 7.00 बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 9.30 से 10.30 बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय 06.00 से 07.00 बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय 06.00 से 07.00 बजे
6. प्रतिदिन जैन धर्मशाला मन्दिर प्रातः 07.30 से 08.00 बजे
7. सोमवार से शनिवार जैन कालोनी (बच्चों की) सांय 07.00 से 07.45 बजे तक
8. रविवार स्वाध्याय मन्दिर (बच्चों की) प्रातः 09.00 से 10.00 बजे तक
9. माह का 1st व 3rd सोमवार 52 मालवीय रोड, श्रीमती अंशु जैन प्रातः 11.15 से 12.15 तक

- वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-93 का पारितोषिक वितरण भी 9 फरवरी 2020 दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', 31 राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

परम उपकारी पूज्य पं श्री कैलाशचन्द्र जी की पुण्य स्मृति में

श्री दिगम्बर जैन वीतराग विज्ञान पाठशाला

31. राजा रोड, जैन कॉलोनी, देहरादून, फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910

के तत्वाधान में

वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-९५

दिनांक 17 मई, 2020 दिन रविवार दोपहर 3.00 बजे
(स्थान- श्री जैन धर्मशाला, गांधी रोड, देहरादून)

प्रतियोगिता में पूछे जाने वाले प्रश्न

विशेष नोट – आगामी परीक्षा में जैन "मिलन महिला एकता" देहरादून के तत्वाधान में जैन धर्म के गौरव, "सिद्धपद को प्राप्त श्री हनुमानजी की माता महासती अंजना जी" के जीवन परिचय से, उनके आत्मज्ञान से निकले अद्‌भुत तत्वज्ञान द्वारा आपकों परिचय कराया जायेगा।

प्र०१. संसार से दुखी जीवो को व मोक्ष के इच्छुक पात्र जीवों को निरन्तर चार बातें क्या ध्यान रखनी चाहिए ?

उ० निरन्तर ध्यान रखने योग्य चार बातें :–
(१) देखने वाला (२) दिखने वाले (३) दृष्टि दोष (४) विश्व की व्यवस्था अर्थात एक–एक परमाणु का भेद

प्र०२. मैं देखने वाला कैसा हूँ ?

उ० मैं अर्थात चैतन्य मूर्ति –

"मैं प्रगट ज्ञायक ज्योतिमय, मैं एक हूँ भूतार्थ से।
मैं शुद्ध एकाकार पर से भिन्न हूँ परमार्थ से।।"

प्र०३. दिखने वाले कैसे हैं ?

उ० दिखने वाले अर्थात शरीर सहित पूरा लोकाकाश एक–एक परमाणु का भेद है। शरीर धन, मकान आदि तो कोई वस्तु है ही नहीं।

प्र०४. दृष्टि दोष क्या है ?

उ० मैं देखने वाला अर्थात –

"मैं प्रगट ज्ञायक ज्योतिमय, मैं एक हूँ भूतार्थ से।
मैं शुद्ध एकाकार पर से भिन्न हूँ परमार्थ से।।"

ऐसा मैं देखने वाला, दिखने वालों को अर्थात शरीर सहित पूरा लोकाकाश जहाँ एक–एक परमाणु का भेद है उन्हें शरीर, धन, मकान आदि रूप देखता है। उन शरीर आदि स्कन्ध रूप पर्यायों को जहाँ एक–एक परमाणु का भेद है, ऐसे धन, मकान, गाड़ी आदि तो कोई वस्तु ही नहीं हैं, ऐसा नहीं देखता, यही दृष्टि दोष है।

प्र०५. दृष्टि दोष का फल क्या है ?

उ० (१) दृष्टि दोष का फल चारों गतियों में घूमकर निगोद है। (२) दृष्टि दोष का फल मिथ्यात्व व कषायें है। (३) दृष्टि दोष का फल पंच परावर्तन है। (४) दृष्टि दोष का फल अनन्त दुख है।

प्र०६. मुझे संसार में परिभ्रमण करते हुए अनन्त दुख नहीं भोगने, तो मैं क्या करूँ ?

उ० यदि संसार में परिभ्रमण करते हुए अनन्त दुख नहीं भोगना चाहते हो तो मुझ देखने वाले को दृष्टि दोष दूर करने का उपाय करना पड़ेगा।

प्र०७. दृष्टि–दोष दूर करने का उपाय क्या है ?

उ० मैं देखने वाला अर्थात –

"मैं प्रगट ज्ञायक ज्योतिमय, मैं एक हूँ भूतार्थ से।
मैं शुद्ध एकाकार, पर से भिन्न हूँ परमार्थ से।।"

ऐसा मैं देखने वाला, दिखने वालों को अर्थात शरीर, धन, मकान आदि को जो कोई वस्तु है ही नहीं, उन्हें एक–एक अलग–अलग परमाणु है, ऐसा देखने का अभ्यास निरन्तर करें यही 'पुरूषार्थ' दृष्टि दोष दूर करने का एकमात्र उपाय है। पंडित श्री दौलतराम जी ने छहढ़ाला की चौथी ढ़ाल में कहा है –

"धन समाज गज बाज राज तो काज न आवै
ज्ञान आपको रूप भये, फिर अचल रहावै
तास ज्ञान को कारण स्व पर विवेक बखानौ
कोटि उपाय बनाय भव्य ताकौ उर आनौ"।।

आचार्य अमृतचन्द्र जी ने भी श्री समयसार कलश २३ में कहा है –

"निज तत्व का कौतूहली, अर पड़ौसी बन देह का।
हे आत्मन! जैसे बने अनुभव करो निज तत्व का।।"
जब भिन्न पर से सुशोभित लख स्वयं को तब शीघ्र ही।
तुम छोड़ दोगे देह से एकत्व के इस मोह को।।

पंडित टोडरमल जी ने मोक्षमार्ग प्रकाशक पृष्ठ ३१२ पर कहा है कि "इस जीव का कर्तव्य तो मात्र तत्व निर्णय का अभ्यास ही है।"

अतः दृष्टि दोष दूर करने के लिए इस जीव को निरन्तर तत्व–अभ्यास करना ही पड़ेगा। दृष्टि दोष दूर करने का यही एकमात्र उपाय है, यही पुरूषार्थ है।

प्र०८. दृष्टि दोष के अभाव का फल क्या है ?

उ० (१) दृष्टि दोष दूर होने पर चारों गतियों का अभाव हो जाता है। (२) दृष्टि दोष दूर होने पर मिथ्यात्व व कषाय का अभाव हो जाता है। (३) दृष्टि दोष दूर होने पर पंच परावर्तन का अभाव हो जाता है। (४) दृष्टि दोष दूर होने पर अनन्त काल के लिए सुखी हो जाता है। (५) दृष्टि दोष दूर होने पर संसार के पांच कारणों (मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय, योग) का अभाव हो जाता है। (६) दृष्टि दोष दूर होने पर पंच परमेष्ठी में गिनती हो जाती है।

प्र०९. विश्व की व्यवस्था कैसी है, स्पष्ट समझाइये। केवली भगवान ने अपने केवलज्ञान में इस विश्व की व्यवस्था कैसी देखी है, अर्थात इस विश्व में क्या है, कैसा है, जरा स्पष्ट समझाइये।

उ० इस प्रश्न के समाधान के लिए अनादि–अनन्त विश्व, अनादि अनन्त द्रव्य, अनादि अनन्त गुण तथा अनादि अनन्त पर्यायों का यथार्थ स्वरूप समझना ही पड़ेगा।

प्र०१०. इस विश्व में क्या है ?

उ० इस विश्व में जीव अनन्त हैं, पुद्गल अनन्तानन्त हैं, धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक हैं तथा काल द्रव्य लोक प्रमाण असंख्यात हैं।

प्र०११. इस विश्व के प्रत्येक द्रव्य में क्या है ?

उ० इस विश्व के प्रत्येक द्रव्य में अनन्त सामान्य गुण तथा अपने–अपने अनन्त विशेष गुण हैं।

प्र०१२. प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण में क्या है ?

उ० प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं, उतनी क्रमबद्ध पर्यायें हैं।

प्र०१३. अनन्त गुणों तथा त्रिकालवर्ती पर्यायों के पिण्ड रूप प्रत्येक द्रव्य में हर समय क्या हो रहा है ?

उ० अनन्त गुण तथा त्रिकालवर्ती पर्यायों के पिण्ड रूप प्रत्येक द्रव्य में हर समय एक क्रमबद्ध पर्याय का उत्पाद, पूर्व पर्याय का व्यय तथा गुण ध्रौव्य रहते हैं–ऐसा प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण में हो चुका है, हो रहा है तथा होता रहेगा।

प्र०१४. अनन्त गुणों तथा त्रिकालवर्ती पर्यायों के पिण्डरूप जीवादि समस्त द्रव्य लोकाकाश में रहते हैं तो विश्व के समस्त द्रव्यों का आपस में कैसा सम्बन्ध है ?

उ० विश्व के समस्त द्रव्यों का आपस में एकक्षेत्रावगाही सम्बन्ध हैं। अर्थात एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है।

प्र०१५. विश्व के समस्त द्रव्यों का अपने अनन्त गुणों के साथ कैसा सम्बन्ध है ?

उ० विश्व के समस्त द्रव्यों का अपने अनन्त गुणों के साथ नित्य तादात्मयसिद्ध सम्बन्ध है अर्थात कभी अलग न होने वाला सम्बन्ध है। अतः मुझ चैतन्यस्वरूप का अपने अनन्त गुणों के साथ सम्बन्ध है, परन्तु शरीर, धन, मकान, पति, बच्चे, वस्त्र, आभूषण, आदि जड़ वैभव के साथ सर्वथा सम्बन्ध नहीं हैं।

प्र०१६. गुणों का अपनी त्रिकालवर्ती पर्यायों के साथ कैसा सम्बन्ध है ?

उ० गुणों का अपनी त्रिकालवर्ती पर्यायों के साथ एक–एक समय का तादात्मयसिद्ध सम्बन्ध है। अर्थात मुझ चैतन्यस्वरूप आत्मा को व्याप्य व्यापक भाव से अपनी पर्यायों का कर्ता कहो तो कहो लेकिन मुझ आत्मा, शरीर के उठने बैठने, रोटी, कपड़ा, व्यापार, आदि पुद्गल के कार्यों का कर्ता सर्वथा नहीं है।

प्र०१७. इस प्रकार विश्व की व्यवस्थित व्यवस्था जानने का फल क्या है ?

उ० (१) केवली भगवान के लघुनन्दन बन जाते हैं। (२) पर में कर्ता कर्म, भोगता–भोग्य की खोटी बुद्धि का अभाव हो जाता है। (३) क्रमबद्ध क्रमनियमित पर्याय की सिद्धि हो जाती है।

प्र०१८. विश्व के समस्त द्रव्यों में समान रूप से पायी जाने वाली विशेषताएं क्या हैं ?

उ० (१) विश्व का प्रत्येक द्रव्य सत् है। (२) विश्व का प्रत्येक द्रव्य उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य वाला है। (३) विश्व का प्रत्येक द्रव्य अपने गुण–पर्यायों का मालिक है। (४) विश्व के प्रत्येक द्रव्य के गुण, द्रव्य के आश्रित रहते हैं। (५) विश्व का प्रत्येक द्रव्य अनादिअनन्त हैं, स्वतन्त्र हैं, परिपूर्ण हैं। (६) विश्व का प्रत्येक द्रव्य नित्य–अनित्यरूप, एक–अनेकरूप, सामान्य–विशेषरूप, सत्–असत्‌रूप हैं। (७) विश्व का प्रत्येक द्रव्य अपने–अपने गुण पर्यायों का ही स्पर्श करता है।

– भजन –

ये संसार असार है, केवल निज चेतन ही सार।
चेतन भाव सम्भालो चेतन, बीती ताहि बिसार।।

संयोगों की दृष्टि में तूने काल अनन्त गंवाया।
मुक्ति वधु को वरने का अब उत्तम अवसर आया।
चेतन चेतन सर्व ओर है यामें दृष्टि पसार।
ये संसार असार है, केवल निज चेतन ही सार।।

तन मन धन सभी अर्पण कर, बस निज चेतन ध्याओ।
परमाणु मात्र नहीं अपना चेतन जग से ममत्व छुड़ाओ।
चेतन–चेतन सर्व और है ये ही शान्ति का आधार।
ये संसार असार है, केवल निज चेतन ही सार।

चेतन निर्मल भाव तुम्हारा, निज में निज प्रकाशे।
पर की प्रीति दुश्मन अपनी निज भंडार छुपावे।
निज भंडार को खोलो चेतन, बाह्य खोज बेकार।
ये संसार असार हैं, केवल निज चेतन ही सार।।

विशेष नोट

- पाठशाला की निम्न नियमित कक्षाओं में अपने बच्चों सहित अवश्य पधारें -

1. प्रतिदिन स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 9.00 से 10.30 व सांयः 6.00 से 7.00 बजे
2. शनिवार स्वाध्याय मन्दिर प्रातः 9.30 से 10.30 बजे तक
4. मंगलवार स्वाध्याय मन्दिर सांय 06.00 से 07.00 बजे
5. बुधवार श्री जैन मन्दिर, झंडा बाजार सांय 06.00 से 07.00 बजे
6. प्रतिदिन जैन धर्मशाला मन्दिर प्रातः 07.30 से 08.00 बजे
7. सोमवार से शनिवार जैन कालोनी (बच्चों की) सांय 07.00 से 07.45 बजे तक
8. रविवार स्वाध्याय मन्दिर (बच्चों की) प्रातः 09.00 से 10.00 बजे तक
9. माह का 1st व 3rd सोमवार 52 मालवीय रोड, श्रीमती अशु जैन प्रातः 11.15 से 12.15 तक

- वीतराग विज्ञान प्रतियोगिता-95 का पारितोषिक वितरण भी 17 मई 2020 दिन रविवार को सभास्थल पर ही होगा।

सम्पर्क करें- श्रीमती वीना जैन, अध्यक्षा 'ध्रुव निवास', 31 राजा रोड़ जैन कालोनी देहरादून।
फोन नं० (0135) 2623131, 9837257910